

BHAVAN'S LIBRARY

This book is valuable and
NOT to be ISSUED
out of the Library
without Special Permission

सिंघी जैन ग्रन्थमाला

ॐ ॥ ग्रन्थाङ्क १ ॥ ॐ



श्रीमेरुद्धार्यविरचित

प्रबन्धचिन्तामणि

सिंधी जैन ग्रन्थमाला

जैन धारानिक, दार्शनिक, साहित्यिक, ऐतिहासिक, कथामक-इत्यादि विविधप्रयगुणित
प्राकृत, संस्कृत, अपभ्रंश, मारवीनगूर्ज, राजस्थानी भाषि भाषानिष्ठद्
वहु उपयुक्त उत्तरात्मक तथा नवीन संशोधनात्मक
साहित्यप्रकाशिती जैन ग्रन्थावलि ।

कलकचानिवासी सर्वांग श्रीमद् डालचन्द्रजी सिंधी की पुष्टस्मृतिनिमित्त
तदीयसुपुत्र श्रीमान् वहादुरसिंहजी सिंधी द्वारा संसापित

मुख्य सम्पादक

जिनविजय मुनि

अधिष्ठाता, सिंधी जैन ज्ञानपीठ.

शान्तिनिकेतन

ग्रन्थांक १

प्राप्तिस्थान
संचालक, सिंधी जैन ग्रन्थमाला.
शान्तिनिकेतन, बंगल.

Founded 1

All rights reserved

(1932 A.D.)

SANTINIKETAN (BENGAL)
SANGLAKA, SINGH JAINA GRANTHAMALA
TO BE HAD FROM

NUMBER 1

SANTINIKETAN,
ADMINISTRATIVE, SINGH JAINA JANAPARTHA,
JINAVIDAYA MUNI
GENEALOGICAL EDITION

SRI DALGANJU SINGHI

IN MEMORY OF HIS LATE FATHER

SRI MAN BAHADUR SINGHI SINGHI OF CALCUTTA
BY
FOUNDED

RESEARCH SCHOLARS.
LANGUAGES, AND STUDIES OF COMPETENT
IN PRAKRT, SANSKRIT, APABHRAMSA AND OLD VERBACULAR
HISTORICAL, LITERARY, MYTHOLOGICAL ETC WORKS OF MAJOR LITERATURE
A COLLECTION OF CRITICAL EDITIONS OF MOST IMPORTANT CANONICAL, PHILOSOPHICAL,

SINGHI JAINA SERIES

प्रबन्धचिन्तामणि की संकलन।

इस ग्रन्थका संकलन और प्रकाशन लिख प्रकार, ५ भागोंमें, पूर्ण होगा।

- (१) प्रथम भाग. यित्र भित्र प्रतियोके आधार पर संशोधित-विविध पाठान्तर समवेत-मूलग्रन्थ; १ परिशिष्ट; मूलग्रन्थ और परिशिष्टमें आये हुये संस्कृत, प्राकृत और अपञ्चन भाषामय पद्धोंकी अकारादिक्रमानुसार सूचि; पाठ संशोधनके लिये काममें लाइ गई उत्तरतन प्रतियोका सचित्र वर्णन।
 - (२) द्वितीय भाग. प्रबन्धचिन्तामणिगत प्रबन्धोंके साथ सम्बन्ध और समानता रखनेवाले अनेकानेक उत्तरतन प्रतियोका संग्रह; पद्मानुष्कमस्युचि; विशेष नामानुक्रम; संक्षिप्त प्रत्यावाना और प्रबन्ध संग्रहोंकी मूल प्रतियोका सवित्र परिचय।
 - ✓(३) तृतीय भाग. पहले और दूसरे भागका संपूर्ण हिंदी भाषान्तर।
 - (४) चतुर्थ भाग. प्रबन्धचिन्तामणिवर्णित व्यक्तियोंके साथ सम्बन्ध रखनेवाले शिलालेख, तान्त्रपत्र, उत्तरकप्रशंसित आदि जितने समकालीन साधन और ऐतिहासिक प्रमाण उपलब्ध होते हैं उनका एकप्र संग्रह और तत्परिचायक उपयुक्त विस्तृत विवेचन; प्राकृतालीन और पश्चात्कालीन अन्यान्य अन्योंमें उपलब्ध प्रमाणभूत प्रकरणों, उडेलों और अवतरणोंका संग्रह; कुछ शिलालेख, तान्त्रपत्र और प्राचीन ताडपत्रोंके चित्र।
 - (५) पञ्चम भाग. प्रबन्धचिन्तामणिप्रथित सब धारोंका विवेचन करनेवाली विस्तृत प्रस्तावना-जिसमें लकालीन ऐतिहासिक, भौगोलिक, सामाजिक, धार्मिक और राजकीय परिस्थितिक सवित्रेय झटकोंह और सिद्धावलोकन किया जायगा। अनेक प्राचीन मंदिर, मूर्तियाँ इत्यादिके चित्र भी दिये जायेंगे।
-

THE SCHEME OF THE WORK OF PRABĀNDHACINTĀMANI

[The work will be completed in five parts.]

- Part I.** A critical Edition of the original Text in Sanskrit with various readings based on the most reliable MSS; An Appendix; An alphabetical Index of all Sanskrit, Prākrit and Apabhraṃṣṭa verses occurring in the text and the appendix; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used for preparing the text along with plates.
- Part II.** A collection of many old Prabandhas similar and analogous to the matter in the Prabandhacintāmanī; Indices of the verses and proper names; A short Introduction in Hindi describing the MSS. and materials used in preparing this Part, along with plates.
- Part III.** A Complete Hindi Translation of Parts I and II.
- Part IV.** A collection of epigraphical records, viz. stone inscriptions, copper plates, colophons and Prasāstis from the contemporary MSS; all available historical data dealing with the Persons described or referred to in the Prabandhacintāmanī along with a critical account in Hindi of the above, as also many plates, and a collection of authoritative references and quotations from other works.
- Part V.** An elaborate general Introduction surveying the historical, geographical, social, political and religious conditions of that period; with plates.

आदावुन्मीलितं येन ज्ञानचक्षुर्मदीयकम् ।
देवीहंसगुरोस्तस्य स्मृतये इदमप्यते ॥

प्रबन्धचिन्तमणिग्रन्थगतप्रबन्धानाम्

अनुक्रमणिका ।

प्रथमः प्रकाशः ।

| | |
|-------------------------------------|----------|
| १. विक्रमार्कप्रबन्धः | पृ० १-१० |
| रोहणाचलगमनवृत्तान्तसामाज्यप्राप्तिः | १-३ |
| कालिदासोत्यचिप्रबन्धः | ३-५ |
| सुरपण्डुरुपसिद्धिप्रबन्धः | ५ |
| विक्रमादित्यसत्यप्रबन्धः | ५ |
| सत्यपरीक्षाप्रबन्धः | ६ |
| विद्यासिद्धिप्रबन्धः | ६ |
| सिद्धूसेनसूरिसमागमवर्णनम् | ७ |
| शृणिव्या अनृणीकरणवृत्तम् | ८ |
| [पृथ्वीरसप्रबन्धः] | ८ |
| विक्रमार्कनिर्विताप्रबन्धः | ९ |
| विक्रमार्कवृत्तवृत्तान्तम् | १० |
| २. सातवाहनप्रबन्धः | १०-११ |
| ३. शीलन्त्रते भूयराजप्रबन्धः | ११ |
| ४. वनराजादिप्रबन्धः | १२-१५ |
| चापोत्कट्टवंशायालिः | १४-१५ |
| ५. मूलराजप्रबन्धः | १५-२९ |
| मूलराजसपादलक्ष्मीप्रयुक्तवृत्तम् | १६-१७ |
| कन्याडितापस्त्वरान्तम् | १८ |
| लालाकोत्पत्तिविपत्तिप्रबन्धः | १९ |
| मूलराजानयविचारः | २० |
| ६. मुखराजप्रबन्धः | २१-२५ |
| मुखराजवन्मवृत्तम् | २१ |
| सिन्धुलदृष्टवर्णनम् | २१ |
| मोजग्रन्थादिवृत्तान्तम् | २२ |
| मुखर्चैलपदेवयुद्धवृत्तम् | २२ |
| मुडाकारागारदग्धवर्णनम् | २३ |

द्वितीयः प्रकाशः ।

| | |
|-----------------------------------|-------|
| ७. भोज-भीमप्रबन्धः | २५-५२ |
| भोजदानवृत्तान्तानि | २१-२९ |
| भोज-भीमविरोधवृत्तान्तम् | ३०-३४ |
| माघपण्डितप्रबन्धः | ३४-३६ |
| धनपालपण्डितप्रबन्धः | ३६-४२ |
| शीतपण्डितप्रबन्धः | ४२-४३ |
| मयूर-वाण-मानतुङ्गाचार्यप्रबन्धः | ४४-४६ |
| पण्डी-गोपायोः प्रबन्धः | ४५-४६ |
| अनित्यतास्तोकचतुष्यप्रबन्धः | ४६ |
| वस्तुचतुष्यप्रबन्धः | ४७ |
| घीजपूरकप्रबन्धः | ४७ |
| ‘एको न मव्यः’ प्रबन्धः | ४८ |
| इष्टुरसप्रबन्धः | ४८ |
| अश्वारप्रबन्धः | ४८ |
| गोपगृहीणप्रबन्धः | ४९ |
| कर्णनुपातिवर्णनम् | ५० |
| भोजस्त्वर्णनम् | ५१ |
| तृतीयः प्रकाशः । | |
| ८. सिन्धराजादिप्रबन्धः | ५३-७६ |
| भीमदेवपुत्रमूलराजवृत्तम् | ५३ |
| कर्णनुपातिमयणद्वीपर्णनम् | ५४ |
| जयसिंहदेवजन्मकथनम् | ५५ |
| लीलावीद्यप्रबन्धः | ५६ |
| मात्रिसान्त्वृद्धर्मताप्रबन्धः | ५७ |
| मयणद्वीपवायावर्णनम् | ५८ |
| जपसिंहदेवघारापुद्वर्णनम् | ५९ |
| जयसिंहदेवहेमश्वरिसमाप्तम् | ६० |
| जयसिंहस्यस्त्रदमहाकालप्रापादकरणम् | ६१ |

| | | | |
|------------------------------------|--------------|-------|--|
| सहस्रलिङ्गसरोवरकरणम् | | ६२-६४ | हेमस्त्रिरिदशितं कुमारपालस सोमे- |
| जयसिंह-नवघणयुद्धवृत्तम् | | ६५ | श्रदेवप्रात्यक्ष्यम् ६४-६५ |
| सूतलदेव्या वाक्यानि | | ६५ | कुमारपालस जैनधर्माङ्गीकरणम् ६६ |
| रैवतकोद्धारप्रवन्धः | | ६५ | मञ्चिवाहडकारितशत्रुजयोद्धारप्रवन्धः ६७ |
| जयसिंहस शत्रुजययात्रा | | ६६ | राजपितामह आग्रहटप्रवन्धः ... ६८ |
| देवद्वारिचरितम् | | ६६-६९ | कुमारपालाभ्ययनप्रवन्धः ... ६९ |
| वसाह आमडग्रवन्धः | | ७० | हरद्वाप्रवन्धः ६९ |
| सर्वदर्शनमान्यताप्रवन्धः | | ७० | उर्वशीशब्दप्रवन्धः ७० |
| चणकविकायिविजः प्रवन्धः | | ७१ | उदयचन्द्रप्रवन्धः ७० |
| पौद्यशलक्षप्रसादप्रवन्धः | | ७१ | अभक्ष्ययक्षणश्रावयश्चित्प्रवन्धः ... ७० |
| वाराहीयग्रहचप्रवन्धः | | ७१ | यूकाविहारयवन्धः ७१ |
| उच्छ्वासास्तव्यग्रामणीनां प्रवन्धः | | ७२ | सालिगवतसह-उद्धारप्रवन्धः ... ७१ |
| माङ्गप्रवन्धः | | ७२ | बृहस्पतिप्रवन्धः ७१ |
| स्त्रेच्छागमनिषेधप्रवन्धः | | ७३ | आलिगप्रवन्धः ७१ |
| कोष्ठापुरप्रवन्धः | | ७३ | धामराशिप्रवन्धः ७२ |
| कौतुकीसीलणप्रवन्धः | | ७४ | चारणयोः प्रवन्धः ७२ |
| जयचन्द्रराजा समे गूर्जप्रधान- | | | तीर्थयात्राप्रवन्धः ७३ |
| स्त्रीकॉपत्युक्तिप्रवन्धः | | ७४ | सुवर्णसिद्धिनिषेधप्रवन्धः ७३ |
| पापघटप्रवन्धः | | ७५ | राजधरद्वन्नाहृदप्रवन्धः ७४ |
| सान्त्वमञ्चिव्युद्धिप्रवन्धः | | ७५ | कुमारपालकथितलवणप्रसादराण- |
| वण्ठकर्मप्राधान्यप्रवन्धः | | ७५ | कप्रवन्धः ७४ |
| जयसिंहस्तुतिशोकाः | | ७६ | हेमाचार्य-कुमारपालयोर्मृत्युवर्णनम् ७५ |
| चतुर्थः प्रकाशः | | | अजयदेवस्य राज्योपविशनम् ... ७६ |
| कुमारपालादिप्रवन्धः | ७७-७८ | | मञ्चिकपदिप्रवन्धः ७६ |
| कुमारपालपूर्वजकथनम् | | ७७ | रामचन्द्रमणप्रवन्धः ७७ |
| सिद्धराजकुठकर्मवर्णनम् | | ७८ | अजयदेवमरणवर्णनम् ७७ |
| कुमारपालराज्यप्राप्तिः | | ७८ | अजयदेवान्यवृत्तम् ७७ |
| कुमारपाल-अर्णोराजयुद्धवर्णनम् | | ७९ | चीरध्वलवर्णनम् ७८ |
| चाहडकुमारप्रवन्धः | | ८० | |
| वहकारमोलाकप्रवन्धः | | ८० | १०. वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः १०-१०५ |
| आम्बदप्रवन्धः | | ८१ | वस्तुपाल-तेजःपालयोजनमादि- |
| कुमारपाल-हेमद्विरिसमागमवर्णनम् | | ८२ | शृचान्तरम् १०-११ |
| हेमस्त्रिरिचरितम् | | ८२ | शत्रुजयादिवीर्ययात्रावर्णनम् ... १००-१०१ |

अर्णुदगिरी विमलवस्त्रिकासापनम् १०१
शत्रुघ्नुभटेन सह मुद्दकरणम् १०२

| | | | |
|--------------------------------------|-----|---|-----|
| स्लेच्छपतिना सह मध्यिणो भैवी | १०३ | लक्ष्मणसेन-उमापतिधरयोः प्रबन्धः | ११३ |
| अनुपमाया औदार्यवर्णनम् ... | १०४ | जयचन्द्रग्रन्थः | ११४ |
| वीरघबल-लवणप्रसादयोः पञ्च- | | तुहंसुभग्रन्थः | ११७ |
| ग्रामसद्वामवर्णनम् | १०४ | परमदिं-जगदेव-पृथ्वीपतीनां प्रबन्धः | ११८ |
| अनुपमाया भरणे तेजःपालस | | कौङ्गणोत्पत्तिप्रबन्धः | ११८ |
| शोकवृत्तम् | १०५ | वराहमिहिरप्रबन्धः | ११९ |
| वस्तुपालस मृत्युवृत्तम् | १०५ | नागार्जुनोत्पत्तिस्तम्भनकतीर्थाव- | |
| पञ्चमः प्रकाशः । | | तारप्रबन्धः | १२० |
| ११. प्रकीर्णकप्रबन्धः १०६-१२८ | | भर्तृहरि-उत्पत्तिप्रबन्धः | १२१ |
| विक्रमपात्रपरीक्षाप्रबन्धः ... | १०७ | वैद्यवामभटप्रबन्धः | १२२ |
| नन्दप्रबन्धः | १०७ | क्षेत्राधिपोत्पत्तिप्रबन्धः | १२३ |
| मछुडादिप्रबन्धः | १०७ | वासनप्रबन्धः | १२३ |
| शिलादित्योत्पत्तिरङ्गोत्पत्ति-वल- | | कृपाणिकप्रबन्धः | १२३ |
| भीमझप्रबन्धः | १०८ | जिनपूजायां धनदप्रबन्धः ... | १२४ |
| पुड्डराज-तत्त्वीशीमाताप्रबन्धः | ११० | प्रबन्धकारस्य प्रशास्तिः | १२५ |
| गोमद्धनवृपप्रबन्धः | १११ | परिशिष्टम्-कुमारपालस अहिं- | |
| शुष्यसारप्रबन्धः | १११ | साया विवाहसम्बन्धप्रबन्धः १२६-१२८ | |
| कर्मसारप्रबन्धः | ११२ | प्रबन्धचिन्तामणेः पद्यानुक्रमणिका ... १२९-१३६ | |



॥ सिंधीजैनग्रन्थमालासंस्थापकप्रशस्ति ॥

अस्ति चङ्गभिधे देशे सुप्रसिद्धा मनोरमा । मुशिंदाचार इत्याख्या पुरी वैमवशालिनी ॥
 निवसन्त्यनेके तथ जैना ऊकेशवंशजाः । धनाख्या नृपसद्वा धर्मकर्मपरायणाः ॥
 श्रीडालचन्द इत्यासीत् तेष्वेको वहुमायवान् । साधुवत् सच्चिन्नो यः सिंधीकुलप्रमाकरः ॥
 वात्य एवागतो यो हि कर्तुं व्यापारिविस्तुतिभ् । कठिकातमहापुरो धृतवर्मार्थेनिश्चयः ॥
 कुशग्रन्था खदुद्धैव सदृत्या च सुनिष्टया । उपर्जर्यं विपुलं लक्ष्मीं जातो कोश्यपिषो हि सः ॥
 तस्य महुकुमारीति सत्त्वारीकुलमण्डना । परिव्रता प्रिया जाता शीलसौमायग्रूपयामा ॥
 श्रीवद्यादुर्सिंहाख्यः सुधुर्णी सुप्रसिद्धयोः । अस्त्वेषु सुकृती दानी धर्मप्रियो विद्यां निधिः ॥
 प्राप्ता पुण्यवताऽनेन प्रिया तिलकसुन्दरी । तस्माः सौमायग्रीषेन प्रदीपं यद्वहाङ्गम् ॥
 श्रीमान् राजेन्द्रसिंहोऽस्ति ज्येष्ठपुष्टः सुशिक्षितः । सः सर्वकार्यदक्षत्वात् वाहुर्यस्य हि दक्षिणः ॥
 नरेन्द्रसिंह इत्याख्यस्तेजस्वी ग्रन्थम् सुतः । सुनुर्वीरेन्द्रसिंहश्च कनिष्ठः सौम्यदर्शनः ॥
 सन्ति त्रयोऽपि सत्युमा आसभक्तिपरायणाः । विनीताः सरला भव्याः पितुर्मार्गीरुगमिनः ॥
 अन्वेऽपि व्यवशास्य सन्ति स्वस्वादिवान्धवाः । धनैर्बन्नैः समृद्धोऽयं ततो राजेव राजते ॥

अन्यच-

सरस्वतां सदासक्तो भूत्वा लक्ष्मीप्रियोऽप्ययम् । तत्राप्येष सदाचारी तत्त्वित्रं विदुपां खलु ॥
 न गर्वो नाऽप्यहंकारो न विलासो न दुकृतिः । इत्यतेऽस्य गृहे कापि सतां तद् विस्यासदम् ॥
 भक्तो गुरुजनानां यो विनीतः सज्जनान् प्रति । वन्धुजेऽनुरक्तोऽस्ति श्रीतः पोष्यगणेष्वपि ॥
 देश-कालस्थितिग्रोऽयं विद्या-विज्ञानपृजकः । इतिहासादिसाहित्य-संस्कृति-सत्कलाप्रियः ॥
 समुन्नतै समाजस्य धर्मसोत्कर्त्तवेषे । प्रचारार्थं सुशिक्षाया व्यगत्येष धनं धनम् ॥
 गत्वा सभा-समिलादौ भूत्वाऽप्यक्षपदाङ्गितः । दत्त्वा दानं यथायोग्यं प्रोत्साहयति कर्मठान् ॥
 एवं धनेन देहेन ज्ञानेन शुभनिष्टया । करोत्यर्थं यथाशक्ति सत्कर्माणि सदाशयः ॥
 अथान्यदा प्रसङ्गेन स्तान्तुः स्थृतिर्वत्वे । कर्तुं किंचिद् विशेषं यः कायं मनसाचिन्तयत् ॥
 पूज्यः पिता सदैवासीत् सभगृज्जानसच्चिपरम् । तस्मातज्जनवृद्ध्यर्थं यतनीयं मया वरम् ॥
 विचार्येवं ख्ययं चित्ते सुनः प्राप्य सुसम्मतिम् । श्रद्धारपदसमित्राणां विदुपां चापि ताद्याम् ॥
 जैनज्ञानप्रसारार्थं स्थाने शान्तिनिकत्वे । सिंधीप्रदाक्षिणं जैनज्ञानपीठातिष्ठिष्ठत् ॥
 श्रीजिनविजयो विज्ञो तस्याधिष्ठानवस्त्वदम् । स्त्रीकर्तुं प्रार्थितोऽनेन ज्ञानोद्घाराभिलापिणा ॥
 अस्य सौजन्य-सौहादं-स्थैर्यादर्थादिसद्गुणः । वशीभूषित मुदा येन स्त्रीकृतं तत्पदं वरम् ॥
 यसैव प्रेरणां प्राप्य श्रीसिंधीकुलकेतुना । खपितृश्रेयसे चैपा ग्रन्थमाला प्रकाशयते ॥
 विद्वज्जनकृताहादा सविदानन्ददा सदा । चिरं नन्दत्वियं लोके जिनविजयभारती ॥

किञ्चित् प्रास्ताविक ।

— ४६ —

प्रबन्धचिन्तामणि ग्रन्थके वारें मिलनी शातव्य वारें हैं उन सवका लिंदेश, बहुत कुछ विस्तारके साथ, हम आगे के भागोंमें—वौथे पांचवें ग्रन्थमें—करता चाहते हैं इस लिये यहां पर अन्य कोई विशेष वातका उल्लेख न कर, सिर्फ़ इस ग्रन्थकी प्रस्तुत आवृत्तिके जन्मका थोड़ासा पूर्वविद्वास वतलाना, और उसके साथ इस ग्रन्थके, इतः पूर्व, जो संस्करण और भाषान्तर आदि हुए हैं उनका परिचय देते हुए, जिन पुरातन हस्तालिखित पोथीयोंका आश्रय लेकर हमने इसका संशोधन और सम्पादन किया है उनका परिचय मात्र कराना आवश्यक समझते हैं ।

प्रस्तुत आवृत्तिकी जन्मकथा ।

प्रबन्धचिन्तामणि जैसे ऐतिहासिक महत्व रखनेवाले अनेक ग्रन्थ, और ऐसे ही उपयोगी अन्यान्य अगणित ऐतिहासिक साधन, जैन भण्डारोंमें पड़े पड़े सड़ रहे हैं लेकिन उनका ठीक ठीक परिचय विद्वानोंको न मिल सकनेके कारण वे अभी तक प्रकाशमें नहीं आये । इस वस्तुका प्रयाल हमें पाठनके पुरातन जैन भण्डारोंका अबलोकन करते समय, आजसे कोई १८—२० वर्ष पहले हुआ । विद्यमान जैन साहुसमूहमें जिस ज्ञाननिमम स्थितप्रवृत्तु मुनिमूर्तिका दर्शन और चरणस्वरूप करनेसे हमारी इस ऐतिहासिक जिज्ञासाका विकास हुआ उस यथार्थ साधुपुरुष—पूज्यपाद प्रवर्तक श्रीमत्कान्तिविजयजी महाराज—की वात्सल्यपूर्ण भेरणा पाकर हमने यथावृद्धि इस विषयमें अपना अध्ययन—अन्वेषण—संशोधन—सम्पादनादि कार्य करना शुरू किया । हमारा संकल्प हुआ कि जैन भण्डारोंमें इतिहासोपयोगी जितनी सामग्री उपलब्ध हो उसे सोज खोज कर इकट्ठी की जाय और आधुनिक विद्वन्मान्य पढ़विसे उसका संशोधन और सम्पादन कर प्रकाशन किया जाय । हमारे इस संकल्पमें, उक्त पूज्यवरके गुरुभक्त और ज्ञानोपासक शिष्यवर्य श्रीमान् चतुरविजयजी महाराज तथा प्रशिष्यवर श्रीमान् पुण्यविजयजीकी सम्पूर्ण सहकारिता प्राप्त होने पर, हमने इन्हीं साध्यायनिरत ज्ञानतपसी प्रवर्तकजीके पुण्यनमसे अवित—प्रवर्तक श्रीकान्तिविजय जैन इतिहासमाला—नामक प्रन्थावलिका प्रारंभ किया और भावनगरजी श्री जैन आत्मानंद सभा द्वारा उसे प्रकाशित करने लगे । विज्ञापनिवेणी, कृपारसकोप, शशुंजयतीयोद्धारप्रवन्ध, जैन ऐतिहासिक गूर्जर काल्यसंचय और ग्राचीन जैनलेखसंग्रह इत्यादि ग्रन्थ उस समय प्रकट हुए और विद्यानेने उनका अपूर्व ऐतिहासिक महत्व समझ कर उस प्रबन्धको खूब सराहा ।

हमने अपना यह संशोधन कार्य, संवत् १९७१—७२ में, जब हमारा निवास बड़ोदरामें था, प्रारंभ किया था । उन्हीं दिनोंमें, वडोदा राज्यसी औरसे प्रकाशित होने वाली ‘शायकवाढस् ओरिएन्टल सीरीश’ का प्रकाशन कार्य मी शुरू हुआ था । उस सीरीशके उपादाक सर्वार्थ साक्षरतव श्रीचिमणलाल द्वाहाभाई दलाल यम्. ए. हमारे घनिष्ठ मित्र थे । पाठ्यके जैन भण्डारोंका व्यवस्थित पर्यवेक्षण करनेमें तथा उन भण्डारोंमेंसे अलग्य—उर्द्धव ग्रन्थोंकी प्राप्ति करनेमें भाई दलालजीको जो यथेष्ट सुविद्धा मिली थी वह उक्त पूज्यवरके प्रवर्तकजी ही की सुकृपाका फल था । इस लिये उनका और हमारा एक प्रकाशका सर्वीय जैसा सम्बन्ध था । समानशील और समव्यवसी द्वारा कार्यमें सहयोग देते—देते थे । इस सहयोगके परिणाममें, दिवंगेएक जैन ऐतिहासिक ग्रन्थ ‘शायकवाढस् ओरिएन्टल सीरीश’ द्वारा मी प्रकट प्रस्तुत उद्देश्य निश्चय किया और उनमेंसे, भोद्धाराजपराजय नाटक का सम्पादन कार्य उक्त पूज्यवरके प्रधानशिष्य श्रीचतुरविजयजी महाराजने, शुभारात्रालाप्रतिवेष नाटक विद्वाल प्राणृत प्रन्थका सम्पादन द्वारा और वसन्तविद्यास, मिलारपणगानन्, एम्मीरामदर्मदेव आदि ग्रन्थोंका सम्पादन कार्य स्थायं दलालजीने अपने द्वारमें हिया ।

नियमानुसार बड़ौदासे हमारा प्रस्थान हुआ और संकलिपत कार्यमें विशृंखलता उत्पन्न हुई। 'प्राचीनजैनलेखसंग्रह द्वितीय भाग,' 'कुमारपालप्रतिबोध' और 'जैनपेतिहासिक गूर्जरकाव्यसंचय' का जो कार्य अपूर्ण था वह तो किसी तरह पूरा किया गया लेकिन और विशेष कार्य कुछ न हो सका।

उसी समय पूनके सुप्रसिद्ध 'भाण्डारकर प्राच्यविद्यासंशोधनमन्दिर' (Bhandarkar Oriental Research Institute) की स्थापना हुई। बड़ौदासे प्रस्थान कर हम जब वस्त्रदीमें चतुर्मास रहे थे तब, इस 'संशोधनमन्दिर' के मुख्य उत्पादक और प्राणप्रतिष्ठापक स्वर्गीय प्रो० गुणे और श्रीमान् डॉ० वेल्वलकर आदि सज्जनोंका एक डेप्युटेशन वस्त्रदीके जैनसमाजकी मुलायात लेनेको आया और प्रसङ्गवश हमारा परिचय पा कर उन सज्जनोंने हमको पूना आनेका निम्रलक्षण दिया। चतुर्मासके बाद हम धूमते धूमते पूना पहुंचे। वहां उस संस्थाके उद्देश्यादिका विशेषावलोकन कर तथा उसके अधिकारमें आनेवाले राजकीय प्राचीनमन्त्रसङ्घहका विशाल साहित्यभाण्डार-जिसमें हजारों जैन-प्रन्थोंका भी समावेश होता है-का दिग्दर्शन कर उस संस्थाके विकासमें हमने भी यथाशक्ति योग देनेका प्रयत्न किया। उसके परिणाममें हमारी सिस्ति पूनामें निश्चित हुई। वहां, इस प्राच्यविद्यासंशोधनमन्दिरके काममें योग देनेके साथ 'भारत जैन विद्यालय' नामक संस्थाका भी एक विशाल आयतन खड़ा किया गया। सन् १९१८ में, पूनके उक्त संशोधनमन्दिरके उपक्रमसे भारतीय युराविदोंकी परिपद्धका प्रथम अधिवेशन (First Oriental Conference) हुआ। उसमें सम्मीलित होने वाले कुछ विद्याप्रिय और साहित्योपासक जैनमित्रोंको प्रेरित कर, हमने फिर अपने उसी संकलनपको कार्यमें प्रवृत्त करनेका एक नया आयोजन किया। जैन साहित्य संशोधक समिति नामका एक समिति का प्रतिष्ठापन कर कुछ परिचित जैहिंगणकी सहायतासे जैन साहित्य संशोधक नामका बृहदाकार त्रैमासिक पत्र तथा ग्रन्थमाला प्रकाशित करनेका प्रारंभ किया। परंतु यथेष्ट साहाय्यादि प्राप्त न होनेसे यथेष्टितरूपमें वह कार्य आगे न बढ़ सका।

पूनमें रहते समय, हमें स्वर्गीय लोकमान्य तिलक और महात्मा गांधी आदि महापुरुषोंका भी साक्षात् परिचय हुआ और हमारे जीवनमार्गमें विशिष्ट परिवर्तन घटित हुआ। जिस वेपकी चर्याका आचरण हमने मुग्धभावसे गाल्यकाल ही में स्वीकृत किया था उसके साथ हमारे मनका बादात्म्य न होनेसे, हमारे मनमें, अपनी जीवननप्रवृत्तिके विषयमें एक प्रकारका बड़ा भारी आन्तरिक असन्तोष बढ़ता जाता था। अन्तरमें वात्सविक विरागता न होने पर भी केवल धार्मवेषकी विरागताके कारण लोकों द्वारा वंदेन-पूजनादिका सन्मान प्राप्त करनेमें हमें एक प्रकारकी वंचना प्रतीत होती थी। इस लिये गुरुपदके भास्ते सुक हो कर किसी सेवक पदका अनुसरण करनेका हम मनोरथ कर रहे थे और अपनी मनोवृत्तिके अनुकूल सेवाका उपयुक्त क्षेत्र खोज रहे थे।

सन् १९२० में, देशकी मुकिके लिये महात्माजीने असहयोग आन्दोलनका मंगलाचरण किया और उसीके अनुसन्धानमें, राष्ट्रीय शिक्षणके प्रचार निर्मित, अहमदाबादमें गूर्जरातविद्यापीठकी स्थापनाका आयोजन हुआ। मित्रोंकी प्रेरणा और महात्माजीकी आशासे प्रेरित होकर हम पूनासे अहमदाबाद पहुंचे और वहां, अपनी मनोवृत्तिके अनुरूप कार्यसेवा पा कर, एक सेवकके रूपमें, गूर्जरातविद्यापीठकी सेवामें सम्मीलित हुए।

विद्यापीठने, अन्यान्य विद्यामन्दिरोंके साथ प्राचीन साहित्य और इविहासके अध्ययन और संशोधनके लिये पुरातत्त्वमन्दिर नामक एक विशिष्ट संस्थाका निर्माण किया और उसके मुख्य-आचार्य-पद पर हमारी नियुक्ति कर हमको अपने अभीष्ट क्षेत्रमें कार्य करनेका परम सुयोग दिया। पुरातत्त्वमन्दिरके सञ्चालनमें हमें अध्यापक श्रीमुहूर रामनारायण पाठक, अ० श्रीरसिकलाल परीख, पंडितप्रबर श्रीसुरललालजी आदि सहृदय मित्रोंका प्रारंभ ही से हार्दिक सहजार मिला और इनके सहकार और सहविचारसे शीघ्र ही एक पुरातत्त्वविषयक प्रन्थावालि प्रकट करनेकी योजना दृष्ट्यांग में गई। 'गूर्जरातपुरातत्त्व अन्दिर' एक राष्ट्रीय संस्था थी इस लिये उसका कार्यक्षेत्र राष्ट्रीय दृष्टिकोण

हे फर मिश्रित करना आवश्यक था। अत एव उस संस्थाके द्वारा ऐसे साहित्यका निर्माण और प्रकाशन करना समुचित था जो किसी एक ही सम्प्रदाय या साम्राज्यिक साहित्यका पोषक हो। तदर्थं जैन, बौद्ध, वैदिक और इस्लामिक साहित्यको भी उसके कार्य क्षेत्रमें सम्पीलित किया गया और उसी दृष्टिसे पुरातत्त्वमन्दिर इन्द्रियावली का प्रकाशन चालू किया गया। कुछ प्रासंगिक पुस्तकोंके सम्पादनके अतिरिक्त, हमनें अपने लिये तो वही पुराना संकलित कार्य, मुख्य रूपसे मनमें निश्चित कर रखा था; और उसके अनुसन्धानमें सबसे पहले हमने इस प्रबन्धचिन्नामणि की एक युस्सम्पादित आवृत्ति तैयार करनेका और उसके साथ, इसीकी पूर्विकृप, प्रबन्धकोष, कुरारपालग्रन्थ, वस्तुपालचरित्र, विमलग्रन्थ आदि ग्रंथ; तथा शिलालेख, ताम्रपत्र, मन्थप्रशस्ति—इतादि अन्यान्य प्रकारके गूजरातके इतिहासके साधनभूत संग्रह की संकलना करनेका उपकरण किया।

प्रबन्धचिन्नामणिका जौ संस्करण, आजसे ४५ वर्ष पहले, शाली रामचन्द्र शीनानाथने प्रकाशित किया था, वह यद्यपि उस जमानेके मुताबिक टीक था, लेकिन आशुनिक दृष्टिसे वह बहुत ही अपूर्ण और अद्भुद्द है। उसकी पाठ शुद्धि टीक नहीं है, मौलिक और प्रक्षिप्त पाठोंका उसमें कई पृथकरण नहीं है और कई पद्योंका—विशेषकर प्राकृत पद्योंका—लघु वहा विकृत कर दिया है। कुछ तो पुरातन लिपिविषयक अज्ञानता, कुछ ऐतिहासिक ज्ञानविषयक अल्पमें ज्ञाना, कुछ सांग्रहायिक परंपराविषयक अनमिज्ञाता और कुछ प्राकृतादि भाषा विषयक अपरिचितताके कारण उनके संस्करणमें बहुतसी श्रृंगारों रह गई, जिससे प्रथका मुस्पष्ट त्वरण समझनेमें कठिनाई पड़ती है। इस लिये सबके पहले हमने इस प्रथकी पाठशुद्धि करनेके लिये जैन भण्डारोंमेंसे पुराती प्रतियों प्राप्त करनेका प्रयत्न किया। यथालभ्य प्रतियां मिल जानेपर प्रथकी प्रेसकारी तैयार की गई और कुछ हिस्सा छपनेके लिये प्रेसमें भी दे दिया गया। उनका कार्य प्रारंभ हो कर प्रन्थके दूसरे प्रकाश तकका हिस्सा जब मुद्रित हो चुका था, तब, कईएक कारणोंको ले कर, हमारा युरोप जानेका इरादा हुआ। सौचा था कि वहां वैटे वैटे मी इस मंथका मुद्रणकार्य चालू रह सकेगा और युरोपसे लौटते तक प्रन्थ पूरा हो जायगा तो फिर तुरन्त आगेका काम प्रारंभ कर दिया जायगा। इस लिये हमने इसी प्रतियां मी यहां (जर्मनीमें) जा कर मंगवा लीं। लेकिन युरोपके सामाजिक और औद्योगिक वातावरणते हमारे मनको अपने आजीवन-अभ्यास विषयसे विचलित कर दिया। इन पुरानी धारोंकी सोजन्याज करनेके बदले वहांके जो वर्तमान राष्ट्रीय, सामाजिक और औद्योगिक तंत्र हैं उनका विशेषविद्वेषन कर दिन्ही एक सजीव प्रयुक्तिमें संलग्न होनेके सरंग हमारे मनमें उड़ने लगे और उसी दिशामें हुठ कार्य करनेके विचारोंसे भल व्यस्त रहने लगा। सबव इसके, वहां पर वैटे कर पो, इस प्रथका मुद्रणकार्य समाप्त कर देनेका संकल्प वहांसे करके निकले थे, वह पूरा नहीं हो पाया।

सन् १९२९ के दीसेंसरमें हम यापत भारत आये। उस समय, लाहौर कॉम्प्रेसफै ग्रोग्रामके मुताबिक देशमें नये विचारोंसी प्रान्तिस्तुपक लहरे उठ रही थीं। एक तो स्वयं युरोपसे मस्तिष्कमें कुछ नये विचार भर कर लाये थे और दूसरा यहां पर भी उसी प्रकारका मिन्हार्यस्तुपक प्रभुच्य यातावरण पनीभूत हो रहा था। गूजरात विद्यार्थियों मी भी विचारा यातावरण न होकर सलामही युद्धका ही यातावरण घूँझ रहा था। इस लिये इस प्रन्थमें, उस अपूरे पहले हुए पार्थियों तात्पात्र हाथमें देनेकी कोई इच्छा नहीं होती थी। आपियमें सत्याग्रह-संघाय छिड़ ही गया और दूसरेके सम ही सेवोंकी तरट, एम भी यथाक्रम ६ मासके लिये नासिकके शान्तिदायक समाधिविधायक कारागारमें जा पहुंचे। सभुपुर ही नासिकके मेंटहू जेलगामेनें जो वित्ती शान्ति और समाधि अनुभूत थी यद जीवनमें अपूर्ण और अलभ्य थमु थी। यद जेटरामा, हमारे लिये तो एक परम शान्त और हुनि विधा-विद्वार यन गया था। उमसी शृंगी जीपनमें रामसे वही सम्पर्चि मालदू देती है। सनामपन्थ सेठ जमनालालजी पजाज, कर्मदीर भीनीरीगां, देशप्रेमी सेठ भीरलालजी भीकन्दैयालाल मुंझी आदि जैसे परम सन्नांद्या भगिनी गार्वन्पर रहनेरे और सद्गते साथ हुठ न हुठ विद्या-विषयक चर्चा ही सदैय घटर्ता रहनेते, हमारे मनमें ऐ ही

पुराने साहित्यिक संकल्प; वहां फिर सजीव होने लगे। सहवासी मित्रगण भी हमारी हृषि और शक्तिका परिचय प्राप्त कर, हमको उसी संकलिपत वार्यमें विशेष भावसे लगे रहनेकी सलाह देने लगे। मित्रवर श्रीमुंशीजी, जो गूढ़-रातकी अस्मिताके सर्वश्रेष्ठ प्रतिनिधि हैं और जो गूड़रातके पुरावन गौरवको आवाल-गोपाल तक हृदयंगम करा देनेकी महती कला-विभूतिसे भूपित हैं, उनका तो दृढ़ आप्रह ही हुआ कि और सब तरंग छोड़ कर वही कार्य करने ही से हम अपना कर्तव्य पूरा कर सकते हैं। अन्यान्य घनिष्ठ मित्रोंका भी वही उपदेश हमें वहां बैठे थे वारावर मिलने लगा और जेलखानेसे मुक्त होते ही हमें वही अपने पुराने बही-खाते टटोलनेकी आज्ञा मिलने लगी।

संवत् १९८६ के विजयादशमीके दिन, मित्रवर श्रीमुंशीजीके साथ ही हमें जेलसे मुक्ति मिली। हम बम्बई हो कर अहमदाबाद पहुँचे। यद्यपि जेलखानेके उक्त वारावरणने मनको इस कार्यकी तरफ बहुत कुछ उत्तेजित कर दिया था, तो भी देवाकी परिशितिका चालू क्षोभ, रह रह कर मनको अस्थिर बनाता रहता था। अखिरमें श्रीमान् वायू वहादुरसिंहजी सिंधीका, शान्तिनिकेतन आ कर जैन साहित्यके अध्ययन-अध्यापनकी व्यवस्था हाथमें लेनेका आप्रह पूर्ण आपंत्रण मिलनेसे, और हमारे सदैवके सहचारी परमवन्धु पण्डित प्रवर श्रीसुखलालजीकी भी तद्विपक वैसी ही आज्ञा होनेसे, हम शान्तिनिकेतन आ पहुँचे। यहां विश्वभारतीके ज्ञानमय वारावरणने हमारे मनको एकदम उसी ज्ञानोपासनामें फिर स्थिर कर दिया और हमारी जो वह चिर संकलिपत भावना थी, उसको यथेष्ट समुत्तेजितकर दिया। साथ ही मैं, उस संकल्पको कार्यमें परिणत होनेके लिये, जिस प्रकारकी मनःपूत साधन-सामग्रीकी अपेक्षा, हमारे मनमें गृह भावसे रहा करती थी, उससे कहीं अधिक ही विशिष्ट सामग्री, सच्चरित्र, दानशील, विद्यानुरागी श्रीमान् वहादुर-सिंहजी सिंधीके उत्साह, औदार्य, सौजन्य और सौहार्द द्वारा प्राप्त होती देख कर, हमने वडे आनन्दसे इस सिंधी जैन ज्ञानपीठके संचालनका भार उठाना स्वीकार किया।

यद्यपि, प्रारंभमें हमने इस स्थानका, जैनवाड्यका अध्ययन-अध्यापन करानेकी दृष्टिसे ही स्वीकार किया; लेकिन हमारे मनस्तलमें तो वहीं पुराना संकल्प दटा हुआ होनेसे, यहां पर स्थिर होते ही, वह संकल्प फिर सहसा मूर्ति-मान् होकर हमारे हृदयांगमें नाचने लगा, और वहीं पुरानी ऐतिहासिक-सामग्री, जिसको हमने आज तक, मुँजीजी पुँजीजी तरह वडे यथासे संचित रख कर बन्दी बना रखी है, हमारे मानसचक्षुके आगे खड़ी हो कर, कठाक्षपूर्ण टक-टकी लगा कर ताकने लगी। हमारा व्यवस्थी मन फिर इस कामके लिये पूर्ववत् ही लालायित और उसुक हो उठा।

प्रसङ्ग पाकर हमने अपने ये सब विचार ज्ञानपीठके संस्थापक श्रीमान् वहादुरसिंह वायूसे कह सुनाये; और 'ज्ञानपीठ'के साथ एक 'ग्रन्थमाला'भी स्थापित कर जैन साहिलके रङ्गतुल्य विशिष्ट प्रयोगोंको, आदर्शरूपसे तैयार कर-करवा, प्रसिद्धिमें लानेका प्रयत्न होना चाहिए, इस बारेमें सहज भावसे प्रेरणा की गई। इन यात्रोंको मुनते ही सिंधी-जीने, उसी क्षण, वडे औदार्यके साथ, अपनी सम्पूर्ण सम्बति हमें प्रदान की और ऐसी 'ग्रन्थमाला' के प्रारंभ करनेका और उसके लिये यथोचित द्रव्यव्यय करनेका यथेष्ट उत्साह प्रकट किया। इसके परिणाममें, सिंधीजीके खगर्यि पिता सामुचरित श्रीमान् डालचन्दजी सिंधीकी पुण्यस्मृति निमित्त इस सिंधी जैन ग्रन्थमाला का प्रारुभाव हो कर, आज इसका वह प्रथम 'मणि'-केवल 'मणि' ही नहीं 'चिन्तामणि'-पाठकोंके करकम्लमें समर्पित हो रहा है।

इस अंधके पूर्व संस्कारणादिका परिचय-

विदेशीय विद्वानोंमें, सबसे पहले इस मन्द्यका परिचय, किन्नौक पार्वत साहवको हुआ जिन्होंने गूड़रातके इति-हासका रासमाला नामक सवसे पहला और अनेक वातोंमें अपूर्व मन्य लिया। रासमाला के लिये ऐतिहासिक सामग्री इकट्ठी करनेका उपक्रम, जब फार्मस साहवने शुरू किया थय, प्रारम्भही में उन्हें वीरचन्द भण्डारी नामक एक शिथित जैन गृहस्थका अमूल्य सहकार मिल गया, जिसकी सहायतासे उन्हें गूड़रातके पाटणके किसी जैनयतीजीके पास, प्रस्तुत मन्यकी एक प्रति प्राप्त हो गई। रासमालाके पूर्वभागके प्रणवनमें प्रबन्धचिन्तामणिरे थहरु हुज़ सहायता ली

गई है इतना ही नहीं लेकिन उसका सारा ही सारभूत ऐतिहासिक कलेवर प्रायः इसी प्रन्थके आधार पर खड़ा किया गया है।

फार्बस साहबको जो पोथी पाठणसे मिली थी वह उन्होंने वस्त्रद्वीकी 'फार्बस साहित्य सम्बन्धका मेंट दे दी लेकिन पीछेसे चह पोथी बहांसे लुप्त हो गई। वस्त्रद्वीक सरकारने जब अपना पुरातन साहित्यके अन्वेषण और संग्रहकरणका कार्य शुरू किया, तब डॉ० व्युल्हर और प्रौ० पीटर्सनको इस अन्धकी प्राप्ति करनेकी बड़ी उत्कंठा हुई। वहुत कुछ परिश्रम करनेके बाद, सन् १८७४ में भटनेके जैनप्रन्थभण्डारमें; इस अन्धकी १ प्रति डॉ० व्युल्हरके देवतनेमें आई, जिसकी तुरन्त नकल करवा कर उन्होंने लंडनकी इन्डिया ऑफिस लाइब्रेरीको मिजवा दी। सन् १८८५ में, प्रौ० पीटर्सनको इसकी १ प्रति प्राप्त हुई जिसके बारेमें, उन्होंने, अपनी पुस्तकियक सोज बाली दूसरी रीपोर्ट (पृ० ८६-८७) में इस प्रकार, इस पर, उल्लेख किया है-

“इस प्रकार जल्दीमें किये गए इन उल्लेखोंके अंतमें, कहना चाहिए कि—वर्षके आखिरी भागमें, मेरुदुर्गरचित प्रदर्शनितामणि प्रथकी १ प्रति प्राप्त करनेमें मैं सफल हुआ हूं। यह महत्वका ऐतिहासिक प्रन्थ बड़ा उपयोगी है। अपने प्रन्थसंग्रहमें इस प्रन्थकी युद्धि करनेका वहुत समयसे हमारा प्रयत्न रहा।” इत्यादि।

यह प्रति वस्त्रद्वीक सरकारके प्रन्थसंग्रहमें—जो वर्तमानमें, पूजाके भांडारकर प्राच्यविद्यासंशोधन मंदिरमें, सुरक्षित है—अद्यापि विद्यमान है।

इसके सिवा, डॉ० व्युल्हरको एक और प्रति, ऊमाशंकर यादिक नामके गूजरातके किसी शासी द्वारा प्राप्त हुई, जिसकी भी नकल करवा कर, उन्होंने उक्त इन्डिया ऑफिस लाइब्रेरीमें मिजवा दी।

पीटर्सन साहब द्वारा प्राप्त हुई उक्त पूतावाली प्रतिको देवतकर, गूजरातके प० रामचन्द्र दीनानाथ शासीको, जो पीटर्सन साहबके निरीक्षणमें साहायक रूपसे काम करते थे, इस प्रन्थको मुद्रित कर प्रकाशित करनेकी इच्छा हुई। प्रयत्न करनेसे उनको, उक्त प्रतिके सिवा, दो-तीन अन्य प्रतियाँ भी जैन उपाध्ययोग्यमें सिल गई थीं जिनका आधार ले कर उन्होंने आपना संस्करण, विक्रम संवत् १९४४ में, प्रकट किया। रामचन्द्र शासीने इस प्रन्थका गूजराती भाषान्तर सामान्य तीयार किया और उसको भी सं० १९४५ में छपाकर प्रसिद्ध किया।

ऐतिहासिक दृष्टिसे इस अन्धका वदा महत्व होनेसे, इसका इंग्रीजी भाषामें अनुवाद करनेकी आवश्यकता डॉ० व्युल्हरको मालूम थी; इस लिये उन्होंने, संस्कृत अधिकों इंग्रीजीमें अनुवाद करनेवाले सिद्धहस्त विद्यान् प्रौ० सी. एच. डॉनी. एम. ए. को, इसका अनुवाद करनेकी प्रेरणा की। तदुत्तरां डॉनी साहबने वहे उत्तराहसे इस अन्धका संपूर्ण इंग्रीजी अनुवाद तीयार किया, और कलकत्तामें एसियाटिक सोसायटी और बंगालने उसे प्रकाशित किया।

डॉनी साहबका मुख्य आधार, उक्त रामचन्द्र शासीद्वारा प्रकाशित आवृत्ति पर ही रहा, परंतु उन्होंने उपर्युक्त डॉ० व्युल्हराली तथा प्रौ० पीटर्सनवाली इतालिसित प्रतिवेद्योंकी कुउ कुछ तुनरुपयोग किया और कहीं कहीं ठीक अर्थात्मन्यान प्राप्त फरनेकी देखा थी। डॉनी साहबके मुकाबलेमें, रामचन्द्र शासीका गूजराती भाषान्तर सर्वथा निरपेक्षी और असम्यद्वय भास्त्रमें देखा है।

प्रस्तुत आपृत्तिके सम्पादनमें प्रयुक्त सामग्री।

जिन प्रतियोंना उपयोग हमने इस आपृत्तिमें दिया है उनका संक्षेपपूर्वक परिचय इस प्रकार है।

- (१) A. अदमदामादेके देलाका उपायन नामक प्रसिद्ध जैन उपाध्ययमें सुरक्षित जैन प्रसंगभण्डारी संपूर्ण प्रति। [दिप्या नं. ३०; प्रति नं. ३४] इसको हमने A अशुर्से संकेतित किया है। इस प्रतिके ५३ पत्र हैं जो दोनों परम दिप्ये हुए हैं। प्रतिके अन्तमें इस प्रकार संक्षिप्त पुस्तिका देत है—“सं० १५०९ पर्यं काशुगुमुदि ५ पार रवौ मरण् ३

पठता छींगीः ॥ ७ ॥ “इनमो विना [य] काय ॥” लिपिकार कोई अज्ञेन पठता नामक मालूम देता है। लिपि जैननामगती है और अक्षर सुवाच्य तथा सुन्दर है। पाठ मी प्रायः शुद्ध है।

(२) B अंहमदावादके उसी उपाश्रयकी दूसरी अपूर्ण प्रति । [डिव्वा नं. ५१, प्रति नं. ३५] इसका निर्देश हमने B अक्षरसे किया है। यह प्रति थोड़ी सी अपूर्ण है। इसके कुल ७१ पत्र हैं। अन्तके दो-एक पत्र नष्ट हो गये हैं, जिससे प्रस्तुत आवृत्तिके पृष्ठ १२१ की ५ थीं पंक्तिके पश्चात्से लेकर अन्ततकका भंगभाग इसमें अनु-पठन्द्वय है। इस प्रतिका यह अन्तभाग प्रायः तीन सौ वर्ष पहले ही नष्ट हो गया मालूम देता है। क्यों कि इसके विद्यमान अन्तके पत्र (७१) की अन्तिम पंक्तिके नीचे यह पत्र लिरा हुआ है—

संविभेनान्विपदा तपगणपतिविजयसेनसूरीणाम् । श्रीरामविजयकृतिना चिक्कोशे प्रतिरियं मुक्ता ॥

इस पद्यका अर्थ यह है कि—तपागण (तपागच्छ) पति आचार्य विजयसेनसूरीके संविभ शिष्य श्रीरामविजयने यह प्रति ज्ञानकोश (ग्रन्थभण्डार) में रखी ।

तपागच्छीय पट्टावलियोंके अनुसार विजयसेनसूरिका सर्वेवास विक्रम संवत् १६७१ में हुआ, अतः उनके शिष्य रामविजय प्रायः उसी समयमें विद्यमान होने चाहिये यह स्वतः सिद्ध है।

- अन्तिम पत्र अनुपलब्ध होनेसे इस प्रतिके लिये जानेके समयके बारेमें कोई निश्चित विचार नहीं किया जा सकता; तो मी प्रतिकी स्थिति देखते हुए गालूम होता है कि यह प्रति मी करीब ५०० वर्ष जिवनी पुरानी जरूर होगी। इस प्रतिका पाठ यद्यपि अद्विद्युष्ट है; तो मी कहीं कहीं इसका लेख यह बहुत शुद्ध और उपयुक्त मिल जाता है। इस प्रतिका किसीने पीछेसे कहीं कहीं संशोधन मी किया है और कई जगह पत्रोंके पार्श्वभागमें कुछ श्लोकादि मी दिए दिये हैं।

(३) P पाटणके सामग्रगच्छके उपाश्रयमें संरक्षित ग्रन्थभण्डारकी संपूर्ण प्रति । पत्र संख्या ८४ । ग्रथम पत्र और अन्तिम पत्रका एक-एक पार्श्व विलुप्त कोरा। इस प्रतिका नामनिर्देश हमने P अक्षरसे किया है। अन्तर्में ऐरकादिका, सूचन करनेवाला फोई डेसर नहीं है। पत्रादिकी अवस्था देखते हुए कमसेकम ३-४ सौ वर्षकी पुरानी तो यह होगी दी। लेकिन, जिस आदर्श परसे यह प्रति नकल की गई है वह आदर्श बहुत पुरातन मालूम देता है। सम्भवतः याहपत्रमय हों। क्यों कि इस प्रतिमें यहुतसी जगह विनटीभूत शब्दांशं या पंक्त्यांशं सूचित करनेके लिये इस प्रकारकी अक्षरशब्द्य रेखायें रख दी गई हैं जिनका वातर्यं यह है कि जिस आदर्श परसे यह नकल की गई है उसमें ये शब्द जीर्ण-जीर्णादिके कारण नष्ट-भष्ट होगये होने चाहिए। इस प्रतिके पाठभेदादिके संघर्षमें आगे पर लिरा गया है।

(४) Po पूता, भांदारकर प्राच्यविद्यासंशोधन मंदिरमें सुरक्षित, राजसीय प्रधासंप्रह-जो पहले डेसर कोलीजमें रक्षित होनेसे, डेसरकोलीज-संसाध कहलाया था-पी यह प्रति जिसका जिक्र डेसर पीटर्सन साहृदयके डेसरके साथ हुआ है। इसका संभान्द नंबर ६१७, सन् १८८५-८६ है। पत्र संख्या ८१। इसके अन्तमें कोई लेसरकारिका नाम नहीं है। प्रति यहुत पुरातन नहीं मालूम देती। अनुमानतः २००-२५० वर्ष जिवनी पुरातन होगी। इसका सूचन हमने Po अक्षरसे किया है।

(५) D शासी रामधन्द्र दीनानायने सं० १९४४ में, ग्रन्थसे इस भ्रंपणा दो संस्करण प्रकट किया उसको हमने D संशासे निर्दिष्ट किया है।

D_a, D_b, D_c, D_d. रामधन्द्र शासीने अपने संस्करणमें मुख्यतया डपर नं. ४ में उद्दिरित पूनावानी भ्रिता ही पत्रयांग किया है; लेकिन उत्त और मी शुटित और संटित ऐसी दो-नीन प्रतियां दसरों मिठी भी तिन पत्रों उन्होंने उत्त पाठभेद संभान्द वर्णेण अव्यवसित उपोग किया था और इन प्रतियोंरी उन्होंने A, B, C, D आरि संसाये

रखी थीं। इन प्रतियोंके पाठोंको भी हमने कहीं कहीं संगृहीत किया है और उनका क्रमानुसार Da, Db, Dc, Dd, इत्यादि अक्षरोंसे निर्देश किया है।

(६) Pa पाटणके संघके भण्डारकी [डिव्वा नं. ५०, प्रति नं. ८] एक प्रति जिसमें सिर्फ प्रबन्धचिन्तामणिगत 'सुंजभोजप्रदैलिखा हुआ है। वास्तवमें यह प्रति है तो राजशेषरसूरिरचित 'प्रबन्धकोष' की, लेकिन इसके अन्तमें प्रबन्धचिन्तामणिका उक्त प्रबन्ध भी लिखा हुआ है। इस प्रतिकी कुछ पत्र संख्या १०५ हैं जिसमें १ से ११ पत्र तक प्रबन्धकोप लिखा हुआ है और शेषके पत्रोंमें उक्त प्रबन्ध है। यह प्रति विक्रम संवत् १४५८ में लिखी गई थी। इसके अन्वयका पुष्पिका लेख इस प्रकार है—

"इति श्रीमेत्रहुत्वाचार्यविरचिते प्रबन्धचिन्तामणी श्रीभोजराजश्रीमीमधूपयोर्नावदातवर्णनो नाम द्वितीयः प्रकाशः ॥ छ ॥ प्र० ४६४ ॥ श्रीः ॥ छ ॥ संवत् १४५८ वर्षे प्रथम भाद्रपदशुद्धि ११ एकादश्यां तिथौ दुधधारे श्रीसागर-तिलकसूरिणा स्वशिष्यपठनार्थं श्रीअणहिलप्रस्तरने प्रबन्धानि राजशेषरसूरिरचितानि आलिलेण ॥"

यह प्रति ग्रायः सुन्दर और बहुत सुन्दर अक्षरोंमें लिखी हुई है। इसका उपयोग हमने सुन्दर और भोजप्रबन्धवाले भागमें किया और इसे Pa अक्षरसे सूचित किया है।

(७) Pb पूनाके उक्त राजकीय संप्रदायमें, नं. ४५०, संव. १८८२-८३, की एक प्रति है जिसमें सिर्फ इस प्रथका द्वितीय प्रकाश-भोज-श्रीमधूपवर्णन नामका-लिखा हुआ है। इसके प्रान्तमें लेखक आविका कुछ निर्देश नहीं है। अनुमान ३०० वर्षे जितनी पुरातन होती। इसके कुछ पत्र १९ हैं जिसमें १२ वां पत्र अप्राप्त हैं। इसका पाठ साधारण है लेकिन प्रबन्धान्वर्गत वर्णनोंका क्रम-विपर्यय और न्यूनाधिक्य बहुत अद्यिक पाया जाता है। इसका सूचन हमने Pb के संकेतसे किया है।

(८) इस ग्रन्थके आदिके दो प्रकाशवाली १ प्रति, पाटणके तपागच्छके भण्डारमेंसे भिली [डिव्वा नं. ५७, प्रति नं. ५७] जिसके कुछ १६ पत्र हैं। यह प्रति सं० १५२० की लिखी हुई है। इसका अन्तिम पुष्पिका लेख इस प्रकार है—

"संवत् १५२० वर्षे श्रावणशुद्धि १३ दिने तपागच्छनायक श्रीलक्ष्मीसागरसूरिशिष्य पं० ज्ञानहर्षगणिपादानां सा० सोनाकेन भारा० रुडी प्रसुप कुञ्जयुक्ते श्रीतिळांदंभक्त्या लिखापितं ॥ छ ॥ श्रीसंघस कल्याणमस्तु ॥ छ ॥ श्रीः ॥"

इस प्रतिका पाठ ग्रायः A आदर्शके समान है इस लिये इसको हमने कोई वास्त संहा नहीं दी और सम्पादनमें कोई विशेष सहायता भी इससे नहीं ली गई।

(९) पाटणके ऊपरवाले ही भण्डारमेंसे, पव्र संख्या १७ की एक प्रति [डिव्वा नं. ६६, प्रति नं. ११२] जिसमें, उपर्युक्त Pa आदर्शकी समान, सिर्फ सुंज-भोजप्रबन्धका हिस्सा लिखा हुआ है। इसका पाठ भी ऊपरवाले नं. ८ में सूचित आदर्शके समान ही पाया गया; इस लिये इसका भी कोई नामनिर्देश करना आवश्यक नहीं समझा।

(१०) प्रो० सी. ए८, दोनोंते जो इस प्रथका द्वयीजी भारपातर किया है उसमें उन्होंने, गूढ़ प्रथके पाठक संशोधन करनेका भी कुछ प्रयत्न किया है; और शाकी सम्बन्धकी सुदृश आवृत्तिके साथ, पूनावाली P प्रतिका वया लंडनकी इन्डिया ऑफिसकी दॉ० व्युल्हरवाली प्रतियोंका भी उपयोग कर कुछ पाठमें, अपनी पुस्तककी पाइ-टिप्पनीयोंमें घटूत लिये हैं। लेकिन वे सब पाठमें प्रायः हमारे इन संगृहीत आदर्शोंमें आ जाते हैं इस लिये हमने उनका धृपत्र संकेतके साथ कोई निर्देश करना उपयुक्त नहीं समझा।

मास आदर्शोंका वर्गीकरण.

इस प्रकार हमारे पास जो यह आदर्श-सामग्री उपस्थित हुई उसका परीक्षण करने पर हमें इसके ४ वर्ग माल्य दिये। १ वा वर्ग, A आदर्शका है जिसकी समानता प्रायः Po, D, Da और Dc आदर्शोंमें पाई जाती है।

२ रा वर्ग, B आदर्शका है जिसकी समानता Db और Dd आदर्शोंके साथ है। ३ रा वर्ग, Pa और Pb का; और ४ था वर्ग, P का है।

इन बगेंमेंसे पहले और दूसरे बगेंमें तो परस्पर विशेष करके कुछ शब्दों और प्रतिशब्दोंका ही पाठभेद है और कुछ थोड़ेसे पद्योंकी न्यूनाधिकता मिलती है। ३ रा वर्ग, भोजप्रवन्धवाले प्रकरणोंमें कुछ विशेष रूपसे भेद प्रदर्शित करता है। इसमें भी Pa आदर्शकी अपेक्षा Pb आदर्श अधिक मिलता है। इसमें कई प्रकरण, अन्यान्य आदर्शोंकी अपेक्षा आगे-भीछे लिखे हुए मिलते हैं इतना ही नहीं परंतु वे न्यूनाधिकरूपमें भी मिलते हैं।

P सञ्ज्ञक आदर्शकी विशेषता।

४ था वर्ग जो P आदर्शका है वह एक विषयमें सबसे मिलता और विशिष्टता रखता है। इस आदर्शमें सिद्धराज, कुमारपाल, वसुपाल-वेजपाल और अन्यान्य व्यक्तियोंके प्रशंसात्मक जो पद्यसमूह-सोमेश्वरदेव रचित कीर्तिकौमुदी नामक काव्यमेंसे-तत्त्वात्मणों पर, उद्भूत किया गया है वह अन्य किसी भी आदर्शमें उपलब्ध नहीं है। इन पद्योंकी संख्या कोई सब मिला कर १२० है। इतनी बड़ी पद्यसंख्याका इसमें प्राप्त होना; और, दूसरे सब आदर्शमें उसका सर्वथा अभाव मिलना; एक वहुत बड़ी समस्या उपस्थित करता है। क्या ये पद्य स्वयं प्रथकारण, पहले या पीछे, उद्भूत किये हैं या किसी अन्य लेखक द्वारा ये प्रक्रिया हैं? प्रथकार स्वयं यत्र तत्र ऐसे वहुतसे पद्योंका अवतरण करनेमें खूब अन्यतर हैं, यह तो, उनके इस ग्रंथका अवलोकन मात्र करने ही से, निर्विवादरूपसे, मान लेना पड़ता है। सोमेश्वरदेवकी कीर्तिकौमुदीमें भी इसी प्रकार उद्भूत किये हुए दो-एक अन्य पद्योंका अवतरण, (देरो पृ० ४८, और ६३) और और आदर्शमें भी दियाई देनेके कारण, प्रथकारके सन्मुख कीर्तिकौमुदी काव्य मीरपा हुआ होगा, इस बातको मान-लेनेमें भी कोई आपत्ति नहीं दियाई देती। तो क्या ये सब पद्य भी उन्हेंने ही अवतारित किये हैं? अगर उन्होंने ही ने किये हैं तो फिर, केवल इस आदर्शको छोड़ कर, और और आदर्शमें भी ये क्यों नहीं मिलते? कोई विशेष साधन जब तक प्राप्त नहीं हो सकता, तब तक इस प्रभका निश्चित उत्तर देना अशक्य है। तो भी एक अनुमान जो हमें हो रहा है उसे पाठकोंके जानेके लिये यहाँ निर्दिष्ट कर देते हैं। जैसा कि हम ऊपर, इस P प्रतिका परिचय देते हुए लिय आये हैं, कि वह प्रति, जिस आदर्श परसे उत्तरी गई है वह आदर्श वहुत पुराना होना चाहिए। अतः आदर्शके प्राचीन होनेमें तो हमें विश्वसनीय आधार प्राप्त होता है। इस प्राचीनत्वसे हमारा अभिप्राय स्वयं प्रथकारके समसामयिकत्वसे है। यदि यह प्रति, जैसा कि हम अनुमान करते हैं, ३-४ सौ वर्ष जितनी पुरानी है; तो, इसका मूल आदर्श, जो उस समय जीर्ण दशामें विश्वमान होना चाहिए, कममें कम वह भी ३-४ सौ वर्ष जितनी पुरानन होना चाहिए। यदि यह बात ठीक हो तो उस प्राचीन आदर्शका समय उतना ही पुरानन हो जायगा जितना प्रथकार मेरुदग्धार्थका है। मेरुदग्धार्थको प्रबन्धचिन्तामणिकी रचना समाप्त किये आज ६२८-२९ वर्ष हुए। हमारे अनुमानके सुनाविक उक्त प्राचीन आदर्शको भी इतने वर्ष तो सहज हो सकते हैं। इससे हम यह अनुमान करनेके लिये अनुग्रहित होते हैं कि, इस आदर्शका जो मूल आदर्श होगा वह स्वयं मेरुदग्धार्थका, वह आदर्श होगा, जिसे या तो उन्होंने सबसे पहले सेवार किया हो; या सबसे पीछे सेवार किया हो। सबसे पहले सेवार करनेका तात्पर्य यह, कि पहले पहल भ्रथकारने, जब प्रथकी स्वता ही, तब उन्होंने प्रसंगप्राप्त कीर्तिकौमुदीके ये सब पद्य, अन्यगत वर्णनमें वहुत उपयुक्त समझकर, विपुलताके साथ उद्भूत कर लिये; लेपिन पीछेसे मंथका पुनः संदीपन करते समय, इतने पद्योंका, एक साथ एक ही भ्रथमेंसे उद्धरण करना मनमें ठीक न जाना हो इस लिये उन्हें छोड़ कर, उस संदीपित आदृतिकी, और और नकलें करवाई गई हों और उन्हीका सर्वप्र प्राचार किया गया हो। वह मूल प्रथमादर्श पहीं बण्डारमें ज्यों का लों पढ़ा रहा हो, जिसके नाशकालमें, इस विश्वमान P आदर्शके लेरकर उसका पुनरवर्णन कर, इस रूपमें, उसे विरजीवी यना दिया हो। दूसरा विकल्प जो

यह कि—या जिसे पीछे इस आदर्शकी सृष्टि हुई हो; वो उसका कारण यह हो सकता है कि पहला आदर्श जो ठीक तैयार हुआ उसकी अनेक नकलें तैयार हो कर सर्वत्र प्रचारमें आगई हों; और फिर पीछे से, बहुत कुछ समयके बाद, भण्डारके प्रयत्नके कठेवरको विशेष पुष्ट बनानेके लिये, वे सब पद्य अपनी कोईएक प्रतिमें प्रविष्ट कर उसका एक नवीन और परिवर्द्धित संस्करण बनाना चाहा हो; लेकिन उसका कोई विशेष प्रचार न होकर वह ज्यों कि दोनों भण्डारहीमें पढ़ी रही हो और उपर्युक्त अनुमानानुसार, P आदर्शके लेखकने उसका यह पुनरबनार कर लिया हो। इन दोनों विकल्पोंमेंसे कौन विकल्प विशेष बलवान् हो सकता है इसके लिये भी हमें कुछ कल्पना हुई है, लेकिन उसका यहां पर विवेचन करना ज्याइह गौरवरूप हो जायगा, इस लिये आगेके भागमें यथाप्रसङ्ग उसका भी दिव्यदर्शन करा दिया जायगा। इससे एक यह खास बात भी सूचित होती है, कि दोनों विकल्पोंमेंसे यदि कोईएक विकल्प भी ठीक हो सकता है, तो उस परसे, इस P आदर्शका मूलादर्श स्वयं प्रथकारका एक आदर्श या, यह प्रमाणित हो सकता है।

इस P आदर्शकी नेकल उतारने वालेने, पुरातन आदर्शकी लिपिको ठीक नहीं समझनेके कारण, अक्षरांतर करनेमें बहुत भूलें की हैं जिससे इसका पाठ बहुत कुछ अशुद्ध बन गया है; तो भी जहां अन्य आदर्शमें छछ पाठ मिलता है या अयथोपर्युक्त शब्द दियाई देते हैं, वहां इस प्रतिमें बहुत शुद्ध पाठ और समुचित शब्द उपलब्ध होते हैं। यह बात भी इस आदर्शके विशिष्ट संशोधित होनेकी सूचना देती है।

पाठभेदोंके संग्रह करनेकी पद्धति।

पाठभेदोंके संग्रह करनेकी हमारी पद्धति यह है, कि व्याकरण या भाषाकी दृष्टिसे जो शब्द शुद्ध मालूम देते हैं उन्हीं शब्दोंका हम संग्रह करते हैं। सर्वथा अशुद्ध शब्दोंका या व्याकरणकी दृष्टिसे अपरूप पाठोंका, जैसा कि पञ्चमीय विद्वान् करते रहते हैं, हम संग्रह नहीं करते। अर्थात् अनुसन्धानसे असंगत मालूम देने पर भी यदि व्याकरणकी दृष्टिसे शब्दग्रन्थोंगं शुद्ध मालूम देता है तो उसे हम पाठभेदके रूपमें संगृहीत कर लेते हैं। हां, जहां कहीं पाठमें बहुत कुछ गडबडी मालूम दे और अर्थसंगति ठीक न लगे, वहां हम, ऐसे सर्वथा अशुद्ध शब्दोंको और भण्डरणोंको भी पूर्णलूपसे संगृहीत कर लेते हैं। ऐस्य विशेषनामोंके शुद्ध अशुद्ध सब ही रूपोंका संग्रह करना जावदाक समझते हैं।

हमारे इस संस्करणमें मुख्य आधारफूट A, B और P आदर्शके आदि और अन्दके पत्रोंका द्वाफटोल चित्र घनाकर इस मुस्तकके साथ लगाये जाते हैं, जिससे पाठकगण, इन पुरातन आदर्शोंकी अक्षाराकृति-आदिका दर्शन भी प्रत्यक्षतया कर सकें।

इस प्रयत्नकी सम्पूर्ण संकलना कैसी होगी; और कौन कौन भागमें क्या क्या विपय रहेगे; इसके लिये एक पृथक् शुद्धपर पूरा विवरण दे दिया गया है जिसके अवलोकनसे पाठोंको आगेके भागोंका किंचित् विपय-परिचय हो सकेगा।

अन्तमें, अहमदावादके देलाके भण्डारके तथा पाटके भण्डारोंके संरक्षणोंका, जिनके द्वारा हमको यह सामग्री प्राप्त हो सकी है, कुरहतापूर्ण उपकार मान कर, इस 'किंचित् प्रालाविक'को पूर्ण करते हैं।

॥ सिंधीजैनग्रन्थमालासम्पादकप्रवासितः ॥

सर्वति श्रीमेद्यात्माद्यो देशो भारतविश्वतः । रुदाहेलीति सन्नात्मी उपिक्ष तत्र सुरिण्ठा ॥
 सदाचार-विचारान्यां प्राचीनतृत्योः समः । श्रीमच्छुर्गिस्त्रोऽज्ञ राहोऽन्वयभूषिणः ॥
 तत्र श्रीबृद्धिसिंहेऽन्तु राजपुत्रः प्रसिद्धिसान् । क्षाद्यधर्मसंनो यश्च परनामकुलाग्रणीः ॥
 मुख-भोजसुवा भूषा जाता यस्मिन्नामाकुठे । किं वायते कुलानत्वं तत्त्वलज्जातजन्मनः ॥
 पश्ची राजकुमारीति तस्याशूद्ध गुणसंहिता । चातुर्यु-रूप-लावण्य-सुवासीजन्मयूषिणा ॥
 क्षत्रियाणीप्रभापूर्णी शर्यैदीप्रसुवाकृतिम् । यां द्वौव जनो भेने राजन्यकुलजा विषयम् ॥
 सतुः किरणसिंहाल्प्यो जातायोरतिप्रिया । रणमङ्ग इति हनन्द यथात् जननीकृतम् ॥
 श्रीदेवीहंसनामात्र राजपूजो यतीश्वरः । ज्योतिर्मैपञ्चविद्यानां पारगामी जनविधः ॥
 अष्टोत्रशताद्वानामासुर्यस्य महामतेः । सचासीद् बृद्धिसिंहस्य श्रीतिश्रद्धासदं परम् ॥
 तेनाथाप्रतिक्रियेणा स तत्स्तुः स्वसन्निधौ । रक्षितः, विक्षितः सम्यक् कृतो जैनमतादुगः ॥
 दौर्भाग्यातच्छिशोऽल्पे गुरु-तातौ दिवंगतो । मुग्राशूद्ध तत्त्वेन तत्कं सर्वं शूद्धादिकम् ॥

तथा च-

परिग्राम्यथ देशेषु संसेव्य च वृहन् नरान् । दीक्षितो मुण्डितो भूत्वा कृत्वाऽज्ञचारणं सुदुष्कर्त्ता
 ज्ञातान्वयेनकाशाणि नानार्धमताति च । सम्प्रस्तुतिना येन तत्त्वतत्त्वगवेषणा ॥
 अधीता विविधा भाषा भारतीया शुरोगजाः । अनेका लिपयोऽप्येवं ग्रन्थ-नुतनकालिकाः ॥
 येन प्रकाशिता नैका ग्रन्था विद्वद्यस्तिता । लिखिता वहवो लेखा पैतिहात्ययुग्मिताः ॥
 यो वृहुग्निः सुविद्विद्विस्त्रन्मण्डलैष्व सखृदः । जातः स्वान्यसमाजेषु माननीयो गनीविणाय ॥
 यस्य तां विश्वृतिं ज्ञात्वा श्रीमद्गान्मीरमाल्यन् । आहूतः सादरं पुण्यतनास्त्वयगमयदा ॥
 पुरो चाहमदावादे राधीप्रसिद्धाण्डयः । विद्यापीडिति खातः प्रतिष्ठितो यदाऽमवत् ॥
 आचार्यत्वेन तत्रोच्चैन्द्रियो यो महात्मा । विद्वजनकृताप्ये पुरातनास्त्वयमन्दिरे ॥
 चर्पणामष्टकं यावत् सम्मूर्य तत्त्वं ततः । गत्वा जर्जनरात्रै यस्तसंस्कृतिमैत्रिवान् ॥
 तत्र आगत्य सँल्घयो राष्ट्रकार्ये च सक्रियम् । कारावासोऽपि सम्मानः येन खराज्यपूर्वणि ॥
 क्रमात्तसाद् विग्रहिकः श्राप्त शान्तिनिकितने । विश्ववन्यकरीन्द्रथीरवीन्द्रनामयूषिते ॥
 सिंधीपद्युतं जैनज्ञानपीडं यदाक्रितम् । स्थापितं तत्र सिंधीश्रीडालचन्द्रसं समुन्ना ॥
 श्रीवहादुरसिंहेन दानवीरेण धीमता । स्मृत्युं निजतात्स्य जैनज्ञानप्रसारकम् ॥
 प्रतिष्ठितश्च यस्तस्य पद्मप्रियात्सञ्जके । अव्याप्तन् वरन् विष्वार् शोषयन् जैनताम्बरम् ॥
 तस्मैव भ्रेणां प्राप्य श्रीसिंधीकुलकेतुना । खण्डित्येवते देया ग्रन्थमाला शकासते ॥
 विद्वजनकृताहादा सविदानन्ददा सदा । चिरं गन्दत्विर्यं लोके विनियमगती ॥

श्रीमेरुज्ञाचार्यविरचितः

॥ प्रबन्धचिन्तामणि: ॥

करतलेन^१ संस्पृश्य, हा दैवमित्युदीरणम् घाते पातिते^२ सति हुर्जितो यथाग्रास्या रत्नानि उभते^३ । संवृत्तान्तमसुं तस्मात्सम्प्रगवगम्य विक्रमेण तदैन्यं^४ कारयितुभक्षमस्तान्युपकरणानि सहादाय^५ रत्नावननार्थं खनीमध्ये प्रहरोदयं विक्रममभिदधे—‘यत्’ कथिद्वचन्त्या; समागतो वैदेशिकः ‘सं-गृहकुशलोदन्तं षट्टो भवन्मातुः पञ्चत्वमाचर्यौ’ । तत्त्वसप्तशूचीनिमं वचो निशम्य ललाटं ५ करतलेनाहस्य, हा दैवमित्युवरन् खनित्रं^६ करतलाच्छिक्षेप । तेन खनित्रांग्रेण^७ विदारितायां मुवि देवीप्यमानं सपादलक्षमूल्यं रत्नं प्रादुरासीत्^८ । ‘भद्रभावस्तदादाय विक्रमेण सह प्रत्यावृतः । तच्छोकशङ्कुशङ्कापनोदाय^९ खनीवृत्तान्तज्ञापनपूर्वं^{१०} तत्कालमेव भातुः कुशलमुक्तवान् । विक्रमः’ सहजां लोलुभतां विसृश्य भद्रमात्रस्य कुधा तत्कराद्रक्षमाच्छिद्य पुनः खनी कण्ठे प्राप्तः ।

२. धिग् रोहणं गिरि दीनदारिश्वरणरोहणम्^{११} । दर्चे हा दैवमित्युक्ते रत्नान्वर्थिजनाय यः ॥ २

१० इत्युदीर्थं सकललोकप्रत्यक्षं तत्रैव तद्रलसुत्सृज्य पुनर्देशान्तरं “परिभ्राम्यव्यवन्तिपरिसरे” प्राप्तः । पदुपटहृच्वनिमाकर्ण्य “वृत्तान्तमववृध्य च तं हुसवान् । तेन समं स राजमन्त्रिरे समायातः । तस्मिन्देवाष्टुष्टे सुहृत्ते अहोरात्रभिप्रितो दीर्घदर्शितयेति दध्यौ—यदस्य राज्यस्य^{१२} प्रवलः^{१३} कोऽप्यसुरः” सुरो वा कुद्धः सन् प्रतिदिनमेकैकं वृपं संहरति । उप्राभावे च^{१४} देशविनाशं करोति । अतो भक्त्या^{१५} शक्त्या वा तदनुनयः समुचित हिति—नानाविधानि भक्ष्यमो-१५ ज्यानि^{१६} निर्माप्य,^{१७} प्रदोपसमये चन्द्रशालायां सर्वभयि सज्जीकृत्य, निशारात्रिकावसरानन्तर-मङ्गरस्त्वैर्नैपंसत्र भारशङ्कुशालायां निहितपैल्यङ्के निजपद्मदुक्लाङ्गादितमुंच्छीर्पकं लियोज्य स्वयं प्रदीपच्छायामाश्रितः^{१८} कृपाणपाणिधैर्येनिर्जितज्ञगत्रयो दिग्वलोकनपरो यावदास्ते; तावन्महा-निशीथसमये वातायनद्वारेण प्रथमं धूमम्, ततो ज्वालाम्, ततः साक्षात्प्रतिरूपमिष्य करालं वेतालैभालोकितघान् । स च बुभुक्षाक्षामकुक्षिस्तानि भोज्यानि यद्यच्छयोपमुंज्य, गन्धद्रव्यैश्च २० सशरीरं विलिप्य, ताम्बूलासादनेनैं परिउष्टसत्र पल्यङ्के समुपविश्य श्रीविक्रमं प्राह—“रे मनुजे^{१९} ! अहमभिवेतालनामा देवराजैप्रतीहारतपा प्रतीतैः प्रतिदिनमेकैकं नुर्पं निहृन्मि । किं तु^{२०} तवान्या “भक्त्या भीणितेन मयाऽभ्यवदानपूर्वं तव राज्यं प्रदत्तम् । परमेतांवृद्ध्यनोज्यानि^{२१} नम सदैवोपदौकनीयानि”^{२२} । इत्यसुभान्यामर्पि^{२३} प्रतिपद्मे कियलयि गते काले श्रीविक्रमेण रज्ञा निजमायुः षट्टः—‘नाहं वेदि, किं तु खस्यामिनं विज्ञप्य^{२४} भवन्तं ज्ञापयिष्यामि’ इत्युक्त्वा २५ गतः । पुनरन्यस्तां निश्चि समेतः—‘महेन्द्रेण त्वं’ सम्पूर्णवर्पशतायुरादित्^{२५} हिति तं जगो । स

१ A करतलेन । २ A पतिते । ३ Da समादाय । Db भाद्राय । ४ Da तार कशेष । Db देव: कशिषः । B एतः क्ष । ५ AD खायृहै । ६ Db आदेनै पृष्ठाङ्गास्यादमे ‘भायेन किं न वटते यतः—

(१) यथापि हृत्युहृतशतः प्रयाति निरिक्षन्दरान्तरेषु नरः । करक्षितुर्विपक्षिका तपाति लङ्घीष्मानुसरति^१ प्राप्तायान्विक्षः पापः । ७ B स भद्र० । ८ B शोकशंकापनोदाय । Da-b शोकपनोदाय । ९ AB शापना । १० Da विक्रमसदानी । ११ Da वशीरोर्ण । १२ B ऋग्रमठ० । १३ D परिसरे । B देशपरिसरे । १४ A B तं वृष्टा० । १५ Db राजे । B राजा । १६ B सर्वेषाः । १७ B शोषि अुरुः सुरो वा । P कोषि सुरो अुरो वा । १८ D ‘व’ नाति । १९ A ‘वारसा’ नाति । B वारसावारसा वा । D-s-b यथाग्रास्या भवत्या वा । २० P भस्यसादाय । २१ P विशाप्य । Do विशेषं । २२ D वृत्तसत्र । २३ AP विदितः । परम्पर्यै । २४ A वृशसीर्पं । २५ AD भायित्वः । २६ B निर्जितवयिष्यते । २७ वराष्ठेशार्ण । २८ A तुर्प । २९ B ऋग्रदेन । ३० B मनुष्यः P सृष्टा । ३१ P देष्टानेन । ३२ P विदितः । ३३ BP इवितः । ३४ BP विद्वि^{२६} नाति । ३५ BP इत्यस्तमस्या । ३६ Da-b षट्टदृ । ३७ BP वृशसीर्प । ३८ BP वृशसीर्प । ३९ P ‘नरि’ नाति । ४० D विशाप्य । ४१ D विशाप्य । Da विशेष । ४२ D ‘व’ नाति । ४३ P विनाम्यव ‘संरेण’ नाति ।

राजा^१ मित्रघर्ममधिकमधिरोप्य^२ इत्युपरुदुः^३—‘यन्महेन्द्रपार्वीदेकेन हायनेन’ हीनमधिकं वा^४ वर्षेशतं कारयेति^५ । स तदज्ञीकृत्य भूयोऽभ्युपेतः ‘सक्षिति धाचमुवाच—‘महेन्द्रेणापि न^६ नवनवैतिनैकोत्तरं वर्षेशतं^७ भवति’ । इति^८ निर्णये ज्ञाते, यावत्परस्मिन् दिने तथोग्रं भक्ष्यभो-ज्यादिपाकं^९ निपिछ्यै, वृपः संग्रामसज्जो भूत्वा निशि तस्यौ । तावत्तत्रैव रीत्या^{१०} स सुपागतः सन्^{११} तेजोज्यादिकमवीक्ष्य कुँद्रो राजानमधिचिक्षेप^{१२} । तयोश्चिरं “द्वन्द्युद्वे जायमाने सुकृत- ५ सहायेन राजा तं “धृवीतले पातपित्वा, हृष्टि चरणमारोप्य—‘इष्टं दैवतं सरेर्लादिष्टः’ स वृपं जगौ—‘तेवाङ्गुतसाहसेनाहौ’ परितुष्टोऽस्मि; यत्कृत्यादेशकारी अग्निवेतालनामाहं तव सिद्धः^{१३} । एवं निष्कण्ठकं तस्य राज्यमज्जनि । इत्यं तेन^{१४} परांक्रमाकान्तदिग्वलयेन^{१५} पण्णवति प्रतिवृप्तिमण्डलानि स्वभोगमानन्ये^{१६} ।

३. वन्यो^{१७} हत्ति “स्फटिकघटिते भित्तिभागे^{१८} स्वविम्बं द्वापा दूरात्मिगज इति त्वद्विद्वां मन्दिरेषु । १० हत्ता^{१९} कोपाद्वलितरदनसं पुनर्वीक्ष्यमाणो मन्दं मन्दं सृशति करणीशङ्क्या साहसाङ्क्षः^{२०} ॥ ३

“कालिदासार्थमहाकविमिरित्यं” संस्तुयमानश्चिरं प्राज्यं साम्राज्यं^{२१} वुभुजे ।

साम्प्रतमवसरायातां श्रीकालिदासंमहाकवेष्टपत्तिं संक्षेपतो^{२२} ब्रूमः । *

२) अवन्द्यां पुरि श्रीविक्रमादिल्यराजा^{२३}: सुता प्रियहुमजरी । साऽध्ययनाय वैरस्त्रिनामः पणिडतस्य समर्पिता^{२४} । सा प्राज्ञतया सर्वाणि शास्त्राणि तत्पार्यै कियद्विर्वासैररवीय, यौवन-१५ भरत्यत्माना^{२५} जनकं निल्यमाराधयन्ती, कदाचिद्वसन्तसमये “वर्तमाने गवाक्षे सुखासनैसीना, भव्यन्दिनप्रस्तावे ललान्तपे तपने पथि सञ्चरन्तमुपाध्यायमालोक्य वातायनच्छायासु^{२६}” विआन्तं तमुवाच । परिपाकपेशलानि सहकारफलानि दर्शयन्ती तं तेष्ठोलुभमवतुध्य—‘असूति फलानि श्रीतलान्युष्णानि वा तुभ्यं रोचन्ते’—इति तद्वचनचातुरीतत्त्वमनववृद्ध्य ‘तान्युष्णान्ये-वाभिलपामी’ति तेनोक्ते “तद्वपदौकितवस्त्राव्यले तिर्यक् तानि मुमोचा^{२७}” भूतलपाताद्रजोऽवगुणित-२०

१ B राजा । २ P घर्ममधिरोप्य । ३ AD ०रूपः Da नाति । ४ Da आग्रहान्महेन्द्रः । ५ A नाति । ६ AD ‘अधिकं वा’ नाति । ७ B नाति । ८ A ‘सर्’ नाति । ९ AD ‘पाप्तम्’ नाति । १० A नाति । ११ P नवति । १२ B रातः; P वा (रा) रातः । १३ Db भवतीति कवितमिति । १४ B ०भोगादिकं; P भोगादिकं पाकं । १५ P निरप्य । १६ D पूर्वीता । १७ AD नाति; D स वृपं जगौ । १८ P ‘राद्’ नाति । १९ AD नाति । २० D ०रूप च । २१ B विद्वन्द्रूः; P उपोद्वन्दू । २२ B शृण्यी० । २३ ब्रह्म Db आदर्श०—‘शादिष्टः सद् भूत भूत करिष्यादिवृद्देक-पंचानन्तमहासाहस्रम् । याप्तवेण ईं न जापते । यतः—

(१) सार्वेकान्तवृत्तीते प्रतिशावादेकारिणाम् । भवदिष्युनं देवोऽपि किं तुनः प्राहृतो जनः ॥ एवं विष्णवं प्रावानशिकः पादः । २४ AD भूतनामूरुः । २५ AD ‘अहं’ नाति । २६ P उपै । २७ BP ‘भूमि’ नाति । २८ BP वेन राजा । २९ B परि० । ३० P ०रिहर्षेन; Da ०शालमध्येत्वः । ३१ B स्वमोगांते निविष्ये । ३२ P विष्ये । ३३ AD युरिक० । ३४ P विष्यागो । ३५ P दिव्या । ३६ P वीक्षा० । ३७ ADP साहसाङ्क० * एव द्विवारकान्तपतः पादः ADP भास्येषु नोपदापते । ३८ P कालिदासिमि: कविमिरित्यं । ३९ P राम्य । ४० P कालिदासक्षेष्टः । ४१ B संसेपात् । ४२ B विक्रमादिल्युषुः P दिव्यसु गुण । ४३ BP नेदगमेनाश्रा० । ४४ Dd प्रदत्ता । ४५ B रातः । ४६ B विष्य-काली० । ४७ B वीक्षनपरे कठेमानै; P वीक्षने भरे कठेमाना॑ । ४८ P प्रदत्त० । ४९ P मुत्तासीना॑ । ५० उद्दापाविग्राम्य॑ । ५१ P रात ओ० । ५२ रातः विष्णिपुरी० । ५३ P भूतद्वितीयाति रसो० ।

तानि करतलाभ्यामादाय, से मुखमास्तेन तद्रजोऽपनयन्, राजकन्यया 'सोपहासमंभिद्ये-
'किमत्युप्यान्यमूनि वदनवातेन' शिशीरीकुरुपे?' इति तस्याः सोपहासवचसा सामर्थः स द्विजः
प्राह—रे 'विद्युधमानिनि! गुरुवितर्कपराया भवत्या: पशुपाल एव पतिरस्तु' इति^१ तच्छापं श्रुत्वा
तयोर्तकं—'पस्तव त्रैविष्यस्याप्यधिकविद्यतया' परमशुस्तमेव विवाहयिष्यामि ।' सेति प्रतिज्ञात-
५ चत्ति । अथ श्रीविक्रमे तद्वितप्रवरवर्धनित्तासमुद्रमन्मेऽ स पण्डितः कदाचिदभिलिपितवरनिवे-
दनोत्सुकीकृतराजशासनादरण्यानीमवगाहमानोऽतितृष्णांतरलितः सर्वतः सर्वतोमुख्यंभावात्
पशुपालमेकमालोक्य जलं याचितवान् । तेनापि 'जलाभावाहुर्घं पिये'त्युक्त्वा 'करचंडीं' विधेही^२
त्वयिहिते सर्वेष्वभिधानेषु^३ अभिधानमिदमशुतत्वरमाकर्ण्य^४ चिन्ताचान्तस्यान्तः स्वहस्तं तन्म-
स्तके दत्त्वा महिष्यास्त्वले नियेश्य चं करचंडीसञ्ज्ञां करतलुगलयोजनां कारपित्वा आकण्ठ
१० पयः पायितः । स तं भैस्तकहस्तदानात् करचंडीविशेषशब्दज्ञापनाद्य शुस्पायं "मन्यमानस्तस्या:
समुचितपतिमवगम्य महिपीपरिहारात्तं निजं सौधमानीय पण्मासां यावत्तद्दुपुःपरिकर्मणाशूर्वं"
‘ॐ नमः शिवाय’ इत्याशीर्वदाद्यापनं कारितः । पद्मभिर्मासैस्तस्य तान्यक्षराणि कण्ठपीठस्य-
तान्यवगम्य, शुभे शुहृत्तें कृतशूद्धारः स पण्डितेन वृपसभां नीतो वृपं प्रति सदभ्यस्तमाशी-
र्वदं सभाक्षोभवशाद् 'उशरट' इत्यक्षरैर्जगौ । तस्य^५ विसंस्थूलवचसा^६ विसितस्य^७ वृपतेरसर्तीं
१५ तचातुरीमारोपयितुकामः स^८ पण्डितः—”

४. “उमया सहितो रुद्रः शङ्करः शूलपाणिशृत् । रक्षतु त्वां महीपाल टङ्गाखलगर्वितः ॥ ४
इति विदितेन^९ श्लोकेन तत्पापिद्वयगम्भीरतां वचनविस्तरेण व्याख्यातवान् । तत्पलयप्रीतेन
वृपतिना स^{१०} महिपीपालः ख्यां पुर्वीं परिणायितः । पण्डितोपदिष्टं सर्वथा मौनमेवालम्ब्यमानो
राजकन्यकयां तद्वैद्युधयजिज्ञासया नवलिपितपुस्तकस्य शोधनायोपस्थः । करत्ले तुस्तकं वि-
२० न्यस्य तदक्षराणि विन्दुभावारहितानि नवच्छेदिन्या^{११} केवलान्यैव कुर्वन् राजपुत्र्या मैत्रींउपयमिति
निष्णांतिः । ततःप्रभृति जामातृशुद्धिरिति सर्वतः प्रसिद्धिरभूत् । कदाचिच्च चित्रभित्ती महिपी-
नियहे दर्शिते सति प्रमोदात्मप्रतिष्ठां विस्मृत्य तदाहानोचितानि विकृतिवचनानुयुधरन्महिपीपाल
हृति तयां निश्चिकये । स तं तदवज्ञामाकलव्य कालिका^{१२} देवीं विदत्तागृहे आरारां^{१३} । पुर्वी-
२५ वैधव्य भीतेन राजा निशि च्छव्वना दासीं^{१४} प्रहित्य, तवाहं तुषासीत्यभिधाय, यावत्स उत्पाप्यते
तावद्विष्वभीता कालिकैव देवीं प्रत्यक्षीभूय तमनुजग्राह । तद्वत्तान्तायपोयात्प्रमुदितया राज-
कन्यया तत्रागत्य 'अस्ति कश्चिद्वाग्निशेषः' इत्यभिहिते, स तदैव कालिदासनाम्ना प्रसिद्ध॑

१ D स्त । २ P मार्गेण । ३ BP 'सोपहासम्' नामिः । ४ P वदनवारणः । ५ P हुमिंग्स्प॒ । ६ B 'हृदि-
वाद्' नामिः । ७ A वैदिचस्याप्यपिद्वयः । D 'पृष्ठिद्वे विद्यतया; P 'पृष्ठिकरिया' । ८ B विषयैः । ९ Db 'हृदा॒ ।
१० A सर्वतो ममुख्यशामा॒ । D सर्वतो मूलंगां । ११ D वदत्वा॑ । १२ Da भिधानेविद्यं । १३ AD वसुष्टमाकर्ण्य॑ ।
१४ AD 'व' नामिः । १५ AD मर्गे॑ । १६ D विता नास्त्वन्यत्र 'मन्यमानः' । १७ D 'हृदैर्षं । १८ B विद्याप
नास्त्वन्यत्र । १९ B 'पृष्ठेन वप्त्वा । २० A तत्त्वं वृत्तैः । P एव विभित्वत् वृत्तैः । २१ Db मनसि भृती॑ । २२ B
विनास्त्वत् न । २३ D पण्डितः प्राह । २४ B आदैर्षेव सोक्त देवयं प्रयमः पार एव वरक्षम्यते । P आदैर्षेव उदारव॑-
मेतापाद्य—'एरुं तद वद तातोद्व आकाशरूप यतः' । Ds-b रस वादय तत्व॑ । २५ BP विचेतितेः । २६ AP कृ॒ ।
२७ A नामिः । २८ A मैत्रमयाकलम् । २९ AP कृम्याः । ३० Da अप्तरप्तेन्या । DJ उपिष्ठा । Ds वाति॑ ।
३१ AD महिपी पाप पृष्ठ । ३२ AD कृद्विष्ट्रिं । ३३ AD नामिः । ३४ BP कृषिदा॑ । ३५ Ds b वाताविद्यु-
गुपरिदः । न मुंके॑ । दिग्दाक्षं जातं । ३६ Ds-b कालिका नामी शारीरा॑ । ३७ B कृदिवज्ञाप्त॑ ।

कुमारसंभवप्रभूतिमहाकाव्यवद्वन्धान् रचयामास । इति कालिदासोत्पत्तिप्रबन्धः^{*} ॥ १ ॥

३) अन्यदां तश्चरवास्तव्यो दान्ताभिधानश्रेष्ठी^१ सभासंस्थितं विक्रमार्कसुपायनपाणिरूपा-गत्य प्रणामरूप्वकं^२ विज्ञपयामास-‘सामिन्’! भया शुभे मुहूर्ते प्रधानवर्द्धकिभिर्द्विवलगृहं कारि-तम् । तत्र महतोत्सवेन प्रवेशः कृतः । यावद्हृत्वा निशीये पल्यङ्गस्थितः^३ सुप्रजायदव्य-स्यया तिष्ठामि, तावत्, पतामीद्याकसिकीं गिरं^४ निशम्य, भयग्रान्तो मा पतेत्युदीरयंस्तदैव ५ पलायनमकार्पम् । तस्य धवलगृहस्य सम्बन्धे^५ नैमित्तिकैः^६ स्यपतिभिश्च यथावसरमर्हणा-दिभिः^७ सत्कारैर्वृथादपितः । इत्यर्थं देवः प्रमाणम्^८ । तमुदन्तं सम्यगवधार्य तदुर्तं तद्वल-गृहमूल्यं लक्ष्मीत्रयं तस्मै प्रदाय सन्द्यायां सर्वावसरानन्तरं तसिन्नात्मीयोकृते^९ सौर्ये श्रीविक्रमः सुखं^{१०} प्रसुप्तः । तामेव पतामीति गिरमाकर्ण्यासमसाहसिकतया सत्वरं पतेत्युदीरयन् समीपे^{११} पतितं सुवर्णपुरुषं प्रप । इत्यं [सुवर्ण] पुरुपसिद्धिः ॥ २ ॥

४) अथान्यसिन्नवसरे^{१२} कथित्विद्यः पुरुपः^{१३} करकृतलोहमयकृशतरदरिद्रपुत्रको द्वाः स्थनिवे-दितो नृपं प्राह-‘सामिन्’! भवता नायेन प्रथितायामवन्धां सर्वाण्यपि वस्तुनि संत्वरमन्त्र विक्रमं यान्ति लभन्ते^{१४} वैति प्रसिद्धिं^{१५} बुद्ध्वां चतुरशीतिसंख्येषु चतुःपथेष्वहोरात्रं विक्रयाय दरिद्रपुत्रको भ्रामितोऽपि केनापि न गृहीतः । पत्युताहं निर्भत्सितः । इति नगर्या यथावस्थितं कलङ्कं महाराजे विज्ञप्य यथागतं व्रजामीद्याष्टुच्छन्नसिम्^{१६} । तदैव तं महान्तं कलङ्कपङ्कं पुर्याः पर्याः १५ लोच्य दीनारलक्षं तस्मै प्रदाय वृपस्तं दरिद्रोहुपुत्रकं कोशो निवेशयामार्तं । तस्यामेव निशि^{१७} प्रथमयामे सुखप्रसुप्तस्यै राज्ञः समीपे गैंजाधिष्ठातृदैवतम्, द्वितीययामे ह्याधिष्ठातृदैवतम्, दृती-ययामे लक्ष्मीश्चाविर्भूय ‘महाराज्ञां दारिद्र्यपुत्रके श्रीते नासाकमिहावस्थांसुचितमि’ व्याएच्छध, राज्ञां साहस्रभृंगो भासूदिलनुज्ञातानि तानि^{१८} जग्मुः । चतुर्थयामे तु^{१९} कथितुद्वारपुरुषो दिव्य-तेजोमयमूर्तिः प्रादुर्भूय ‘अहं सत्त्वनामा भवन्तमार्हैच्छे’ इत्युदिते करतलेन वृपः कृष्णणि-२० कामादाय यावदात्मधाताय व्यवस्थित तावत्तेनैव करे गृहीत्वा तुष्टोऽसीत्यभिधाम स्वलितः । गजाद्यापिद्यातृष्णि धीणि दैवतानि प्रत्यावृत्य नृपं प्रोक्षुः-‘गमनसङ्केतव्यावातिना सत्त्वेन’ विप्रल-च्छानां ऋषं विहाप नासाकं गमनसुचितमिति तान्यप्ययत्नं^{२१} तस्युः ।

[१] ^१ अर्थात्तायद् गुणात्मावद् तावत्कीर्तिः सपुज्यता । यावत्खेलसि सत्य त्वं वित्पत्तनमध्यमः(गः) ॥

[२] ^२ राज्यं यातु विष्यो यान्तु यातु लोकोऽपि लोकतः । न ते गमनमार्जीवमनुमन्यामहे वयम् ॥ २५

इति विक्रमादिल्यसत्यप्रबन्धः^{२२} ॥ ३ ॥

१ B इमारसंभवमहाकाव्यवप्यमर्द्वीर् पद०; P कुमारसंभवादि पदः; Dc ० महाकाव्यमयन्धान् । * पूरद्वकरणसमाप्तिवाच्यं ADP आदीन्तु नोपलभते । २ Dc अपान्यदा । ३ B अवर्देषी । ४ P वृप्ति । ५ A दार्दिकः; B यदिकि । ६ B पत्तमेष्टे । ७ Db रितः पुरुपेक्षमवदोत्तम् सुरो । ८ B नाति । ९ D समविति । १० P नैमित्तिकौ । ११ D ० सर-महीनात्मिः; Da ० सरं महाराजादिभिः सकारेष्ट । १२ BP नाति । १३ AD सन्ध्यासर्वां । P मध्याह्नपां । १४ A ० शास्त्रीयते; B ० शास्त्रीयते । १५ BP सुरो । १६ A ‘सर्वीते’ नाति । १७ ABD अथाशिष्वदः । १८ AD दुर्भ-पुरुषः; P दुर्भदेष्टः पुरुषः । १९ B वृद्धः । २० B ‘सर्वते’ नाति । २१ B लभते; D लभते; P अथवते । २२ B अन्तिं । २३ P शुता । २४ B ० उष्णमानोदेष्टः । २५ AD ‘दरिद्र’ नाति । २६ B संख्यावित्तवाद् । २७ P नित्यापा । २८ BP मध्याह्नाः । २९ D राज्या । ३० B महाराजा । ३१ B वृप्तन् । ३२ राज्ञः । ३३ B साहस्र । ३४ BP गति । ३५ D अः AP नातिः । ३६ D भवन्तमा सर्वं विष्यो गन्तुदाष्टेः । ३७ A गताभिषिः । ३८ ABP विप्रल-च्छानाः । ३९ A ० वयमनु । ^१ देवेष्ट P आदीन्ते परेषी द्वौ सोमी दिविती दम्पते । ^२ BP आदीन्ते विद्याप वास्त्रमध्यम गमनसमाप्तिवृक्षदिर्द वासपम् ।

५) अथान्यसिद्धवसरे सभास्थितं श्रीविक्रमं सामुद्रिकशास्त्रबोधी कविवैदेशिको^१ द्वायस्य-
निवेदितः प्रविद्य चूपलक्षणानि निरीक्ष्यमाणः शिरोधूननपरो, 'चूपेण स विपादकारणं पृष्ठः;
जचे-देव ! त्वा^२ सर्वपलक्षणनिधिभिपि पण्डवर्तिदेवासाम्राज्यलक्ष्मीं सुखानमवेक्ष्य सामुद्रिक-
शास्त्रे^३ निर्वेदपरोऽभवत् । तत्क्रमपि कुरुतात्रं न पश्यामि यत्प्रभावेण त्वमपि राज्यं कुरुते"^४ ।
इति तद्वाक्यानन्तरमेव^५ कृपाणिकामाकृप्य^६ यावदुदरे निघते तावत्तेन 'किमेतदि'ति पृष्ठः श्री-
विक्रमः प्राह-उदरं विदार्थं तव^७ तद्विघमत्रं दर्शयिष्यामी^८ ति वदन्, 'द्वार्चिंशतोऽधिकमिदं^९
सत्त्वलक्षणं तव'^{१०} नावगतमि^{११}ति पारितोपिकदानपूर्वकं चूपस्तं विसर्ज । इति सत्त्वपरीक्षा-
प्रथन्धः ॥ ४ ॥

६) अथ "कास्मिंश्चिद्वसरे, पैरपुरप्रवेशविद्यां निराकृताः पराः"^{१२} सर्वा अपि विफलाः कला-
१० इति निशम्य तदधिगमाय श्रीपर्वते भैरवानन्दयोगिनः समीपे श्रीविक्रमस्तं चिरमाराध ।
तत्पूर्वसेवकेन केनापि^{१३} द्विजातिना [राज्ञोऽप्ते इति कथितम्-पत्त्वया] 'मां विहाय परपुरप्रवेश-
विद्या गुरोर्नदेया'^{१४} इत्युपरुदो द्वपो विद्यादानोद्यतं गुरुं विज्ञेयपामास- [पत्प्रथममसै द्विजाय
विद्यां देहि पश्चान्मद्यम् । हे राजन्] 'अयं विद्यायाः सर्वथाऽनर्ह' इति गुरुणोदिते, सूर्योऽसूर्यः,
तव पश्चात्तापो भविष्यतीत्युपरिद्य, द्वपोपरोधात्तेन विप्राय विद्या प्रदत्ता । ततः प्रलयादृत्यौ
१५ द्वावच्चुज्जयिनीं प्राप्य पद्मस्तिविपत्तिविपणं राजलोकमालोक्य परपुरप्रवेशविद्यानुभवनिमित्तं
च राजा निजगजशरीरे आत्मानं न्यवेशायत् । तद्यथा-

७. विदे^{१६} प्राहरिके नृपो निजगजसाङ्गेऽविशिष्टद्विद्या, विप्रो भूपुरुषिवेश, नृपतिः कीदायुकोऽभृततः ।*

* पैंडीगात्रिनिवेशितात्मनि नृपे व्यामृश्य देव्या मृति^{१७}, विप्रिः कीरमजीवयन्, निजततुं श्रीविक्रमो लभ्यताम् ॥ ५
इत्थं श्रीविक्रमार्कस्य परपुरप्रवेशविद्या सिद्धा^{१८} । इति विद्यासिद्धिप्रवन्धः ॥ ५ ॥

१ P. आदर्शे 'कविश्वादिविको' इत्येवंस्त्रोऽप्यादः । २ एतद् वाक्यस्त्वाने B आदर्शे 'द्वपेणो च सविपादं कर्य त्वं दृष्टं'
एतादसं वाक्यम् । ३ 'देव त्वं' स्थाने D 'धर्मां' । ४ B सामुद्रशाः । ५ A करोति; D करोति । ६ AD 'पृष्ठ'
मात्रिः । ७ AD 'मात्राः' । ८ BP नाति । ९ B मञ्च च । १० B 'शतोऽदितिर्मिदं' । ११ A तदावगतः; D तव
नोवगतः । + केवकं Da-b आदर्शां इत्यं वाक्यं लभ्यते । १२ B कमिश्वासरे । १३ A परप्रवेश । १४ B विद्या ।
१५ P विद्या विमाकृताः । १६ B वि ह्यां 'पाराः' नाति । १७ B सेवकेनापि द्विजनेमाः । + पृष्ठः BP सञ्चयके आदर्शे-
द्वुपलम्यः । १८ A विज्ञापयाः । १९ ADB भूमः प्राहरिके द्विजे । २० B पृष्ठीः; P रुद्धीः । २१ B दूरं । २२ B विदेः ।

* अस्य पद्यस्य द्वितीय-तृतीयोः पादयोर्मैये P संज्ञे आदर्शे निजावतारितः किमानविकः पादः प्रदिसो दृश्यते—

"शुक्रोकिः—(१) 'यमी कि व्यापते व्यापे गुरुवे कियते किमु' प्रतिपादं सत्ता कीटादादी शावः पठन्ति किम्" ॥ ५८ ममः तिर्दं ।

शङ्खी कथयति—(२) 'कीर्तिविषयस्त विर्वं का भजा होह यमयात्यस्त' का मुक्ताण पादाणा परिपीया किं शुक्रद चाला ॥ सामुद्रहवाह ॥

शुक्रोकिः—(३) 'निवहृ प्र(४)णां मज्जे कामिणी हारो न होहे द्वुदय । तक्षहितो वि न याणति पंडिय गर्वं किमुव्याप्ते' ॥

२३ P एवं श्रीविक्रमपरपुरप्रवेशविद्यासिद्धिः । २४ Da आदर्शं पृष्ठं समासिवावर्यं दृश्यते ।

अत्र, विद्यासिद्धिप्रवन्धानन्तरं D दुस्त्रकस्य परिदिष्टानुसारोण कर्मिश्वादर्देश निजालिहितोत्तुतान्तोऽधिक उपलभ्यते ।

"पृष्ठदा दूरो गुरुवल्लनाय गतः । तद्य इत्यं कमपि तपस्त्विनं पठन्ते वन्द्यामास । तेन नातीर्निगदिवा पठन्त्वयोगेण । राशेष्व-इत्य-

पठन् मुश्वलं कुलावयिष्यते । तद्वयगम्य तेन पठिष्या सूर्यपदे प्राप्ते तन्त्रैव राशः सदृशं गत्वा मुश्वलमानायावालं विद्याय श्रीक्रमय-

देववक्षेपेन मुश्वलं पुण्यपितां गतः । तावता सिद्धेनेनापि लक्ष्मवगल वादाय पृष्ठे गतम् । परेण केतलासमाप्तं मज्जद् द्वुदयादी रसः ।

शादं विषेद्यते । तेनोर्जुरे गम्यते, तत्र सम्भा भवन्ति । तुनः प्रतिविदिनोये-अवैव वादः । अमी गोपाः सम्याः । सेऽप्याकारिताः ।

प्रथमं सिद्धेनेनोपन्यासो विहितो गीर्वाणवाण्या । तदत् द्वद्वादिना गण्ठीयकं द्वद्वा गोपकुण्डकं विद्याय प्रोत्ये-

७) अथान्यसिद्धवसरे श्रीविक्रमो राजपाटिकार्यां ब्रजस्तग्नगरनिवासिना श्रीसहेनानुगम्यम्-
मानं वन्दिद्युन्दैः “सर्वज्ञुष्ठ” इति स्तूपमानं श्रीसिद्धसेनाचार्यमागच्छन्तमवलोक्यः सर्वज्ञ-
युत इति वचसा कुपितस्तत्सर्वज्ञतापरीक्षार्थं तस्मै मानसं नमस्कारमकरोत् ॥ सिद्धसेनोपि पूर्व-
गतश्चुतवलेन वृषभावमवगम्य दक्षिणं पाणिमुदस्य धर्मलाभाशिषं ददौ । वृषतिनाऽशी-
र्वादहेतुं पृष्ठः सन् भविष्यते—“तव मानसनमस्कारस्याशीर्वादः प्रदीयमानोस्तीत्यभिहिते तज्जा- ५
नचमत्कृतेन राजा तत्पारितोपिके सुवर्णकोटिर्वर्तीर्थत् ।

८) अथान्यसिद्धवसरे राजा” कोशाध्यक्षस्तस्य” दापितसुवर्णवृत्तान्तं पृष्ठः प्राह—“यद्वर्मवहि-
कार्यां श्लोकवन्धेन भया सुवर्णदानं निहितम् ।” तथाहि-

९) धर्मलाभ इति ग्रोक्ते द्रादुन्धितपणये । सूखे सिद्धसेनाय ददौ कोटि घराणिषः ॥ ६

ततः श्रीसिद्धसेनसूरीन् सभायामाकार्यं ‘तत्सुवर्णं गृह्णतामि’ति ग्रोक्ते, वृथा सुक्तस्य^{१०} भोजन-
मित्युचारपुरःसरमनेन सुवर्णदानेन^{११} क्रणग्रस्तामवनीमनृणीकुरु इत्युपदिष्टे तत्सन्तोपपरितुष्टेन
राजा तदद्वीकृतम् ।*

(१) नवि भारीयै नवि चोरीयद, परदारागमण लियारीयद ।

योकावि हु योवं दृढेयद, हम सरिग टामगु जाहैयद ॥

एवं पठति गोपा शूलिनिः । तैरलंभेन निनें, वं किमपि न वैरिस । तसो शूलवादिना खुरे गावा वादं विधाय वितः शिष्यो
वश्यः । ततः सिद्धसेनदिवाकरेण गुहवरणसंवाहनां विधायमानेन गुरुव उक्तः—यदि यूपमावेदं ददृत तदाद्वामागमं संस्कृतेन करोमि ।
गुरुभिर्भक्त-च वद्य गृह्णत्वामनिनि, एवं गुहवरणयोगो न, गच्छेः । तेनोक्तं-प्रायश्चित्तं ददृत । गुरुभिर्भक्त-यथा जिनभर्मानां न तत्र जिनभर्मानां
विद्यापुनः समागम्यत्प्रसिद्धवधूत्वेष चलितः । द्वादशार्थांश्च यावदन्यव परिग्राम्य तदनन्दरं मालवके गृहमहाकाळ्यासादे लिपाभि-
मुक्तं चरणैः शूला चरणाणां द्वाराकाष्ठे नियोज्य सुषुप्तः । तत्र चरितोऽपि तपैव । अग्रान्तरे राजाऽशीक्षितुरुपान् भेषणियोपद्धतिः ।
ताथान्तरात्तुरे रथ-प्रीत्यनेन ददम् । समागम्य पृष्ठः—कथं लिपास नमस्कारं न विद्यास्ति । तेनोक्तं-भम नमो अस्ती न सहृदे । विधेहि ।
देन सकललोकमस्माद्—

(२) प्रदानमृतं ददीनं पल संवैभूताभयप्रदम् । माहात्म्यं च प्रशास्त्रं च शिवसेन विभास्ते ॥

इति द्वार्तिशद् द्वार्तिशतिका कृता । तदा दिङ्मध्यादवन्तिसुखमालाद्विशेषाकारित्वासादे श्रीपांखनाधिकैर्म व्रक्षीदीप्तूं नम-
स्तृतं च । असौ सहस्रे नमस्कारम् । तदा भ्रष्टीत गृहमहाकालोऽजनि । राजा विक्रमार्दः परमजौऽभूत् । सिद्धसेनोपि स्वगुह्यां
समेव सुरीमध्यं प्राप्यैकोजपिनामेव चातुर्मातृक्षितिम् ।

१ AD अथासिद्धः । २ B पाटिकार्या । ३ AB नामः । ४ AD वन्दिद्युतः । ५ BP भी सर्वः । ६ BP

“माटोवयः । ७ अग्रान्तरे D उक्तके लिपालितिं लिपायिक्षुप्रस्तवते ।

(३) “आपो दीनमापाते दशापाती सम्भासिते चातुरं पद्मावा च हसेहास्य भवता दक्षोऽस्य विधाण्यवासु ।

लिपात्मा परितोपके सम सदा कोटिर्वदाका परा कोशापाता सदेति विक्रमनृप्रके घटान्यश्चित्तम् ॥”

A धादों वृष्टसपोनामेन लिप्यनीस्तेनेदं पर्यं लिपितं विधते ।

८ D दूर्गतपलेन । ९ P दक्षिणापात । १० B अपासिद्धः । ११ P नाति । १२ D सर्वः । १३ BP नराधिषः ।
१४ BP शूलम् । १५ AD सुकूप्तम् ।

* भग्रान्तरे D उक्तके लिपावतारिताति विधानि विधनते । A धादों अमूलीपाति वृष्टपार्वतागेतु लिप्यनीस्तेन विक्रितानि
दम्पत्ये ।

(४) “दिङ्मध्याद्विशुरायातनिष्ठिति दारी यातिः । इत्यन्यतपत्तुःस्तेको यद्वागच्छतु गच्छतु ॥

(५) शीपमतो ददा लक्षाति लासनामि चतुर्दशः । इत्यन्यतपत्तुःस्तेको यद्वागच्छतु गच्छतु ॥

(६) सर्वेन्द्रा सर्वेन्द्रोऽस्तीति लिपास लंस्यस्ये कुपैः । वारयो टेमिरे शृष्टि न वहः परयोपितः ॥

(७) सारस्वती लिपावतारिताति विधानि विधनते । कीर्तिः चिह्निग राजद येन देशान्तरं गता ॥

(८) अर्जुवेण पञ्चवर्षामा भवता लिपिता इतः । मांगनीपः समान्येति गुणो याति दिग्नातरम् ॥

१) तस्यामेव निशि दृष्टे धीरचर्चयायां उरि धरिग्रमन् भूयो भूयस्तैलिकमुखेन पञ्चमान-
मिदमओपीत् ।

७. अम्मीणउँ सन्देसडउँ नारयं कन्ह कहिज ।

प्रभातशोपां रजनीमवधीकृत्य तदुत्तरार्द्धमशृण्यविर्णिष्णो दृष्टः सौर्यं प्राप्य निद्रामकरोत् । प्रत्यू-
५ पकालेऽवसरकृत्यानन्तरं दृष्टेण तत्राहृतसैलिकस्तदुत्तरार्द्धं एष्टः ।

जगुँ दालिदिहिं दुर्तियउँ चलिवन्धणह मुहज ॥ ७

ईत्याकर्ण्य श्रीसिद्धसेनोपदेशं पुनरुक्तं निर्णीय शृथिवीमनुरां कर्तुमारेभे ।

* [उज्जितिनां राजा विक्रमादित्यो भट्टमात्रेण समं भद्राकाले नाटकालोकनार्थं गुप्तवेगे गतः । काला-
न्तरितेन नागरिकसुतेन कार्यमाणे नाटके स्वधारमुखात् तद्रणं श्रुत्वा राजापि नागरिकदब्यग्रहणाय मनसि-
10 तोर्यं कृतवान् । पथात् कियत्कालमतिकम्यं दृष्टिरो मुख्यवेशयागृहे भट्टमात्रापार्थात् पानीयं याचित्तान् । तत्र
बृद्धवेश्या प्रधानान् पुरुषान् भगित्वा तत्रिमित्तमिक्षुरसमादातुमुष्पवने गता । दूलकैरिक्षुदण्डान् मित्ता तयार्द्धम-
टेऽप्यसम्भृते दुर्मनस्का करकं श्रुत्वा वेलाविलम्बैनागता । राजा इमुरसे पीते भट्टमात्रेण वेलाविलम्बैर्मनस्यका-
रणं शृष्टा जगाद्-अन्यदिने एकेन निर्मितेक्षुदण्डेन सकरको घटो द्वित्यते । अथ घटोपि न सम्पूरितः । तत्कारणं
न ज्ञायते । भट्टमात्रेण [शुनः] पूर्णं शृग्मेवं परिणतमत्यत्कारणं जानीत । ततो विचार्यं निवेदयन्तु । वेश्यापि
15 वदति-शृग्मीपतेर्मनः प्रजासु विरुद्धं जातं ततः शृग्मीरसोपि क्षीणो जातः । इति कारणं निवेदितवती । राजापि
तदुर्बुद्धिकौशलाचमत्कृतः । स्वशुद्धनशयनीये सुप्त इति चिनितवयान्-अकृतेऽपि श्रजार्पीडने विलुप्तिचिन्तामात्रेणापि
शृग्मीरसहानिर्जीवता । अतः प्रजां न पीडयिप्यामि इति कृतविशये दृष्टे पीता शृणुषार्थं द्विरीयाभं निशायां
दृष्टपिपाचहृहे गता शीघ्रमेव सहर्षेण तयाऽनीतमिक्षुरसं पीता शृणुषीये सुमुखान् । वेश्यापि भट्टमात्रेण
राहः प्रजासु हृष्टं मनो निवेदितवती । राजापि आत्मनिशाचृत्यान्तं निवेद्य उनरपि तस्य बृद्धवेश्यार्थं परिचितो-
20 लक्षणतुरेनद्वारो दत्तः । इति नृपतिमनोऽनुसारी शृग्मीरसप्रवन्धः ॥ ८]

१०) अथ 'भत्सदृशः कोऽपि जैनो' नृपतिर्भार्थीति एष्टे श्रीसिद्धसेनस्त्रिभिरभिवद्ये-
८. पुन्रे वाससहस्रे समप्ति वरिसाण नयनवद अहित । होही कुमरनरिन्दो तु विक्रमाप सारिच्छो ॥ ८

११) औथापरमित्तवसरे जगत्यन्तीक्रियमाणे निजौदार्यगुणोनाहंकृतिं दधानः प्रातः कीर्ति-
सम्बन्धे कारपित्यामीति चिन्तनैपंसस्मिद्वेष निशीथे वीरचर्चयेणा चतुर्पथान्तः परिग्रमन् शुद्ध-
२५ मानवृपाभ्यां श्रासितः कस्यापि दारिद्र्योपद्वतद्विजन्मनो जीर्णवृष्टभक्तीस्तम्भमध्यारुदो पाव-

(१३) आहते तत्र निःस्ताने एष्टिवं दिउद्द्यपदैः । गटिते तदियानेत्रे रात्रेऽप्यदिवं दद्यते ॥

(१४) वरप्राप्तोने सरस्वत्यपिवसति सदा शोण पकाप्राप्ते शाहुः काङ्क्षयार्थीपैस्तुनिकरणदुर्दिशिणसे सहुदः ।

शादिष्यः पार्थेसेतः क्षणमपि भवतो नैव सुग्रामदर्शीयो स्वरपेऽन्तमानसेऽदिष्मङ्गदयमतिपते सेऽनुग्रामानिदाः ॥

(१५) उत्त्यन्तरावाहृपी पश्चपवदयोमापयनाहृते । सुरत्रयानन्पत्ता भगवतीका भवत्यदेतेन ॥ ९ ॥

1 D 'तरि' भासि । 2 B भासीणः; P भवीतः; D भवतिभो । 3 A मंदेसः । 4 D भागः; Ta भासपदः ।
5 B •पश्चिमः । 6 D जग । 7 P दालिदैर । 8 D हुमिष्ठः; A हुमिष्ठः । 9 AD भासि 'इत्याचर्चये' । * हेतुः D
भार्तोऽप्य दद्यते, भवत्यन्तरावाहृपीतुरारेण तु यसे भोवत्यपवदयो एष्टुदृष्टान् उपदम्पते । + पूर्ण दिवदार्यान्ति रहिः;
B भार्तो भोवत्यप । 10 P महावैते । 11 AD भवत्यमिष्ठः । 12 B विष्टपदः । 13 B •वर्षीया । 14 B इत्याचर्चये ।

प्रकाशः ३

श्रावणः । अवान्तरे स विप्रोऽक-
चिष्ठति तावत्तावेव वृपैः शृङ्गायेण तं स्तम्भं भूयो भूयस्ताद्यतः । अवान्तरे स विप्रोऽक-
सानिद्राभङ्गमासाद्याकाशो शुकुगुरुभ्यां निरुद्धं चन्द्रमण्डलमवलोक्य गृहिणीसुत्याप्य चन्द्रमण्ड-
लसूचितं तंवृपतेः प्राणसङ्कटमवगम्य, 'होतव्यदव्याणि तदुपशान्तये होमार्थमुपदौक्यिष्ये' इति
सावधानं वृपे शृण्यति, स गृहिण्योचै-‘अथं वृपः पृथिवीमन्तराणां कुर्वन्नपि’ मम कन्याससकस्य
विवाहाय द्रव्यमयच्छब्दशानितिकर्मणा कथं व्यसनान्मोचयितुसूचितं इति तद्वशसा सर्वथा
परिहृतगर्वस्तत्सङ्कटाच्छुटितः कीर्तिस्तम्भवात्ता विसरन् राज्यं चिरं चकार । इति विक्रमार्थस्य
निर्गवेताप्रवन्धः ॥ ६ ॥

*अधान्यसां तिषि एवा रुद्री राहा पृष्ठा-वद्वाणि विरुपाणि कर्थं सैकतानि । तयोक्तम्-

[३] यासौ दक्षिणदक्षिणार्णवत्रभु रेवप्रतिस्पद्धिनी गोविन्दपियगोकुलाकुलतटी गोदावरी विश्रुता ।

तसां देव गतेऽपि मेघसमये स्वच्छे न जातं जलं सदप्तद्विरदेन्द्रदन्तमुशालग्रक्षोभितैः पांशुमिः ॥ १०

[४] रवक्षप्रधवचनमिदं श्रुत्वा नरनाथनायकः स ददौ । स्वाहाग्नपृष्ठकसहितं लक्षं भूक्षेपमात्रेण ॥

[७] चौरसागविप्रेभ्यो रजव्ये कविताथुतौ । चातुःप्रहरिकं दानं दत्तं विक्रमभूजा ॥]

॥ १० इति श्रीविक्रमस्याच्र विविधाः प्रवन्धा यथाश्रुतं ज्ञेयाः ॥

१२) कदाचिदापुः प्रान्ते केनाप्यायुर्वेदविदा श्रीविक्रमस्य घण्टपाट्ये वायसपिणिताहारेण
रोगशान्तिर्भवतीत्युपदिष्टे नृपेण तस्मिन्पाके कार्यमाणे प्रकृतिव्यवस्थयं विमृश्य नृप हितं ज्ञापितः- 15
'साम्प्रते भर्मांपथमेव घलवत् । प्रकृतेर्विकृतिस्तपातः ।' जीवितलोलुपतया लोकोत्तरां सत्त्वप्रकृति-
मपहाय फाकमांसमभिलपन्सर्वथा न 'जीवसी' ति वैद्येनाभिहितः । तं पारितोषिकदानार्थं परमार्थ-
पान्वयमिति शायदमानो गजतुरगकोशादिसर्वस्मर्थभ्यो वितीर्य राजलोकं नगरस्मापृच्छय विजने
फापि धवलगृहप्रदेशे तत्कालोचितस्तानदानदेवतार्चनपूर्वं दर्भस्त्वसराधिष्ठाने ब्रह्मद्वारेण पाणो-
त्क्रान्तिं करिष्यामीति विमृशनकस्मादाविर्भूतमप्सरोरेणं सं ददर्श । अङ्गलिं वद्धा प्रणामपूर्वं 20
'का यूपमि' ति एषे-'न वाग्विस्तराहृष्यमवसराः', "परमापृच्छनायैव वयसुपागता इत्यभिधाया-
प्सरसोऽप्सरसन्त्यो नृपेण भूयोऽभिदधिरेः- 'नवीननव्रद्यणा निर्मितानां भवतीनामद्वैतस्त्रपवतीना-
मेकंमेव रूपं नासया' हीनमि' ति जिज्ञासुरसि । अथ ताः "सहस्रतालं विहस्य 'निजमेवौपराध-
ममामु सम्मावयसीं ति ता मानमाधिता नृपेणोचिरे- 'स्वर्गलोकस्थितासु भवतीपु ममापराधः

१ B वृक्षम् । २ B नामि । ३ क्षय DB आदर्शे पृष्ठदेशे 'उत्तरि च फलो पुष्ट्यावदनरेतायोऽभ्युत्तु तुमुरानिव तुविरितसे
एताप्य प्रुणः प्रुणः पृष्ट्यावदनरेतायोऽभ्युत्तु तुमुरानिव तुविरितसे । ४ B 'तद्' नामि । P स । ५ D दीपकेति । ६ AD 'अपि'
नामि । ७ AD नामिकंशः । ८ B मोप्यः स राता सप्तहूङ्गं हवा मुखिः । ९ AD 'स्वामि विसर्गः । * कोष्टकान्वगंतः
पद्मः Dhi भास्त्रे धारपते । १० AD नामेष्या पदिः । अथ D प्रत्यक्षे लिङ्गितिरिहा गाया मुदिता दमपते धर्मं ता प्रसिद्धा अस्ति
APB भास्त्रेण्युत्तरावधाराः । A भास्त्रे एषायोग्याते इतिप्रस्तुवेष्य विसिता पृष्ठपते ।

(10) 'ਕਢੋ ਕਾਂਡੇ ਸੁਖੇ ਦ ਰਾਹਿਸੰ ਮਹਲਿਅਤ ਪਾ ਆਪਾਣੇ। ਅਜਾਮਰੀ ਨ ਏਂ ਹਾ ਵਿਹੁਮ ਹਾਰਿਐ ਜਸੇ॥'

D. शहजाह भाद्रते: य निराकरित्विषयोऽधिकः पाठः सम्पूर्णव्याप्ते—

(१४) 'मात्र तीव्रता विद्युत रूपानि पर्याप्त विद्युत तं उप्राप्तिहृनयत्या च मधुरं वाङ्मयं समव्यग्यतः ।

प्राणोदीरण्याद्युपासनाद्युक्तिपूर्वानुवादके तत्त्वानुसारमें उपर्युक्त वाक्यानुभव करना ।

(१२) पदा वीरप् पुराप् परिवेदवदगामः। परिवेदत्यन्ते रागा कषेत्रं जीवति ॥

11 D 'पदा' शब्दे 'पदाप्' शब्दः। 12 B स 'मूरे'। 13 B महाविदवदगामः। 11 AD 'पदे' नामिः। 15 B 'पुराप्' शब्दोऽभिवादत्यन्ते। 16 D 'पृष्ठ' नामिः। 17 B रागाप्रसिद्धिः। 18 Da-h अवधारः। 19 D 'प्रा' नामिः।

कथं सम्भाव्यत ? इति नृपवचःप्रान्ते ताभ्यो' मुख्यया' सुसुख्याऽऽचचक्षे-‘राजन् प्राकुण्णोः दयेन साम्प्रतं नवापि निधयस्त्वं 'सौधेऽवतेस्तदिष्टान्यो व्यथम् । भवताऽऽजन्मावधि महादानानि ददत्तैकस्यैव निधेरेतावदेव व्यवकलितं यावत्त्वं नासायं न पदयसि' । इत्थं तदुक्तिभा-
कर्ण्य ललादं करतलेन स्पृशन् 'यद्यहं नवनिधीनवतीर्णान् वेदित तदा नवभ्यः पुरुषेभ्यस्तान्समर्प-
यामी'ति दैवेनाज्ञानभावाविचितं इत्युचरंत्सामिः 'कलौ भवानेवोदार' इति प्रतिवोदितः परलोकमाप । 'ततः प्रभृति तस्य विक्रमादिलक्ष्य जगत्ययमधुनापि संवत्सरः प्रवर्तते' ॥ ७ ॥

॥ श्रीविक्रमार्कस्य दाने^{१०} विविधाः प्रवन्धाः ॥

[२. अथ सातवाहनप्रवन्धः ।]

१३) अर्थं दाने विद्वत्तायां च श्रीसातवाहनकथा यथाशुर्तां ज्ञेया । तत्पूर्वमधकथा चैव-श्रीपति-
१० प्रान्तमुरे सातवाहनभूपो" राजपाटिकायां गच्छजगरप्रत्यासाक्षनवान् वीचिभिर्निरतीरतिक्षितं" म-
त्स्यमेकं हसन्तमालोक्य प्रैकृतेविकृतिरूपात इति भयप्रान्तो वृपः सर्वानेवं विद्यग्धुरुपान् सन्दे-
हमसुं पृच्छद्य ज्ञानसागरनामानं जैनसुनिं प्रश्नत । ज्ञानातिशयेन तेन तत्पूर्वभवं विज्ञायेत्युपदि-
ष्टम्-‘यत्पुरातनं भवे त्वमसिन्नेव पत्तने उच्चित्तव्यं शः काष्ठभारवाहनैकवृत्तिः* असर्वामेव नर्यां
भोजभावसरे सत्रिहितशिलात्मे सकून् पयसाऽऽलोक्य नित्यमश्वासि । कस्मिन्प्रप्यहनि मांसोप-
१५ चासपारणाहेतोः" पुरे" ब्रजननं जैनसुनिमाहूर्यं तं सकुणिष्ठं तस्मै प्रादात्म् । तस्य पापदानस्या-
तिशयात्त्वं सातवाहननामा वृपतिरासीः । स मुनिर्देवो जातः" । तदेवंताविद्यानवदातात्मे काष्ठ-
भारवाहिनो जीवं हैवां चैपतितयोपलक्ष्य प्रमोदाद्वसितवान्" । तत्कपासङ्घ्रहथैतत्कान्यम्-

९. भीनानने प्रहसिते भयमीतमाह श्रीसातवाहनसुप्रिमवताऽन्न नदाम् ।

मत्सकुणिर्मुनिरिकार्यत पारणं प्राक् दैवाङ्गवन्तमुपलक्ष्य इत्यो जहास ॥

२० स श्रीसातवाहनस्तं" पूर्वभवद्वृत्तान्तं जातिसम्मुख्या साक्षात्कृत्य ततःप्रभृति दानधर्ममाराध-
यन् सर्वेषां भग्नकर्वीनां विद्युपां च सङ्घ्रहपरः चतस्रभिः स्वर्णकोटीभिर्गायथ्रतुष्ट्यं कीत्या सप्त-
शतीग्रायाप्रमाणं सातवाहनभिधानं सङ्घ्रहग्रायाकोशं" शास्रं निर्माण्य नानावदातिनिधिः
सुचिरं राज्यं चकार । तद्वाधायतुष्ट्यमेतदैवं । यथा—

१ B ताम्यो । 2 A मुख्या । 3 D सुमुख्या; A नाति । 4 B तप सौधे नाति । 5 B 'तप सौधे' नाति । 6 AD
भवता देवता रूपेणागम्ना । 7 AD 'भवतीर्णां' नाति । 8 B देवे ज्ञातः । 9 'विज्ञित' स्याने B 'न विज्ञित' । † इत्य-
न्तर्गता पद्मः B भास्ते नाति । 10 B दानविद्याः । 11 Db शातवाहनप्रपञ्चा दिष्टप्रान्ते । 12 A शातवाहन । 13 BP
यथाशुरं । 14 BP शातवाहननेन्द्रो । 15 AD 'तीर्णिसं' । 16 B प्रहसितः । 17 BP सर्वानवि । 18 BP जा-
ननिदयात् । 19 B दरद्धयः । * भग्न उत्तिशाश्वामे P Db सन्धारे भास्ते—

(२०) 'धरो क्षेत्रि दरिदण्णो दरिदण्णापिगद्गुरः । शृष्टिक्षेत्रि कः वीयमाने म क्षयमूरभृत् ॥' प्रोत्प्रिकः स्तोः वरणमाते ।
२० AD 'धरस्ती' स्याने 'तस्मै' । 21 AD जैनसुनि मासोप । 22 A पारणहेतीः; BP पारणहारणः । 23 AD दुरो ।
† भग्न Db भास्ते-जैनसुनि इष्टा शूर्यमेव भया कम्भिति इदं तस्मै चकार । यदुर्ण—

(२१) रुपेषु वस्तुपु मनोहरतो गतेव रो चित्त ! सेद्युपपासि क्षेत्रं द्वया तप् ।

पुरुषं कुरुपु रुपे तेतु तपातित शास्त्रा गुप्तेविना नाति मध्यतित सम्प्रदितायाः ॥

इत्यं पितृतिताया मुनिमाकार्यं संगत्युपर्णं" एतादाद सम्प्रदितः पाठोऽपि । 24 B 'मातापै' । 25 B प्रश्ना । 26 AD शास्त्र-
याहनमूरभृतः । 27 BP प्रत्यावर्त्य नाति । 28 B 'देवविद्याः' । 29 P नाति । 30 BP शृष्टप्रान्तः । 31 AD
सङ्घ्रहपैयं । 32 AD 'तीर्ण' नाति । 33 A शातवाहनामिः । D शातवाहनामिः । 34 P 'सोता' । 35 P 'निः' B
Db भास्ते-हृष्ट शातवाहनपैयं बहुसुनेमो शैवद् । एवंस्य उत्तोऽप्तिः भग्नेनां शातवाहन समितः ।

१०. हारो वेणीदण्डो खट्टगलियाइं तह य तालु चि । एयाइं नवरि सालाहणेण दहकोडिगहियाइं ॥ १
 ११. भैग्नं विय अलहन्तो हारो पीयुक्षयाण थण्याण । उचिवमो^१ भमइ उरे जउणानफेणपुर्झं व ॥ २
 १२. कैसिषुजलो य रेह वेणीदण्डो नियमविमामि । तुंह सुन्दरि सुरयमहानिहाणरक्षाभुयङ्गं व ॥ ३
 १३. परिओसमुन्दराइं सुरए^२ जापिन्ति जाइं सुखलाइं । विरहाउ ताइं पियताहि खट्टगलियाइं^३ कीरन्ति ॥ ४
 १४. मा जाण कीर जाईं चकुलालियं पड्ह एकमाइन्दं । जरठचणदुखलियं देवभूतालाहलं एयं ॥ ५

१५. ताण पुरोईं मरीहाइं^४ कयलीथम्भाईं सरिसपुरिसाण । जे अचणो विणासं फ्लाइं दिना न चिन्तन्ति ॥ ६
 १६. जह ससे तैंह सुकोवि पायवे धरह अणुदिणं विज्ञो । उच्छंगवटिर्यं निगुणं पि गरुहाईं न छड्हन्ति ॥ ७
 १७. पिठो नेहाहरो तेहिं तिसिंहाइं तहैं कहवि गहीउ । पिच्छन्ति जं न अबं तचिय आजम्भ मुझारौ ॥ ८
 १८. सयरुजाणाणन्दयो सुखसस वि एस परिमलो जस्त । तस्स नवरसमावधमि हुआ किं चन्दणदुमस्स ॥ ९
 १९. कयलितह विज्ञगिरी नेहाहरो य चन्दणदुमो य । एयाओ नवरि सालाहणेण नैवकोडिगहियाओ ॥ १० १०

[३. अथ शीलवते भूयराज-प्रबन्धः ।]

१४) तथ्याईं—“पद्मिंशाद् ग्रामलक्षप्रमिते कन्यकुञ्जदेशो कल्याणकटकनाम्नि” राजधानीनगरे भूयराजै इति राजा राज्यं कुर्वन् कसिंश्चित्प्रभातसमये राजपाटिकायां सखरवेकसिंन्सौधतले वातापनस्यितां कामपि मृगाक्षीं मृगयमाणो निजचित्तापहारापराधिनों तामर्पजिहीर्विनिंजं पानीयापिकृतपुरुषं समादिदेशा । स च तां दृपसौधे समानीय कचित् सङ्केतप्रदेशो स्थापयित्वा १५ नृपं विज्ञप्यामास । दृपेण च तत्रागतेन वाहुदण्डे धृता सती स्ता तं भूपमवादीत्—‘स्थामिन् ! सर्वेवतावतारस्य भवतो हन्त कोउयं नीचनार्थामिभिलापः’ । ततस्तद्वाक्यास्तेनैप्यच्छान्तकामानलो हृपः ‘काऽसींति तां प्रेचे । तथा—‘अहं तैव दासीं लभिहते किं तथ्यमेतदिति दृपदेशात् प्रभोर्दासः पानीयापिकृतस्तर्यं पह्यहं दासानुदासीति’ । तद्वार्त्यान्तश्चमत्कुतो दृपतिः सर्वथा विलीनकामार्त्तिस्तां सुतां मन्यमानो विससर्ज । तस्या वापुषि निजकरौ लभा-२० विति विविन्द्य तद्विग्रहवाज्यया निजीये निजैरेव यामिकैर्गवाक्षप्रविष्टनरकरभ्रान्त्या निजावेव भुजौ निग्राहयामास । अथ प्रत्यूपे तान् यामिकान् सचिवैविन्दृत्यमाणान् निवार्य मालवमण्डले महाकालदेवप्रासादे गन्त्या स्थयं देवमाराधयस्तस्थौ । देवादेशानुजद्वये लग्नं सति तं मालवदेशं सान्तःपुरं तस्मै देवांय दत्त्वा तद्रक्षापिकृतान् परमाराजयुत्तान् नियोज्य स्थथमेव तापसीं दीक्षामहीन्यके” । इति शीलवते भूय[प]राजप्रबन्धः ॥ ९ ॥

१ A गणु । २ A थलियाग । ३ Dbc उचिवमो । ४ A नुंग च । ५ A कसिपो । ६ AD तद । ७ D भुपहु । ८ Dd भुपहु रहन्ति । ९ Db खट्टगलिहाइ । Dd खट्टगलिहाइ । 10 P जं । 11 A दक्षयः । P उद्धर्द । 12 P युओ । 13 D मरीं । 14 P कयलियसंभाण । 15 A नामि । 16 A युवा । 17 P युवन्ति । 18 De रहन्ति । 19 Db युग्मागो । 20 A चदो । † अन्तिमं गायाकिंचं P आद्यो नोपदध्यम् । 21 P नामि ‘दक्षया’ ।

* AD Da-b सहकेवादान्तु पृष्ठ समादोर्मि प्रमाणे निपत्तिप्रित्तद्वयेन संविशामकतपोपदयते—“पद्मिंशाद् ग्रामलक्षप्रमिते क्षमहृन्ते नारो कर्यावददेशे यातीयपिकृतप्रियाभिलापप्यक्षिरात् राजा भूपदेशो (D भूपदेशो) भालवके शीरुदम्भाकामाराधयमाप्यकं तर्जं देवान् दृपा स्थयं दासों लभिद्वयि संहेषः” ।

२२ B ताम निरताम् । P नामि हृपापः । २३ B भूयराज । २४ BP कसिन् । २५ AD ‘भूप’ नामि । २६ B ‘सा’ नामि । Db सरी । २७ P ‘रेप्प’ नामि । २८ B Dv ‘तद’ नामि । २९ BP तत्रुव । ३० Db न्सरी । ३१ BP ‘चाहा’ ।

[४. वनराजादिप्रवन्धः ।]

१५) *तस्य कन्यकुञ्जस्यैकदेशो गूर्जरधरत्रिः, तस्याः* गूर्जरसुवि चहीयाराभिधानदेशो पश्चा-
शरग्रामे चापोत्कटवंशयं झोलिकासंस्थं बालकं वैष्णवान्निः वृक्षे निधाय तन्मातेन्यनमधिनोति ।
प्रस्तावात्त्रायतैजैनाचार्यैः श्रीशीलगुणसूरिनामभिरपराहेऽपि तस्य वृक्षस्य छायामन्मन्तीमा-
५ लोकय, झोलिकास्थितस्य तस्यैव बालकस्य पूर्णप्रभावोऽप्यमिति विष्टुश्य, जिनशासनप्रभावकोऽयं
भावीत्याशया वृत्तिदानपूर्वं तन्मातुः पार्वात्स बालो जगृहे । वीरमतीगणिन्या स वाढः परिपा-
ल्यमानो गुरुभिर्दत्तवनराजाभिधानोऽष्टवार्षिको देवपूजाविनाशकारिणां मूर्पकाणां रक्षाधिकारे
नियुक्तः । स तान् वौणेन निग्रन् गुरुभिर्निपिद्वोऽपि चतुर्थं पायसाध्यास्तानेवं जगौ । तस्य जातके
राजयोगमवधार्योऽयं महान्वपतिरेवं भावीति निर्णयं स^{१०} तद्मातुः पुनः प्रत्यर्थितः । भावा समं
१० कस्यामणि पश्चिमौ स्वामातुलस्य चौरवृत्त्या वर्तमानस्य [सन्मानपात्रतां प्राप्तो जनपदस्यान्तर-
स्त्वलितपौरुषपृथिवीर्वग्रामसार्थकेव....(?)] सर्वत्र धार्दीप्रपातंभकरोत्तु ।

१६) कदाचित्^{१३} काकरग्रामे खाद्यपातनपूर्वं कस्यापि व्यवहारिणो गृहे धैनं मुष्णन् दृष्टिभाष्टे
करे पतिते सत्यव्र भुक्तोऽप्यमिति विचिन्त्य तत्सर्वस्वं तत्रैव मुक्त्वा विनिर्यगौ । परस्मिन्नहि
तद्वग्निन्या श्रीदेव्या निशि गुस्तृत्या सहोदरवात्सल्यादाहृतः । १४ष्टः—‘कथं मदृश्यहे प्रधिश्य सर्व-
१५ सारं [शृहीत्वा] त्वया पुनरेव मुक्तम्?’ । तेनोक्तं—

२०. कह नाम तस्य पायं चितिज्ञ आगए वि कोवम्भि । उप्पलदलसुकुमालो जस्स घरे अछिओ हत्तो ॥
सापि तद्वचनमाकर्ण्य तचरित्रेण चमत्कृता भोजनवस्त्रदानादिकमुपकारं चकारै । ‘भम पटा-
भियेके भवत्यैव भगिन्या तिलकं विधेयमि’ति प्रतिपेदे^{१४} ।

१७) अथान्यस्मिन्नवसरे तस्य चरटवृत्त्या वर्तमानस्य चौरैः काप्यरप्यप्रदेशे रुद्रो लौम्या-
२० भिधानो वर्णिक तं^{१५} चोरव्रयं दृष्ट्वा स्वीकारपञ्चकमध्याहाणद्वयं भज्जस्तैः पृष्ठ इति” प्राह—‘भवत्रित-
याधिकं वाणद्वयं विफलमित्युक्ते, तदुक्तं चैलवेद्यं वाणेनाहल्य तैः परितुष्ट्रात्मना सह नीतस्तैः
योथविद्याचमत्कृतेन^{१६} अविनरजेन भम यद्वाभियेके त्वं महामाल्ये भावीत्यादिश्य विष्टुष्टः ।

१८) अथ कन्यकुञ्जादायातपञ्चकुलेन तिहेशाराजः सुतायाः श्रीमहर्णीकाभिधानायाः कञ्जुक-
सम्बन्धे पितृप्रदत्तेऽर्जुरदेशस्योदयाहणकहेतवे समागतेन सेष्टुभृत्यवनराजाभिधानश्चके । पृष्ठमार्सी

* दितराजान्तर्गतः पाठः AD नामि । 1 Db वागः । 2 Da शीलाणि; Db शीलाण । 3 B सूरीभिः; A सूरी-
भिनामभिः । 4 B भवनमन्ती । 5 B ‘उण्ण’ नामि । 6 Db परिपात्प्र । 7 B नामि । 8 D छोईः; Pa वाणः ।
9 AD शुपिर्भासो । 10 P ‘स’ नामि; AD ‘त्रू’ नामि । 11 B समर्पितः । † एतत्कोहान्तर्गतः पाठः केवल P
आदर्शे एवोपलम्बयते । 12 ०प्रदानः । ‡ एतदमे P आदर्शे ‘वैरस्तमारे एत्रे न मुखं कदमिदपि । यदः—

(२३) नकं दिवा न शयनं प्रकटा न चर्या द्वैर न चाप्तवाच्छक्लप्रभोगः ।

शंकानुजादृति शुतादपि दारतोऽपि दोक्षत्यापि कुरने नमु यैवेष्टिष्ट ॥

एतायाश्च प्रक्षिप्तः पाठः समुपलम्बयते । 13 केवल B आदर्शे पूर्व पृष्ठ शब्दः । 14 B नामि । 15 B वृद्धिः । ६ पल्लविहार-
न्तर्गतपाठस्थाने AD आदर्शे ‘वैरा भोजनवद्यष्टु D) दावर्त्तेकुपुष्टोः’ B आदर्शे ‘वैराभोजनवद्यरात्रः’ एतादमः संहिता:
पाठः प्रथम्यते । 16 P प्रतिपद्मः । 17 AD नामि । 18 D जात्या । 19 P त्रीरूपः । 20 AD ‘वै’ नामि ।
21 B ‘हृति’ नामि । 22 D यलः । 23 P ‘हृद’ नामि । 24 BP ‘भी’ नामि । 25 D जात्या । 26 D महिदा ।
27 P ०प्रतिपद्मः । 28 B सोहृष्टः; P सहृष्टः ।

प्रकाशः]

यावदेशमुद्ग्राह्य चतुर्बिंशतिसंख्यान् पांसूरूपकदम्मलक्षांस्तेजोजात्यांश्चतुःसहस्रसंख्यांसुरज्ञभान्
गृहीत्या पुनः सदेशो प्रति प्रस्थितं पञ्चकुलं सौराष्ट्राभिधानघाटे वनराजो निहत्य क्षिमित्रपि
वननिकुञ्जे तद्राजभयाद्वर्ष्ये यावद्गुप्तवृत्त्या तत्स्यै ।

१९) अथ निजराज्याभिपेकाय राजधानीनगरनिवेशचिकीः शूरां भूमिभवलोकमानः पीप-
लुलातदार्थपाल्यां सुवलिपणेन भास्त्रादसाखांसुतेनाणहिछ्ननान्ना पृष्ठः-‘किमवलोक्यते’ । ५
‘नगरनिवेशयोग्या शूरा भूमिभवलोक्यते’ इति तैः प्रधानैरभिहिते, ‘यदि तत्य नगरनिवेशस्य
भूमित्वाम दत्तं ततत्त्वां भुवमावेदयामी’ व्यभिधाय जालिवृक्षसमीपे गत्वा धावतीं भुवं चशकेन
भ्वा आसित्सावर्तीं भुवं दर्शयामास । तत्र प्रदेशे” अ ण हि छु पुरभिति” नान्नां नगरं
निवेशयामास ।”

[अश्वत्तरे P शादेशे निजोद्गुप्तानि पद्यानि लिखितानि प्राप्यन्ते—

10

[६] कृष्णाराजुभारेण प्रकारेण चक्रास्ति यत् । मुकुतेन वृत्तीभूय वायमाणं कलेचित् ॥

[७] चन्द्रश्यालासु वालानां खेलन्तीनां निराष्ट्रसे । यत्र वक्त्रविधिया भाति शतचन्द्रं नभःस्तलम् ॥

[८] लक्ष्मा यशोवती चम्पा सकम्पा विदिशा कृशा । काशिर्नाशितसम्पत्तिर्मिथिला शिविलादरा ॥

[९] विषुरी विषुरीतश्रीमिथुा मन्यराकृतिः । धारापृभूत्तिराधारा यत्र जैवगुणे सति ॥ युग्मम् ॥

[१०] कंरवेधरतैन्यस गत्यात्पत्तीननस च । बलाद् गांगेयकर्णस न पश्याम्यहमन्तरम् ॥

[११] प्राणद्वीरलक्षा न जातपुलका लक्ष्मातिशङ्काङ्कुला, नैवाप्युजयिनी कदापि लयिनी चम्पातिकम्पानिता ।

कान्ती कान्तिविभूतिपानि नहि तथायोव्याप्तियोग्याभवत्, प्रसाप्ते तदिदाङ्कुतं विजयते श्रीनर्तनं पत्तनम् ॥

२०) ८०२ द्वाधिकाष्टशतसंवत्सरे (A D संचत् ८०२ चर्प वैशाखसुदि २ सोमे) श्रीविक्रमार्कत-
स्यास्य जालिनरोद्गुप्ते” ध्वलगृहं कारपित्या राज्याभिपेकलग्ने काकरत्रामवासत्व्यां तां प्रतिपत्त्वाभ-
गिनीं श्रियादेवीमाहूर्यं तथा कृततिलकः श्रीवनराजो” २ राज्याभिपेकं पञ्चाशाल्पदेशः कारथा-२०
मास । स जाम्याभिधाने वणिग् महामालाव्यक्ते । पञ्चासरग्रामतः श्रीदीलगुणसूरीन् सभक्ति-
कमानीप ध्वलगृहे निजसिंहासने निवेश्य कृतज्ञचूडामणितया ससाङ्गमपि राज्यं तेभ्यः समर्प-
यस्तीर्मिः स्थैर्यपूर्यो भूपो निपिद्यस्तेत्पत्युपकारयुद्धा तदादेशाच्छ्रीपार्वनाथप्रतिमालङ्कुतं पञ्चा-
सराभिधानं चैवं निजराजपक्षस्त्विसमेतं” च कारथामास । तर्थीं ध्वलगृहे” कंटेश्वरीप्रसादश्च
कारितः ।

15

२१. गृजराजाभिदं राज्यं वनराजाप्रभूत्यपि । जैनस्तु स्थापितं मञ्चस्तद्वैयी नैव नन्दिति” ॥

२२) संय० ८०२ पूर्यं निष्ठदं चर्प ५०, मास २ दिन २१ श्रीवनराजेन राज्यं कृतम् ।

श्रीवनराजस्य सर्वायुर्वर्ष १००, मास २ दिन २१ । ०

१ B ‘पारद’ भासि । २ P पास्त्रपद; Db पास्त्रपद; D पूर्वपद । ३ BP पतुःसहायान् तुरगान् । ४ AD ‘रात्रानीं’
भासि । ५ P पारद । ६ BP •निष्ठानो । ७ P भास्त्रादसांख्यानो; B ‘सोवत्ता’ भासि । ८ A लिपि विद्यो । ९ BP
‘स्थैर्यै’ भासि । १० D याम याम । ११ BD इति । १२ B जातेन पावती भुवं याः; D यावती भः यादेनोप्त्युपिता ।
१३ AD ‘नैसो’ भासि । १४ AD ‘इनि’ भासि । १५ P भासि । १६ BD निषेप । १७ BP •होत्यते । १८ BP
‘पास्त्रान् । १९ BP भासि । २० D भासि ‘ताः’; A इतः । २१ P •सहिते । २२ AD वा तेव । २३ D •पूर्वपदे ।
२४ D भासि । २५ DB उद्देश्य एव भासि ।

संवत् ८६२ वर्षे आपादसुदि ३ गुरौ अधिन्यां सिंहलग्रे वहमाने वनराजसुतस्य
श्रीयोगराजस्य राज्याभिपेकः ।

[B P श्लन्तरे—‘संवत् ८०२ पूर्वं वर्षं ६० श्रीवनराजेन राज्यं कृतम् । संवत् ८६२ वर्षे
श्रीयोगराजस्य राज्याभिपेकः (P श्रीजोगराजेन राज्यमलंचके)’—इतेव पाठः ।]

५ २२) तस्य राज्ञः^१ ग्रथः कुमाराः । अन्यस्मिन्नवसरे क्षेमराजनाम्ना कुमारेण राजेति विज्ञप्त-
यांचके—‘देशान्तरीयस्य राज्ञः प्रवहणानि वाल्याचत्तेन विपर्यस्तानि । अन्यवेलाकूलेभ्यः श्रीसो-
भेश्वरपत्ने समागतानि । ततस्तेषु तेजस्वितुरंगमसहस्रं दश (१००००) तथा गजानां सार्दीयदा-
संख्यायां रूप १८ । अपरवस्तूनि कोटिसंख्या । एतावत्सर्वं निजदेशोपरि स्वदेशभृष्ये भूत्वा
सश्रिष्यति । यदि स्वाम्यादिशति तदाऽऽनीयते” इति विज्ञसेन राजा तत्त्वपेथः कृतः ।

१० १०) तदनन्तरं तैत्रिभिः कुमारै राज्ञो वयोर्वृद्धभावाद्वैकल्यमाकल्य तस्यामपि स्वदेशप्रान्तप्रान्तरं-
भूमौ वैसैन्यं सज्जीकृत्याज्ञातचौरवृत्प्या तत्सर्वमान्धिद्य स्वपितुरुपपनिन्ये । अन्तः कुपितेन मौनाव-
लमिना तेन राज्ञा न किमपि तेपां प्रति “प्रलयादिष्टम् । तत्सर्वं वृपतिसात्कृत्वा क्षेमराजकुमारे-
णैतत्कार्यं सुन्दरं कुलमसुन्दरं वेति विज्ञातो वृपतिर्विभाषे—‘यदि सुन्दरसुच्यते तदा परस्यलुण्ठ-
नपातकम्; यद्यसुन्दरमभिधीयते तदा भवदीयचेनस्तु विरक्तिः । अतो मौनमेव श्रेय इति
१५ सिद्धम् । श्रूयतां भवदीयप्रथमपश्चे परवित्तापहृतौ निषेधहेतुः । यदा परमण्डलेषु वृपतयः
सर्वेषामपि राज्ञां राज्यप्रशंसां कुर्वन्ति तदा गृह्णरदेशो च रट राज्य मित्युपहसन्ति । असत्यान्ते-
पुरुषैरिलादिस्वरूपं वैयं विज्ञसिक्या ज्ञात्यमानाः किञ्चिदिजर्जैर्जैमनस्यमावहन्ते दूयामहे ।
घटवयं पूर्वजकलङ्कः सर्वलोकाहृदये विस्मृतिमावहति तदा समस्तराजपदक्षिण्यु वयमपि राज-
शाब्दं लभामहे । धनलवलोभ्लोलुभैर्भवद्द्विः स पूर्वजकलङ्क उन्मज्जयं पुनर्नवीकृतः । तदनन्तरं
२० राजा शश्वागारादिजं धनुरुपानीय ‘यो भवत्सु घटवान् स इदमारोपयत्विति समादिष्टे सर्वा-
भिसारेण तत्रैकेनाप्यधिरोप्यत इति राजा हेलयैवाधिज्याकृत्याभिदधे-

२२) आज्ञाभद्रो नरेन्द्राणां युतिच्छेदोज्जुविनामैः । शृथकश्यया च नरीणामश्वो वध उच्यते ॥
इति नीतिशास्त्रोपदेशात् आज्ञाभद्रादभ्यासात्प्रश्ववधकारिषु युवेषु को दण्ड” उचितः । अतो
राजा प्रायोपवेशनपूर्वकं विश्वायधिकैर्वर्पशते पूर्णं चितामवेशः कृतः । अनेन राजा भद्रासिकाश्री-
२५ योगीश्वरीप्रासादः कृतः^२ ।

२३) अनेन (योगराजनाम्ना) राजा वर्षं ३५ राज्यं कृतम् ।

सं० ८०७ पूर्वं वर्षं २५ श्रीक्षेमराजेन राज्यं कृतम् ।

सं० ९२२ पूर्वं वर्षं २९ श्रीभूयदेन राज्यं कृतम् ।

अनेन श्रीपत्ने भूयदेश्वरमासादः कारिनः ।

१ AD ‘राजा’ भाषि । २ A ‘सारंपदा’; D ‘सारंगी’ । ३ B ‘संतापी’; ४ D ‘हर॑ १८’ भाषि । ५ B ‘भूमा’
भाषि । ६ BP तप्तिदाते । ७ P ‘इदतामा’ । ८ B ‘प्रान्तप्रान्तम्’; A ‘प्रान्तप्रान्तम्’; D ‘प्रान्तम्’ । ९ D ‘वै’
भाषि । १० AD ‘तेन’ भाषि । ११ P ‘प्रति’ भाषि; B ‘प्रतिरापार्थं’; D ‘प्रतिरापार्थं इतेन’ । १२ AD ‘सेतो’ । १३ P
‘हस्ताः’ । १४ AD ‘स्पाना’ भाषि । १५ AD ‘वै’ भाषि । १६ AD ‘पूर्वं’ । १७ PD ‘होम’ भाषि । १८ AD
उपायः । १९ B ‘शिष्याभिष्टे’ । २० P ‘द्रिग्मनो’ । २१ D ‘आज्ञाभद्रा’ भाषि । २२ BP ‘इदः इः’ । २३ BP
दिशात्परिके । २४ BP भाद्रो एव विहीनस्ति ।

प्रकाशः]

सं० ९५६ पूर्वे श्रीवैरसिंहेन वर्ष २८ राज्यं कृतम् ।

सं० ९७३ पूर्वे वर्ष १५ श्रीरहादिलेन राज्यं कृतम् ।

सं० ९११ पूर्वे वर्ष ७ श्रीसामन्तसिंहेन राज्यं कृतम् ।

एवं चापोत्कटद्वयशो सप्त नृपतयोऽभ्युवन् । विक्रमकालात् संख्यया वर्ष १९८ ।

[A आदर्शं तथा प्रायस्तात्तद्वयोऽप्युल्लंग्य लिङ्गस्वरूपा लिखिता लभ्यते—

सं० ८..... (१) आवश्यकुदि ४ निरुद्धं वर्ष १० मास १ दिन १ श्रीयोगराजेन राज्यं कृतम् ।

सं० ८..... आवश्यकुदि ५ उत्तरापादनक्षत्रे धर्मलंग्ये रत्नादिवस्य राज्याभिषेको वधूव ।

सं० ८..... कार्तिकसुदि ९ निरुद्धं वर्ष ३ मास ३ दिन ४ अनेन राजा राज्यं कृतं ।

सं० ८..... कार्तिकसुदि ९ त्वां मध्यानक्षत्रे धर्मलंग्ये श्रीवैरसिंहो राज्ये समुपविष्टः ।

सं० ८..... ज्येष्ठसुदि १० शुक्रे निरुद्धं वर्ष ११ मास ७ दिन २ अनेन राजा राज्यं चक्रे ।

सं० ८..... ज्येष्ठसुदि १३ शनौ हस्तनक्षत्रे सिंहलंग्ये श्रीक्षेमराजदेवस्य राज्याभिषेकः समजनि ।

सं० ९२..... भाद्रपदसुदि १५ त्वां वर्ष ३८ मास ३ दिन १० अस्य राज्ञो राज्यनिवन्धः ।

सं० ९३५ वर्षे अश्वीनिसुदि १ सोमे रोहिणीनक्षत्रे कुम्भलंग्ये श्रीचामुण्डराजदेवस्य पट्टाभिषेकः समजनि ।

सं० ९..... माघवदि ३ सोमे निरुद्धं वर्ष १२ मास ४ दिन १७ अनेन राजा राज्यं चिदये ।

सं० ९३८ (१) माघवदि ४ भौमे खातिनक्षत्रे सिंहलंग्ये श्रीआगढदेवो राज्ये उपविष्टः । अनेन कर्त्तरायां १५ पुर्या आगडेश्वर-कण्ठेश्वरप्रापासादौ कारिताँ ।

सं० ९६५ पौषसुदि ९ कुञ्चे निरुद्धं वर्ष २६ मास १ दिन २० राज्यं कृतं ।

सं० ९..... पौषसुदि १० शुरौ आद्रानक्षत्रे कुम्भलंग्ये भूयगडदेवः पदे समुपविष्टः । अनेन राजा भूयगडेश्वरप्रापासादः कारितः श्रीपतने ग्राकारथ ।

सं० ९..... वर्षे आपादसुदि १५ निरुद्धं वर्ष २७ मास ६ दिन ५ राज्यं कृतं ।

एवं चापोत्कटद्वये पुल्ल ८; तद्वयोऽ१० वर्षे, मास २, दिन सप्त राज्यं कृतम् ।]

.२३. *असेच्या मावङ्गाः परिग्लितप्रकाशः शिखरिणो जडग्रीतिः कूर्मः फणिपतिरयं च द्विरसनः ।

इति व्यातुधर्मातुर्धरणिष्ठतये सान्ध्यवृत्तुलक्ष्मयासौ कविद्विलसदसिपद्मः स सुमठः ॥ इति ॥

[५. भूलराजप्रबन्धः ।]

२४) ऐप्य श्वर्वेक्षकश्रीभूयराजवंशे मुखालदेवसुतां राज-वीज-दण्डक-नामानन्धयः सहोदरा २५ याप्रापां श्रीसोमनाथं नमस्कृत्य ततः प्रत्यावृत्ताः श्रीमद्रणहिल्लुरु श्रीसामन्तसिंह-वर्षं वाहके-स्पामयलोकमानास्तुरगस्य नृपेण कशायाते दक्षे सति कार्पटिकवेशधारी राजनामा क्षत्रियोऽन-यसरदस्तेन तेन कशायातेन धीटितः शिरःकम्पपूर्वकं हा हेति शब्दस्यवादीत् । राजा तत्कारणं शृष्टः स-“तुरहमेन कृतं गतिविद्योपां न्युञ्जनयोग्यमनवधार्य कशायाते दीयमाने भूमैय मर्माभिपातः समजनि” । तेन तद्रूपासा चमत्कृतेन राजा स तुरहमो चाहनाय समर्पितसत्तरैव । अव्याख्य-३० यारयोः सदान्मो पोगमालोक्य पदे पदे तयोर्न्युञ्जनानि कुर्वत्सेनैव तदाचारेण तद्य महत्कुलमा-कामय लीलादेवीनामार्दी भवमिनो तमै दद्वौ । आपानानन्तरं किष्यत्यपि गते काले, तस्या अकाण्ड-

* एतद्वयं BP भूत्ते गोत्रप्रमाणे । १ BP 'भू' शब्दः । २ D भूलराजः । P भूलरा । ३ BP शब्दः । ४ AD भूलरदण्डः । ५ BP भूलरा ।

मरणे सञ्चाते संति, सचिवैरपत्यमरणं पर्यालोच्य तदुदरविदारणपूर्वमप्सुद्धनम् । मूलनक्षत्रजातत्वात्स 'श्रीमूलराजाभिधया समजनि । यालाकं इव आजन्म तेजोमयत्वात्सर्ववल्लभतया पराक्रमेण मातुलमहीपालं प्रवर्द्धमानसाम्राज्यं कुर्वन् मदमत्तेन श्रीसामन्तसिंहेनैं स साम्राज्येऽभिप्रिच्यते अनुन्मत्तेनोत्थाप्यते च । तदादिचापोत्कटानां दानमुपहासनया' प्रसिद्धम् । स ५ इत्थमनुदिनं विद्म्यमानो निजपरिकरं सज्जीकृत्य विकलेन मातुलेन स्यापितो' राज्ये तं निहत्य सल्यं एव भूपतिर्वभूव ।

२५) सं० १०३ वर्षे आपादसुदि १५ शुरौ, अधिवीनक्षत्रे सिंहलग्ने राजिमहरद्वयसमये जन्मत एकविंशतितमे वर्षे श्रीमूलराजस्य राज्याभियेकः समजनि ।

(B P आदये—'सं० १०८ वर्षे श्रीमूलराजस्य राज्याभियेको निष्पत्तिः ।' एतावानेव पाठः)

२४. 'मूलाकं श्रूते शास्त्रे सर्वकल्याणकारकः । अधुना मूलराजेन योगाधित्र्यं प्रशस्ते ॥

[१२] [विमे एत्य वनं जगाद् स विभुथापोत्कटानां विभोर्वशे हृष्टमपरेगुणवती कन्यात्सिंहं वं..... ।

चार्सी मुदितेन विगताशङ्कः विवाहा त्वया गर्म धासाति सार्वभौममुद्दरे सेयं शृगार्णी यदः ॥

[१३] [तिरुत्तावजनिए विष्पमणिः श्रीराजिनाह्नजः श्रीमद्वृगुर्वरमण्डलेऽथ नृपतिः श्रीपूरुराजाह्नपः ।

यसिन् दिग्विजयोद्यमव्यतिकरे प्रांद्रप्रभावाद्युते कम्पन्ते स मनांसि नाम न परं भूम्योऽपि भूमीभुवाश् ॥

२५ श्रीसौराश्रमंडले युद्धं सा...संहेन इति प्रवन्धः ।

[१४] आवर्जिता जितारातेर्गुणीर्णदीर्णरिपोरिव । गृज्जरेश्वराज्यश्रीर्यस जडे स्वर्यवरा ॥

[१५] [सप्तप्राकृतवशदूनां संपरत्ये स्वपत्रिणाद् । महेच्छः कच्छभूपालं लक्षं लक्षीवकार यः ॥

[१६] [लाटेश्वरस्य सेनान्यमसामान्यपराक्रमः । दुर्वर्तं वाणपं हित्वा हासिकं यः समग्रीद् ॥

[१७] [दिलोपहतदारियं शीर्षभिनिर्विदुर्जनम् । कीर्तिसागितकाकृत्यं यो राज्यमक्रोचित् ॥

२० [इत्यान्तिभिः स्तुतिमिः शुद्धैः स्तूप्यमानः साम्राज्यं कुर्वन्—] कमिलप्रव्यवसरे सपादलक्षीयः स्तुतिपतिः श्रीमूलराजमभियेणपितुं गृज्जरेश्वरसन्धौ समाजगाम । तद्यौगपद्येन नैरपतेस्तिलङ्घदेशीय-राज्ञो धारपनामा सेनापतिश्वापयौ । श्रीमूलराजेन तपोरेकसिन्विगृहमाणेऽपरः पारिष्णधातं कुरुत इति सचिवैः सह विश्वासंस्तूर्चे—'श्रीकृन्धाद्युर्गं प्रविद्यपि कियन्त्यपि दिनान्यतियागनाम् ।

२५ नवरात्रिकेषु समागतेषु सपादलक्षक्षितिपतिः स्वराजयन्यां शाकम्भर्यमव रघोग्रजामाराय-पिष्पति । तसिद्ध्यवसरे श्रीयारपनामा सेनानीर्जीयते । तदतुकमागतः सपादलक्षक्षोर्णपतिरपि ।

इत्थं तदीये मध्ये श्रुते सति नृपः प्राह—'मम लोके पलायनपापादः किं न भवित्यतीत्यादिष्टे ते अर्थः—

२०. यदपसरति मेषः कारणं तत्प्रहृष्टं मृगपतिरपि कोपात्मकुचत्युत्पतिष्पुः ।

इद्यनिहितरं गृहपत्रप्रचाराः किमपि विगमयन्तो सुद्धिमन्तः सहन्ते ॥

इति तदन्तसा श्रीमूलराजः श्रीकृन्धाद्युर्गं प्रविषेश । श्रीसपादलक्षीयभूपतिः श्रीगृज्जरेश्वर ७५

1 AD 'सति' कालि । 2 P 'मृगपत्रप्रचाराय शूलाद् हनि' हयेव शादः । 3 AD श्रीगृज्जरेश्वर । 4 AD अनुग्रहः । D गोप तु मते । 5 AD 'हातान्तिरं' । 6 BP शारदे शारितो । 7 BP ग गायः ।

* B भास्त्रे लापास एः भोद—शूलादः शूलपौ दोषे शर्वकार्यं कारकः । अनुग्रह शूलादान् विद्वं होते तु दोषे ॥

† पृष्ठद्विदितानि ददानि P बाटूनि रिता शास्त्रोपकरणमे । * शूल लापिता शूलादीर्णि P ग्राहेव हरदेव ।

8 BP शूलादीर्णे दूषेः शोहाताः पादः शास्त्रे । 9 D,b 'पातोदु' । 10 B बाटूनिर्दानदानामः । 11 AD 'एष' । 12 BP 'से ज्ञुः' कालि । 13 P 'दुर्गं' । 14 AD 'एष' कालि ।

वर्षीकालमतिक्रमद्वारात्रेषु समागतेषु तस्यामेव कट्टकभूमौ शाकम्भरीनगरं निवेश्य तत्र गोव्र-
जामानीय तत्रैव नवरात्राणि प्रारोभे । श्रीमूलराजसत्स्वरूपमवगम्य निरुपायान् मणिपो मत्वा
तत्कालोत्पन्नमतिवैभवो राजलाहिङ्कां प्रारम्भ्य राजादेशेन समस्तान् समन्ततः सामन्तानाहृष्य
कृष्टेष्टेष्टनवययकरणप्रतिबद्धपञ्चकुलसुखेन सर्वानपि राजपुत्रान् पदार्थान्वयावदाताभ्युपलक्ष्य
यथेचित्तदानादिभिरावर्ज्य च समयसङ्केतज्ञापार्नपूर्वकं तान् सर्वान् सपादलक्षीयन्वपतिशिविरस- 5
निहितान् विधाय, स्वयं निर्णीते वासरे प्रधानकरभीमारुद्ध तत्पतिपालकेन समं भूयसीमापि भुवमा-
क्रम्य, प्रत्यूपकालेऽप्रतर्कित एव सपादलक्षीयन्वपतेः कठकं प्रविश्य करन्या अवरुद्ध कृपाणपाणिरे-
काक्षये श्रीमूलराजसत्स्वाहैवारिकमनिहितान्-‘साम्यतं नृपतेः कः समयः ? श्रीमूलराजो राजद्वारे
प्रविशतीति स्वस्यामिने विज्ञप्य’-इति वदंस्तं दोर्दण्डप्रहरिण द्वारदेशादपसार्य, ‘अयं श्रीमूलराज
एव द्वारे प्रविशतीति तस्मिन्नभिदधाने गुरुस्त्रान्तःप्रविश्य तस्य राजः पल्यङ्के स्वयं निपसाद । 10
भयश्चान्तः स राजा क्षणमेकं मौनमवलम्येपत्साध्वसं विधुय, ‘मवानेव श्रीमूलराजः?’ हृत्यभिहिते,
श्रीमूलराजस्य ओमिति गिरमाकर्ण्य यावत्समयोचितं किञ्चिदक्षित तावत्पूर्वसङ्केतैस्तैव्यथतुः सह-
स्रप्रमितैः पतिभिः स एुल्दरः परितः^{१०} परिवेष्यार्थाचक्रे । अथ श्रीमूलराजेन स नृप हृत्यभिद्य-
‘असिन्मूलवलये नृपतिः समर्वीरः समरे यो ममं सम्मुखस्तिष्ठति स कोऽपि नैस्त्यस्ति वेति भम
विद्युदातस्त्वमुपयचित्तान्तैरुपस्थितोऽसि । परमशानावसरे मक्षिकासचिपात इव तिलङ्गदेशीय- 15
तैलिंगानिधानराजः सेनापतिं भज्याय उपागतं याच्छक्षयामि तावत्त्वया पार्दिण्यादातादिव्या-
पाररहितेन स्यात्त्वयमिति त्वामुपरोद्गम्भमागतोऽस्मि’ । श्रीमूलराजेनेत्यभिहिते सं भूपतिरेवम-
वादीत्^{११} ‘यैस्त्वं नृपतिरपि सामान्यपतिरिव जीवितनिरपेक्षतयेत्यं वैरिश्वर्ह एक एव प्रविशसि तेन
त्वया सार्द्धमाजीवितान्तं मे सन्धिः’ । तेन राजेन्त्युदिते ‘भा मैवं वदे’ति तं निवारयस्तेन भोजनाय
निमणितोऽवज्ञया तं निपित्त्वा, करे तरवारिमादायोत्यितस्तां करभीमारुद्ध तेन स्कन्धावारेण परि- 20
वेषितो धारपसेनापते: कठके पतितः । तं निव्य दशसहस्रसंख्यांसद्वाजिनोऽप्रादशगजस्त्वाणि
चादाय यावदावासान् दक्षे तावत्प्रणिधिभिरसिन्वतान्ते ज्ञापिते सपादलक्ष्यपतिः पलायांचक्रे ।

२५) तेन राजा श्रीपत्ने श्रीमूलराजवसहिका^{१२} कारिता, श्रीमुखालदेवस्यामिनः^{१३} प्रासादद्वय ।
तथा निलं निलं सोमवासरे श्रीसोमेन्वरपत्तने^{१४} यावायां शिवभक्तिंत्या व्रजंसद्विक्षिपरितुष्टः
सोमनाय उपदेशदानपूर्यं मण्डलीनगरभागतः । तेन राजा तत्र भुलेश्वर इति प्रासादः कारितः । 25
तथा नमचिकीर्पाद्यपेण प्रतिदिनमागच्छतस्तस्य “वृपतेस्तद्विक्षिपरितुष्टः श्रीसोमेन्वरः ‘अहं’
सासागर एव भवद्गरे समेप्यामांत्यभिदाय श्रीमदण्डहिंद्युपरेऽवतारमकरोत् । समागतसागर-
सङ्केतेन स्वयंव्यपि जलाशयेषु सर्वाण्यपि वारीणि क्षाराण्यभवन् । तेन राजा तत्र विपुल-
प्रासादः कारितः ।

१ AD शान्तः २ D राजा इहिनिः ३ BP क्षुण्डेशक ४ DP शापनां ५ AD ‘स्वयं’
नाति ६ D नाति ७ B युशरां ८ P युशरां ९ B इसरिहिते १० B मूलराजः सद्य जागी
भेदिः ११ AD नाति १२ B दोहरिः १३ D विद्यय ‘मम’ नाति १४ BP मन्युषे असनिष्टेः १५
BP वर्तन्तेनिरेः १६ AD यापितेनां १७ AD ‘स’ नाति १८ D यत् १९ B
प्रविशत्वामेव मनिः २० P यस्तिमेव मनिः २१ D ‘कृत्यतः’ नाति २२ BP मूलग्रसदिकः २३ BP युशालस्यामि-
रेण्यां २४ AD नीरक्तोः २५ P यस्तिमेव २६ AD ‘कृत्यतः’ नाति २७ AD
‘य’ नाति २८ P यस्तिमेव २९ P यस्तिमेव

२०) अथ तस्य प्रासादस्य^१ चिन्तायकमुचितं तपस्विनं कश्चिदालोकमानंः संरसेतीसरिच्छीरे: एकान्तरोपवासपारणकेऽनिर्दिष्टपञ्चग्रासभिक्षाहारं कान्थडिनामानं सं तपस्विनमआपीत् । यावच्चमस्याहेतवे दृपतिस्तवं प्रयाति तावत्तेन तृतीयज्वरिणा स ज्वरः कन्धायां नियोजित इति नृपतिरालोक्य, 'तेन राजा 'कथं कन्धा कम्पते?' इति पृष्ठः । 'वृषेण सह वात्तां कर्तुमक्षमतयेह ५ ज्वर आरोपित' इत्यभिहिते पार्थिवः प्राह—'यदेतावती शक्तिर्भवतस्तदा ज्वरः किं न सर्वथा प्रहीयते' इति राजादेशे—

२१. 'उपतिष्ठनु मे रोगा ये केचित्पूर्वसञ्चिताः । आनृण्ये गन्तुमिच्छामि तच्छम्भोः परमं पदम् ॥ इति शिवघुराणोक्तान्यधीयन्, नासुकं कर्म न क्षीयते इति जानन्, कथमसुं विसृजामींति तेनाभिहिते विषुरुपर्यमेस्यानस्य^२ चिन्तायकलत्वाय दृपतिरन्यर्थयामास ।

१० २७. 'अधिकारात्रिभिर्मौठापत्यात्रिभिर्दिनैः । शीर्षं नरकवाञ्छा चेद्दिनमेकं' पुरोहितः ॥

इति स्मृतिवाक्यतत्त्वं^३ जानंस्तप उद्धोपेन संसारसागरमुक्तीर्य कंथं गोप्यदे निमज्जामींति वचसा निपिद्धो दृपस्ताप्रशासनं मण्डकवेष्टितं निर्माय तस्मै भिक्षागताय पत्रुषे भोच्यामास । स तदजानंस्ततः प्रलयावृत्तः । पुरा ब्रैदत्तमार्गोऽपि सरसवत्याः पूरे तदा न "दीपमानमार्गः, आजन्म निजदृपणानि विष्णुशंस्तात्कालिकभिक्षादोपपरिज्ञानाय यावद्विलोकते तांवत्तदृतं तावश्चासनं १५ ददर्श । तदनु कुदूं तपोथनं विज्ञाय तत्रागत्य दृपस्तत्सान्त्वनाय यावद्विनयवाक्यपानि ब्रूते तावत्तेन 'मया दक्षिणपाणिना गृहीतं भवत्ताप्रशासनं कथं वृथा भवतींति वयज्ञलूपेवनामा निजविनेयो दृपाय समर्पितः । तेन वयज्ञलूपेवेन 'प्रतिदिनमङ्गोद्धर्त्तनाय जात्युषुष्णस्यादौ पलानि, मृगमदपलचतुष्यम्, कर्पूरपलमेकम्, द्वार्चिंशद्वाराज्ञानाः, यात्संसहितं सितातपत्रं च यदा ददासि । तदा चिन्तायकलत्वमङ्गीकरोमी^४त्यभिहिते राजा तत्सर्वप्रतिपद्य विषुरुपर्यमेस्याने तपस्यिभूपतिपदे २० सोऽभिपित्तः । कंक्लोल इति प्रसिद्धः^५ । इत्थं भोगान् भुजानोऽप्यनिष्ठावृत्त्वर्चयैवंतरितः स कदाचिद्विश्वि मूलराज्ञान्याः परीक्षितुमारब्धः । तत् ताम्बूलप्रहारेण कुठिनीं विधाय उनरुनीतो निजोद्धर्त्तनविलेपनात् ज्ञानोत्सुष्यपयःप्रक्षालनाच सज्जीचकार ।

[अथात्रैव लाखाकोत्पत्ति-विपत्तिप्रबन्धः ।]

२८) पुरा कस्मिन्विपि परमारब्धंशो कीर्तिराजदेवांपितपते: सुता कामलतानामी । सा वाल्ये सम-
२५ मालिभिः^६ 'कस्यापि प्रासादवस्थु पुरो रममाणा, वरान् वृणीतेति ताभिर्व्याहियमाणां सा कामलता घोरान्धकारनिरुद्धनयनमार्गा प्रासादस्मभान्तरितं फूलडाँभिधानं पशुपालमज्ञातवृत्तींत्तमेव वृत्तीं, तदनन्तरं कतिपयैर्वर्यैः प्रधानवरेन्य उपढौक्यमाना पतिव्रताव्रतनिर्वहणाय पितरावलु-
ज्ञाप्य निर्वन्धात्तमेवोपयेमे । तयोर्नन्दनो लाखाकः । स कच्छदेशाधिपतिः, प्रसादितयशोराज-

१ AD नालि । २ P द्वलोकमातः । ३ BP सरस्वता: सरितस्तेरि । ४ D कम्बडि । ५ D 'स' नालि ।
६ P द्वलोक्ते । ७ BP नालि । ८ BP आद्योः । ९ BP चिन्तायकवत्य विषुरुपर्यमेस्यानस्य । १० ददिनं भव ।
११ AD 'तस्मै' नालि । १२ AD 'कथं' नालि । १३ AD दत्तः । १४ P प्रेर्व्यायमानः । १५ B स दर्शकाद्रमः, AD
कावसत्तामातः । १६ D ग्रामः । १७ A हृष्णलोः; D उंडोलः; Da-c ऊँझौः । *B गर्वेद्वाक्यं । १८ B 'अपि'
नालि । १९ BD 'प्रत' नालि । २० P गमरेमे । २१ D नालि 'तां' । २२ D विलेपनमानोः । २३ D उलक दैवया
पर्वतेष्वये, नामवत् । २४ P विमाऽन्यव 'देवाधिः' । २५ P समं सर्विषिः । २६ AP गमरे । २८ B इलहा ।
२७ AD 'मज्ञातवृत्ता तस्मै । २८ A वृत्तः ।

वरप्रसादात्सर्वतोऽप्यजेयः; एकादशं कुत्व खासित श्रीमूलराजसैन्यः; कसिन्नप्यवसरे कपिलको-
द्वृग्यस्थित पृथि लासाकः राजा स्वयं निरुद्धः। तदनु स लक्षः काप्यवस्कन्ददानाय प्रहितं निर्व्यू-
द्दसाहसं माहेच्छामिष्ठं भूत्यमागच्छन्तमिषेष। तत्स्वरूपमवधार्य श्रीमूलराजेन तदागमनमागेषु
निर्मदेषु स समाप्तकार्यस्त्रागच्छन् 'शस्त्रं लजे' ति राजपुरुषैरुत्तः स्वस्यामिकार्यसमर्थनाय तथैव
कृत्या समरसज्जं लासाकुपेत्र प्राणंसीत्। अथ संग्रामावसरे—

१८. उमा तारिं तिर्हि' न कित लक्षण भण्ड ति' घट। गणिया लव्मई दीहडा के' दह अहवा अहु ॥
इत्यादियोधवास्यानि "वहूनि व्याहरन् माहेच्छामृत्येनोऽसुभट्टिदर्शनेन प्रोत्साहितसाहसः;
श्रीमूलराजेन समं दृढयुद्धं कुर्याणस्तस्याजेयतां दिनचयेण विमृद्य तुर्यदिने श्रीसोमेश्वर-
मनुस्मृत्य ततोऽप्यतीर्णसद्वकलया स लक्षो रित्येष्ट। अंथ भूपतिस्तस्याजिभूपतिस्य वातचलिते"
इमशुणि पदा स्थृतं लक्ष्मीजनन्या 'दूति' रोगेण भवद्वंशो विपत्स्यत् इति शास्त्रः।

5

10

१९. सप्रतापानले येन लक्ष्मीमं वितन्यता। सूक्ष्मितस्तत्कलत्राणां वाप्नावग्रहनिग्रहः ॥

२०. कल्पपूर्वकै ईत्या सहसाधिकलमज्जालमायातम्। सङ्ग्रहसागरमये धीरतां दर्शिता येन ॥

✓ २१. मैदिन्यां लक्ष्मीन्द्रियानि चलौ बद्धमूला दर्शीची रामे स्फटप्रयाला दिनकरत्यनये जातशाखोपशाखा।
किञ्चिदामार्गार्थानेन प्रकटितकलिका पुष्पिता साहसाङ्के आमूला मूलराज त्वयि फलितवती त्यागिनि लागवधी॥

२२. 'प्राता प्राश्वपि वारियाहसलिलैः संख्यार्थाकुरुव्याजेनाचक्षुशाः प्रणालसलिलैर्दत्त्वा निवापाञ्जलीन् ।
प्रासादास्त्रव विद्यां परिपत्वद्वृद्यस्यपिण्डच्छलात्युर्वन्ति प्रतिवासरं निजपतिप्रेताय पिण्डक्रियाम् ॥

15

॥ इति दाम्बाकूलउत्त्रं-उत्पत्तिविपत्तिप्रथन्धः ॥ ११ ॥

२३) इत्यं तेन राजा पञ्चप्राशदर्पणि निष्कण्टकं साक्षात्यं विधाय सैन्यनीराजनाविधेर-
नन्तरं राजा प्रसादीकृतं ताम्बूरं घण्टेन करतलाभ्यामादाय तत्र कुमिदर्शनाविर्यन्धेन्न तत्स्वरूपम-
यगम्य वैराग्यात्संन्यासाद्वीकारपूर्वं दक्षिणचरणपाद्वृष्टे वहिनियोजनापूर्वं गजदानप्रभृतीनि महा- 20
दानानि ददानोऽप्तिभिर्दिनैः-

.२४. उम्भरेणुं पदलग्रमप्रियेकं विषेहे विनयेकवशः। प्रतापिनोऽप्यस्य कथैव का भैद्रिमेद भानोरपि मण्डलं यः ॥
इत्यादिभिः" स्तुतिभिः स्तूप्यमानो दिवमास्त्रोह ।

संयो ०९८ एवं यर्थं ५०. राज्यं श्रीमूलराजश्वरः ॥ इति मूलराजप्रथन्धः ॥ १२ ॥

[१८] *विभिन्न रक्षाये निषेधिविनिजदिपि । राजा चामृण्डराजोऽशृतं महीमण्डलमण्डनम् ॥

[१९] *विरोधियनितानितातापाप्यापनपिण्डाः । यदीपाः कटकारम्भाः कुरुत्वमारिमीतयः ॥

[२०] *पानिपद्मजर्जिन्या स्फुरतोशपिण्डामया । यस्यासिम्रमरथेण्या यिदा वंदाः क्षमामृताम् ॥

25

1 AD 'सैन्यः' B 'सैन्यः' 2 BP 'काम्पः' लालिः 3 A 'राजा' लालिः 4 P 'विराजमूर्त्यः' 5 B 'सायं';
P 'सायः' 6 D 'सैन्यः' 7 P 'सैन्यः' 8 H 'सायः' 9 P 'सैन्यः' 10 B 'वहूनि वोप्यवस्यानि व्याः' AD 'वहूनि'
पात्रे 'विवेदपि' हृषीकेशाय । 11 D 'गृणेत्रोद्दरूपिणी' । 12 B 'लालि' 'स्वप्नः' । 13 P 'विना वास्तव्यम्' 'भूरतिः' ।
14 P 'विनिः' । 15 AD 'मूर्त् राजा एव' । 16 B 'हम्मम्यः' । 17 B 'दृष्टा' । 18 AD 'साताः' । 19 P 'दृष्टा'
20 P 'दृष्टा' । 21 'एवं वृद्धं वैक्षयते वृष्टोः' । 22 B 'प्राप्तो वृद्धः' AD 'प्राप्तो वृद्धिविषयान्वे विनिः' दृष्टये ।
23 AD 'साताः' । 24 D 'प्रेतिभिः' लालिः । 25 BP 'वास्तव्यम्' । 26 B 'वास्तव्यः' P 'साताः' 27 P 'वृद्धं' 'दृष्टः'
28 D 'प्राप्तो वृद्धिविषयान्वे' । *हन्ति विषये P 'वास्तव्यम्' ।

३०) संवत् १०५३ पूर्वं वर्ष १३ श्रीचामुण्डराजेन राज्यं कृतम् ।

[२१] *लोकत्रयोऽसत्कीर्तिर्महीपतिमत्प्रिका । राजा वृषभराजाल्पत्ततस्तचनुभूर्भूत् ॥

[२२] *उपरुद्धन् विरुद्धानां पुरीः पुरुषपौरुषः । जगज्ञम्यन् इत्येष विदेषहौर्दीरितिः ॥

३१) सं० १०६६ पूर्वं मास ६ श्रीवृषभराजेन राज्यं कृतम् ।

[२३] *वभूव भूयतिस्तसावरजो विरजस्तमाः । श्रीमान् दुर्लभराजाल्पः सुदुर्लभपशाः परैः ॥

[२४] *कालेन करयालेन मोगिनेवाभिरक्षितम् । निधानमिव यद्वाज्यमनाहार्यं परैरभूत् ॥

[२५] *सर्वथानुपमोग्येषु यत्य सौमाग्यमासिनः । न करः परदारेषु द्विजसारेषु चापतत् ॥

३२) सं० १०६६ पूर्वं च० ११ मास ६ श्रीदुर्लभराजेन राज्यं कृतम् ।

अथ तेन राजा दुर्लभेन श्रीपतने श्रीदुर्लभसरो रचयांचके ।

[२६] *तस्य आत्मुत्तः श्रीमान् भीमाल्पः पृथिवीपतिः । विष्टपत्रितयामीष्टपृष्ठचिप्रतिभूर्भूत् ॥

(अथ A आदर्शानुसारी मुद्रितपुस्तकस्य कालक्रमलक्ष्यकोऽयं पाठ एतादशः—)

[अथ सं० १५० (१०५२) आधानसुदि ११ शुक्रे पुष्पनक्षत्रे वृषभलये श्रीचामुण्डराजो राज्ये उपाविशत् । अनेन श्रीपतने चन्द्रनाथदेव-चाचिणीश्वरदेवप्रापासदौ कारितम् ।

सं० ५५ (१०६५) अश्विनिशुदि ५ सोमे निरुद्धं वर्ष १३, मास १, दिन २४ राज्यं कृतं ।

सं० १०५५ (१०६५) अश्विनिशुदि ६ भौमे व्येष्टानक्षत्रे मिथुनलये श्रीवृषभराजदेवो राज्ये उपविष्टः ।

अस्य राजो मालयकदेवो धाराप्राकारं वेष्टयित्वा शीलीरोगेण विपर्चिः सज्जाता । अस्य 'राजमदनयंकं' हति तथा 'जगज्ञणं' इति विष्टद्वये संजातम् । सं० १० (१०६६) चैत्रशुदि ५ निरुद्धं मास ५, दिन २९ अनेन राजा राज्यं कृतम् ।

सं० १५५ (१०६६) चैत्रशुदि ६ गुरुै, उत्तरापाठनक्षत्रे मकरलये चद्वात्राता दुर्लभराजनामा राज्येऽभिपिक्तः ।

अनेन श्रीपतने सत्त्वमिधवलगृहकरणं व्ययकरणहस्तियालापटिकागृहसहितं कारितम् । सवात्रवृषभराजग्रेष्यते मदनशङ्करप्रापादः कारितस्था दुर्लभसरो कारयांचके । एवं १२ वर्षं राज्यं कृतं ।]

३३) तदनु [AD प्रती-सं० १०६ (१०५८) ज्येष्ठशुदि १२ भौमे अभ्यनीनक्षत्रे भकरलये— एतावानविकः पाठः] श्रीभीमाभिधारं निर्जम्भञ्जं राज्येऽभिपिक्य खर्यं तीर्थोपासनवासनन्या धाणा-रसीं प्रति प्रतिधासुर्मालयकमण्डलं प्राप्य तन्महाराजश्रीमुखेन 'छवचामरादिराजचिह्नानि विमुच्य २५ कार्पटिकवेषेणैव पुरतो ब्रजं, यदा युद्धं विधेहि'-इत्यनिहितोऽन्तरा धर्मान्तरामयसुदितमवगम्य तं वृत्तान्तं नितान्तं श्रीभीमराजायं समादित्य कार्पटिकवेषेण तीर्थं गत्वा परलोकं साधयामास ।

३४) ततः प्रभृति मालविकराजभिः सह गृजरन्दृपतीनां मूलविरोधवन्धः संष्टुतः ॥१३॥

१ P लामुपदेन । * लालकचिद्विद्वानीमालि पदानि देवल P प्रती मालवने । २ AD म(भा)पुः शुरः ।
३ P भासात् । ४ AD प्रजेति । ५ A भीमताते । ६ P कीर्तं । ७ BP मालवराजा । ८ AD विरोधः ।
९ विरोधवन्धः प्रवृत्तः ।

[६. मुख्यराजप्रबन्धः ।]

३५) अथ प्रस्तावायातं मालवकमण्डलमण्डनश्रीमुखराजचरितमेवम्—युरा तस्मिन्मण्डले^५ श्रीपरमारवंशः श्रीसिंहभैटनामा वृत्ती राजपाटिकायां परिभ्रमत् शरवणमध्ये जातमात्रमति-मात्रस्पैषावृं कमपि वैलमालोक्य शुच्रघात्सल्यादुपादाय देव्यै समर्पयामास । तस्य सान्वयं शुद्ध इति नाम निर्ममै । तदनु सीन्धलै इति नाम्ना सुतः समजनि । निःशोपराजगुणपुरुषमज्जुलस्य ५ श्रीमुखराज राज्याभिषेकचिर्कीर्तिप्रस्तुत्सौधमलङ्घवन्नमन्दक्षतया निजवधुं वेव्रासनान्तरिता विधाय प्रणामपृष्ठं भैष्पतिमारराथ । राजा तं प्रदेशं विजनभैवलोक्य तज्जन्मवृत्तान्तमादित एव तस्य निवेद्य ‘तवं भक्त्या परितोपितः सन् सुतं विहाय तुभ्यं राज्यं प्रयैच्छामी’ति वदन्; ‘परमनेन सीन्धलनाम्ना वान्धवेन समं प्रीत्या वर्तितव्यस्मिंशुनुशास्ति दत्त्वा तस्याभिषेकं चकार । सीन्धन्म-वृत्तान्तप्रसरशक्तिना तेन स्वदेविताऽपि निजमे । तदनु पराक्रमाकान्तमूतलः समस्तविद्वैज्ञनचक्र-१० वर्ती श्वादिविद्यानाम्ना महामालेन चिन्तितराज्यभारैः; तं सीन्धलनामानं आतरसुत्कर्तव्याऽऽज्ञाभ-झकारिणं स्वदेशाद्विर्वास्य सुचिरं राज्यं चकार ।

३६) स सीन्धलो गर्जरदेशो समागत्य [अंवृदतलहृष्टिकायां] काशहृदनगरसविधौ निजां पद्मीं निवेद्य द्वीपोत्संवारात्रौ मृगयां कर्तुं प्रयातः । चौरवधैर्भूमैः सञ्जिधौ शूकरं चरन्तमालोक्य, शूलिकायाः पतितं चौरश्वरमजानन्, जानुनाधो विधाय धावत्प्रतिकिर्ति^६ शरं सज्जीकुरुते तावत्तेन शयेन १५ सङ्केतितः । ततस्तु करस्पर्शान्विवार्य, शूकरं तं शरेण विदार्प्य, यावदाकर्पति तावत्स शावो उद्दीह-सप्तवृत्तिष्ठन् सीन्धलेन प्रोचे—‘तव सङ्केतकाले शूकरे शरप्रहारः श्रेयान्, किं वाऽवृत्युध्य मत्प्रदर्त्तः प्रहारः’^७ इति तद्वाक्यान्ते सं छिद्रादेवी प्रेतः तत्त्विः सीमसाहसेन परितुष्टो वरं वृणु^८ इत्यभिहितः, ‘मम वाणः क्षिती मा पतत्विति याचिते, भूयोऽपि ‘वरं वृणु’ इति श्रुत्वा, ‘मनुजयोः सर्वापि लक्ष्मीः स्वाधीनेति । तत्साहस्रचम्भकृतः स प्रेत इत्याह—‘त्वया मालवमण्डले गन्तव्यमिति । २० तत्र श्रीमुखराजु सञ्जिहितविनाशस्त्रै त्वया स्थातव्यम् । तत्र तवान्वये राज्यं भविष्यतीति तत्प्रपतितस्त्रं गत्वा श्रीमुखराजः सम्पदः पदं कमपि जनपदमवाप्य एनस्त्कर्तव्या [प्रवृत्ते । अन्यदा वैलिकात् पारापिर्याप्तिः । तेन नारिंगा । ततः कोपाद्वालय तत्कष्टे ज्ञालयित्वा द्विषा । वैलिकेन रावा कृता । राजा युनः सरलामकारयत् । वलोत्कर्तवेन भीतो मुख्यनृपः । इतश्च केऽपि मर्दनकारिणो महाकला-

१ Pa. ०४ व्याख्यासामः । २ Pb. मालवमण्डले । ३ D. सिंहदन्तभट्टः; BP. श्रीहर्षनामा । ४ A. स्पृहात्मः; B. स्पृहात्मतिमयं । ५ Pa. यालकमवदेष्व । ६ Pb. लृष्टप्रदेश युवता० । ७ A. क्लन्ये । † P. प्रती ‘सा स्वयं तत्र मुख्य इति नाम विद्ये’ द्वाराद्यं वाक्यम् । ८ B. संतुलः; P. सिंहुराजः । ९ AD. ‘शत्रुं नाश्चि । १० AD. मञ्जुक्षुज्जलः । ११ Pb. चिकीतुः । १२ BP. चृपति० । १३ PA. राजानं वं । १४ BP. मालोक्य । १५ BP. मवदवला । १६ BP. वप्पापि० । १७ B. Pa. तत्र सत्त्वा० । १८ D. सत्त्वा० । १९ AD. वाज्यः । होतोऽपि D. मुख्ये एवाद्यविषेक दक्षिणस्त्रयते—‘पितृं मुखमतुष्टव्यं कलामपि योपितुष्टविविहारितवर्षाद्यमधिकरममधिकद्वादशयोर्वर्णो निषि प्रवायामाति च । तपा समं निषेद्य जाते इत्ये दोषप्रमेयाद्—(२२) ‘मुख वडा दोरी चेषिताति न गमाति । असादि धन गतीहैं चिकित्सिल दोषेन्द्रियाति ॥१॥’ २० B. सिंहुराजासामने । २१ केवङ्गं Pb. प्रती इवं पंच दद्यते । २२ AD. द्वीपोसेवे० । २३ AD. वध० । २४ Pb. शूकरं प्रति० २५ B. दद्यते० । २६ D. महाप्रदृष्टः । २७ Pa. वश स । † एवद्विद्वैज्ञानिकर्तव्याद्यत्यने Pb. प्रती ‘वृद्धास्ते इवोत्पात, भूतीते तुष्टः प्रती वसं वृणु’ प्राप्तावद् प्रति० संहितः पादो लग्नयते । २८ AD. विनाशस्यापि तत्र त्वया गत्प्रमयेद । * प्रवृत्तेष्ट-कान्तरांडः पद्मः केवङ्गं Pb. प्रती चिकित्सा लग्नमन्ते०

वन्तो देशान्तरादागता राज्ञो मिलिताः । वत्यार्थात्स्याङ्गे भर्दनुग्रह दापयति । ते च स्फुलया हस्तशादयङ्गा-
न्त्युत्तार्यु पुनः सज्जीकुर्यन्ति । एवं द्वित्रिः कारितम् । हृषी राजा सीन्वलयाष्टेवं कारयति । तस्याहेष्टारितेषु
निथेष्टां गतस्य नेत्रोद्धारं चकार । सज्जस्य तस्य नेत्रहणे कः शक्तः । अतोऽनेन प्रकारेण] श्रीसुज्जेन निगृहीत-
नेत्रः काष्ठपञ्चरनियत्रितो भोजं सुतमजीजनत् । सोऽन्यस्तसमस्तशास्त्रः पद्मनिशादाण्डामुधान्य-
धील्य द्वाससतिकलाकृपारपारद्वामः समस्तलक्षणलक्षितो वृद्धे । तज्जन्मनि जात्कविदा केनापि
नैमित्तिकेन जातकं समर्पितम् ।

३४. पञ्चाशतक्ष्य वर्षाणि मासाः ‘सप्त दिनवयम् । शोकत्वं ‘भोजराजेन सगौडं दक्षिणायथम् ॥
इति श्लोकार्थमवगम्यास्मिन्स्ति भूत्यनो राज्यं न भविष्यतीत्याशङ्कायान्त्यजेभ्यो वधाय तं
समर्पयामास । अथ तैर्निश्चिये माधुर्यधुर्यां तन्मूर्तिमवलोक्यं जातामुकम्पैः सकम्पैश्चेष्टवैतं

१० सारेत्यभिहिते-

३५. मान्धाता-स महीपतिः कृतपुगालङ्कारभूतो गतः सेतुर्येन महीदधौ विरचितः कासौ दशासान्तकः ।
अन्ये चापि शुधिष्ठिरमृष्टयो यैवद्वारा भूपते नैकेनापि समं गता वसुमती मैत्येऽत्या यासाति ॥
इदं काव्यं पद्मके आलिख्य तत्करेण वृपतये समर्पयामास । चृपतिस्तद्वर्णनात्खेदमेद्वरमना अशूणि
मुश्चन् खूनाहस्याकारिणं स्तं निनिन्द ।

१५ [२७] [*हा हा सछ्व हियए कबं तुह भोज मणिय जं मरणे । मुह पाव दुङ्ग दोहगनियामठामस्त तडं सरणे ॥

[२८] इणि राजिङ्गं न हु काजु भोज गुणागर तुह विषु । काठ दिवारउ आज जिम जाई भोजह मिल्द ॥
ततो मंत्रिप्रवोधवाक्यं राज्ञः-

[२९] सामिय अतिहिं अजाणु जं इण परि बोलई हिय । जाण्या एङ्ग प्रमाणु कीधउं जं न कथत्यवह ॥
इति राज्ञा भूयो भूयो विलयमानेन]

२० ३७) अथ तैसं सबहुभानमानीय युवराजपदबीदानपूर्वं संमान्य तिलङ्गदेशीयराज्ञा श्रीतैलिप-
देवनान्ना सैन्यप्रेपणैराकान्तो रोगयस्तेन रुद्रादिव्यनान्ना महामात्येन निपिद्यमानोऽपि तं प्रति-
प्रतिष्ठासु;

[*मंत्रिणा उक्तम्-

[३०] देव अम्हारी सीप कीजह अवगणियह नहीं । तुं चालंती सीप इणि मंत्रिहिं हुसह सही ॥

२५ [३१] रुलीयउं रायह राजु तर्द वहठड महै लंघीयह । ए पुणि वडर्त अकाजु तुं जाणे मालव धणी ॥

[३२] सामी मुहरउ वीनवह ए छेहलउ ऊहारु । अम्ह आइसु हिय सीसि तुह पडतउ दरै छारु ॥

-इति मंत्रिणा निपिद्योऽपि सैन्यवचाल ।]

गोदावरीं सरितमवधीकृत्य तासुल्लङ्घ्य प्रयाणकं न कार्यमिति शापयदानपूर्वं व्यापिद्वेष्टि । तं
पुरा पोदा निर्जितमिल्यवज्ञा पद्यवत्तिरेकवशात्तां सरितमुत्तीर्य स्कन्धावारं निवेशयामासे ।
३० रुद्रादिव्यो नृपतेस्तद्वान्तमवगम्यं कामपि भाविनीमविनीततयां विपदं विशृद्धय स्थं चितान्ते

1 ADPa समस्तामात्र । 2 ADP 'एण' मात्र । 3 A शविदविदः । 4 BP सहमात्र । Pa लक्ष्मात्र ।
5 PPa भोजदेवेन मोक्षये । 6 PPa •मरणां । 7 AD •मरणां । 8 BP •मिहित । 9 De •मरण । 10 Db
संबोधि कालं गताः । 11 Db मुत्र । * शोषणामरणां । पद्मयः देवेष Pa मतो छन्दमन्ते । 12 P लक्ष्मिः । 13 AP
स्थापिष्य; Pa निरिष्य । 14 P निरेष्व स्थितः । 15 B सं वर्षेष्वैः । P सं वर्षस यूः AD गोरोः ।
16 PPa •मारण्ये । 17 P भाविनी विपदं विशृद्धय मृपसाविनीततया चितान्ते ।

प्रकाशन]

प्रविवेशा । अथ तैलिषेन तत्सैन्यं छलयलाभ्यां हतविप्रहतं कृत्वा सुरज्जवा विवद्य श्रीमुङ्गराजो
जैगृहे । क्वारागृहे निहितः । काष्ठपञ्चरनियश्चितो मृणालवत्या तद्विगच्या परिचार्यमाणस्तया सह
जातकल्यनस्म्बन्धः, पाथ्यत्वैर्निजप्रधानैः सुरज्जदानपूर्वं तत्र ज्ञापितसङ्केतः, कदाचिद्विष्टपै स्वं
प्रतिविम्बं पद्यवश्चातवृत्त्या पृष्ठतः समागताया मृणालवत्या वदनप्रतिविम्बं जराजर्जरं सुकुरे
निरीक्ष्य युद्धः श्रीमुङ्गस्य वदनसामीप्यात्तद्विशेषप्रविच्छायतया तां विषण्णामालोक्यैवमवादीत् ॥

ॐ मर्जु भाष्ट मैषालवह जब्बयं गयउं न द्यारि । जहु सकर सयद्वण्ड थियें तोइ स र्मठी चूरि ॥

इति तां सम्भाव्य स्वस्यानं प्रति यिथासुस्तद्विरहासहो भयानं वृत्तान्तं ज्ञापयितुमशक्तो भूयो
भूयः प्रोच्यमानोऽपि तां चिन्तामनुचरन्, अलवणातिलवणं रसवर्तीं भोजितोऽपि तदास्वादानव-
योगात्तया निर्वन्धन्यन्वरया गिरा सप्रणार्यं पृष्ठः प्राह—‘अहमनया सुरङ्गया स्वस्याने गन्तासीति ।
चेद्गवती तत्र समुपैति तदा महादेवीपदेऽभिपित्य प्रसादफलं दर्शयामी’ लभिहिते, ‘धावदा-¹⁰
भरणकरण्डिकासुपानयामि तावत्क्षणं प्रतीक्षासे’ लभिदधानाऽसौ^१ कालायिनी ‘तत्र गतो मां
परिहरिष्यते’ ति विश्वशान्ती स्वधातुर्भूपतेस्तं वृत्तान्तं निवेद्य, विशेषतो विडम्बनाय वन्धनवद्धं
कारपित्या प्रतिदिनं^२ भिक्षादनं कारपामास । स प्रतिगृहं परिग्रामन्निवैदमेद्दुरतयेभानि वाक्याति
पपाठ । तथाहि^३—

੩੭. *ਸੁਤ ਪਿਛਦ ਸਫੀ ਮਣਹ ਵਚੀਸੰਡਾ ਹਿਯਾਂਹੁੰ । ਅਸੰਹੀਂ ਤੇ ਨਰ ਫ਼ਿਲਡੀਸੀੰ ਜੇ ਵੀਸਸਾਂਹੁੰ ਤਿਯਾਂਹੁੰ ॥

अपि च-

४८. शोली” हैंडवि कि न मूर्ति किं” हूउ न छारह पुँजै। “हिण्ड दोरी दोस्थिउं जिम मङ्कडै तिम मुँजै॥
त्रिदा प्रोक्ते सद्विनैरै:-

[३३] ਪਿਤਿ ਵਿਸਾਡ ਨ ਚਿੰਤੀਹ ਰਖਣਾਪਰ ਗੁਣਪੂਜਾ । ਜਿਮ ਜਿਮ ਵਾਧ ਵਿਹਿ ਪਦਹੁ ਤਿਮ ਨਚਿੰਨ ਮੁਝ ॥
ਤੈਰਾ: ਕੇਲਾਪਿ ਦ੍ਰਾਦੰਦੇਤੇਸਾ ਸਤਾ ਕਥਿਤਮ੍- 20

[੩੬] ਸਾਧਾਰਨ ਪਾ(ਖਾ)ਇ ਲੰਕ ਗੜੁ ਗਢਵਾਇ ਦੱਸ ਥਿਰੁ ਰਾਉ । ਭਮਗ ਧ(ਖਾ)ਇ ਸੋ ਮਝਿ ਗਤ ਮੁੰਜ ਮ ਕਰਸਿ ਵਿਸਾਡ ॥

३०. गय^{१८} गय रह गय तत्य गप पापकडानि मिच । सगटिप्पे करि मन्त्रणउं मुहंता^{१९} रुदाइच ॥

अथान्यसिन्न्यासरे कस्यापि गृहपतेर्गृहे भिक्षार्णनिमित्तं नीतः । पद्मकस्त्वाणि तत्पत्रीं तत्रं पापपित्वा गर्वोद्धरकन्धरं भिक्षादाननिषेधं विदधत्रीं सुन्नः प्राह—

1 Pa देवियदेवेन। 2 Pa जाति। 3 Pb दद्मुख। 4 Pa विजयूर्धे। 5 P कारागारे काहपक्षरे क्षिपः। कमला-
दिव्यांशुविदा सोचितः। काशायश्वराम्बे रथमाला भूग्रादवत्त्वा। 6 PD मुजः; B पमण्डु मुजुः। 7 P मियालो। Pa
मनाद्। 8 DP हृष्ण। 9 A गरुं मन, D गरुं न; P विरुं न। 10 P दियः; Pb हृद। 11 Pb मूरी।
12 AD कानिमु। 13 Pa छटवाणी। 14 Pa द्वयापासि हृष्ट तावधाक्षः; Pb द्वयापासिति तावध शर्णं प्रवीशसेवयमिद्यापाना
आभारदग्धरादिग्धामुग्रावत्त्वामि स्मर्ति दग्धः। 15 PPe स्त्रो दाप गतो मां कालामिती परिदृ। 16 ABD प्रतिवृहं। 17 Pb
मैत्रप्रेषदत्तवाण। 18 A विना शस्त्रन्वप्र। * D दुष्कृते- सर्वविचाहितस्त्री भग्मणा इतीक्षेहीर्याः। हितमिति से नर दद्वासीहे
जे वीरांगां दियो। * घटात्तिर्ये घटात्तारा गायाः। 19 B वर्तीक्षीः; Pa वंचस्त्रीः। 20 A दियां; B दियां। 21 Pa
दर्द। 22 P वाराणी। 23 Pa विद्याः; Da वे परिवृह तंड। 24 AD जाति। 25 D शासी। 26 A दुरी; B
उरी; P दुरी; Pa दुरी। 27 A सुपः; Pa सूर्द। 28 A फे न हृष्ट; B हृष्ट दिम हृष्ट; Pa न हृष्टरः। 29 AD
उरी। Pa वरी 'परि परि वर्द्ध भासीदृ' प्रतातोः पाद। 30 P देविदः; D पर्वीदः। 31 B मष्टः; PD मष्टः।
32 DP मुरा। * एविद्विदित्तिनि पवानि पद्मोद्य वेलं Pa वरी प्राप्नन्ते। 33 P जाति। 34 B हृष्ट। 35 Pa
दितः। 36 B मरा, Pa मरेण; Pb दराण। 37 Pa मिश्याण।

४०. *मोली मुनिंदि म गच्छु करि पिकिलवि पढ़रुयाहं । चउदहं सहं छुहुत्तरदं मुञ्जहं गयह गयाहं ॥
[सौ इत्यमुत्तरं ददौ—

[३५] नियारि बहुला थेतु दुह मिट्ठा' बुझी नारि । काँहुं मुंज कुडंविर्याहं गयवर वज्जहं वारि ॥
‘पुनर्ब्राह्म्यमाणेन सुंजेन वाप्यामुषविटेन राहा वितर्कितेन सता श्रोत्तद्-

५ [३६] आपद्वतं हससि किं द्रविणान्ध मृदं लक्ष्मीः स्थिरा न भवतीति किमत्र चित्रम् ।
त्वं किं न पश्यसि धटीजलयत्रचक्रे रिक्ता भवन्ति भरिताः पुनरेव रिक्ताः ॥

‘तथा पृष्ठे लदौ पुरुषैर्विद्यमान इत्युचे—

[३७] जे थका गोला नई हूं वलि कीजूं ताह । मुंज न दिढ्ठ विहलिउ रिद्धि न दिढ्ठ खलाहं ॥
‘पुनः सं मन्दशुदित्वं सरन् इत्युक्तवान्—

१० [३८] दासिहं नेह न होइ नाना निरहिं जाणीयह । राड मुंजेसरु जोह घरि घरि मिक्कु भमाढीह ॥
‘अपि च—

[३९] वेसा छंडि बडायती जे दासिहं रखति । ते नर मुंजनरिन्द जिम परिभव घणा सहंति ॥

[४०] ऐमा मङ्गड कुरुदेगं यदहं सांडितोऽनया । रामरावणमुञ्जायाः स्त्रीमिः के के न खण्डिताः ॥

[४१] ऐरे रे वचक मा रोदीर्घदहं आमितोऽनया । कटाक्षाक्षेपमावेण कराकृष्टौ च का कथा ॥

१५ [४२] जिजा मति पच्छाइ सम्भजह सा मति पहिली होइ । मुञ्ज भणह मुणालवह विधन न बेढह कोइ ॥

[४३] सुहुदेवेन्द्रस्य कतुपुरुपतेजोऽशजनकः प्रमीतः शयायां सुतविरहद्वादादशरथः ।

ज्वलचैलद्रोण्यां नितिवपुपस्तस्य नृपतेश्वरात्संकारोऽभूदहह विषमाः कर्मगतयः ॥⁺

[४४] अलङ्कारः शङ्काकरनकपालं परिजनो विशीर्णङ्गो भृङ्गी वसु च वृष एको चहुययाः ।

अवस्यें स्थाणोरपि भवति सर्वमरणुरोर्विधौ वके मृद्धि स्थितवति वयं के पुनरमी ॥⁻

२० इत्यं सुनिरं भिक्षां आमवित्या बध्यभूमौ नृपादेशादधघविधौ नीतिः {अस्त्र परिधानवस्त्रं शृहीतः ।
तदोचे—

[४५] इयं कटी मत्तमजेन्द्रगामिनी विचित्रसिंहासनरंस्थिता सदा ।

अनेकरामाजयेषु लालिता विधेवशान्निवेसनीकृताऽपुना ॥

तदसु मुञ्जेन पृष्ठं कथा मारणविडम्बनया मां मारविष्यथ । वृद्धशाखावलम्बनात् । तदोचाच-

२५ [४६] क तहरेप महावनमध्यगः क च वर्यं जगतीपतिक्षुनवः ।

अघटमानविधानपटीयसी दुरवयोधमहो चरितं विषेः ॥ } }

* P भवत्वन्ती मा गच्छ वहिसि; Pa मा गोलिमि गच्छ वहिसि । 1 AD चउदहरं; P वहुत्तरं
† एतत् कोष्ठकान्तरंतः पाठः स्वरेपि पाठः AB, P, Pa, Pb आदर्शेषु भिजभिद्वामेण न्यूनापिकरणं प-
पत्तरादातानि पश्यनि सहुपलम्यन्ते । 3 Pa अथ तया ग्रोत्तद् । ‡ D उपके नारीदं पथम् । 4 Pa भीठा योरी । 5 Pa
काहृदं । 6 Pa कुर्वन्ति । 7 Pa ददौ । ॥ पृतविद्वाद्वितानि एतानि पश्यनि याप्यवानि च Pa आदर्शे शुद्धोपलम्यन्ते । ९ ह्यौ ही
श्वोकै D उपके लाप्तेषु; Pb पर्ती अन्याः स्थाने पृतादाप् एकं पूर्व श्वोकै—

ऐ रे मन्दक मा रोदीर्घदं श्विद्वोऽनया । रामरावणमीमांशा योविदिः के न खण्डिताः ॥

॥ पूर्वविद्वाद्वितानि पश्यनि Pa पर्ती नोपलम्यन्ते । ॥ D उपके एतत्पाद्ये ‘यथा तु जो मुञ्जो’ पूर्ववयं लिखितं द्वयते, वज्ज-
P आदर्शानुसारेण प्रकरणात्ते स्थिरं, तत्रैव सम्बद्धं प्रतिमाति । + इतोऽपे D उपके ‘आपद्वतं हससि किं’ एतत्वयं प्राप्यते,
तथा Pa आदर्शानुसारेषुः धर्मेष्वागतमति । - इतोऽपे D उपके ‘सापरलाइ छंकगढ़’ इदं पर्यं पिपते, तथा Pa आदर्शं
नुसरेणोपर्यंगतम् । { × पूर्प पाठः केवलं Pa पर्ती प्राप्यते ।

प्रकाशः]

भोज-भीमप्रबन्धः ।

तैरिष्टं दैवतं सर इत्यभिहितः प्राह-

४१. लक्ष्मीर्थसति गोविन्दे वीरश्रीवीरवेदमनि^१ । गते मुखे यशः पुजे निरालम्बा सरस्वती ॥
इत्यादि तद्वाक्यानि 'वहूनि यथाश्रुतमवगान्तव्यानि । तदनु तं सुखं निहत्य तच्छिरो राजाङ्गणे
शूलिकाप्रोतं कृत्वा नित्यं दधिविलितं कारयन्निजमर्पे पुषोप ।

४२. यशः पुजो मुखो गजपतिरवन्तियितिपतिः सरस्वत्याः सदुः समजनि पुरा यः कृतिरिति ।
स कर्णाटेशेन सप्तनिवकुञ्जेव विष्वतः कृतः शशीप्रोतोऽस्त्वद्वह निष्पाः कर्मगतयः ॥

* * * * *

३८) अथ मालवमण्डले तद्वत्तान्तवेदिभिः सचिवैस्तद् भ्रातृव्यो भोजनाभा राज्येऽन्यपिच्यत ।
॥ इति श्रीमेहुद्वाचार्यविरचिते प्रबन्धचिन्तामणी नृपश्रीविक्रमादितप्रमुखमहासान्त्वकपरोपकारादि-
गुणरत्नालहूतपृतिचरितवर्णने नाम प्रथमः प्रकाशः^२ ॥ प्रथमः ४०४ ॥

—————

[७. अथ भोज-भीमप्रबन्धः ।]

३९) अथ [संवत् १०७८ वर्षे] यदा मालवकमण्डले श्रीभोजराजा राज्यं चकार तदाऽन्न गर्ज-
रघरित्यां चौलुक्यवक्तव्यां श्रीभीमः शृण्वीं शाश्वास । कस्मिन्नपि निशाशेषे स श्रीभोजः श्रियं-
श्रव्यलतां निर्जितसि चिन्तयन् कल्पोलोलं निजं^३ जीवितं च विमृशन्^४ प्रातः कृत्यानन्तरं दान-
मण्डपेऽनुचरैराहूते अन्योऽर्थिन्यो यहच्छया सुंवर्णदङ्कान् दातुमारेभे ।

४०) अथ रोहैकाभिधानसत्त्वमहामालः कोशविनाशात्तदैराधिगुणं दोषं मन्यमानोऽपरथा तं 15
दानविर्भिं निषेदुमक्षमः संवादसरे भग्ने सभामण्डपभारपदे-

४२. * 'आपदर्थे धनं रक्षेत्' इत्यक्षराणि स्वटिक्याऽलेखि^५ । प्रातर्यथावसरं नृपतिस्तान्वर्णान्वि-
र्वर्ण्य समस्तपरिजने^६ तं व्यतिकरमपहुवीने 'भाग्यमाजः क चापदः' इति चुपतिना लिखिते, 'दैवं
हि कृपयेते फापि' एवं भग्निलिखनादमन्तरं^७ नृपतिनां तद्विलोक्य 'संश्वितोऽपि विनश्यति' ॥ इति
पुरो लिखिते स सचिवोऽभयं याचित्वा संखिलितं विहृपयमास । तदनु^८ इयं पण्डितानां पञ्च-20
शतां मम मनोगर्जं ज्ञानादुदेशं वशीकर्तुमभीत्रं भद्रमित्रसंविभाय यथा याचितं ग्रासं लभते ।
तथा हि, -कदम्पोत्कीर्णमार्याचतुर्थ्यमेतत्-

1 AD दैवतिपरि । 2 D नाति; A स मुखः; Pa इत्यभिहिते । 3 Pa नमिद्वे । 4 D 'वहूनि' नाति; P 'तद्वा-
यमनि पृष्ठनि' स्वाने 'तासुकापि' । 5 Pb प्रती इयं पंक्तिरेतादी लक्ष्यते-सतो मालये तद् विदिवा तत्सचिवैस्तद् भ्रातृव्यो भोजो
राज्ये न्यवः । 5 P Pa चापादिः कृते । 6 Pa चूडामणी । 6 AD प्रती अस्तः पंखाः स्वाने 'इति श्रीविक्रमप्रमुखदृ-
ष्टवर्णनो नाम प्रथमः संगीः' पृष्ठादीर्घं चकिर्देवते । 7 पातू चापदमात्रं Pb प्रती उपलम्बते । 8 A चौलुक्य । 9 D चंद्रीय ।
10 P नाति; B मालवमहीयाणोः । 11 B राजविषय । 12 BP 'तिज' नाति । 13 Pa स्वं । 14 Pa चिन्तयन् ।
15 P देसंटः; Pa सर्वं^९ । 16 P Pa रोदिमिदः । 17 Pb सेवावः । * Pa प्रती 'आपदर्थे धनं रक्षेद् वारान् रक्षेद्
पर्वतपि' आपानं सरवं रक्षेद् दर्शयति धनरपि ॥ पृष्ठं संख्याः स्फोटे लिखिते दानवते । 18 BP लिखेत् । 19 B परिजने;
Pa परिजने । 20 B 'मपुष्टानेन । + पृष्ठादास्याने B 'शीमर्ता दुर आपदः'; P 'महातामापदः; कृतः' पृष्ठादासः पादः ।
21 BP कृपयति । 22 P मधिमानि लिखिते । 23 BP नृपेन । 24 AD संवादापि । 25 BP संवादापि । 26 BP चापयामास ।
27 AD 'इयं' नाति । 28 P अपासः; Do-d अतिग्रामः; Pb नामा अग्रः । 29 AD महामास ।
30 Pb चतुर्थ्यमेतत्; BP चतुर्थ्यमिदः; Pa चतुर्थ्यं च ।

४४. इदमन्तरपुष्करतये प्रकृतिचला यावदति सम्पदिश्यम् । विषदि नियतोदयेयां पुनरुक्तुं कुतोऽसरः ॥
 ४५. निजकरनिकरसमृद्धता धवलय भुवनानि पार्वणशशाङ्क । मुचिरं हन्त न सहते हतविधिरिह सुस्थितं कमपि ॥
 ४६. अथमवसरः सरस्ते सलिलैरुपकर्तुमर्थिनामनिशम् । इदमपि सुलभमभ्यो भवति पुरा जलधराभ्युदये ॥
 ४७. कठिपयदिवसस्यायी पूरो दूरोन्नतश्च मविता ते । तटिनीटदुपातिनि पातकमेकं चिरस्यायि ॥
 ४८. ४८. किं च- यदनत्समिते स्वयं न दत्तं धनमर्थिनाम् । तद्दनं नैव जानामि प्रातः कस्य मविध्यति ॥

इति स्वकृतं कण्ठा भरणीभूतं श्लोकमिष्टं मञ्चमिव जपन्^१, मञ्चिन्^२ प्रेतप्रायेण भवता कथं विप्रलभ्ये ।

४९) अथान्यस्मिन्नवसरे राजा राजपाटिकायां सधरन् सरित्तीरमुपागतः । तज्जीरुद्धृष्ट्याग-
च्छन्तं दारिद्र्योपहृतं काष्ठभारवाहकं कमपि विप्रं प्राह-

४९. ‘किञ्चन्मात्रं जलं ? विग्र !’ ‘जानुदमं नराधिप !’ । इति तेनोत्ते
 10 ‘कथं सेयमवस्था ते ?’ इति द्वयेण ‘पुनरुक्ते न सर्वत्र मवाद्याः ॥’

इति तद्वाक्यान्ते घृत् पारितोपिकं वृपतिरसै अदापयत्^३ तन्मध्यी धर्मवहिकायां श्लोकवद्दं
लिलेख । तद्यथा-

५०. लक्षं लक्षं पुनर्लक्षं मत्ताथ दश दन्तिनः । दत्तं भोजेन^४ तुष्टेन जानुदमप्रभाविणे^५ ॥

५१) अथान्यस्यां^६ निशीथसमयेऽकस्मादिगतनिद्रो राजा राजानं गगनमण्डले नवोदित-
 15 मालोक्य खसारखताम्भोधिप्रोन्मीलद्वेलानिभमिदं काव्याद्वेष्माह-

५२. यदेतच्चन्द्रान्तर्जलदलवलीलां प्रकृते^७ तदाच्छेदे लोकः शशक इति नौ मां प्रति तथा ।

इति राजा भूयोभूयो निगद्यमाने कश्चिद्दौरे दृपसांघे खावपातपूर्वं कोशभुवने प्रविश्य^८ प्रतिभा-
भरं निषेद्धमक्षमः-

अहं त्विन्दुं मन्ये त्वदरिविहाकान्तरपुरीकटाक्षोल्कापातवणशतकलङ्घाङ्कितवनुम् ॥

२० इति तत्पठनानन्तरं चौरमङ्गरक्षे^९ कारागारे निवेशयामास । ततोऽहंसुखे समाप्तिनीताय^{१०} तसै
चौराय घत्पारितोपिकं^{११} राजा प्रसादीकृतं तद्वर्द्मवहिकानियुक्तो नियोगयेवं कौब्यमलिखत्-

५३. अमृम्यै चौराय प्रतिनिहितमृत्युप्रतिभिये^{१२} प्रभुः श्रीतः प्रादादुपरिनपादद्वयकृते ।

सुर्वर्णानां कोर्टीदेश दशनकोटिक्षयगीरि रुक्मीन्द्रानव्यायौ मदमुदित्युजनधुलिदः ॥

[पुनरन्यदा गवाक्षजालिकाप्रविष्टं चन्द्रं दृष्टं प्राह-]

१ AD ०तोदितायाः । २ AD किमपि । ३ P दूरोचतोपि; AD दूरोचतोपि चण्डयः । ४ A ‘किं च’ नाति ।
 ५ AD Pb भरणीकृतं । ६ AD ०निष्टमध्यवक्षयन् । ७ P Pa नाति । ८ A ०ठम्यः । ९ D दृष्टेषोके
 विप्रो । † द्विदण्डान्तर्गतपाठस्याने Pb यती ‘तद्वाचयं विन्तयन् रारितोपिके छहसणेमदापयत् । तद् भाष्टामारिको नारेपति ।
 फेरकेषेव कारयति । तद्वाचा शास्ते प्रतिफेरकं लक्ष वर्द्यते तूष्यः । वाराह्यकेरो छक्षयत दत्त गजानदापयत् विशाय तस्यै^१ । श्वासादो
 विश्वतः पाठः । १० Pa यथा तदः । P नाति । ११ P Pb विनायन्द्रियं ‘देवेन’ । १२ D प्रभापाद् । १३ D यथा-
 न्यदा । B यथा निशाया । १४ AD ०वेदो । १५ BP ०यूये । १६ Pa विरुद्धे । १७ Pb परिषदः । १८ BP तत्त्व-
 कानल्लरं । १९ BD रक्षकः । २० Pb ०युक्तीय । २१ D योपर्क । २२ P कायेनादित्यत्; Pb काष्ठपदम् । २३ Pa
 ०भये । ‡ फोटकास्तर्गतं पर्णनं Pb विनायन्द्रियं प्रोपलभ्यते ।

मकाशः]

भोज-भीमप्रवर्ण्यः ।

[४७] गवाक्षमार्गप्रिभक्तचन्द्रिको विराजते वक्षसि सुशृं है शशी ।

तदवसरे प्रविष्टेन चौरेकोक्तम्-

ग्रदत्तज्ञमः स्तनसङ्ख्यान्धया विदूपातादिव स्पष्टशो गतः ॥

एतसापि तथैव दानं धर्मवहिकायां निवेशनं च ।]

४८) अंथ कदाचित्स्यां वाच्यमानायां स्तम्भव स्थूललक्षं मन्यमानो दर्पभूताभिभूतं इव ।

5

५२. तत्त्वतं यन्न केनापि तदर्तं यन्न केनाचित् । तत्साधितमसाध्यं यत्तेन चेतो न दूरते ॥

इति स्मृद्धुष्टुः स्लाघ्यमानः, केनापि पुरातनमधिग्राणा तद्वर्खर्वचिकीर्पया श्रीविकर्मार्कधर्मव-
हिका नृपायोपनिनये । तस्य उपरितनविभागे प्रथमतः प्रथमं काव्यमेतत्-

५४. *वक्त्रामोडे सरस्वत्यपिवसति सदा शोण एवाधरते याहुः काङ्क्षस्तीर्थस्मृतिकरणपद्मदक्षिणस्ते समुद्रः ।

वाहिन्यः पार्श्वमेताः क्षणमपि भवतो नैव मुख्यन्तरमीक्षणं सञ्छेऽन्तर्मानसेऽसिन्कथमवनिषते तेऽनुपानाभिलापः ॥ १०

*अस्य काव्यस्य पारितोपिके दानं यथा-

५५. अस्य द्राट्कोटोपिवसति सदा शोण एवाधरते याहुः काङ्क्षस्तीर्थस्मृतिकरणपद्मदक्षिणस्ते समुद्रः ।

अशानामयुतं प्रपञ्चतुरं वाराहानानां शतं दण्डे पाण्डुनृपेण दौकितमिदं वैतालिकसार्पितम् ॥

इति तत्काव्यार्थमवगम्य तदौदार्यविनिर्जितगर्वसर्वस्तां वहिकामर्चयित्वा यथास्यानं प्रस्थापयत् ।

४५) प्रतीहारेण विज्ञासः—‘स्यामिन् । देवदर्शनोत्सुकं सरस्वतीकुदम्यं वारमध्यास्ते’ । ‘क्षिमं १५
प्रवेशये’ति राजादेशादनु प्रथमप्रविष्टा तत्प्रेष्या प्राह-

५६. चापो विद्वान् वाणपूत्रोऽपि विद्वान् आईं पितृपी आईंपुआपि पितृपी ।

काणी चेटी सापि पितृपी वाराकी राजन्” मन्ये विद्युद्गं छुदम्यम् ॥

इति तस्याः^१ प्रहसनप्रायेण वचसा वृपतिरीपदिवस्य तज्ज्येष्ठपुरुषाय समस्यापदमाह—‘असारा-
त्सारसुद्दरेत्’ ।

५७. दानं विचादू ऋतं वाचः कीर्तिधर्मां तथायुपः । परोपकरणं कायादसारात्सारसुद्दरेत् ॥

अथ^२ वृपतिस्तपुत्राय—‘हिमालयो नाम नगाधिराजः; प्रेवालश्यायाशरणं शरीरं’ इति वृपति-
याक्षयानन्तरम्—

५८. वच प्रतापज्वलनाङ्गाल हिमालयो नाम नगाधिराजः ।

चक्र मेना विरहात्मादी प्रवालश्यायाशरणं शरीरम् ॥

इति समस्यायां पूरितायां^३ उपेतस्य पर्तीं प्रति राजा—‘कल्पण रियावर्तं खीरं’ इति समस्यापदे
समर्पिते—

१ BP इति । २ Pa सर्वमिश्रः । ३ Pa विकारेण्यः; A विकारेण्येण । * B आदेने पृतपतं नोपदम्यते;
AD आदेने पृतं ‘पृतं वाराहं’ हृदं पृथं वर्तन्तरं च पृतपतं उत्तिरं दम्यते । † ऐवेण P पृतं हृदं पृतिरं वते; अस्यां स्याने
Pa मार्गे ‘द्रुपदिताने’ हृदेव वाराहं । ४ BP वाराहोपरप्रवर्णितरामा, Pa कायापोरप्रवर्णप्रवर्णतरं । ५ BP पातृः ।
६ B Pa नैः; P नारिः । ७ AD भास्याः । ८ A पृथमे प्रतिरूपतः भेषः; D प्रतिरूपे राजेष्यः; P ‘लक्ष्मीया’ स्याने ‘सेती’ ।
९-१० D युवते ‘पितृपी’ वाराहे ‘पितृपी’ । ११ A राजस्तार्मं भोज (B ‘भोज’ स्याने ‘पितृपी’ विद्युद्गुम्बं । १२ D वारः ।
१३ Pa राजा । १४ AD ‘वराह मेना गिरावृगाई’ इति द्विर्विषयः पादः । १५ Pb नारिः । १६ AD राजा; P प्राहः ।
१७ AD राजाःप्राहः; B राजा समः; P मार्गे ‘इति राजस्तपे समस्यापदे सा माह—’ द्राट्कोटो वारमध्यस्य ।

तदर्थमनववृध्यमानः; बालिका अपि यत्र एवंविधास्त्रं विद्वांसः कीदृशा भविष्यत्वीति विचार्य पश्चह्वतः ।]

४७) अंथान्यस्मिन्नवसरे राजा राजपाटिकायां गजाघिरुद्धः पुरान्तरा सञ्चरन् कमपि रोतं भूमि-पतितकणां विन्वन्तमवलोक्य-

५ ४७. नियउयरपूरुणमिं^३ य असमत्था किं पि^४ तेहिं जापहि ।

-इति तेनार्द्धकविना पूर्वार्द्धं प्रोक्ते;

सुसमत्था वि हु^५ न परोवयारिणो तेहि वि न किं पि ॥

४८. *ते हि वि न किंपि^६ मणिए गोजनरन्देश दानस्त्रेण^७ । दिनं "मायंगसयं एगा कोडी हिरण्यस्त ॥ इति तद्वचनान्ते;

४९. परपत्थणापवन्न^८ मा जणणि जणेषु^९ एरिसं पुचं ।

१० -इति तदाक्षयादनुः;

माँ उयरे वि धरिजसु पत्थणभद्रो कओ जेहिं^{१०} ॥

स^{११} इति वदन् 'कस्त्वमिं^{१२} ति राज्ञाभिहितो नगरप्रधानैः'^{१३} 'भवद्विविधविद्रुद्धदायामपरथा प्रवेश-मलभमानोऽनेनैव प्रपञ्चेन स्वामिदर्शनचिकीरयं राजशोखरः'-इति ज्ञापितः । तेऽुचितभहादानैः प्रसादीकृते;^{१४}

५४] [५४] उद्धामाम्बुदनादनुचितिनीकेकातिरेकाङ्क्षे सुप्रापं सलिलं खलेष्वपि तदा निस्तर्प...धागमे ।

भीष्मे ग्रीष्मभरे परस्परदरादालोकमानं दिशो दीनं भीनकुलं न पालयसि रे कासारा का सारसा ॥

७०. मैकैः कोटरशायिभिर्वृतमिव ध्मान्तर्गतं कच्छपैः पाठीनैः पृथुपङ्कीठलुठनाद्यसिन्मुहुर्मुर्चित्वपू । तसिनेव सरस्यकालजलदेनोनम्य तच्चेतिरं येनाकुम्भनिमग्रवन्यकरिणां यूथैः पयः पीयते ॥

-इत्यकालजलदराजशेखररोक्तिः ।

२० ४८) अर्थे कसिक्षापि संबंधसरे अंगृष्टिभावात्कण्ठृत्यानामप्रस्त्रया हुःस्ये^{१५} देशो स्वानपुरुषैभीजां-गमं ज्ञापितः श्रीभीमश्चिन्तां प्रपन्नो दांमरनामानं सन्धिविग्रहिकमादिशत्-'यत् किमपि दण्डं दत्त्वाऽस्मिन्वैर्ये श्रीभोज इहागच्छक्षितरर्णीय' । स इति तदवेदात्तत्र गतः । अत्यन्तविलङ्गतया^{१६} परिचितः । श्रीभोजेनेत्यविभद्र्ये-

१ D 'अप' नालि । 2 D गजास्त्रः । 3 P पूर्वे वि । 4 Pa किं व । P तेहिं किं पि । 5 B वि हु जे ।

* D युक्ते हृष्टं गाया नालि, B आदर्शे वृष्ट्यापौभारो केतापि पश्चालिता दृश्यते । + Pa दिष्ट देवण भोवाणपूः Pb हान-स्त्रेण भोवाणपूः AB विक्षमराणु रायाणु-एतादासः पाठमेदाः । 6 Pa मत्तगर्वदण सयं । 7 D Pa एवतं । 8 Pa जपेति । A विजेषु । 9 A ऊपरे वि मा धरि० । D मा दुर्जे वि मा धरि० । 10 Pa-b जेण । 11 Pa इति मः Pb हृष्टं । 12 Pb प्रयानपुरुषै० । 13 Pb तत्त्वादु । + अ Dd आदर्शे एतत्कथन किविद्व भिन्नप्रकारेण लिलिमुपलभ्यते । यथा-इत्यदेखतः इत्यभाविष्यते इतिनीं ददृशे । उन् स विप्रः-'निर्वाता न कुटी न चामिशकटी' (इति समग्र पद्यम्) इति धूता संनेकादशसहकारी द्रुतानि । अथ राजशेखरवामाकविः सन्ध्यायां महाकालप्रापादे सुषुः पठति ।

(४४) पोतानेतात्प्रय शुणवति श्रीमप्यकालावसान यावत्तावच्छमय रुद्रो देव नेनाशनेन ।

पश्चादम्भोदरसपरीपाकमालाय शुभी कुम्भाणी च प्रभवति यदा के धर्म भूमुद्राः के ॥

प्रस्तेन राजा संरसदागात्येतेन कविनोक्तम्-मैकै० इत्यादि ।

५ केवलं P भ्रती हृष्टं पर्य प्राप्यते । 14 ABD 'अप' नालि । 15 Pa भवते । 16 D वृष्ट्यमत्वात् । 17 P दुष्काणाना० ।

18 P विना नास्त्वयत्र 'दुखे देशे' । 19 D दामर । 20 P संप्रतिवेषः Pa सांप्रतः । 21 AD अत्यन्तविरुपश्च एव-वित्तवः B एवतिवित्त ।



प्रकाशः]

७१. यीमाकाधिपसन्धिविद्यहपदे दूताः किमन्तो हृदि ! त्वादक्षा वहवोऽपि मालवपते ते सन्ति तैत्र व्रिधा ।
ग्रेष्णन्तेऽध्यमध्यमोत्तमगुणप्रेष्यानुत्तमाः क्रमात्मानान्तःसितमुत्तरं विद्यता धराधिपो रञ्जितः ॥

इति तद्वचनाचारुरीचमल्कृतो राजा गूर्जरदेशं प्रति प्रथाणपट्टह [*दापनं चक्रे । प्रयाणावसरे वैनिद्रोक्तम् ।
७२. चौहः क्रोहं पषोधेविश्वाति निवसते रन्ध्रमन्त्रो गिरिन्द्रे । कर्णाण्डः पद्मवन्धं न भजति भजते गूर्जरो निर्झराणि ।
चेदिलेन्द्रीयतेऽहम् : क्षितिष्ठिसुमठः कन्यकुलोऽन्न कुब्जो भोज ! त्वत्त्रमात्रप्रसरभव्यमरव्याकुलो राजलोकः ॥ ५

७३. कोणे कौद्धृणकः : कपाटनिकरे लाटः कलिङ्गोऽङ्गणे त्वं रे कोशलनृतानो मम पिताप्यत्रीपितः स्थण्डिले ।
इत्यं यस विवर्दितो निश्चियिः प्रत्यर्थिनां संस्तरस्यानन्यासम्बोः । विरोधकलहः कारानिकेतक्षितौ ॥

प्रयाणकपट्टह*] दापनादनु समस्तराजविडम्भैननाटकेऽभिनीचमाने सकोपः कोऽपि भूपः कारामारा-
न्तरा धुरः स्थितं सुस्थितं तैलिपं भूपमुत्तापयस्तेनोन्ते- 'अहमिहान्वयवासी कथमागन्तुकभव-
द्वृचसा निजं पदसुज्ञाहार्मी'ति विहस्य" द्वयोः" दामरं प्रति नाटकरसावतारं प्रशंसांस्तेनाभिद्य-
देव । अतिशायिन्यपि रसावतारे विग्रहमन्त्य कथानायकवृत्तान्तरमिज्ञताम् । यतः 'अतिलिप-
देवराजा शलिकाप्रोतमुखराजदिशिरसा प्रतीयत इति' । तेन सभासमक्षः इति ग्रोक्ते तत्त्विर्भत्तर्स-
नसम्पदमन्युरनन्यसामान्यसामद्या तदैव च तिलेङ्गदेशं प्रति प्रथाणमकरोत् ॥

४७) अथ तैलिपदेवस्यातिवलमायान्तमाकर्ण्य व्याकुलं श्रीभोजं स "दामरः समायातकलिप्तै-
राजदेशदर्शनपूर्वं भोगपुरे श्रीभीमं समायातं विज्ञप्यामास । तथा तद्वार्त्या क्षते क्षारनिश्चेप- 15
सदक्षया विलक्षीक्रियमाणः श्रीभोजराजा दामरमध्यधात्- 'अंसिन्वर्णं त्वया खलामी कथश्चनां-
पीहागच्छद्विर्यार्थः- 'इति धूयो'" भूयः सदैवं भाषणे चूपे प्रस्तावविश्रृपाद्वस्तिनीसहितं हस्ति-
नसुपायने उपादाय पत्तने श्रीभीमं परितोप्यामास ।

५०) फर्सिविद्वर्मशास्त्राकर्णनक्षणेऽनुनस्य राधावेधमाकर्ण्य, किमभ्यासस्य दुष्करमिति

१ AD एद । २ AD मात्त्वा । ३ P किन्तु । ४ ० स्पष्टमात्र । ५ Pb तेनान्तर्गतमुत्तरं । ६ AD चारुं ।
७ Pb भोजे गृहेवरीयो । * पदकोटकान्तरोऽतः पङ्क्षयो B Pa भावेन भावण्डम्भाः । ८ AD दानं । ९ P धर्मी...
धर्मातिः । १० D धैः । ११ P गिरिन्द्रः । १२ Pb छूणगः । १३ P धुरोः । १४ AD विद्यवाट० । १५ AD
*पीयमाने । १६ AD 'धुरः' नातिः । D इत्योः । १७ P तैलिपः । Pa तैलिपदेवः । १८ Pb ०मुक्तिहामी० । १९ AD
विद्यस्तु । २० Pb भोगपुरोः । २१ D ०भरतः । २२ AD समायातमः तेनोक्ते । २३ AD 'सामान्यः' नातिः । २४ B
तैलः । P कर्णां । * पदहृदयान्तरोपदित्यान्ते P श्री निश्चातः स्तोषो लभ्यते-

(५५) भोजात भग्न स्वामी यदि कलोटमूर्तिः । केलाकुलं न एव्यामि सर्वं तु उत्तिः करे ॥

† पदहृदयान्तरे D d श्री निश्चितिवित्तस्यामांकं क्षपमुपाटन्यते-

भीमोजराजा गृहेवरीय इत्यप्यनो वादावासे इत्यावातो मेतिः सन् राजेष्व दामरारयः-भीमहीयाको जापितोप्य कदम्ये किं
चोनि । नेतोप्राप्त-भूमियो राजा गिरिमुक्तिदत्तम् । पदकोटी जलमिहामादे प्रश्नानुभविष्यतीनि मणिते राजा घमकृतेन राजमुखे
राजविद्वर्मशास्त्रादेवे विद्व दामरस्त्राकी कलोटाकाशान्ति वृक्षरूपं कर्मितः । श्रोगोपाद्-

भोजात भग्न स्वामी यदि कलोटमूर्तिः । कलाइत्यो न एव्यामि कर्यं सुक्तिः करे ॥

१५ भग्नेन स्पृहेन्द्रं परित्याप्त बोगोपादेर प्रयाणे इत्याप्त । श्रुतोऽपामारसेभिः-

(५६) सर्वं ये भोजातेन्द्रं स्पृहेन्द्रे गिरि राजेः । श्रुतोऽपामारसेभिः-

२२ BP Pa 'ग दामान्' नातिः । २६ Pa-b 'कर्मित' नातिः । २७ B Pa सोपदवयेः । २८ A कर्मित इत्योः । P कर्म-
मित इत्योः । २९ P इत्यः पुरुः ।

‘विमृश्य’ सतताभ्यासवशाद्विश्वविदितं राधावेदं विधाय नगरे हृष्टोभां कार्यस्तैलिक-सूचिका-भ्यामवज्ञया निराकृतोत्सवाभ्यां श्रीभोजमूर्त्पो व्यज्ञप्यत । तैलिकेन चन्द्रवारालाङ्गितेन भूमि-स्थितसङ्खीर्णवदने^१ भूम्यपावते तैलधाराविरोपणात्; सूचिकेन च भूमिस्थितेनेद्वृक्ततनुभूते आकाशात्पतन्त्याः सूच्या विवरं निषेज्य निजाभ्यासकौशलं निवेद्य नृपं प्रति-‘वेच्छक्तिरस्ति ५ततः प्रभूरप्येवं करोत्वित्यभिधाय राज्ञो गर्वं सर्वं चक्राते ।

७४. भोजराज ! मया ज्ञातं राधावेदस्य कारणम् । धाराया विपरीतं हि सहते न भवनिति ॥

७५) विद्वद्विरिति श्लाघ्यमानो नवं नगरनिवेशं करुकामः^२ पटहे वाद्यमाने धाराभिधाय पण-स्त्रियाऽभिवेतालनाम्ना पत्वा सह^३ लङ्घां गत्वा तं नगरनिवेशमालोक्य उनः समागतया, मद्मानं नगरे दातव्यमित्यभिधाय^४ तत्प्रतिच्छन्दपटो^५ राज्ञोर्पितः^६ । ततः स^७ नवां धारां नगरी निवेशामास ।

७६) कसिन्द्रप्यहनि स^८ नृपः सान्ध्यसर्वावसरानन्तरं निजनगरान्तः परिभ्रमन्-

७७. *एहु जम्हु नर्गेहं गियउ^९ भडसिरि^{१०} खगुन भगु । तिक्खा^{११} तुरिय न वाहिया^{१२} गोरी गलि^{१३} न लगु ॥ इति केनापि दिगम्बरेण पव्यमानमाकर्ण्ये प्रातस्तमाकार्ण्ये रौत्रिपठितवृत्तान्तसङ्केतवशेन शक्तिं पृष्ठः सन्^{१४} -

१५ ७८. देव दीपोत्सवे जाते प्रवृत्ते दन्तिनां मदे । एकलञ्ज्रं करियामि संगांडं दक्षिणापथम् ॥

-इति ख्यपौरुषमाविकुर्वन् सेनानीपदेवभिपित्तः ।

७९) इतश्च^{१५} सिन्धुदेशविजयव्याप्तिः श्रीभीमे [स^{१६} दिगम्बरः] समस्तसामन्तः समं समेत श्रीमदणहिल्लुपुरमङ्गं कृत्वा^{१७} ध्वलगृहघटिकाद्वारे कैपूर्षकान् वापयित्वा जयपत्रं जग्राह । तदादि ‘कुलचन्द्रेण मुपितमिति सर्वत्र क्षितौ^{१८} ख्यातिरासीत् । स जयपत्रमादाय मालवमण्डले गतः । २० श्रीभोजाय तं वृत्तान्तं विज्ञप्यत् । ‘भवेत्सङ्गालवापः’ कर्पं न कारितः? अत्रव्यमुद्ग्राहितं गूर्जर-देशं प्रयास्यतीति^{१९} श्रीसरस्वतीकण्ठभरणेन श्रीभोजेनाभिदधे ।

१ AD विश्वशत् । २ Pb हृष्टोभापदिष्यैककुरुत्वं । ३ P भोजराज । ४ Pb शालेपसिस्तिवेन । ५ Pb संकीर्ण-शुभाशृण्यम् । ६ P विपरीतवर्त । ७ Pa देव भूपतिः । ८ BP पाराध्युमामः Pa प्रवेष्टुः । ९ Pb धारादेव्यमित्यावरा । १० सम्भाः । ११ Pb ओलिसंगीकाराप्य । १२ A प्रतिच्छन्दपटः । १३ तापदः । १४ AP समाप्ते । १५ ADP ‘स वा’ इत्येव । १६ ADP ‘स वा’ नाति । १७ Pa नाति । १८ P अर्दिसिरि । १९ D तिवर्त्ता तुरिय । २० AD नातिः । २१ BP वृद्धिः । २२ B माहूपः P नातिः । २३ BP निशा । २४ B Pa ‘सन्’ नातिः P सन् उच्चाच । २५ AD क्षेत्रेभ्यः । २६ P सेनापतिः । २७ P ख्यापितः । २८ Pb विद्यय ‘इतश्च’ नाति । २९ D ग्रावृते । ३० BP Pa नाति ‘स दिगम्बरः’ Pb दिगम्बरः सेनाव्यक्षः । ३१ Pb श्वरित्वा । ३२ AD कफर्हिकार । ३३ P ‘क्षितौ’ नाति । ३४ AD प्रवृक्षो । ३५ Pb तत्र कर्प ।

* ‘एहु जम्हु’ इति आरम्भ्य ‘गूर्जेदेवो प्रयासतीति’ इत्येतत्पदन्तत्वं कथनलव स्याते De प्रतीं निश्चिह्नितिविलक्षणस्थापन्ते कथनपुरुषत्वं-

(१०) ‘नवजङ्गभरीया मग्नाद्या गयपि घडकह मेहु । हृष्टयन्तरि यह शाविसिइ रव जापीसिइ नेहु ॥

‘एहो भूष्मुखाया सह^{२०}’ राजा सवित्रजुग्रोस्वरूपं दृष्ट भावताकाये गूर्जेदेवोपरि सेनापित्वं ददी । तदा तेजोक्तम्-‘देव दीपोत्सवे’ हृष्टि । तदो गूर्जेदेशः समाप्तिः देव तिवावितः । श्रीपत्रनवतुपये कर्पर्हिक्य वापिताः । तदागतस्य राज्ञोपम्-न हृष्ट रमय । भयं प्रभूति मालवदेशदण्डः श्रीगूर्जे यासतीति ।

५४) कदाचिच्चन्द्रातपे उपविष्टः श्रीभोजः सचिहिते कुलचन्द्रे पूर्णचन्द्रमण्डल [*मालोक्य पुनः-
पुनस्तसम्मुख] मवलोकमान हृदमपाठीत्-

५५. येषां वल्लभया सह श्वशमिव क्षिं प्रथं क्षपा क्षीयते तेषां शीतकरः शशी विरहिणामुखकेव सन्तापकृत् ।
इत्यद्वै कविना तेनोक्ते कुलचन्द्रः प्राह-

असाकं तु न वल्लभा न विहसेनोभयभ्रंशिनामिन्दू राजति दर्पणकृतिरसौ नोष्णो न वा शीतलः ॥ ५
इति तदुक्तेरनन्तरमेवैकां वैराङ्गनां प्रसादीचकार ।

५६) अथ दामरनामा सांन्धिविग्रहिको मालवमण्डलादायातः श्रीभोजस्य सभां वर्णयन् महा-
न्तमायलुकं जनयति । तत्र गतश्च श्रीभीमस्यामात्रां स्वपपात्रां वर्णयं स्तद्विद्वक्षातरलितः श्रीभोजः
‘तमिहानय मां तत्र वा नय’ इत्यभ्यर्थ्यमानः; सभादर्शनोत्कृष्टितेन श्रीभीमेन तथैव याच्य-
मानः कस्मिद्विषये वर्णं उपायविनमहुपापयनमादाय विप्रवेषपधारिणं ताम्बूलकरण्डकवाहिनं श्रीभीमं १०
सहं गृहीत्वा संदसि गतः । प्रणमन् श्रीभोजेन श्रीभीमानपनवृत्तान्तं व्याहृतः स विज्ञप्यां-
चक्रे-‘स्वतन्त्राः स्वामिनो नः । अंमभिमतं कार्यं केन वलोत्कार्यते इति । सर्वथेष्यं ११ कदाशा देवेन ना-
वधारेणीया’-इत्यभियार्थं श्रीभीमस्य वयोवर्णाकृतीनां साहृदयं पृच्छन् श्रीभोजस्तान्सभासदो १२-
लोकानवलोकयन् स्वर्गीधरं लक्ष्मीकृत्य दामरेणोत्प्रभिद्वये-‘स्वामिन् ।

५७. ऐपाऽऽकृतिर्थं वर्णं हृदं स्वप्निदं वयः । अनन्तं चाय भूपत्य काचविन्तामणोरिव ॥ १२

इति तेन विहसे चतुरचक्रवर्तीं श्रीभोजस्तस्मामुद्रिकविलोकनाविश्वेलदर्शं नृपं विमृद्योपायन-
वस्तन्युपनेतुं स सान्धिविग्रहिकस्तं प्राहिषोत् । तेषु वस्तुपूपनीयमानेषु तद्वृणवर्णनया^{१३} वर्तान्त-
रव्याक्षेष्येण च भूयसि कालविलम्बे संवृत्ते ‘स्यगीवाहकोऽयापि क्रियचिरं विलम्बते’^{१४} इति राजा
समादिष्टः स तं श्रीमभिति विज्ञेपयमास । राजा तदा तदनुपदिकानि सैन्यानि प्रगुणयन् दाम-
रेणाभिद्वये-‘द्वादश-द्वादश योजनौन्तरे प्रावहणिका हयाः, घटिकायोजनगामिन्यः करभ्यः, २०
अनया समग्रसामर्थ्या श्रीभीमः [प्रतिक्षणं वर्द्धी] सुवर्मक्रमस्त्र कर्त्तुं भवता रूप्त्वाते ?^{१५} इति विज्ञ-
प्रसेन पाणी वर्षयन् चिरं तस्यै ।

(अब Pb सञ्जक आदर्शं निश्चलिखितानि प्रकरणान्वयधिकान्युपलभ्यन्ते-)

[अथान्यसिद्धं वर्णं श्रीभीमस्तं दामरं मालवमण्डले प्रेपयितुकामो वार्तादि शिक्षणम् आत्मे । दामर उचिष्टन् पर्दी
ग्रथाहयामास । ततः श्रीभीमेन पृष्ठः स आह-‘भवच्छिद्धितमवै भुक्षामीत्युचे । यततत्र गतोऽहं स्वयमेवावस- २५
रोचितं श्रुतिष्ये । अन्वशियितं क्रियत्कथयिष्यते’ । ततो राजा तस्यासरोचितचातुरीविज्ञानाय प्रच्छन्नं स्वर्णमयं
सामृद्धकं रक्षापुङ्गेन भृत्वा, ‘भोजस्माया अन्यव नायमुद्याटनीयः’ इति शिविषिता तदस्ते उपदर्थमदाव । ततः
स गतो मालवे । भोजस्मायां तं वहुपृद्वलवेष्टिं आनाय्य भोजनृपाये भुमोच । स उद्योग्य विलोकयति तदा मध्ये
छारपुङ्गः । ततो नृपेणोक्तम्-‘भो हृदं किमुपायनम् ?’ दामरस्तकालोत्प्रभमतिः प्राह-‘द्वय ! श्रीभीमेन कोटि-

* कोष्ठान्तरातः पाः केषलं Pb प्रती दद्यत्मः । १ Pb श्रीभीमेनोक्ते । २ Pb चरं चारोऽ । ३ Pa सार्वविद्य० ।
४ P स्वप्नेनो इर्वन् । ५ A तप मर्त नयेति वा; B मर्त तप न० । ६ P तथैवेच्यमानः, Pa तथा क्षप्यमानः । ७ AD
म॑ । ८ P समायो । ९ A जामिन्यः, D अनिम्यः । १० D सर्वयाक्षेष्ये वासा । ११ D तावरीर० । १२ P निहिते ।
१३ Pa तेज सद सद सदो लोकाः । १४ AD इमाह०; B दयाह०; P इवमाह० । १५ AD विश्वामित्रायां । १६ AD
वर्णेन्द्रसां । १७ P Pa ग्रामामास । १८ AD योजनामो प्रान्ते; B Pa योजनामै । १९ केषलं Pb मर्ति उपोद्येष्य पाः ।
२० AD लर्विक्षया ।

होमः कारितः; तद्रक्षेयं तीर्थभूता, श्रीत्वा भवत्कृते प्राभृतीकृताऽस्ति' । इति तेनोक्ते हृष्टचेतसा राजा सहस्रेन सर्वेषां समर्पिता । तैः सर्वैस्तिलककरणेन वन्दिता । अन्तःपुरे प्रेपिता । ततः स सम्मानितः प्रतिश्राम्यृतसहितः पश्चाद् गतः । ज्ञातवृत्तान्तेन श्रीभीमेनापि पूजितः ।

पुनः कौतुकाक्षिसचितः श्रीभीमः कसिद्वसरे मुद्रामुद्रितलेखं विधाय तदस्ते समर्प्य, उपदापाणिं तडापरं ५ मालवेऽप्रैति । स उपदासहितं लेखं भोजहस्तेऽदात् । यावदुग्मृश्य वाचयति तावद् 'अथं भवता श्रीमं निपात-नीयः' इति पश्यति । ततः सविसयेन राजा पृथम्—'भो इदं किं लिखितमस्ति?' । ततः स उत्पतिकामातिः प्राह—'देव! भजन्नमपविकारां समस्ति, यत्रास्य रुधिरं पतिष्पति तत्र द्वादशवर्षप्रमाणो दुर्भिक्षः पतिष्पति' इति ज्ञात्वा श्रीभीमेनाहमत्र श्रेष्ठिः स्वदेशविनाशभीतेन प्रच्छन्नलेखयुक्तः । एवं सति त्वं यथाहयिते हुरु' इति तेनोक्ते राजाह—'नाहमात्मदेशप्राजामनर्थं पातिष्ठे' । ततः सम्भान्य विसर्जितः प्राप्तः स्वदेशे । तद्युद्धिकौशलेन १० पुनरथमत्कृतः श्रीभीमस्तं वहुभन्यते ।]

५६) अथ श्रीभीमोजः 'श्रीमाधपणिष्ठतस्य' विद्वत्तां पुण्यवत्तां^१ च सन्तत्माकर्णयन्, तद्दर्शनो-त्सुकातया राजादेशौः सततं प्रेष्यमाणैः श्रीमालनगरादिमसमये समानीय सयुभुमानं भोजना-दिभिः सत्कृत्य तदनु राजोचितान्विनोदान् दर्शयन्, रात्रावारात्रिकावसरानन्तरं सन्निहिते र्घस-त्रिभे पल्यङ्के भावपणिष्ठतं नियोजय तस्मै स्वां 'क्षीतरक्षिकामुपनीय प्रियालापांश्चिरं कुर्वाणः सुखं १५ सुखेन सुख्याप । प्रातर्माद्वृत्तपूर्यनिधोर्पैर्विनिद्रं दृष्टं स्वस्यानगमनाय माधपणिष्ठत आश्टवान् । विसर्यापर्वद्वयेन राजा दिने भोजनाच्छादनादिसुखं एषः स कदम्बसद्व्यवार्त्ताभिरलं^२ श्रीत-रक्षाभारेण श्रान्तं "स्वं विज्ञप्यन् विद्यमानेन राजा कर्थं कथिददनुज्ञातः पुरोपवनं यावद्युभुजाऽनु-गम्यमानः भावपणिष्ठतेन सागमनप्रसादेन सम्भावनीयोऽहमिति विज्ञप्य" नृपामुज्ञातः स्वं पदं भैजे । तदनु कतिपयैर्दिनैः श्रीभोजस्तद्विभवभोगसामश्रीदिव्यक्षया श्रीश्रीमालनगरं प्राप्तः । २० २० माधपणिष्ठतेन प्रत्युद्धमादियथोचितभक्त्याऽऽवर्जितः सर्वैन्यस्तन्मन्दुरायां भमी । स्वर्यं तु माध-पणिष्ठतस्य सौधमध्यास्य सञ्चारकसुवं कौचयद्वामवलोक्य लानादनु देवतावसरोव्यां भारकत-कुटिष्ठे शैवलवल्लभीयुग्मजलभ्रान्त्या धौर्मीन्दरीयं संष्टुप्यन् सौवस्तिकेन ज्ञापितवृत्तान्तसदैव तदेष-तर्त्तर्चनन्तरं निवृत्ते मध्यावसरेऽशनसमयसमागतां रसवतीमालादमानैः, अकालिकैरदेवजैव्य-ज्ञानैः फलादिभित्रियमाणमानसः, संस्कृतपयःशालिदालिर्नीं रसवतीमाकण्ठसुप्तुज्य भोज-२५ नान्ते चन्द्रदशालामधिष्ठायास्थुतादप्यर्थकाव्यकथाप्रयन्थप्रेक्ष्योदीनि प्रेक्षमाणः, शिशिरसमयेऽपि सज्जाताकस्मिकमीमोर्देवभ्रान्त्या संचीतसितस्तद्यवसनस्तालवृत्तकैरसुनुचैर्यज्यमानोऽमन्दथ-न्दनालेपनेऽप्यः सुखनिद्रया तां क्षणदां क्षणमियातिवाश प्रत्यये शङ्खनिर्विनादिगतिनिद्रो हिम-समये श्रीमाधवतारव्यतिकरो माधपणिष्ठतेन ज्ञापितः [*प्रतिसमर्यं सविसमयः कृति दिनान्यय-स्याय] स्वदेशगमनापाप्त्यन्ते स्वयं कौरितनव्यभोजस्यामिप्रासादप्रदत्तुष्यो मालवमण्डले प्रति

१ BP •भोजः सहतः । २ D दुकुपणिष्ठतमुत्तीमाप्तः । ३ D परिमाणिरूपः । ४ P पुण्यवत्तां । ५ P रिताद रात्रेः सततः । ६ Pa माति । ७ D स्त्रः । ८ D •राजा । Pa •राजार्थी । ९ Pb विद्ययापदेन । १० Pb बद्धेनोर्म युद्धम्, राजो गद्यभवत्तीर्तं दीपतः । ११ D लोकपालेन । १२ D वाति । १३ D रितोः । १४ D वात्सः । १५ A भार-कुटिः D भवितव्यमानादृष्टिः । १६ D योक्तामतीर्य । १७ P •सात्त्वामात्रः । १८ P वेशकारीः । १९ D श्रीमात्रः । २० P •स्वनिपातः । * दोषान्तरागः पापः D पुक्तः एव दार्शने । २१ P Pa •पातृपूर्वपात्रः । २२ AD वीरपात्रः ।

प्रतस्ये । तथा^१ निजजन्मदिने जनकेन नैमित्तिकाज्ञातके कार्यमाणे, पूर्वमुदितोदितसमुद्दिर्दृत्या प्रान्ते गलितविभवः किञ्चिचरणपोराविर्भूतश्वयथुविकारः पञ्चत्वमाप्त्यतीति-निमित्तविदा निवेदिते^२ विभवसम्भारेण तां ग्रहगति निराचिकीर्पुणा माघपित्रां, संवत्सरशतप्रमाणे मनुजायुषि पद्मविश्वत्सहस्राणि दिनानि भवन्तीति विमृश्य, नाणकपरिपूर्णास्तावत्संख्यकान् हारकान् कारितनव्यकोशेषु निवेश्य तदधिकां परां भूतिं शतशः समर्प्य प्रदत्तमाघनाम्ने सुताय कुलोचितां^३ शिक्षां वितीर्य कृतकृत्यमानिना तेन विपेदे । तदनन्तरसुत्तराशापतिरिव ग्रीष्मपाज्यसाम्राज्यो विद्वज्जनेभ्यः वियं तदिच्छया यच्छत्रमानैर्दीनैरर्थसार्थं कृतार्थयंस्तेभोगविधिभिः स्वममातुपावतारमिव दर्शयन् विरचितशिशुपालवधाभिधानमहाकाव्यचमत्कृतविद्वज्जनमानसः प्रान्ते पुण्यक्षयात्क्षीणवित्तो विपत्तिपाते स्वविषये स्यातुमपभूष्णुः सकलघो भालवमण्डले गत्वा धारायां कृतावासां पुस्तकग्रहणकार्पणपूर्वकं श्रीभोजातिक्यदपि द्रव्यमानेयमिति तत्र पद्मी प्रस्थाप्य^४ यावत्तदाशया माघपण्डितविरं तस्यौ तावत्थावस्थां श्रीभोजसत्पद्मीं विलोक्य ससम्ब्रमः शालाकान्प्यासेन तत्पुस्तकम्भुन्सुद्ध काव्यमिदंमद्राक्षीत्-

७९. कुमुदवनमपाश्रि श्रीमद्भोजखण्डं स्वजति मदमुल्लूः श्रीतिमांशक्रवाकः ।

उदयमहिमरित्यर्थाति शीतांशुरसं हतविधिलिङ्गानां ही विचित्रो विपाकः ॥

अथ काव्यार्थमवगम्य, का कथा अन्यस्य केवलमस्तैव काव्यस्य विश्वम्भरामूल्यमल्पम्^१ समयोचितस्यानुच्छिष्टस्य हीशब्दस्य पारितोपिके क्षितिपतिर्लक्ष्मद्रव्यं वितीर्य तां विस्सर्जे । सापि ततः सञ्चरन्ती विदितमाघपण्डितपक्षीकैर्याच्यमाना तत्पारितोपिकं तेभ्यः समस्तमपि वितीर्य यथावस्थिता गृहमुपेयुपी तद्वत्तान्तेज्ञापनापूर्वं किञ्चिचरणस्फुरच्छोकाय पत्वे निवेदयामास । अथ स 'त्वमेव मे शारीरणी कीर्तिरि'ति श्लाघमानस्तदा स्वगृहमागतं कमपि भिस्तुकं वीक्ष्य भवने तद्विचितं किमपि देयमपद्यन् सज्जातनिर्वेद इदमवादीत्-^{२०}

८०. अर्था न सन्ति न च मुञ्चति मां दुराशा त्यागान्न^३ सङ्कृतिः^४ दुर्लितिः^५ करो मे ।

याज्ञा च लाभवक्ती स्ववेच च पार्प श्राणः स्वं ब्रजत किं परिदेवितेन ॥ १

८१. दारिद्र्यानलसन्वापः शान्तः सन्तोपयारिणा । दीनाशाम्भज्जन्मा तु केनायमृपशाम्यतु ॥ २

८२. न मिक्षा दुर्भिक्षे पतति दुरवस्थाः कथमृणं लमन्ते कर्मणि क्षितिपरिष्ठान्कारस्यति कः ।

अदत्त्यैपि ग्रासे ग्रहपतिरसावस्तमयते क यामः किं कुर्मो गृहिणि गहनो जीवितंविधिः ॥ ३ २५

८३. *धृत्याकाशः पथिको मर्दीयमवनं पृच्छन्तुतोऽप्यागतः तदिं गेहिनि किञ्चिदस्ति यदयं भुक्ते वृश्चाशुतुरः ।

वाचास्तीत्यमिधाय नात्ति च पुनः श्रोक्तं विनैवाक्षरः स्थूलस्थूलविलोललोचनजलैर्बाध्यमसां निन्दुमिः ॥४

८४. ब्रजत ब्रजत श्राणा अर्थिनि व्यर्थां गते । पथादपि हि गन्तव्यं क सार्थः पुनरीदशः ॥ ५^५

१ BP Pb तदा । २ A निवेदितः । ३ AD भाद्रें पूर्वोष्टमिदं पदम् । ४ P विश्वायान्प्रभ 'भ-विष्ट' । ५ AD 'मास' नात्ति । ६ D विद्वनः स । ७ P कृतनिवासः । ८ AD 'इदं' नात्ति । ९ D परी कैविज्ञिरर्थिः ।

१० D 'हृतान्तं विज्ञा' । ११ AD भिस्तु । १२ A दानादः; D दानादि । १३ B सबलति । १४ B दुर्जितं मनो मे ।

१५ BP भद्रपैद । १६ P Pa जीवन । *AB प्रसन्नरे पूरत्वये भूते नात्ति, परं पुल्लोरतिरमाणे केनापि पश्याण्डिलितं प्राप्तते । † P प्रसन्नरे भूतेषां पश्याणे किञ्चिद् विषयेषो लभ्यते । तत्र पश्याणः कम् ३ (१), ४ (२), ४ (३), २ (४), ५ (५) ।

‘क सार्थः पुनरीदृशोः’ इति चाक्यान्तं एव स माधपण्डितः पञ्चत्वमवाप । प्रातसं वृत्तान्तम् वगम्य श्रीभोजेन श्रीमालेषु संजातिषु धनवत्सु सत्सु तस्मिन्पुरुषरद्वे विनष्टे क्षुधायाधिते सति भिष्मामाल इति तज्जात्मानम् निर्वम्भे ।

॥ इति श्रीमाधपण्डितप्रवन्धः ॥

- ५७) पुरा सहदिविशालायां विशालायां पुरि मध्यदेशजन्मा सांकार्यगोद्धः सर्वदेवनामां द्विजो निवसन् जैनदर्शनसंसर्गत्रयाः प्रशान्तमिथ्यत्वो धनपाल-शोभनामिधानुद्वयेना-
न्वितः कदाचिदागताऽथ श्रीवर्द्धमानसूरीन् गुणानुरागान्निजोपात्रये निवास्य निर्द्वन्द्वभवत्या परि-
तोपितान् सर्वज्ञपुत्रकानिति धिया, तिरोहितं निजपूर्वजनिधिं पृच्छंसैर्वचनच्छलेनार्द्धविमां
याचितः । ‘सङ्केतनिवेदनाल्लृत्यनिधिस्तदर्द्धं यन्द्वंस्तैः पुत्रद्वयादद्वै याचितो’ ज्यायसा धनपालेन
१० मिथ्यात्वान्त्यमतिना जैनमार्गनिन्दापरेण निपिद्धः, कनीयसि शोभने कृपापरः स्वपतिज्ञाभङ्ग-
पातकं तीर्थेषु क्षालयितुमिच्छुः प्रति तीर्थं प्रतस्ये । अथ पितृभक्तेन शोभननामा लघुयुद्धेण तं
तदायहान्निपिद्ध्य पितुः प्रतिज्ञां प्रतिपालयितुमुषात्तव्रतः स्यं तान् गुरुननुससार । अन्यस्तसम-
स्तविद्यास्यानेन धनपालेन श्रीभोजप्रसादसम्याप्तसमस्तपण्डितप्रमाणप्रतिष्ठेन निजसहोदरामर्पभा-
वाद् द्वादशावर्दीं पावत्स्वदेशो निपिद्धजैनदर्शनप्रवेशेन तदेशोपासकैरत्यर्थमन्यरथनया गुरुवर्वां
१५ हृथमानेषु सकलसिद्धान्तपारावारपादव्या स शोभननामा तपोथनो गुरुनाशृच्छय तत्र प्रयतो
धारायां प्रविशन् पण्डितधनपालेन राजपाटिकायां व्रजता तं सहोदरमित्यनुपलक्ष्य सोपहासम्-
‘गर्दभदन्त भदन्त ! नमस्ते’ इति प्रोक्ते; ‘कपिवृपणास्य वयस्य ! सुखं ते’ [इति प्रत्युत्तरयांचके ।
ततथमत्कृतो धनपालो मया नर्मणापि नमस्ते इत्युक्तम्, अनेन तु वयस्य सुखं ते] इत्युच्चरता
वचनचातुर्याचिरितोऽस्मीति । तत् ‘कस्यातिथयो यूपमि’ति धनपालस्यालापैः ‘भवत एवातिथयो
२० वयमि’ति शोभनमुनेवर्याचमाकर्ण, बहुना सह निजसौधे प्रस्थाप्य तत्रैव स्यापितः । स्यं सौधे
समागम्य धनपालः प्रियालापैः सपरिकरमपि तं भोजनाय निमग्नयस्तैः प्रासुकाहारसेवापैर-
निपिद्धः । चलाहोपहेतुं पृच्छन्-

८५. मजेन्मायुकर्णी वृत्ति मुनिम्लेच्छकुलादपि । एकान्तं नैव भुजीत वृहस्पतिसमादपि ॥

तथा च, जैनसमये दशावैकालिके-

२५. महुकारसमा बुद्धा जे भवन्ति अणिसिया । नाणापिण्डरया दन्ता तेण बुद्धन्ति साहुणो ॥

इति स्वसम्यपरसमयान्यां निपिद्धं कृत्पितमाहारं परिहरनः शुद्धाशनभोजिनो वयमिति
तद्विवितितमनास्तूप्णीकसुत्थाय सौधे” भजनारम्भे गोचरचर्यग्या समागतं तन्मुनिद्वन्द्वमव-
लोक्याऽसिद्धान्तपाके तद्वाहाण्योपदौकिते दद्वि मुनिभ्यां व्यतीतकिपद्विनमेतदिति पृच्छयमाने,
धनपालः ‘किमत्र पूतराः सन्ती’ति सोपहासमभिद्धानः, व्यतीतदिनद्वयमेतदिति व्राक्षण्या

I इदं वाचं D इसुके न विद्यते । 2 B वाचवन्तरं; P वाचवन्तराः । 3 P व्यतीतः । 4 D व्यतीतः । 5 D
काशपगोप, B वाचिः । 6 P गोपात्रो वाचः । 7 P विहायमव्याप्तिशानां नालिः । † दिष्टान्तग्रंथः पादः Pa आदर्शेभु-
पलम्भः । 8 P ऋषदेवतः । 9 D प्रहृष्टः । 10 D युत्पत्तेषु । ‡ कोषाक्षरातः पादः A Pa प्रवन्तरे नालिः ।
§ एत्यपादव्यमाने B प्रवन्तरे ‘शोभनमुनेवर्यपालत्वमकृतः’ यतादाः पादः । 11 D युत्पत्तेः । 12 P इसीतरित्यप्य ।
13 Pa नीचकु । 14 P Pa अद्वितीयः । 15 D सौधमाप । 16 P मुनियुगल ।

प्रकाशः]

निर्णीयं ताम्यां 'पूतरा: सन्तीलव' इत्यभिहिते स्वानासनात्तदर्शनार्थमुत्थाय तत्रागतः सन्, स्थालेऽधिरोपितदिवसंग्रीषी यावदावकापुङ्क्षेऽधिरूद्दैस्तैर्जन्तुभिर्दधिपिण्ड इव पाण्डुरतामवलोक्य; जिनधर्मे जीवरक्षांप्राधान्यम्, तत्रापि जीवोत्पचिज्ञानवैदृग्ध्यम्, यथा-

८७. *मुगमासाहप्रमुहौ* विदिल-कव्यमि गोसे पढ़ । ता तसनीवृपती भणन्ति दहिए तिदिणुवार्ँ ॥

तज्जिनशासने एवेति निधिल शोभनमुनेः शोभनवोधात्सम्यकप्रतिपत्तिपुरः सरं सम्यक्तर्वं भेजे । [इयहिनानि सं मिथ्यात्वमयं विदन्, पम वन्धुः कापि इति तस्यैव पुरः पृच्छन् वयआख्यागुणादिः वहुपमाने शोभनेन सं कथयता अनुमानात् मम ब्रातैवायमिति निधिल आनन्दाशुश्रूवं तमालिम्य स्त्रियोर्दर्शा वहुरुच आकारायामास च ।] कर्मप्रकृत्यादिषु जैनविचारग्रन्थेषु प्रकृत्या प्राज्ञः परं प्राचीण्यमुद्वहन्, प्रति प्रातर्जिनार्चिवसरप्रान्ते-

८८. कतिपयपुरसामी कायव्यैरपि दुर्गहो मतिवितरता मोहनाहो मयानुस्तः पुरा ।

त्रिशुवनपतिरुद्धाराद्योऽधुना स्वपदग्रः प्रश्नरधिगतस्तत्त्वाचीनो दुनोति दिनव्ययः ॥

८९. सबव्य अस्थि धम्मो ज्ञा वृग्णियं विण न सासाणं तुष्ट ।

कणगाउराण कणगं^{१३} व ससियपयं अलम्भसाणाणं ॥

[५५] { किं ताए पठिषाए पयकोडीए पलालभूषाए । जत्वितिं न नार्थं परस्स पीडा न कायन्या ॥

[५६] देशाधीशो ग्रामसेकं ददाति ग्रामाधीशः क्षेत्रसेकं ददाति ।

क्षेत्राधीशः दिभ्यिकाः सम्प्रदत्ते सार्वस्तुतः सम्पदं सां ददाति ॥}

इत्यादीनि धाक्षयानि पटन्^{१४} स धनपालः कदाचिच्छृणेण^{१५} मृगयां सह नीतः^{१६} । वाणेन मृगे विद्वे सति तद्वर्णनाय विलोकितमुखो धनपालः प्राह-

९०. रसातलं यातु यदेव ऐरुपं कुनीतिरेपा यैरुपो हादोपवान् ।

विहन्यंते यदलिनापि दुर्वलो हाहा महाकष्टमराजकं जगत् ॥+ २०

इति तत्तिर्भत्सनात्कुद्वो नृपः किमेतदित्यभिद्धाने-

९१. वैरिणापि हि मुद्यन्ते प्राणान्ते रुणभक्षणात् । रुणाहाराः सदैवंते हन्यन्ते पशवः कथम् ॥

इत्येत्तुतसज्ञात्कृपेण द्वेषेण धनुर्वर्णभङ्गमङ्गीकृत्याजीवितान्तं संन्यस्तमृगयाव्यसनेन युरं प्रति^{१७}

१ D विग्रहं योर्वतः । २ AD ओर्विते हवि स० । ३ D कुन्ने । ४ D 'सौ' स्वाने 'तद्वर्णं' । ५ AD दया ।

* P प्रवान्ते इर्पं गाया वासिः । B आदीर्पिति सूले रुणार्थमासे पश्चात्केनापि लिपिता लम्यते । ६ Pa पमिहृ । ७ Pa विद्लं ।

८ Pa विलिः । † क्षेत्राधीनांतः पाठः सां वै B प्रती प्राप्यतः । ९ AD प्रातः प्रातः । १० Pb ज व पतं विण स० ।

११ D वर्गु त्वा । ‡ क्षेत्रं Pb प्रती इर्पं गाया लम्यते । १२ D पुस्के इदं पशुपत्रमयते, A आदीर्पं रुणस्याप्तोभासे पश्चात्केनापि विप्पन्तप्रतिक्रमति । १३ Pb प्रवान्ति स पर्वतः । १४ BP वृक्षतिना । १५ D कदाचिच्छृणं यद् युग्मां नीतो धनपालोऽभिहितः ।

१६ B Pa तदा । १७ P इति । १८ P नद०; B निह० । + एतोपेन Pa प्रती, किमिद्विप्रयेण प द D पुस्के लिन् ।

१९ एतिर्भवंते प्रसिद्धं प्राप्यते-

[ततो भोजतः प्राप्त—द्विकारं तु विवाह गृहा परेते प्योमोत्पतिरित विलिष्यन्ति मुखं वायाः ? ।

प्रवाहः प्राप्त—देव ! वर्तप्रवाहिताः परितुं स्वाज्ञातिरिते रुणाहाशुग्रामादिप्राप्यते ॥]

२० D इर्पे भग्नोन्मृगः । २१ D 'कर्म' शास्त्रि ।

प्रत्यागच्छता तत्र यज्ञमण्डपे यज्ञस्तम्भनियच्चितच्छागस्य दीनां गिरमाकर्ण्य किं पशुरसौ व्याह-
रतीत्यादिष्टः सन् धनपालोऽवधेहीति प्राह-

१३. नाहं सर्वगलोपमोगवपितो नाभ्यर्थितस्त्वं मया तनुष्टुष्टुणभक्षणे सततं साधो न युक्तं तत्र ।

सर्वं यान्ति यदि त्वया चिनिहता यज्ञे भ्रुवं प्राणितो यज्ञं किं न करोपि मातृपितृमिः पुत्रैस्था वान्यवैः ॥

५ इति तद्वाक्यानन्तरं राजा किमेतदिति भूयोभियुक्तः:-

१४. यूपं कृत्वा यज्ञन् हत्वा कृत्वा रुधिरकर्दमम् । यदेवं गम्यते सर्वे नरके केन गम्यते ॥

१५. सत्यं यूपं तपो शक्तिः कर्माणि^१ समिधो मम । अहंसामाहुतिं दधादेष्य मव्यः सनातनः ॥

इत्यादि-शुक्लसंवादोदितानि वचांसि नरेन्द्रस्य पुरतः पठन् हिंसाशास्त्रोपदेशिनो हिंस्प्रकृतीन्
व्रत्यरूपेण राक्षसांस्ताज्ञापयन्, दृष्टमहृद्धर्माभिभुखं चकार ।

• 10 (अन्नातरे Pb आदर्शे सूले, B आदर्शे च पृष्ठापार्श्वभागेषु निष्प्रलिखितमविकं कथनमुपलभ्यते—)

{अथ यूपे गां बन्दमाने धनपालो महिर्णि नमस्तुवाच-

[५७] अमेघ्यमशाति विवेकशून्या सनन्दनं कामयेऽभिपक्ता ।

खुरापश्चैविनिहन्ति जन्मत् गौर्वन्ध्यते केन पुणेन राजन् ॥ १ ॥

[५८] पथः प्रदानासामर्थ्याद्विद्या चेन्महिपी न किम् । विशेषो दृश्यते नासां महिपीतो भनागपि ॥

15 [५९] स्पर्शेऽमेघ्यसुजां गवामधहरो वन्दा विसञ्जा द्रुमाः
सर्वं छागवयाद् धिनोति च पिदन् विश्रोपस्त्रकाशनम् ।
आपाद्वद्यपराः सुराः शिखिहृतं प्रीणाति देवान् हविः
स्फीतं फलगु च वल्मु च शुतिगिरां को वेचि लीलायितम् ॥

[६०] वधो धर्मो जलं तीर्थं गौर्नमस्या गुरुर्गृही । अग्निदेवो द्विजः पात्रं वेषां तैः कोऽस्तु संस्तवः ॥

20 एकदा जिनपूजायां पण्डितस्यैकाग्रता परेभ्यो ज्ञात्वा पुष्पपतलिकार्पणैर्वर्षं देवान् पूजयेति नृपादिष्टो धन-
पालो द्वादिसानेषु आन्तरा जिनेन पूजयित्वा समागतः । दूषुपाज्ञातवृचान्तेन राजा पूजास्तर्पं शृणुः प्राह-
द्वच । यत्रावसरोऽभूत् तत्र गत्वा पूजा कृता । राजा शृष्टम्-‘क नाभृदवसरः?’ पण्डितः प्राह-‘विष्णुपार्षे
एकान्तकलवसङ्गावात्, रुद्राद्वांगे पार्वतीसङ्गावात्, ब्रह्मणो ध्यानमहेन शापादिभयात्, विनाय[क]स लालि-
भृत्योदकायने स्पर्शेन संयमन्, चण्डिकायादिश्चूलहेतिसशस्त्रमहिमत्सम्पूर्णागवयासात्, हनुमतः कोपाटोप-

25 वशंवदस्य चपेतामयात् कुर्वाऽप्यवसरो नाभृत् । अपि च-

[६१] विनास्योचमाहं वृथा पुष्पमाला ललाटं विनाहो कर्यं पद्मवन्धः ।

अकर्णे त्वनेत्रे कर्यं गीतनृत्ये अपादस्य पादे कर्यं मे श्रणामः? ॥

‘इत्यादि प्रोक्ते यृषः प्राहः-‘काऽप्यवसरोऽभूत्?’ ततः पण्डितः-‘प्रश्नमरसनिमार्पं दृष्टिं ।’ निवे सात्युधारसैक-
सुभगे आस्यं प्रसन्नं सदा० ।’ इत्यादि कथयित्वा, जिनालये सदाऽप्यसरत्वाचत्र पूजा कृतेति पर्यवसितः ।

1 D स । 2 A आह धनपाल अवपेदिः; B स धनपाल भवपेदिः इति प्राहः; P_o • भवपेदिःप्रसिद्धिः । 3 Pb यूपे
भूयोभियुक्तो धनपालः प्राहः । 4 P प्राप्ताः समिधोः । 5 D ‘एवं यः सर्वां मतः’ प्राप्ताः प्राप्ताः । 6 D दित्तः ।
7 D शास्त्रः । † पृष्ठद्विद्यन्तराः प्रसवः केवलं Pb प्रवृत्ताः प्राप्ताः ।

प्रकाशः]

[६२] अथ—

अन्वदिषो सिवभषणे दुवारदेसे निष्ठिवि भिगिरणं ।
कि एस दुब्बलो इय निवपुद्वो भणइ धणवालो ॥

यथा—

[६३] दिग्वासा यदि तत्किमस धनुषा तचेत् कृतं भसना भसायास किमङ्गना यदि च सा कार्म प्रति देहि किम् ।
हत्यन्योन्यविरुद्धेष्टिमहो पश्यन्निजवामिनो भृङ्गी सान्दूशिरावनद्वुरुण्यं घतेऽस्थिशेषं वपुः ॥ ५

५८) अथ कसिन्द्रप्प्यवसरे न रेत्वरः सरस्वतीकण्ठाभरन्प्रासादे व्रजन् सदा सर्वज्ञशासनप्रेशं-
सापरं पषिडतं धनपालमालपत्-‘सर्वज्ञस्तावत्कदाचिदासीत् । तत्र साम्प्रतं कविज्ञानातिशयो-
सी? लभिहिते, ‘अर्हत्कृते अर्हतश्रीनामनि चूडामणिग्रन्थे विश्वव्रथस्य त्रिकालवस्तुविपयस्वरूप-
परिज्ञानमयापि विद्यते’ इति तेऽनाभिहिते-‘त्रिद्वारमण्डपे स्थितः कसिन्द्रारेऽसाकं निर्गमः?’ इति
शास्त्रकलङ्कारोपणोद्यते चूपे, वुद्विभावा त्रयोदशीति पाठं सत्यापयता भूज्ञपञ्चे वृप्पमध्निर्णय-१०
मालिलय मृग्ययगोलके निधाय च स्थगिकावस्तुत तं समर्प्य-‘देव! पादावधार्यताभिः’ ति वृषं प्राह ।
वृप्पस्तुद्विसङ्कटे निपतितं स्वं मन्यमान एतद्वद्वारत्रयस्य भध्यात्किमपि निर्णीतं भविष्यतीति
विस्मृद्य सूत्रभृद्विर्मण्डपपद्मशिरामपनीय तन्मार्गेण निर्गत्य तं गोलकं भित्वा, तेष्वक्षरेषु तमेव
निर्गमनीर्णयं घाच्यपंसत्कैतुकोत्तालचित्तः श्रीजिनेशासनमेव प्रशाशंस ।

(यथा D पुस्तके निष्ठलिखितं पर्यं प्राप्यते-)

15

{ तथाहि-

[६४] द्वाम्यां यत्र द्विरित्यमिन च हरः स्थान न चैवाष्टमिर्यं द्वादशमिर्गुद्वो न दशकद्वन्द्वेन लङ्कापतिः ।
पमेन्द्रो दद्यमि शुर्तने जनता नेत्रैरसंस्मैर्या तत्प्रज्ञानयनेन पश्यति वृथथैकेन वस्तु स्फुटम् ॥

(Pb आदये उनरथ निष्ठलिखितमधिकं कथनमुपलभ्यते-)

{ अन्वदा जलाध्रपृच्छा-

20

[६५] सर्वं वेषु शीतं शुशिकरधवलं वारि पीत्वा प्रकामं व्युच्छिन्ना शेषत्रया प्रषुदितमनसः प्राणिसार्था भवन्ति ।
शोषं नीते जलैषे दिनकरकिर्णीर्यान्त्यनन्ता विनाशं तेनोदासीनमात्रं भजति मृनिगणः कूपवश्रादिकार्ये ॥

कदाचित् सकारित्प्राणदरवनवसरसि गतो वृषः ‘कीद्विदं धर्मशानमि?’ ति एष्वाति । धनपालः प्राह-

[६६] एषा तटाकमिपत्तायकदानशाला मत्स्यादयो रसवती प्रगुणा सदैव ।

पाशाणि यत्र यकसारसचक्रवाकाः पुण्यं किपद् भवति तत्तु वर्यं न विद्यः ॥

25

उपातेषुकोष । पुरामागच्छन् मार्गे वालिकासहितां दृढां जरवा यितो धूनयन्ती दृष्टा नृषः पृच्छति-‘किं यितो
धूनयति?’ ततो धनपालः-

[६७] कि नन्दी किं हृतारिः किमु रतिरमणः किं विष्णुः किं विघात

किं वा वियाधरोऽसी किमुत सुरपतिः किं नलः किं कुवेरः ।

नायं नायं न चायं न राहु नहि न वा नायि नासी न चासी

30

शीढी कर्तुं प्रदृचः सद्यमपि च हले भूपतिमोऽन्देवः ॥

अनेन वृषं सुर्यं तोपथामास । }

१ P प्रवादना । २ P अथ; AD वर्तमाने । ३ P अद्यन्तश्रीनामचूः; A अद्यन्तश्रीचूः; D अद्यन्तीचूः । ४ AD
हेषोदेः । ५ B गमर्थद्वयः; Pa समर्थकामान् । ६ D शिळावदः । ७ B जैत्र ।

५९) अथ धनपालो क्रष्णभपञ्चाशिकास्तु निर्माणं, सरस्वतीकण्ठाभरणप्राप्तदे स्थनिर्मितप्रशस्तिपट्टिकायां कदाचिन्नपः-

१५. अभ्युदता वसुमती दलितं रिदुरः क्रोडीकरा बलवता वलिगाज्यलक्ष्मीः ।

एकत्र जन्मनि कृतं तदनेन युना जन्मत्रये यदकरोत्प्रस्थः प्राणः ॥

५ काव्यमिदं निर्वर्ण्य पारितोपिके तत्याः पट्टिकायाः काश्चनकलशं ददौ। तस्मात्यसादादपसर-
स्तदीयद्वारस्तत्के रत्या सह हस्तनालदानपरं भरं मूर्तिमन्तमालोक्य वृपेण हासहेतुं षट्-
पषिङ्गतः प्राह-

०६. स एप्स भुवनत्रयग्रथितसंयमः शङ्करो विभर्ति वष्पाऽधना विरहकातरः कामिनीभु ।

अनेन किल निर्जिता व्यमिति प्रियादाः करं करेण परिताङ्यन् जयति जातहासुः स्मरः ॥

10 (अत्र D पुस्तके 'अद्विदेसि भवणे०'; 'दिग्याता यदि तकिमस धनुपा०'; 'अमेघमक्षाति०'; 'पयःप्रदानस्तर्थ्याद०'; 'अस्तुत्युत्तमंगे०') इत्यादीनि पदानि समुपलभ्यन्ते परमत्राप्रासङ्गिकत्वात्, Pb आदर्शतुलारेणेतः पूर्वमेयोऽस्तित्वाच पुनर्नोद्दतिनि ।)

१७. पाणिग्रहे पुलकितं वपुरैवं भूतिभूषितं जयति । अद्वरित इव मनोभूर्यसिन्मसावशेषोऽपि ॥

इत्यादिभिः प्रसिद्धसिद्धसारस्वतोद्गौरेन्द्रिपं रञ्जयन् यावदास्ते तावत्कोऽपि सांयाग्रिको द्वाः स्थनिवे-

१५ दितंः सभां प्रविश्य नृपं नत्वा मदनमयैषपट्टिकार्यों पशास्तिकाव्यानि दर्शयामास। नृपेण तद्वाभ-
स्यानके पृष्ठे स एवमधादीन्—‘नीरधावकस्मादेव मम वाहने स्वलिते निर्यामकैः शोध्यमाने संसुदे-
तन्मग्रं शिखायतन्’ पैरिनः परिस्फुरज्जलमप्यन्तः सलिलविकलमधलोक्य कस्यामपि मिती वर्णां-
निर्वर्ण्य च तज्जिहासस्या मदनपट्टिकां तत्र प्रस्थाप्य तत्संक्रान्ताक्षरमयी पट्टिकेयमिति नृपतिर्निं-
शम्य तदुपरि मृणमयीं पट्टिकां नियोज्य तत्र पतितान् विपरीतान्’ वर्णान् पट्टिकेवार्चयामास।

१०. आवाल्याधिगमान्मयैव गमितः कोटि परामुक्तेरसत्सङ्कथयैव पार्थिवसुतः समग्रत्यसौ लज्जते ।

इत्यं खिन्न इवात्मजेन यशसा दत्तावलम्बोऽमुधेर्यातस्तीरतपोवनानि तपसे शृदो गुणानां गणः ॥

१०. देवे दिग्बिजयोद्यते धृतधनुः प्रत्यर्थिसीमन्तर्नीवै धज्यग्रतदायिनि प्रतिदिवं कुद्दे परिश्राम्यति ।

आस्तामन्यनितभ्यनी रतिरपि श्रासान् पौर्णं करे भर्तुद्दर्तुमदान्मदान्धमधुपी नीलीनिचोलं धनुः ॥

१००. चिन्तागम्मीरकूपादनवरतचलद्विरिशोकारवद्व्याहुतेनिःशसन्त्यः पृथुनयनधर्टीपञ्चमुक्ताथुधारम्।

नासावंशप्रणालीविप्रमथपतद्वाष्पानीयभेतद् ॥ देव त्वद्वैरिनार्यः स्तनकलशयुगेनाविरामं वहन्ति ॥

ପୂର୍ଣ୍ଣେ କାହିୟେଥି ବାଚ୍ୟମାନେଥି,

१०१. अयि स्तु विपमः पुराकृतानां भवति हि जन्मपु कर्मणां विषयकः ।

अस्य काव्यस्योत्तराद्दृष्टिं पादिभि

१०१. अयि खलु विप्रमः पुराकृतानां भवति हि जन्तुपु कर्मणां विप्राकः।

अस्य काव्यस्थेतरादृ छिसंपादिभिः परःशतैरपि^१ पण्डितैः^२ परिपूर्यमाणमापे विसवदतात् राजा घनपालपण्डितः पृष्ठः-

३० हरशिरसि शिरांसि यानि रेजुर्विहरि तानि लुठन्ति गृभर्पादः ॥

1 A पटिका राहे दृश्यासाम चुः (D सर)। 2 P करो। 3 D एक। 4 P नानि। 5 PD 'मध' नानि।
6 BP असोयिथो; Pa असोयो; 7 ABD तत्त्वालेख यदी। 8-9 धन्दाश्यासंक्ष पा आद्यांसुवराम्। 10 D
'विपरितात्' नानि। 11 AD 'मेता। 12 D दिघाया। 13 B 'भरि' नानि। 14 Pb 'वासापूरुषप्रसाधिरात्रकृ-
प्रमुखेषु भरेषु परित्वेतु, इदं स्वकरित्वेष्य उत्तरादेषु मुख्यमिति वदत्तु घटारातः प्राप्त युतायाः पादो दिग्मारोऽनिः।

प्रकाशः]

इदमेवोत्तराद्वैं संवद्दतीति नृपेणोन्ते सति स पण्डितः प्रेवाचा—‘यदि शुम्फार्थाभ्यां श्रीरामेश्वर-प्रासादप्रशस्तिभित्ताविदं न भवति तदांजतःपरमाजीवितान्तं कवित्वस्य सञ्च्यासं एवेति’। तत्प्रतिश्रवसमकालमेव यानपात्रे निर्यामकान्तिक्षेप्यावगाद्यामाने नीरधौ पद्मभिर्मासैस्तं प्रासादमासाद्य पुनर्मदनपटिकायां न्यस्तापामिदमेवोत्तराद्वैमागतमालोक्य तस्यै तदुचितं पारितोपिकं प्रसादी-चकार’। इति ‘खण्डप्रशस्तेर्यथाशुतानि वहनि काव्यानि मन्तव्यानि ।

६०) कदाचिद्राजा सेवाश्रुयतां शृष्टः प्रणितः^१ स्वं तिलकमङ्गलरूपेण्यैवेष्यं जगौ । शिशिर-यामिन्याश्वरमे यामे निर्विनोदत्वात्तां प्रथमादर्शप्रतिमानीय पण्डितेन व्याख्यायथमानां तिलक-मङ्गलीकायां वाचपंसद्रसनिपात भीरुः पुस्तकस्त्वाधः कद्योलकयुतसुखं वैर्णस्यालस्यापनापूर्वं तां समान्य तशित्रकविताचित्रीयमाणवित्तो नृपः पण्डितं प्राह—‘मामत्र कथानायकं कुर्वन्, विनीतायाः पदे-घनतीमारोपयन्, शक्रावतारतीर्थस्य पदे महाकालमालपन्’ यद्याच्च से तत्त्वम्यं देवामीं लभिदधाने^{१०} नृपे खयोत्प्रयोत्तनयोः सर्पपक्नकाचलयोः काच-कांश्चनयोः धन्त्रू-कलपपादप्रयोरिव तत्वं तेपां महदन्तरमित्युच्चरन्-

१०१. दोषहृष्टे निःस्वर लोहमर्दय नारग तुल्दौ किं भणिष्ठे । शुड्डाहि समं कणयं तुल्दौ न गत्तोसि पायालं ॥ इस्याप्रोशपरे तस्मिन् जाज्वलयमानेऽग्नी तां मूलप्रतिमित्यनीचकार । अथ स द्विधा निर्वेदभाग द्विष्टयाइसुलो निजसौधपश्चांद्रामे जीर्णमवैष्यिष्ठो निःश्वसन् भृद्वां सुप्त्वाप । धालपणितया^{१५} तत्सुतया *सभितिकमुत्पाप्य ल्लानपानमेऽजननिर्मापणानन्तरं तिलकमङ्गलीप्रथमादर्शलेखनात्सं-स्मृत्य ग्रन्थप्रसादं लेपयान्तक्रे । तदुत्तराद्वै नृतनीकृत्य अन्यः समर्थितः ।

(इतोऽप्ये Pb आदृशं निश्चलिखितमधिकं कथनमुपलब्धते-)

{—अन्यः समर्थितः पण्डितेन । रुदो नाणाप्रामे गतः । कदाचिद् धर्मनान्नि वादिनि समागते भोजसमार्थं स शोऽपि तात्प [विद्राजालि] यस्तं प्रतिवादयोत्सहते । ततो भोजेन सवहुमानं धनपाल आकारितः । तस्मा-२० गल्लनं शात्वा नदो वादी । लोकैः ‘धर्मस्य त्वरिता गतिः’ इति हस्तितः । राजा सम्मानितः………पृष्ठं च समाधानयोगक्षेत्रसादिवर्षपूर्वं नृपेण । पण्डितः प्राह—

[६८] पृथुकार्जस्वरापां भृपितनिःशेषपरिजनं देव । विलस्करेणुगहनं सम्प्रति सममावयोः सदनम् ॥}

(ब्रैव D पुस्तके निष्पगता विदेशाः पंक्तयः ग्राव्यन्ते-)

{अन्यदा भोजसमायां काव्यमिश्रमुक्तं तेन-

25

[६९] धारातीय धरामहीशवप्यने कौतूहलीयानपं वेषास्त्वद्वृणनां चकार खटिकाश्वाष्टेन रेखां दिवि ।

संतेर्वं विद्यशापाग समभवत्यतुल्यभूमीध्यामावाचत्यजति स सोऽयमवनीर्पिटे तुपाराचलः ॥

आरपणिर्वरितिन् काव्ये उपद्विते धनपालेनोक्तम्-

^१ पृष्ठिष्ठावार्गिनामालयाने Pa आदृशं ‘संवद्दतीति तुल्दौष्टे पारितोष्टिं भ्रमादीचकार । अपरेतु पण्डितेनु, इदं स्वकरिततमेव रसादं न पृष्ठिष्ठित व्याप्ताः प्राह—’ एतादः पादो विद्यमानोऽस्मि ।

१ P रिनान्प्रय ‘प्राताद्’ नाति । २ P रिनान्प्रय ‘ददात्’ । ३ Pb तदुचितं सविष्येत । ४ Pb तुलदाव । ५ Pb आदृशं ‘ददात्प्रातेष्टुहि काम्पिति भ्रमित्यमानानि संन्ति ग्रन्थान्तर इव मयादात्’ । ६ स पृष्ठिः । ७ BP नाति । ८ AD चात् । ९ Pa •पुष्टेमपात् । १० D •मालाष्टपद् । ११ Pa दासामी । १२ Pa पार्वतेष्टोः । १३ AD ‘ए’ नामः । B चात् । १४ AD देष्टपूर्व । १५ Pa मितिः । १६ P लीष्टम् । १७ Pa पायाल । १८ Pa मध्यास्त्रो । १९ AD चेष्टपूर्वात् ।

[७०] शैलवेन्ध्यति स वानरहृतैर्वालमीकिरम्भोनिधिं ज्ञासः पार्थशैरस्तथापि न तयोरत्युक्तिरुक्षाव्यते ।
वस्तु प्रस्तुतमेव किंचन वयं वृग्मतथाप्युच्चकैर्लोकोऽर्थं हसति प्रसारितमुखस्तुभ्यं प्रतिष्ठे नेतः ॥

एकदा, राजन् ! महाभारती कथा शूयतामित्युक्ते पण्डितं प्रति परमार्हतेन तेन प्रत्युक्तम्-

[७१] कानीनस्य मृने: स्वावन्धवधूवैष्वद्यविघ्नसिनो नेत्राः किल पञ्च गोलकसुताः कुण्डाः स्वर्ण पाण्डवाः ।
तेभी पञ्च समानजातय इति ख्यातातदुन्कीर्चनं पुण्यं स्वस्त्ययनं भवेयदि जृणां पापस काङ्न्या गतिः ॥

६१) शोभनमुनेस्तु शोभनं चतुर्विंशतिकास्तुतिः प्रतीतैव ।

{ *अुपुना किमपि प्रबन्धादिक्रियमामासे ? } वृपेणेत्युक्ते धनपालः प्राह—

[७२] आरानालगलदाशङ्कया भन्मुखादपगता सरस्वती । तेन वैरिकमलाकचग्रहव्यग्रहत्वं न कवित्वमस्ति मे ॥

१० [७३] नेत्र सर्वं तं पुजाइ नेत्र सर्वं तं पि गोरुणं इक । नरवर वीसंताओ वीरं ताओ गिरं इन्निति ॥
इति धनपालोऽकिः ॥

[७४] विचनं धनपालस्य चन्दनं मलयस्य च । सरसं हृदि विन्यस्य कोऽभूत्वाम् न निर्षेतः ॥

[इत्थ शोभनः स्तुतिकरणध्यानादेकस्या गृहे विर्गमनात्तस्या एव दृष्टिदोषान्वृतः, प्रान्ते निजश्रातुः पार्श्वं
१६ सुतीनां वृत्तिं कारयित्वा अनशनात्सौधर्मं गतः ।]

15 ॥ इति धनपालपण्डित-प्रबन्धः ॥

६२) {अथ तद्वगरनिवासीं} कोऽपि द्विजः केवलभिक्षामात्रवृत्तिः कस्मिन्नपि पर्वणि स्वानव्याकुले
सकलेऽपि नगरं लोकेऽलवधभिक्षया रित्तताम्रपात्रं एवायातः—इति ब्राह्मण्या निर्भर्त्यमानः
सञ्चायमानकलहे तां प्रति प्रदत्तप्रहारः आकर्षुरुपैः संयम्य राजमन्दिरे नीयमानो राजा इष्टः सन्—
१०३. अम्बा तुव्यति न मया न खुया सापि नामया न मया ।

अहमपि न तया न तया धट राजन् कस्य दोषोऽप्यम् ॥

इमं श्लोकं पपाठ । तदथं पण्डितेष्वनव्युध्यमानेषु राजा स्वमनीपिकया तदभिश्रायं प्राप्तः समुप-
लभ्य, तस्मै लक्षघ्रये दारिते सति श्लोकार्थं कलहमूलं दारिद्र्यमेव दृष्टो व्याचस्थौ ।

६३) अथान्यदा सर्वाण्यपि दर्शनाति एकत्राहृत्य मुक्तिमार्गं शृण्दे ते स्वस्वदर्शनयक्षपातं हृव्याणाः
सत्यमार्गजिज्ञासपैयोकियमाणाः पण्मासीमवधीशूलं श्रीशारदाराधनतत्पराः कस्या अपि निशः
२५ श्लोपे जागरींति व्याहृतिपूर्वसुन्थाप्य सा नृपं-

१०४. श्रोतव्यः सींगते धर्मः, कर्तव्यः पुनराहृतः । वैदिको व्यवहर्चर्चयो, ध्यात्वयः पराः यिः ॥
(अथवा-ध्यात्वयं पद्मक्षयम्) श्लोकमिम्भं राजे दर्शनेभ्यः समादिदृश्य श्रीभारती तिरोदये ।

१०५. अहिंसालक्षणो धर्मो मान्या देवी च भारती । ध्यानेन मुक्तिमासेति शर्वदर्शनिनां मरव् ॥

—इति "युग्मश्लोकं निर्माणं नृपाप्य निरपायनिर्णयं ते" प्राहुः ।

१ D 'शोभन' मालिः । * इत भारत्य प्रकाशतात्तिरवेष्टतः एवयः Pa भाद्रो नोराद्यनेः । † एतचिद्वागतां एव एव D दुर्लक्ष-
भाति । ‡ B भाद्रो इर्वं पर्यं इत्यत्त धार्मापाते दितिलगुरुडग्नेः ADP गृह एव । * एतच्छन्ते P1 भाद्रो एव एवपूर्व ।

‡ एतच्छ्रावणम् AD भाद्रो नोराद्यप्य, तत्र तु एवः पूर्वेष श्वरेण ४५-४६ योगवहारो नोरेष दितिर्व दासने ।
२ Pa नामाप्यो । ३ Pa युर्लोके । ४ Pa भाद्रकान्तीः । ५ श्वेषात्मां धार्मं A भाद्रो धार्मेः । ६ AD एव ।
७ P निरोपेः । ८ PPa सात्तवी । ९ Pa मुक्तिमार्गं सादृचं द्वाः । १० AD शोदर्गामे । ११ D ऐः गाति ।

प्रकाशः]

६४) अथ तद्वगरनिवासिनी शीताभिधाना रन्धनी कमरि विदेशवासिनं कार्पटिकं पाकाया-
शनमुपनीयं *सूर्यपर्वणि जलाश्रये कहुणीतैलमासाद्य गृहमुषेद्य तद्वमनाद्विपन्नमालोक्य सद्रव्य-
मिति उत्पद्यमानकलङ्कशङ्काकुलतया पश्चत्वाय तदेशनमेव वुमुजे ॥ तसिनिर्वरे प्रादुर्भूतप्रभूत-
प्रातिभैवभवा विद्यात्रयं ईप्तसम्भव्यस्य नवयैवनया विजयाभिधानया विदुप्या खस्तया सादृं
श्रीभोजस्य सदृः शङ्कारयन्ती श्रीभोजं प्रति प्राह-

१०६. शौर्यं शशुकुलश्यावधिं यशो ब्रह्माण्डमाण्डावधिं त्यागस्तर्कुकवाञ्छितावधिरियं शोणी समुद्रावधिः ।
श्रद्धा पर्वतपुत्रिकापतिपदद्वन्द्वश्रणमावधिः श्रीमद्भोजमहीपतेर्निरचधिः शैषो गुणानां गणः ॥

अथ विनोदप्रियेण राजा कुच्चवर्णनायान्युक्ता॑ विजया प्राह-

१०७. उत्ताथश्चियुक्तविर्भुजलता॒ मूलावधिः सम्भवो विसारो हृदयावधिः कमलिनीद्वावधिः संहतिः ।

वर्णः स्वर्णकपार्वीविः कठिनता॒ वज्ञाकरक्षमावधिस्तन्वज्ञाः स्तैनमण्डले येदि परं लावण्यमस्तावधिः ॥ १०

इति तद्वर्णनाकर्णनात्मनाद्विविना राजा-

[७५] { 'किं वर्षते कुच्चद्वद्वमसाः कमलचक्षुषः ।
तयोक्तश्च-सप्तश्चिपकत्यार्ही भवान् यत्र करप्रदः ॥

राजा-[७६] प्रहतमुखमन्द्रव्यधानवद्विः पयोदैः कथमलिकुलनीलैः सैव दिग् सम्प्रसदा ।
तयोक्तश्च-प्रथमविरहेदस्त्वाविनी यत्र वाला वसति नयनवत्तैरथुभिर्यौववद्वा ॥)

१०८. मुरताय नमस्तसै जगदानन्ददायिने ।-इति राज्ञो प्रोक्ते,
आनुपङ्गि फलं यस्य भोजराज॑ भवावद्वाः ॥

-इति विजयवाक्ये विजयोक्ते॑ राजा सत्रपमधोमुखं तस्यौ ।

{ततो राजा तां भोगिनीं चके । अन्यदा तपा जालान्तरे चन्द्रकरसप्तश्चिपाठि-

[७७] अलं कलङ्कशङ्कार॑ करस्तर्णनलीलया । चन्द्र॑ चण्डीश्रिनिर्भाव्यमसि न स्पर्शमर्हसि ॥} 20

[७८] 'शूणं श्वीणालारा॑ तृपत्य इवानुव्यमपरा॑ असच्छायश्वन्द्रो वुक्षजन इव ग्राम्यसदसि ।

अभृत॑ पिङ्गा प्राची॑ रसपतिरिच्च प्राश्य कठकं न शोभन्ते दीपा द्रविणरहितानामिव गुणाः ॥

[७९] 'विरलविरलीभूतात्माः कलौ सत्रना॑ इव मन इव मुनेः सर्ववापि प्रसक्तमभूद्वभः ।

अपसरति च ध्यान्तं निचात् सतामिव दुर्जो व्रजति च निशा॑ क्षिप्रं लक्ष्मीनिर्व्यभिनामिव ॥

इत्यत्र वहु चक्षत्व्यं परंपरया तस्यौ ज्ञातव्यम् ।

॥ इति शीतापण्डिताप्रबन्धः ॥

1 P ऐदेशिकं । 2 Pb युरां । 3 D युरांके पतद्वाव्यं नाति । * पतद्वाराकान्तर्गतपाठस्याने Pb आद्ये पदावदः
पाठः-'कणतैलमिद्या॑ लिप्तदिक्षामालाप्य विप्रमालोक्य सप्तश्चोदयमनया निपातित इत्युपायमानकलङ्कशङ्काया॑ रजविदेशवत्तमालयत्वा॑
मयवाय वद्वर्षं साति वुमुजे॑'; Db आद्यर्ते युनः-'कार्पटिकं पाकाय तत्वा युहेऽवं शारविता॑ निपि॑ पूतकृपिकट्यव्ययेन कांगुरीपैठं
पैठिविते सं रिप्तं पिठोपय तदत्तमेव वुमुजे॑' पृतावाः पाठः प्राप्तये । 4 B तद्वमनेव । 5 Pb शिरीमूः । 6 D 'प्रभूत'
नाति । 7 D 'शूणी॑ रुप्यास्याद्यनकामाद्याद्यागाश्चयनीतितात्मां इवय० । 8 Pa विः । 9 D नियुक्तः । 10 DPa कथा-
वसि॑ । 11 Pa युष० । 12 D पदवर॑ । 13 D 'कण्णा॑' नाति । † यत्यत्र कोष्ठास्यमेवाः पंक्तः; केवल D युरांके पूर्व दम्पन्ते॑;
14 D 'एशा॑' नाति । 15 DP नाति । 16 AB विजयोदिते॑ । ‡ पूतलोषाकान्तर्गतं कथनं केवल D युरांके छम्यते॑
॥ इति पादपूर्वं केवल P आद्यो अस्यम् । 17 PPa नाति; B एव ।

६५) *अथ मयूर-वाणाभिघानौ भावुकशालकौ पण्डितौ निजविद्वत्तया भिथः स्पर्द्धमानौ वृप्त-
सदसि लब्धप्रतिष्ठावभूताभ् । कदाचिद्वाणपण्डितो जामिसिलनाय तद्गृहं गतो निशि द्वारप्रसुप्ते
भावुकेनानुनीयमानां समानां जामिं निशम्य तत्रै दत्तावधान हृत्यशृणोत्-

१०९. गतप्राया रात्रिः कृशततु शशी! शीर्षत इव

प्रदीपोऽयं निद्रावशमृष्टगतो घूर्णित इव ।

प्रणामान्तो मानस्त्वजसि न तथापि कुघमहोः

-इति भूयो भूयस्तेन व्रिपदीमुदीर्यमाणामाकर्ण्य,

कुचप्रत्यासत्या हृदयमपि ते चण्डि! कठिनम् ॥

इति आत्मुत्त्वात्तुर्यं पदमाकर्ण्य कुद्वा सा सत्रपा च 'कुषी भवेत्' ति तं ग्रातरं शाशाप । इति पतिव्र-

१० तात्पत्रभावात्तदात्पत्रभूतप्रस्तुतिरेगः प्रातः शीतरक्षापिहिततनुरूपसभायामायांतो मयूरेण मयू-
रेणेव कोमलगिरा 'वरकोटी' । इति तं प्रति^० प्राकृतशब्दे प्रोक्ते चतुरचक्रवर्ती चूपो वाणं सविस्यं
प्रेक्ष्यमाणस्तेनं प्रस्तावान्तरे देवताराधनोपायं अत्यतस्यवतोर्यचक्रे । वाणस्तु सत्रैप्सत उत्पाय
नगरसीमनि स्तरूभमारोच्य खादिराङ्गरपूर्णमधः कुण्डे विधाय स्तम्भायवर्तिनि सिक्कें खरयम-
पिल्लः सूर्यस्तुतो प्रतिकाव्यप्रान्ते सिक्ककपदं छुरिकर्यां छिन्दनं पद्मभिः कांवैस्तेन पञ्चसु पदेषु

१५ छिन्नेषु सिक्काग्रविलम्बः पष्ठेन काव्यैन प्रलक्षीकृतभानुस्तप्रसादात्तस्यः सद्वातजात्यकाङ्क्षका-
यकांनितः, अन्यसिद्धहनि सुवर्णचन्दनावलिसादः संवीतसितेऽदिव्यवसनः समाजगाम । तदपु-
पादवं पश्यता चूपेण सूर्यवरप्रसादं मयूरे विज्ञप्यति संति वाणो वाणनिभया गिरा लं मर्मणि^०
विभ्याध । 'यदि देवतायाराधनं' सुकरं तदा त्वयमिति रिमपीड़क विद्विमाविदः कुरु इत्यभिहिते तेन
मयूरेण तं प्रति प्रतिवचः सन्देषे । 'निरामयस्य किमायुयेदविदः तथापि तत्र वचः सल्यापितुं

२० निजपाणी पादौ च^० छुर्या विद्वार्य, त्वया पष्ठे काव्ये सूर्यः परितोपितः, अहं तु पूर्वस्य काव्यस्य
पष्ठेऽक्षरे भवानां परितोपयामींति प्रतिशुल्य सुखासनसमासीनश्चण्डिकामासादपक्षाङ्गांगे
निविदो 'मा भावीर्विभ्रम्मिति पष्ठेऽक्षरे प्रलक्षीकृतचण्डिकामासादात्प्रलयग्राप्तमानव्युः पष्ठयः
स्वसम्मुखं च तत्प्रासादभालीक्याभिमुखागतेर्नपत्रिप्रसुखरजलोकैः कृतजयजपारयो भवता
महेन तुरं प्राविक्षत ।

२५ ६५) एतसिद्धावसरे मिथ्यादशां शासने विजयिनि सम्प्रदर्शनेऽपिभिः कैथित्प्रथानपुरुषैर्गु-
पोऽनिदध्य- 'यदि जैनमते कश्चिदीदृप्रभभावः प्रभवति तदा सिनाम्बराः ग्रन्देश स्वप्यन्ते नो'
चेच्चाविर्यास्यन्ते' इति तद्व्यनाचार्यांस्त्राकार्यं 'निजदेवतातिशयं कर्मपि दर्श-

* एतचिदाकार्णितप्रत्ययाने Pb भास्त्रां 'भय मयूरवाणी पण्डिती न । भिथः सद्वातजात्यकाङ्क्षका-
यिलकाय गतः । बहिर्वात्मुणोऽप्यस्तेन संहितां व्यवन् छापने । १ P शास्त्राः AD भास्त्रः २ P भास्त्रः ३ BP तुप-
मिति । ४ P उत्पादनामालोक्यः Pa भास्त्रां पतद्वारयं किंचित् विवरणोपेति भास्त्रे, वाण-उत्पत्तीमाला पूर्णोप-
त्तमेवामालावाय तुप्यं पर्वं पताः । ५ Pa उत्पादाः । ६ P शास्त्राः दुर्दा इती भास्त्रे, Pb तुप्यं शास्त्राः कुरी प्रेति ।
७ B शास्त्रोपेतः D तदामप्रसुप्तिरेगोऽन्तः । ८ P शास्त्रामालोः ९ D वास्त्रोः १० D 'प्रति' भास्त्रः ११ I's तप-
तमितः । १२ Pa ततः BP भास्त्रः १३ Pa-वास्त्रः १४ Pa विनायामायः । १५ भास्त्राः दृष्टं दार्शनेभास्त्रां-प्रेताः-
शास्त्रामालां विवरणां व्याप्तयोर्वदातः । १६ ABD शास्त्राः । १७ DP तुपीक्षः । १८ B तुपर्य-
प्रियः । १९ ABD 'प्रति' भास्त्रः । २० BPa भास्त्रः । २१ A-शास्त्राः D देवताप्रति । २२ PPa 'प्रति' भास्त्रः
भास्त्रः । २३ AD भित्तामी च प्रति । २४ PPa नो वा व्याप्तः । २५ AD तद्व्यनाचार्यः ।

शकादः]

यन्तु'-इति राजा भणिताः प्राह्-'मुक्तानामसदेवतानामत्र कोऽतिशयः सम्भवति, तथापि तत्किङ्गराणां सुराणां प्रभाविर्भावः कोऽपि विश्वचमत्कारकारी ददर्यत' इत्यभिधाय चतुश्चत्वारिंशता निर्गुणिन्नमहं निषमितं कारपित्वा तत्त्वगरवर्त्तिंश्च: श्रीयुगादिदेवस्य प्रासादपश्चात्यभावे स्थितो भवत्रार्थं 'भक्तामरे'ति नवं स्तवं कुर्वन् प्रतिकाव्यं भग्नैकैकनिगदः श्रद्धलासंख्यैः काव्यैः पर्याप्तस्त्वोऽभिसुखीकृतप्रासादः शासनं प्रभावयामास ।

॥ इति श्रीमानतुङ्गाचार्यप्रबन्धः* ॥

६७) अथ कसिन्नप्यवसरे वृपः सदेशपणितानां पाणिष्ठल्यं शुभमानो गूर्जरदेशम् विद्यधतया निन्दनं स्थानेषुपेणाभिधेये-'असंदेशीपांचलानोपालयोरपि भवदीयोऽग्रणीः' पणिष्ठतः कोऽपि न तुलामंधिरोहतींति विज्ञसे वृपस्तं भूपाभापिणं चिकीपुरुषाकारसंघृत्या कियन्तमपि कालं विलभ्यमानः स्थानपुरुषेण तद्वृत्तान्तं ज्ञापितः श्रीभीमः सदेशसीमान्तनगरे विद्रधाः १० काश्चित्पणस्त्रियः कांश्च गोपवेषधारिणः पणितान् मुक्तवान् । अन्यदा श्रीराजदौवारिकेण तत्त्वागत्य, कश्चित्तद्विधो गोपः प्रतापदेवीनाश्रीं पणस्त्रियं सह गृहीत्वा विद्यधलोकसुवासारां धारामारादवाप्यं, तां कापि सल्लाङ्कृते विमुच्य, प्रत्यूपसुखे भूपाय गोपे निवेदिते श्रीभोजेन किमपि वदेत्यादिष्टे-

११०. भोर्येष्व गलि कण्ठलउ' मूँ भष्टउ' पडिहाइ । उरि' लच्छिहि शुहि' सरसतिहि सीम 'विहंची कांइ' ॥ १५ इति तदुक्तिमाकर्ण्य विसायसेरमानसः सभायामलङ्कृतायां पणहरिणदशं तथयनेपद्यधारिणीं पुरो विलोक्य तां प्रति 'इह किं' इत्याकस्मिं वचः श्रीभोजः समादिक्षेत् । अथ सैंजातिपक्षपातादिव सरस्वत्या: प्रसादपात्रं शोभुपीलिधिः सा सुसुखी शैरीरिणी प्रतिमेव गम्भीरमपि तद्वचनतत्त्वमवगम्य 'पुच्छन्तींति वृपं प्रति प्रतिवचः प्रथितवती । इत्युचिततद्वच्चसा विकसितवदनाम्भोजेनैः भोजेन कोशापिणीत् लक्षण्ये देवाप्यमानेऽज्ञाततत्त्वतया तस्मिन्देव स्वधृतां भर्जीमाने ॥ २०

१ P भणिते प्राहुः; D भणिते ते प्राहुः; Pa राज्ञोके प्राहुः । * भतोऽनन्तरं Pb आदर्शे निश्चलिसिर्वं सावचूरीकं पदं प्राप्यते-शीर्जप्राणाणि पूर्णपात्रैऽप्यतिरप्यनैर्यं पैर्यत्पद्यक्षेषोपात्रं दीपांशुतानाश्रीपैः उग्रानि पृथग्लेक उहाप्रभन् यः ।

पर्माणीकालस वैऽनन्तर्हितुप्राणवत्पूरुषानिर्विद्यमृतेऽर्द्धार्थाणीः सिद्धसहैर्विद्यमृत एवयः शीघ्रमहोविधिताम् ॥

काश्चित्प्राणव-प्राणविद्यरप्यनैर्यप्यवैर्यपद्यक्षितात्, पर्यरो व्यक्तय यो योथो रथो येषां तात्, पापैर्द्वयं आद्यातान् व्यापात् जन्मदृष्टहायदर्श नीरोगीडवै य एः पुनरपि निष्पादयितः उत्तरपीत्यनेन पुरापि एषिकामः सुर्योदयं एव इति स्थितिः । तत्य सूर्यकाशायो येषांसे-समानोऽसामान्यानां विवाप्तं विद्यत्पुरुषैः । इति यापणिषदसूर्यसतके पष्टकावाचवचूरिः ।

२ Pb आदर्शे पृष्ठ प्रदन्प इहः पूर्णपैद दिवित उपदन्पते । २ AD कदपि राजा । ३ D व्यावाहः । ४ D व्याप्यविद्यतप्राप्तिः । ५ AD दृष्टा भासेहती० । ६ एषित्प्रदानान्तर्मत्प्राप्तान्त्रये AD आदर्शे धारादातः दाठो लक्ष्यते-'ततः ज्ञापित-सूतानः भीमीमः कदपि गोपवेषधारिणं पणिष्ठं पृष्ठपिण्यं च तत्र प्रहितवाऽ । उत्रं प्राप्तैषे वृपसन्नीते नीतो गोपालः श्रीभोजेन विषित विदेशस्यादितः' । ६ P भीमदीवा०; B भोजदीवा० । ७ P वदेलमिहितः । ८ D भोय पृष्ठः A भोएवदः; Pa पोयातः । ९ AD बंदुरः । १० 'पूँ भष्टउ' स्थाने D भणि केहवः; B केसितः; P भणि केसु, Pa कृषि केहट' षटादासानि प्राणवत्प्राणनि । ११ D जर । १२ D मुद । १३ AD रिपदी; Pa विडिती । 'पृष्ठपे भ्र आ आदर्शे 'भारदिण्यं परं शुभं सुष्ठु इह मदं कहित लोहीह समश्वद । भोर्यु शुहिर्विंश गर अवह न तुच्छ धीवर राठ ॥'

एवा याद भणिका दद्यते । तदनन्तरं AD 'इति सरस्वतीकण्ठाभाग्नेप्रयवाच्यं (D 'पात्रं' नालि) इत्पाद्यं पृष्ठपिण्यं पुरो विलोपयः' । १४ P समादिदेवः । १५ Pa 'व' स्थाने 'च'; P 'स' । १६ D विरेमणी० । १७ BPPa कदप्रदन्प । १८ AD व्यावाहः । १९ AD विकसितान्त्रये । २० AD जरिति० । २१ AD श्वे शश्वा न सम्बिति०

त्रिरुक्तोऽपि^५ यदा न ददाति तंदा तं प्रकाशं 'प्राह—देशसात्म्यात्प्रकृतिकार्पण्याच लक्ष्यमस्यै दाप्तये; औदार्यांसु मैज्यं साम्राज्यमपि दीर्घमानमल्पतरमेव स्यादि' द्वादिष्टे समस्त-समाजलोकैः प्रेयमाणः स तयोर्वचनयोरन्वयं ऐच्छन् इत्यभिदधे^६—'कर्णान्तविआन्तमपाङ्गाञ्जन-रेखायुगं युगपदद्वया निरूप्य मयेह किमित्यभिहितम् । अनया तु "द्विवचनस्य वहुवचनमि" ति-
-५ प्राकृतस्वैवलक्षणात् पुच्छन्तीति^७ हैशौ, कर्णाभ्यर्थेऽङ्गनरेखामिपात्, यो भवद्यां शुतपूर्वः स एवाप्य श्रीभोजै इति लिङेत्तुं गते 'इत्याशंक्योच्चरं दत्तवती । प्रज्ञावज्ञातवाक्यपतीनामपि पषिडतानां योऽ-
थोऽविषयस्तं सहस्रैविहरन्ती प्रत्यक्षस्तुपा भारतीयम्^८ । तद्वया: पारितोपिके लक्ष्यवयं किप्त-
दिति । ततो लक्ष्यवयस्य त्रिर्व्यहारान्नवलक्षान् प्रत्यक्षांस्तस्यै दापयामास । [ईततो ज्ञातगृजरजन-
चातुर्थविशेषः श्रीभोज इत्युवाच—'विवेको गूर्जरे देशे' । ततो राजा 'मालवीयः पषिडतो गूर्जरो
१० गोपालः समौ' इति धृद्धजनगिरं सत्यां भन्यमानस्तौ विसर्जे ।]

॥ इति पण्डिती-गोपयोः प्रवन्धः ॥

६८) अथावाल्यादेव स नुपः—

१११. मस्तकस्थायिनं शृत्यु यदि पश्येदयं जनः । आहारोऽपि न रोचेत किमुताकृत्यैकारिता ॥
इति विज्ञाततत्त्वतयां धर्मेऽप्रमत्तोऽनृत् । कदाचिद्विद्विभाग्नानन्तरं 'कश्चिद्विपश्चित्समेव वेगवति
१५ तुरगेऽविस्तुस्त्वां प्रति प्रेतपतिरूपैतीत्यनुसारेण धर्मकर्मणि सज्जीभवितव्यमि' ति वचनाधिकारिणे
पषिडताय प्रत्यहृष्टुचितदानं ददानः कदाऽपराहे सभासिंहासने उपविष्टः स्थगिकावित्ससमर्पित-
धीटकात्प्रागेव मुखे पद्मं क्षिस्वाऽभ्यवहरन् व्यवहारयेदिभिस्तत्कारणं षष्ठ इत्यवदत्—'कृतान्तद-
न्तान्तरवर्त्तिनां मनुष्याणां यद्हर्त्तं यद्य सुकूर्तं तदेवात्मीयं परस्य तु संशयः । तथा च^९
११२. उत्थायोत्थाय वोद्दृश्यं किमद्य सुकूर्तं कृतम् । आयुषः रुद्गमादाय रविरस्तं प्रमासति ॥ १
११३. लोकः पृच्छति मे वाचां शरीरे कुरुते ततः । कुरुतः कुशलमसाकामायुर्याति दिने दिने ॥ २
११४. श्वःकार्यमद्य कुर्वते श्वर्हि चापराहितम् । सर्वुर्वन् हि पर्वक्षेत्रं कृतं वास्य न या कृतम् ॥ ३
११५. मृतो शृत्युर्जरा जीर्णा विपक्षः किं विषत्यः । व्याधयो व्याधिर्वैः किं मैं ईर्पेन्ति यदमी जनाः ॥ ४
॥ इत्यनियताश्लोकचतुर्द्वयन्वः ॥

६९) अथान्यदा श्रीभोजः श्रीभीष्मभूतेः पार्श्वाद् दृतमुखेन वस्तुचतुष्यमयाचिष्ट । एकं यस्तु
२५ इहास्ति परत्र नास्ति १; द्वितीयं परंत्रास्ति, अत्र नास्ति २; तृतीयसुभपत्रास्ति^{१०}; मैतुर्ध्यमुभय-

द्वापि नास्ति ४ । इति विद्युपामेषि सन्दिग्धेऽर्थं अणहिल्पुरे पटहे वायमाने कथापि गणिकया पटहस्पर्शपूर्वकं विज्ञप्याचके—‘गणिका १ तपस्मि २ दानेश्वर ३ वृत्तकार ४ रूपं वस्तुचतुष्टयं प्रहीयताम्’ । *इति तयोर्त्ते वृपो दृताय तत्समर्पयत् । दूतेनेत्यमेवाभिधाय वस्तुचतुष्टयमादाय यथागतं जग्मे* ।

॥ इति वस्तुचतुष्टयप्रवन्धः ॥

७०) अन्यदा भोजन्मी वीरचर्यया परिग्रामविशिष्टि कथापि दुर्विवृत्वच्चा-

११६. माणुसदां दस दस दसा सुणियह लोयपसिद्ध । मंह कल्तव्ह इक ज दसा अवरि ते ‘चोरहिं लिद् ॥ हृदं पठ्यमानमाकर्ण्य तस्या’ दुःखाऽवस्थया सञ्जातकृपो वृपः प्रातस्तप्तिं^{१०} सदस्यानीय तस्य किमप्यायतिहितं विमृश्य थीजपूरकदये प्रत्येकं लक्षमूल्यं रवद्वयं प्रच्छन्नं तस्मै प्रसादीकृत-वान् । तेनापि तदृत्तान्तमजानता मूल्येन पव्रशाकापणे तद्वं विक्रीतम् । तेनाप्यविदिततंत्स्वरूपे-१० ओपायनाय तन्मातुलिङ्गद्वयं^{१०} कस्यापि समर्पितं संत् श्रीभोजस्यैर्वं तेन हौकितम् ।

११७. वेलामहल्लव्योलपिछियं^{२०} वड वि गिरिनईपतं । अणुसरह मगलगं गुणोवि रथणायरे रथणं ॥ ‘इत्यनुभवादाहारैश्चेव दृपस्तथ्यं मेने । यतः—

११८. ३ श्रीणितारेषविश्वासु वर्षीसपि योलवृ । नामुगावातको नूमलम्बं लभ्यते कुतः ॥

॥ इति वीजधूरकप्रवन्धः ॥

७१) अथान्यदा कस्यामपि तिशि वृपः ‘एको न भव्यः’ इति प्रच्छन्नं श्रीदाश्वाकं पाठयित्वा प्रातः ‘त्वया पणिटसभायां’ वाक्यमिदुसुचारणीयमि^३ति संक्षिप्तिवान् । अथ तेनैत्याभिधीय-माने नृपेण वृष्टाः पणिटा निर्णयमजानन्तः पाणमासीमविधिं^४ याचितवन्तः । ततस्तन्मुखयो वर-सचिसंत्रिण्याय देशान्तरं परिग्रामन् केनापि पशुपालेन ‘अहमेवामुं^५ निर्णयं’ भवत्स्वामिने निवेद-पिण्पमि^६ । परम्भेममुं सं भानशावं^७ धृष्टदया नोद्वैहुं वत्सलतयौ न मोकुं च शैक्षोमि^८—इति २० “तेनाभिहिते तद्विघृक्षया वरसचिस्तं वल्लान्तरितं निजस्कन्धे संसमिरोप्य तं” पशुपालं सह नीत्वा वृपसभामुपागतं उत्तरकारिणं^९ निवेदयामास । अथ स पशुपालो^{१०} वृपेण तदेव वचनं

१ AD ‘भूति’ नाति । २ AD नाति । + एवत्पदान्तरंतपातस्याने AD प्रती ‘गणिकावदाद्वया-तपस्मि-दानेश्वर-पूरवार-स्त्रे यतु चतुर्थं प्रदितम्’ । एतादातः संक्षिप्तः पाठः । ३ P शीयताम् । * वारकान्तर्गता पंक्तिः केवलं BP भादरो द्वारे । ४ D एवत्पदितः । ५ AD ददितः । + Pa प्रती इत्यं यापा एतादी—

‘नामुपरा दस दस हृदय देवित्वा निमित्तिवाहृ । मह कंत इकह ते दस नव चोरहिं हरीयाहृ ॥’

६ P तुवः । ७ D चोरहिं । ८ AD इति । ९ B तस्यावस्था, P वस्था दुःखाय अवस्थया । 10 BP ऊटुंदै । 11 AB एवत्पदान्तरः । 12 A रसमीयी, B रसदूषी, D रस । 13 P प्रसिद्ध प्रस्त्रज्ञोपकारी, D रुद्रपालो । 14 AD ‘हरा’ नाति । 15 AD वेशाभ्युपापानाम् । 16 BP नामित यत्परम् । 17 AD नाति । 18 A तेन हु (D ‘तु’ नाति) योगीतोः । 19 P वृष्टदीपितः, B उत्तरेहरूः । 20 A रसितः, D रसितः, Pa वालितः । + पृष्ठद्वयवस्थाने P वैरेतार्दी रसां एव यातः । 21 केवलं D उक्तुके एव वस्थो द्वयः । ३१ BPPa नाति पृष्ठ सोकः । २२ AD नाति । २३ लालीई B PPPa । २४ Pa नाति । २५ B रसमीयी वायव, वायितावस्थानाः, Pa—०याचितावस्थाय, P—०याचितवावस्थिताः(१) । २६ P भूम्यः । २७ Pa ‘विनेवं’ नाति । २८ BP निरेत्यमि-इति । २९ AD ‘हरा’ नाति । ३० AD ‘धार्म’ योगः । ३१ BPPa नाति । ३२ BPPa वारपाति । ३३ BPPa वेनेलमिहिते, Pb वेनेके सं यानं । ३४ AD वायोप्य, Pa भूमितोप्य । ३५ AD ‘तु’ नाति । ३६ BPPa उपेतः । ३७ A वारान् । ३८ BPPa नालीई द्वयः ।

३४:-‘असिन् जीवलोके राजन् । लोभ एवैको न भव्यः’ । “राजा कथमिति भूयोऽपि शृणुः—‘यद्ग्राम-
स्थणः श्वानं स्फन्धदेशोनास्त्वद्यमपि वहति तत्त्वोभस्यैव विजृम्भितमतो लोभ एव न भव्यः’” ।

॥ इति ‘एको न भव्यः’ प्रवदन्धः ॥

३५) अथान्यदौ मित्रमात्रसहायो द्वृपतिर्मिति॑ परिम्रमन् पिपासाकुरुतया पणरमर्णागृह॑
५ शत्वा मित्रमुखेन ‘जलं पाचितवान् । ततोऽनुच्छवात्सल्याच्छम्भव्या दार्द्या काटिलम्बेनेतु-
रसपूर्णः’ करकः मग्नेदमुपानीयत । मित्रेण स्वेदकारणे शृणु—‘एकस्यामित्रुलतायां गृहेन’ मित्र-
मानायां “ुरा” रससमूर्णः । “ सवाहटिको घट आसीत; साम्प्रतं तु प्रजातु पितृमात्रसे” श्वे-
चिरकालेन केवला “वाहटिकैव भृतेति ग्रेदकारणम्” । दृपस्तत्वेदैकारणमाकरणं केनपि पणिजा
१० तिवापत्ते महति॑” नाटके कार्यमाणे तद्युष्ठनवित्तमात्मानं विमृद्धय तद्वयग्नस्थपेतेति॑” मैते ।
१५ तनो व्यावृत्य स्वस्यानमासाद्य निद्रां स्पैषेवे । अपरेत्युः प्रजातु सज्जानकृपो नृपः पणाङ्गनागृह॑
गतः । तदा च तथाऽथ प्रजातु वत्सलो द्वृपतिः, प्रचुरं द्विरससङ्केतादिति व्यादरन्व्या राजा तोपितः॑ ।

॥ इतीक्षुरसप्रपन्धः ॥

३६) अथान्यस्मिन्द्वयसरे धारानगर्याः शांतायातुरे प्रासादस्थिनाया॑ “ गोद्रदेव्या॑” नमस्तिर्कीर्त्या॑
५ नित्यमागच्छन् । कदाचिद्देलान्वयतिक्षमे सज्जाते सति प्रवक्षीभृतया तयादेवतया धारमदेशमाग-
१० तया मितपरिच्छदं धारमदेशमागतमक्षमान्वृपमालोक्य ससम्भ्रमातिपेदुपी निजासनमतिप्राप्तम् ।
१५ तृपः प्रणामपूर्यकं तं धृत्तान्तं शृच्छन्, सविहितं परपठमागतं विचिन्त्य ‘शीर्मं पर्ते॑ति विश्वे॑
देवतया क्षणात् गूर्जरसैन्यवैष्टिनं ग्यमपदपत्तं । जयापिकेत याजिना प्रजन् धारानमर्णोत्तुरे
प्रविशन्, जायद्यो-कोद्योभियानम्यां गूर्जराभ्यवाराम्यां तत्त्वरुद्धे शनुर्पी प्रक्षिप्य, एतापता
२० व्यपादितोसीति पदवद्वृम्यां दरक्तः ।

११०. “अर्गा गुणाति भवेष भोजः पञ्चमुपेषुपा । पुणा गुणिना पस नद्यमयान शातिः” ॥

॥ इति अन्यपारमपन्धः ॥

(इतोअंगे Pb भौती निष्पग्नः प्रवन्ध उपलब्धते-)

{ अथान्यदा राजौ जागृतो भोजः स्वक्रिद्विविस्तारं हृदये चिन्तयन् हृष्टः सत् हृदं काव्यपादत्रयमहाह-

[८०] चेतोहरा युवतयः सजनोऽशुक्लः सदूचान्यदाः प्रणयागर्भगिरथं भृत्याः ।

र्गजनिति दन्तिनिवहात्तरालास्तुरङ्गाः....

इति पुनः पुनः कथयति सति नृपे चतुर्थपदार्थमध्यावर्णां विलोकयति सति च तावत्क्रिद्विद्वान् वेश्याव्यसनी⁵ तद्वचनादात्रीकुण्डलयुमकुते तदेशम् चौर्याघ प्रविष्टः, तत्सादत्रयमध्युणोत् । तत्सेनाचिन्ति यदूभाव्यं तद्वमवतु, परमुत्पन्नं चतुर्थं पादं कथं श्यायपितुं शक्तः । ततः प्राह-

समीलने नयनयोर्नेहि किञ्चिदस्ति ॥

रुजा तुष्टः उण्डलमहितं तदाच्छितं ददौ । } १०

७४) अथान्यदा स एव राजां राजपाटिकायाः प्रत्यावृत्तः पुरगोपुरे मुखसुक्तेन तुरगेण प्रवि- १०
शन् व्याकुलीमृतेतुः इत्सत्ततः पलायमानेषु ज्ञेन्पु कामपि तत्क्रिक्रयकारिणीं⁶ जनसंमर्देन मौलि-
कम्पाद्वृत्तलपतितंभ्रभ्रभाण्डामपि गोरसे सरित्प्रवाह इव प्रसरति विकसितमुखाम्भोजां श्रीभोजः
प्राह-‘तत्र विपादेऽपि किं’ हर्दकारणं? इति वृषेण “पृष्ठे सा प्राह-

१२०. हत्या नृपं पतिमवेक्ष्य बुजङ्गद्वृष्टं देशान्तरे विविवशाद्विग्निकाऽसि जाता ।

पुरुं बुजङ्गमयिगम्य चितां ग्रिविदा योचामि गोपगृहिणी कथमद्य तकम् ॥ १५

[*एवमवादीत् । तस्मात्प्रदेशान् ‘मही’ति महीयसी नदीं⁷ प्रादुरास्त् ।]

॥ इति गोपगृहिणीप्रवन्धः ॥

७५) अथान्यदा प्रातेः श्रीभोज उपशिलामैकां लक्षीकृत्य घनुर्वेदमन्विद्वद्भयसंस्तत्कालदर्शना-
र्थमागतेन सितांस्वरवेपथारिणा श्रीचन्द्रनाचार्येण प्रत्युत्पन्नप्रतिभाभिरामतयैचिलयमभिदधे-

१२१. पिदा विदा विलेपं मवतु परमतः कार्षुककीडितेन राजन्! पापाणवेघव्यसनरसिकतां मुञ्च देव प्रसीद । २०

क्रीडियं चेतमद्वा कुलसियसिरिकुलं केलेलक्षं करोप्यि ध्वस्तावारा धरिवी नृपतिलक तदा याति पातालमूलम् ॥

इति तत्क्रितिशायचमत्कृतोऽपि किञ्चिदितिन्य नृपतिरित्युवाच-‘भवता’⁸ सर्वशास्त्रपारगते-
नापि ध्वस्ताथारते यत्पदमपाठि⁹ ततः कमप्युत्पातं सूचयति ।

७६) इतन्थ-‘दाहदूदेशीविराजो राजी देमतिनानी’¹⁰ महायोगिनी । साँ कदाचिदासन्नप्रसवा
सदैव दैवज्ञानिति पमच्छ-‘कस्मिन्सुलग्ने जातः सुतः सार्वभौमो भवती’ति । अथ तैः सम्पद्य- २५
पगम्योवराशियुकेन्द्रस्येषु¹¹ सौम्यश्रेष्ठेषु विपदायगेषु शूरेषु चामुकलग्ने जातः सुतः सार्वभौमो
भवतीलयुक्ताम् । तत्रिवाय निविलप्रसवदिनात् वृद्धं पोडशप्रहरान् यावद्योगयुक्त्या गर्भस्तम्भं
मृत्या नैमित्तिरानिणीते लग्ने कर्णनाभानं सुतमस्तुतं । तद्वर्भधारणदोपादष्टमे यामे सा¹² विपद्या ।

१ B शूरुः । २ BP जातपेषु; Po इवत्तमेषु । ३ BP दोषेषु इव । ४ AD विकरिणी । ५ B मौलिक-
पौल भूमानन्; P वृक्षेत्र समाप्ताद् । ६ AD शुषुप्ती हृषी प्राह । ७ D विषादे विं कारणं । ८ BP वृत्तेनाभिदृष्टा ।
९ एष विं. A नैमित्तिराय मध्यस्तम्भपौलेषु । १० D ‘प्रदेशात् मटीनरी’ इत्येष । ११ Pa शास्त्रानीष एवम-
पौल । Pb शास्त्रानीषीति क्षया दोषविग्रह । १२ एष प्रसवः BPPa जातदेषु वैष्णवयत्तेऽपि । १२ D मौलः; Pb प्रातः-
पौले । १३ Pb नितामवेषेण । १४ अ भूक्तः । १५ A वैष्णव । १६ A एवतः । १७ BPPa जातीदे पदं ।
१८ BP अष्टादशेषो देशानामी राजी, Pa दाहदूदेशेषो देशानामी राजी । १९ AD नातिः । २० BPPa वैष्णवानिषु ।
२१ BP ‘पृष्ठं’ भासि । २२ BP इर्वता । २३ D शातृ । २४ BPPa सारि संयमिनी उर्मी जामाम ।

सुलग्गजातत्वात्पराक्रमाकान्तदिक्कक्रः पद्मिंशदधिकेन *राजां शतेन भूङ्गविश्वमकारिणा कुन्त-
लकलायेन सेव्यमानविमलक्रमकमलयुगलश्चतस्पुः* राजविद्यासु परं प्राचीण्यमावहन् विद्यापति-
प्रमुखैर्महाकविभिः स्तूयतेऽसौ । यथा-[एकदा कर्षुरकविः]

१२२. मुखे हारावासिन्यनयुगले कङ्कणमरो निरन्त्रे पत्राली सतिलकमभूत्पाणियुगलम् ।

अरण्ये श्रीकर्ण! खदरियुवतीनां विधिवशादशूयोऽयं भूपाविधिरहृ जातः किमधुना ॥

{ इत्युक्ते चतुरचक्वर्तीं राजाह- 'यदि विधिवशादेवं भवति तदा घर्णनृपतिः किं दैवाद् यत्र पित्त्वते
वदपि स्याद्' अतोऽचमत्कृतेन राजा किञ्चित्प्रदत्वा विसर्जितः । गृहं गतो भार्यया पृष्ठम्- 'किं दर्श राजा?' स
आह- 'पृच्छस्त्वप्म' । साह- 'यदि विधिसाने वव वशादिति उक्तमभविष्यत् तदा तव सर्वं जदाप्तत्' । ततो
नाचिराजकविः कर्णनृपमस्तवीत् । यथा-

१० [८१] गोपीरीनपयोपराहतमूरः सन्त्यज्य लक्ष्मीपतेः शशे पद्मजशश्चया नयनयोर्विधाम्यति श्रीकृष्ण ।

श्रीमत्कर्णनरेन्द्र! यत्र वलति श्रूयत्तरीपछुवत्तत्र त्रुव्यति भीतिमुखया दारिश्युद्रा यतः ॥

ततोऽतितुष्टेन नृपेण हस्तशृद्धलकपूर्वं उचितदानेन प्रसादीकृतेन मार्गे आगच्छत्तं ज्ञात्वा, भार्या कर्त्तुः प्राह-
'यद्राजा असौ दर्शं समस्ति, इदानीं तदहं सगृहे आनयामी'स्युत्वा गतस्तत्सम्मुहरम् ।

[८२] कन्ये कासि न वेत्सि भामपि कवे कर्त्तुः किं भारती सर्वं किं विहुरासि वत्स सुपिता केनांश्च द्वृंघसा ।

१५ किं नीरं तव मुझ्मोज्जनयनदन्दन्द्वं कथं वर्तसे दीर्घायुमजतेञ्यपिषदर्थो श्रीनाचिराजः कविः ॥

अनेन काव्येन तुष्टः सन् कर्णराजाद् प्राप्तं स्वर्णदुक्तलादि तत्कर्षूकवयेऽदात् नाचिराजकविः । एतत्कर्ण-
नरेन्द्रेण ज्ञात्वा कर्त्तुः आकारितः पृष्ठं च-हि कवे! मुज्ज्मोज्ज इति पदं कसादुदाहृतं भोजे विद्यमाने ॥ स
आह- 'द्वै! रामसेनं हर्ष-मुद्दानयनदन्दन्द्वानें 'मुज्ज्मोज्ज' इत्यूचारं ।' ततो राजा शारं एवद् भोजसा-
मङ्गलपूर्णकृष्ट । }

२० [८३] ईदूर्वीः श्यामलयन्ति सन्तरविहितार्थिः..... प्राङ्मणं शून्ये कल्पतरोत्तले उगमवाः सेलन्ति निर्भीतयः ।

श्रीमत्कर्णनरेन्द्रमानविभवैः पूर्णेषु सर्वार्थिषु स्वन्दोपान्तविषेशिवालग्नमुरी निश्राति रे... कामयुग ॥

७७) 'इत्यं महाकविभिः स्तूयमाननानावदातः [स कर्णनृपः कदाचित्] श्रीभोजं प्रति पश्चानान्
प्राहिणोत्- 'भवदीयनगर्याँ' भवत्कारिताश्चतुरत्तरं शतं प्रासादाः, एतावन्त एव गीतप्रथन्धा भय-
दीपाः, एतावन्ति एव विरद्धानि । अतश्चतुरङ्गयुद्देन द्वन्द्वयुद्देन वा चतुर्युपि विद्यासु वादच्छ्रेन लागेन
२५ वा मां निर्जित्य पश्चोत्तरशतविम्बानां भाजनं भूयाः । नो वाहं त्वां विजित्य सर्वान्विद्यातपिकम्य-
राजाँ' शतस्य नायो भवामि- इति तत्त्वमावविर्मावात् 'ईषत् परिम्लानमुग्मभोजः श्रीभोजः
सर्वेष्वपि प्रकारेणु जितकाशिनं काशिपुराधीशं विम्बान् चं परांजितं भन्यमानस्तानुपरोगृह्यम-
भ्यपर्येयमझीकारयामास । यत्"- भैरववन्त्यां श्रीकर्णेन वाणारस्यामेवमिन् "एमं गतां पूर्णपर्यमार-

स्थाद्वृष्टिकथा कार्यमाणयोः पैर्वाश्रद्धस्तप्रमाणयोः प्रासादयोः यस्मिन्प्रासादे प्रथमं कलशाध्य-
जाधिरोपो भवति तस्मिन्प्रासादेऽपरेण नरेन्द्रेण त्वत्तच्छब्दचामरेण करेणुमधिरूप्य समागम्नव्यम् ।
इत्यं भोजस्य यथारुच्याऽङ्गीकारे कर्णगोचरं गते श्रीकर्णस्तेषु 'सामर्पोऽपि तेनापि प्रकारेण भोजम-
धविकीपुरेकसिन्नेव लग्ने पृथक् प्रारब्धयोरुभययोः प्रासादयोः सर्वाभिसारेण निजप्रासादं 5
निर्मापयन्' सूत्रभृतं प्रगच्छ—'एकस्मिन्नहन्युदयास्तयोरन्तरे कियान् कर्मस्थायोऽ भवतीति निवेद-
यताम्' । अथ तैश्चतुर्दश्यनव्यये तत्र सप्तहस्तप्रमाणा एकादश प्रासादा दिनोदये प्रारम्भ दिनान्ते
कलशपर्यन्ताः कारपित्वा नृपाय दर्शिताः । तया समग्रसामद्या नृपः प्रसुदितचित्तो भोजप्रासा-
दकंपालवन्ये जीवयमाने निजप्रासादेऽनलसः कलशाधिरोप्य निर्णीते ध्वजाधिरोपलग्ने तया प्रति-
ज्ञया श्रीभोजं दृतमुखेन निमध्वयामास । ततः स्वप्रतिज्ञाभङ्गभीरुर्मालवस्तुप्रभुस्तथा प्रयातु-
मप्रभृण्युत्पूर्णीमासीत् । अथ प्रासादध्वजाधिरोपानन्तरम्, अवतीर्णपुराणकर्ण इव श्रीकर्णस्ताव-
द्विरेव वृपैः समं प्रसितः श्रीभोजमध्यपेणयत् । तस्मिन्वसरे श्रीभोजराज्याद्वै प्रतिश्वत्य माल-
वकमण्डलपार्णिघाताय निस्सीमतदीयसीमनगरे^{१०}" श्रीकर्णः श्रीभीममज्ज्वत् । अथ ताभ्यां
नरेन्द्राभ्यां चत्रेणाकान्तो व्याल इव भोजभूपालो विगतिदर्पविषये वभूव । तदा चाकसिके
सञ्चाते भोजवुरुपाटदेऽप्यन्हृत्यमाने सर्वेष्वपि धाटमार्गेषु निजनियुक्तमानुपैः सर्वथा निपित्यमा-
नेऽपरपुरुषप्रवेशो श्रीभीमः कर्णाभ्यर्णवर्त्तिनं निजसान्धिविग्रहिकं दामरं भोजवृत्तान्तज्ञानाय 15
स्वपुरुषेण प्रपञ्च । तेनापि स "पुरुषो गाथामध्याप्य प्रहितः श्रीभीमसभासुपागतः-

१२३. अम्बयफलं सुपकं विष्टं सिदिलं समृद्धमहो पवणो । साहा मन्दैषसीला न याणिमो कजपरिणामो ॥

अनया गाथाया श्रीभीमे तथास्थिते श्रीभोजः सद्विहितपरलोकप्रयत्याणः कृततदुचितधर्म-
कृतः, "राज्यस्यानुशासितं समस्तराजलोकस्य वितीर्य 'मम पञ्चत्वानन्तरं मत्करौ विमानाद्विविधे-
पावित्यादिदृश्य दिवं' गतः ।

[४] [*कमु करु रे पुत्र कलच धी कमु करु रे करसणवाडी । एकला आहो एकला जाइवो हाथपग वेहु झाडी ॥

इति भोजवाक्यं वेश्यया कथितं त्येकानां प्रति । } 20

७०) [*अय तस्मिन् श्रीभोजे दिवसुपेयुषि] तदृत्तान्तविदा कर्णेण तहुर्गमदुर्गभङ्गादन्" समग्रा-
यां" श्रीभोजलक्ष्म्याद्युपात्तायां श्रीभीमेन दामर आदिष्टः—'यच्छ्रीकर्णात्त्वया मत्परिकल्पितं रा-
ज्याद्वै" निजं दिरो वोपनेत्वयम् । इति राजादेशं विधित्सुदृश्विन्नेता पत्तिभिः समं उरुदरे प्र-
विश्य मध्याहकाले प्रसुतं श्रीकर्ण "वान्ये जग्राह । अथ तेन राजा एकस्मिन् विभागे नीलकण्ठविन्ना-
मणिगणाविप्रमुखदेवतायसरे निर्णीतेऽपरस्मिन्नुत्तरादेवं समस्तराज्यवस्तूनि 'खेच्छैकमर्द्दमाद-

१ एवं दिवदेश्याने BPPa 'तयोः' इत्येव । २ Pa पल । ३ Pa यथार्थकरे । ४ 'तेषु सामर्पेऽपि' नामि AD ।
५ D निर्मापयोगत्वं कर्णं पृथग् । ६ D कमोप्त्यापो । ७ AD तेजं पृथग् । ८ AD कलशारोप्यपर्यन्तरः । ९ AD
• चतुर्थः । १० AD संसायः । ११ D पृथग् श्रीभीमेन दामर । १२ BPPa व्यजारोप्यगत्वन्तरः । १३ BP
मरविनः पृथग् । १४ AD वामिवेषयितुः । १५ AD तदा च । १६ BP 'राज्यादेशान्तरीक्षम् । १७ AD नामीदं पृथग् ।
१८ BPPa विमिन् वृत्तल व्युत्पादते । १९ B विमुक्तमासीः । २० B सं उपर । २१ D मिल्लण । २२ एवं दिव्य-
वान्मिनि AD । २३ B इत्यादेशो । २४ P रिमुषेयुषि, Pa युषेविद्वद् । B नामीदं । † कोट्यान्वर्गेत पादो नामि BPPa
मासेषु । * B आदर्ते एव देवतेषु वारयमुग्यते । २५ AD इयंभद्रादेव । २६ BP समप्रभोगतः । २७ D नामि ।
२८ BPPa वोरवेषे । २९ AD सह । ३० A चास्त्रं; D चास्त्रं ।

त्वेऽत्यभिहिते पोषश्चप्रहरांस्तथा स्थित्वा तुनः श्रीभीमराजादेशादेवतायसरमादाप श्रीभीमा-
योपायनीचकारे । अथैतत्प्रयन्त्यसद्ग्रहकाच्युगमं यथा-

१२४. पञ्चाशद्वस्तमाने गिरभवनपुणे तुल्यप्रक्षेपे प्राश प्राप्त्ये यस्त्रीमं भवति हि कलशारोप्यं तर रागा ।

अन्येन च्छवयालव्यजनविरहितेनाम्युपेतव्यमेवं संशादं भोजराजा अप्यविमुहरमतिः कर्णदेवेन जिग्ने ॥

५ १२५. भोजे रात्रि दिव्यं गतेऽतिशिलिना कर्णेन धारापूरीभूमिं यश्चयतोपहृष्य नृपतिर्भीमः सहायीहृवः ।

तद्वत्येन च दामरेण लघृहे चन्द्रीकृतकर्णतो हृषी मण्डपिङ्गा गणादिपशुदः श्रीनीलकर्णेश्वरः ॥

१२६. कविषु कामिषु योगिषु भोगिषु द्रविणदेषु सतामुपकारिषु ।

धनिषु धनिषु धर्मयनेषु च कितिरते नहि भोजस्तो नृपः ॥

१२७. ईत्यार्थः कल्पद्रुम इव स्मिति श्रासिगदेशेषदास्त्वयः साक्षाट्काचस्पतिरिव जगद् इच्छनानाप्रयन्त्यः ।

१० राधावेष्टर्तुन इव निरातस कीच्योत्क्षिच्चराहृतः श्रीगरनिर्लैः सर्पयां भोजराजः ॥

॥ इति भोजस्य विविधाः प्रयन्त्या अद्यशेषो अपि 'यथाशुनं मन्तव्याः' ॥

॥ इति भीमेश्वराद्वाचार्यविरचिते प्रयन्त्यचिन्तामणी भीमोजराज-भीमीमभूपशोः

नानापद्मार्यज्ञेनो नाम द्वितीयः प्रसादः ॥ मंगल ४६४ ॥

[८. सिद्धराजादिप्रबन्धः ।]

७९) अथ कदाचित्तुर्जरदेशो अवग्रहनियृहीते^१ वर्षणे विशोपकदण्डाहिदेशत्रामकुडुम्बिकेषु राज-
देपविभागनिर्वाहाक्षमेषु^२ तत्रियुक्तव्यापारिभिः सकलोऽपि^३ सजातवित्तो^४ देशलोकः^५ श्रीपत्तने
समानीय भीमभ्रापाय^६ न्यवेवेत् । ततः^७ कदाचिद्विहसुखे श्रीमूलराजकुमारस्तत्र चक्रममाणो
नृपपतिभिः सत्यनिदानीभूतदानीसंस्वन्ये व्याकुलीक्रियमाणं सकललोकमालोक्य पारिपा- ५
न्यिकेष्योऽविधिवत्वृत्तान्तः कृपया किञ्चिदश्वुभिंश्चलोचनो वाहवाहाल्पां तदतुलया^८ कलया नृपं
परितोष्य^९ वरं वृपाप्वेति नृपादेशमासाद्य^{१०} 'भाण्डागार एव वरोऽयमस्तु' इति विज्ञापया-
मास । राजा-'किमिति अथुनां न याचसे?' इत्युक्तः 'प्राप्तिप्रमाणभावाद्-इत्युदीरयन् भृत्यां
निर्वन्धपराद् धराविपात्तेषां कुदुम्बिनां दानीमोचनवरं यथाचै ।'^{११} ततो हर्षवाच्याविललोचनेन
राजा" तत्त्वेति प्रतिपद्य भूयोऽन्यस्यर्थस्वेदैभिहितः । १०

१२८. क्षुद्राः सन्ति सहस्रशः समरणव्यापारमायोध्याः स्थायों यस्य परार्थ एव स पुमानेकः सवामग्रणीः ।

दुःप्रोदपरूपाण्य पितृति सोतःपर्ति वाङ्मो जीमूतस्तु निदाघसमृतजगत्सन्दापिविच्छिन्नये ॥

इति काञ्चीवर्धवलेन नियृहीतप्रभूतलोभस्ततो भूयः^{१२} किमप्यप्रार्थयं मानो मानोव्रततया *स्वसौध-
भृद्यमच्यास्य धन्धनविमोचितैस्तैलोकैः स दैवतवद्वुपास्यमानः स्वस्थानस्थितैश्च* स्तृघमानस्तृतीये-
इहनि तदीपसन्तोपदर्शां श्रीमूलराजः स्वलोकं 'जगाम । तच्छोकाम्बुधौ सराजलोको राजा, स १५
च पूर्वमोचितलोकश्च निमग्नविश्वरेण चतुर्वैर्विषयवोधयलादपृष्ठशोकशङ्खश्चक्रे ।

अथ^{१३} द्वितीये वर्षे वर्षावलाद् इर्पिभिः "कर्षुकलोकैनिष्पद्वेषु समस्तसस्येषु व्यतीततद्वर्पयो
राजदेवविभागो" प्रदिश्यमाने राजि चानादद्वाने सति तैर्कृतरसभा मेलिता । तत्र सभ्यानां
उक्षणमेवम्-

१२९. न सा सभा यत्र न सन्ति वृद्धा वृद्धा न ते ये न वदन्ति धर्मम् । २०

धर्मः स नो यत्र न चाति^{१४} 'सर्वं सर्वं न तद्वृत्तकानुविद्धम्' ॥

इति निर्णयात् ईसम्यैर्गतवर्पतद्वर्पयोर्दीर्नीं राज्ञौ धारिता^{१५} । ततस्तेन द्रव्येण कोशाद्रव्येण च श्रीमू-
लराजः कुमारत्रेयसे नव्यज्ञिपुरुपाप्रासादः श्रीभीमेन कारितः ।

८०) 'अनेन श्रीपत्तने श्रीभीमेश्वरदेव-भट्टारिकाभीस्त्राणीप्राप्तादौ कारितौ । सं० १०७७

१ AD विन्दुर्भाणी एषै । २ गत्तीर्णं पदे AD । ३ AD निर्वाहामो देशलोकः । ४ AD न सन्ति पृते सदाः ।
५ BP भृत्याः । ६ नाति BP । ७ BP मृद्याजः । ८ AD 'दीर्घी' नाति । ९ BP परिगत । १० AD भृ-
द्याजः । ११ AD नुस्यतः । १२ B 'पोतिः सत्रः P परितोन्य प्रकाशः । १३ BP आदेषे धृते । १४ P विना सत्य-
स्य । १५ D कुदुम्बिकानां । १६ 'सायं ततो' स्याने BP प्राचमाने । १७ BP नाति । १८ D भूयोऽप्ययेषो । B
प्राप्येषो । १९ BP 'सुकृपविषयवलेन । २० BP लोमभूतः । २१ A 'भूयः' नाति । २२ D 'पृथ्येषादीर्णि ।
* पृथ्येषादीर्णादस्याने AD 'सत्यावसामादः । तदेव धृतिर्वैः इतेव यातः । २३ नातोदे AD । २४ B स्वांकस्तुप्रयागमः
P स्वांकुरतर्त्यै । २५ BP आवानिति वर्ते । २६ AD कुदुम्बिकैर्वैरेवर्षालयात् । 'इर्पिभिः' पदं नाति । २७ AD 'पृथ्येषाविकानां ।
२८ AD प्रविद्यतः । २९ 'वै' स्याने 'सायं' BP । ३० BP न लसमति । ३१ पृथ्यिष्टानांतर्वापात्याने BP आदेषे
'कर्षुकैर्वैरेवयसानीं धृतीं (ते B) सायंत्र धृतिर्वै भृत्येषामव्येषं धीर्ममूः श्रीमूलराजः' प्राप्तातः पादः ।
३१ D धृतीं । ३२ D रातः । ३३ D प्राप्तिः । ३४ इर्वं वंदिः BP नाति ।

प्रारम्भ वर्षे ४२, मास १०, दिन ९ राज्यं कृतम् । (B P आदर्शो-संवत् १०७८ पूर्वं श्रीमीमेन वर्षे ४२ राज्यमकारि ।)

८१) *श्रीउदयमतिनाश्या^१ तद्राज्या [नरवाहनखंगारसुतयाः] श्रीपत्ने सहस्रलिङ्गसरोवराद-प्यतिशायिनी नव्या वापी कारिता ।

५ ८२) अथ सं० ११२० चैत्रवदि ७ सोमे हस्तनक्षत्रे भीनलग्ने श्रीकर्णदेवस्य राज्याभिषेकः संजातः ॥

८३) इतश्च शुभकेशिनामा कर्णाटराहू तुरगापहतोऽब्द्यां^२ नीतः कुञ्चापि पश्चलवृक्षच्छायां सेव-
मानः प्रत्यासंन्वे दावपाथके कृतज्ञतया विश्रामोपकारकारिणं तमेव तरुमजिहासुसेनैव सह तस्मिन्
दहने ब्राणानाहुतीचकार । तैतस्तत्त्वद्युर्जयकेशिनामा तद्राज्ये सचिवैरभिपित्तः । क्रमेण तत्सुता
१० मयणल्लदेवी नान्नी^३ समजनि । सा च द्विवभक्तैः^४ सोमेश्वरनामनि यृहीतमात्र एवैति पूर्वं भवमसा-
र्पीत्-^५ यदहूं प्रारम्भवे ब्राद्याणी द्वादशमासोपवासान् कृत्या प्रदेकं द्वादशावस्तूनि तदुद्यापने दत्त्वा
श्रीसोमेश्वरनमस्यकृते प्रसित्या^६ वाहुलोडनगरमागता, तत्कर्त दातुमक्षमाऽग्रतो गन्तुमलभ-
माना तक्षिवेदादहूं “आगामिनि जन्मनि”^७ अस्य करस्य मोचयित्री भूयासमि^८ ति कृतनिदाना विष-
यात्र कुले जाते^९ ति पूर्वं भवस्मृतिः । अथ वाहुलोऽवकरमोचनाय सा^{१०} गूर्जरेश्वरं प्रवरं वरं कामय-
१५ माना तं वृत्तान्तं पित्रे^{११} निवेदयामास^{१२} । अथ^{१३} “जयकेशिराजा तं व्यतिकरं ज्ञात्या तेन श्रीकर्णः”^{१४}
स्वप्रधानैः स्वसुताया मयणल्लदेव्या अद्वीकारं याच्यते सा । अथ श्रीकर्णं तस्याः कुरुपताश्रयणा-
दुदासीने सति तस्मिन्नेव^{१५} निर्वन्धपरां तामेवं मयणल्लदेवीं पिता स्वयंवरां प्राहिणोत् । अथ श्री-
२० कर्णनृपो गुसवृत्या स्वयमेव तां कुत्सितरूपां निरूप्यं सर्वथा निर्दंदर एव जातः । ततोऽष्टमिः^{१६}
सहचरीभिः सह नृपतिहृत्याकृते मयणल्लदेवीं प्राणान् परिजिहीर्णु मत्या” श्रीकर्णजनन्या^{१७} उदय-
२५ मतिराज्या तासां^{१८} विषदं^{१९} द्रष्टुमक्षमया ताभिः सह प्राणसङ्कलप्यत्वे । यतः-
१३०. सापदि तथा महान्तो न यान्ति सेदं वया परापत्तु । अचला निवोपहतिषु प्रकर्षते भूः परम्पराने ॥
१३१. तैदनन्तरं भद्रोपहृष्टस्थितमवगम्य भावृभक्ष्या तां परिणीय श्रीकर्णः पश्चादृष्टिमात्रे-
पापि न सम्भावयामास^{२०} ।

८४) अन्यदीर्घं कस्यामप्यधमयोपिति साभिलापं दृपं मुक्तालमधी कश्चुकिना विज्ञाप तद्रोपया-
२५ रिणीं^{२१} मयणल्लदेवीमैव^{२२} कातुलातां रहसि प्राहिणोत् । तामेव मित्रं जानता नृपतिना सप्रेमसुउग्य-

प्रकाशः]

मानायास्तथा आधानं समजनि । तदा च तया सङ्केतशापनाय नृपकरान्नामाहितमहुलीयकं
निजाहुलयो न्यधायि । अथे प्रातस्तहुर्विलसितात् तदृष्टचान्तमनवृद्ध्यमानाय' प्राणपरित्यागो-
यताप नृपतये स्वार्थस्तत्त्रभमयपुत्तलिकालिङ्गनमिति निवेदिते प्रायश्चित्ताय तथैव चिकीर्षवे-
स मन्त्री पथावद् अवदत् ।

(अथ P प्रती निजलिखितः श्लोका विद्यन्ते-)

[८६] गुरुणा विक्षेणायं यथैव पिवृत्यन्निभः । आकारेण तु रम्येण भूपोऽभूदात्मभूसद्वः ॥

[८७] विना कर्णेन तेन त्वीनेत्राणां न रतिः कच्छित् । इतीव जहिरे तेषामनुकर्णं ग्रृह्णतयः ॥

[८८] तत्कर्णार्थुनवैर्यं पूर्वं कर्णः सर्वनिभः । अर्जुनं गमयामास यशो देशान्तराणि यः ॥

[८९] अभिराम्यगुणात्मापो रसो ददरथादिव । वृनुः श्रीजयसिंहोऽसाज्ञायते स जगज्ञी ॥

८५) सुलग्ने तथ्य जातस्य सुनोर्धपतर्जयसिंह इति नाम निर्ममे । स वालखित्वार्थिकः सब-१०
योनिः कुमारै रमामाणः सिद्धासनमलंकके । तेंदु व्यवहारविशुद्धं विशृशता नृपेण एष्टैः
नैमित्तिकैस्तस्मिनेवाभ्युदयिके लग्ने निवेदिते राजा तदैव तस्य सुनो राज्याभिपेकं चकार ।

८६) सं० ११५० वर्षे पौपवद ३ शनौ श्रवणनक्षत्रे वृपलग्ने श्रीसिद्धराजस्य पद्माभिपेकः ।

८७) शतं तु, आशापद्मीनिवासिनमाशाभिधानं भिल्लमभियेण्यन् भैरवदेव्याः शकुने जाते
तथ फोट्रयमिथानदेव्याः प्रासादं कारपित्या, खड्गलक्षणधिपं भिल्लं विजित्य तद्य जयन्तीं देवीं १५
प्रासादे स्थापित्वा कर्णं व्यरदेवतायतन्त तथा कर्णसागरतदागालंकृतां कर्णीवतीपुरं निवेदय स्वयं
तथ राज्यं व्यक्तां । श्रीपत्तने तेन राजा श्रीकर्णमेष्टः प्रासादः कारितः ।

८८) सं० ११२० वैश्रसुदि ७ प्रातस्य सं० ११५० पौपवदि २ यावत् वर्षे २०, मास ८, दिन २१^१
अनेन राजा राज्यं वृन्मः ।

८९) अथ दिवं गते श्रीकर्णं श्रीमद्वयमतिदेव्या भ्राता मदनपाठोऽसमञ्जसवृत्त्या वर्तते । तेन २०
ईतिलभिधानो राजवैयो दैवतवरलघ्यमसादः सकलनामारिकैलोकैस्तकलाहृतहृदयैः^२ काश्चन-
दानपूज्याऽन्यर्चर्यमानः कदाचित्तेन "निजसंख्ये समानीय" कृतके^३ शरीरामपे नाडीदर्शनात्पव्य-
सम्प्रतां निवेदयमिदमुचे (तेन मदनपाठेन व्यभाषे) 'तदेव नास्तीति । *ततस्त्वं मया रोगमती-
कारणं नाशारितः, किं तु पञ्चदानेन बुधुभाषतीकारार्थमेव* । ततो द्वार्तिंशत्सहस्राण्युपनये^४-
त्पुष्टत्वा तेन "पन्दीगृहस्तत्पंति निर्मितिभिरुप्रहृष्टमप्रहीत्-पवदः परं प्रतीकारनिमित्तं नृपते: २५
साध्यमपहृप्य नान्यप्र गन्तव्यमिति । ततः परमातुराणां प्रश्नवणावलोकनायिदाननिकित्सतं
तुर्याणः केन्तरि भार्याविना गृहस्ताभ्यपित्यकित्सत्कौशलं वृशुत्तुना वृप्य भग्रथवणे दर्शिते सम्यक्
गदप्रमाण्य शिरोपूननपर्यकं "पृष्ठनः" स यहुमादनेन मोटिते इत्यस्मै सत्यरमेय तेलनाली दीप-

१) HP कृतिः । २) कार्येणार्थं AD : ३ AD • ददाः वृत्तिः । ४) 'सार्वे' गाम्याने AD 'ज्ञातं स्वायपित्तं पद्मच-
दे' एव ददाः । ५) वृष्टप्रसादः । ६) वृष्टप्रसादः । ७) वृष्टप्रसादः । ८) वृष्टप्रसादः । ९) वृष्टप्रसादः ।
१०) वृष्टप्रसादः । ११) वृष्टप्रसादः । १२) वृष्टप्रसादः । १३) वृष्टप्रसादः (D 'पार्व' नाम) प्रसादविषयः ।
१४) वृष्टप्रसादः । १५) वृष्टप्रसादः । १६) वृष्टप्रसादः । १७) वृत्ति 'तेज वर्णानुप्राप्त' BP : १८) वृष्टप्रसादः ।
१९) वृष्टप्रसादः । २०) वृष्टप्रसादः । २१) वृष्टप्रसादः ।

ताम्, नोचेद्विपत्स्यते' इति तवित्ते चमत्कारमारोपयामास^१ । अन्यदा' राजा निजश्रीवार्याधा-
प्रतीकारं षटः । 'पलद्वयप्रमाणस्तुगमदपङ्कलेपनेन अर्तिर्हेष्टाम्यतींति त्याहते तथाकृते श्रीवा-
सज्जीभूता । ततो' न्वपुखासनवाहिना पामरेण नरेण श्रीवार्याधाप्रतीकारं षटः । 'धृष्टकरीरमूल-
रसेन तन्मृतिकासहितेन लेपं विघेही'व्यभिदधे' । ततो राजा किमेतदिति षट्टे' 'देशकालै वलं
५ श्वरीरप्रकृतिं च विमृद्ययायुवेदविदा चिकित्सां क्रियत' इति विज्ञप्यति स्म^२ । अन्यदा धूतैः^३ कैश्चि-
देकसंभव्या पृथक् पृथक् युगलीभूय तत्प्रथमयुगलिक्या *विपणिमार्गं 'किमव यूयं वृप्यपट्टव'
इति षटः । द्वितीययुगलिक्या श्रीमुज्जालस्वामिप्रातादसोपाने षटः । तृतीययुगलिक्या तु राज-
द्वारे, चतुर्थयुगलिक्या द्वारतोरणे तथैव । ततो भूयो भूयः षट्टोत्पन्नेन शङ्कादृपणेन* तत्कालो-
त्पन्नमाहेन्द्रज्वरखयोदशो दिने विपेदे स वैद्यः ।

॥ इति ठ०^१ लीलावैद्यप्रबन्धः ॥

८९) ^१अथ सान्तुनामा मन्त्री अन्यायकारिणं तं मदनपालं कालमिव जिधांसुः कदाचित्कर्णा-
द्वजं गजेऽधिरोप्य राजपाटिकाव्याजेन तद्वहे नीत्वा पतिभिस्तं व्यापादयामास^२ ।

९०) अथ कश्चिन्मरुमण्डलवास्तव्यः श्रीमालवंश्य^३ उदाभिधाने वणिकः प्रावृद्धकाले प्राज्याज्य-
क्रयाय निशीथे व्रजन् कर्मकरैरेकसामात्केदारादपरस्मिन् जलैः^४ पूर्णमणे तान् के यूयमिति प्रमच्छै ।
१५तैः 'वयमसुकस्य कामुका' इत्युक्ते^५ 'ममापि कापि सन्तींति षट्टद्वन्, तैः 'कर्णवल्यां सन्तींत्यभि-
हिते स सङ्कुद्ध्यस्तत्र गतः'^६ । वायदीयजिनायतने विपिवदेवाक्षमस्तुर्वद् कर्यापि लादिनाइन्नी-
छिन्पिक्या आविक्या साधर्मिकत्वांद्वन्दे । तथा 'भवान् कस्यातिथिरित्युदीरितः, 'वैदेशिकोऽ-
हमिति भवत्या एवातिथिरिति तद्वाक्षये^७ श्रुते तं तथा सह नीत्वा कस्यापि वणिजो गृहे कारि-
ताश्वपाकेन भोजयित्वा निर्मापितकायमाने^८ निजतलके तं निवास्य कालक्रमेण तत्र^९ सम्पन्न-
२० सम्पदं इष्टिकाचितं गृहं चिकीर्षुः खातावसरे निरचर्विं शेवधिमधिगम्य तामेव क्रियमाहृय
समर्पयन् तथा निपिद्धः तत्प्रभावेण ततः प्रभृति स उद्यनममन्त्रीतिं नामा प्रमथेः ।

९१) *तेन कर्णवल्यामतीतानागतवर्त्मानचतुर्विशतिजिनसमलङ्घतः श्रीउदनविहारः कारितः ।

९२) तस्यापरमातृकाश्वत्वारः सुताः^{१०} चाहडदेव-आम्बड-चाहड-सोलाकौ-नामानोऽभूवनैः ।

१ BP ०मरोपयन् । २ BP कश्चिद् । ३ P ०दीर्घाया । ४ D 'विरोऽर्थिः' । १-१ एतद्वार्तार्गतपादस्याने BP
'उदधारे कियमाती' इत्येव पाठः । ५ D रिवेषाधा०; BP 'शायो' इत्येव । ६ D पृष्ठक०; A नाति । ७ BP ०गिराय ।
२-२ एतद्वार्तायस्याने BP 'भूयो राजा उपलभ्यतीकारे' एतद्वायम् । ८ नाति BP । ९ BP विक्षितं । १० A विश-
पयत् । ३-३ यत्पाठास्याने BP 'विज्ञप्तं गृहं याति तद्वगरनिवासिः धूतैः' । * एतद्वन्तर्वदं पादश्याने BP 'प्रण-
मर्त्तमाकाशिकं युरुरादृतं षटः । द्वितीययुगाटिक्या द्वारतोरणे, चतुर्थयुगाटिक्या तिपणिमार्गं, चतुर्थयुगाटिक्या भीमूलतामा-
सादे भूयोभूलक्षदेव षट्टयमानः दाङ्गाविपदेवेणवे^{११} पृष्ठादेव पाठः प्राप्यते । ११ DP '३०' नाति । + एतर्यास्याने AD
'अप सान्तुर्मृतिग्न वायाप्रातानिगतिकाश्वाजेन श्रीकर्णाङ्गजेनान्यायापकारी मदनपालो श्वापातिरितः' इत्येव पाठः । १२ D देशः ।
१३ BP पूर्वमानोऽप्तमोमिः । १४ BP पृष्ठक० । १५ BP इत्यमिहिः । १६ BP गाया । १७ BP भासेतपदं । १८ A
तो यन्दे । १९ 'तद्वायस्ये श्रुते तं' स्याने AD 'पद्म' हित्येव पृष्ठम् । २० नात्येवतपदं AD । २१ 'तं निवास' स्याने AD
'वासि गृहे निवासितः' । २२ AD नाति । २३ BP उद्यनमाना मंद्री । † इतोऽपि Dd भासेते विश्वर्गते उतिर्हं प्राप्यते-
'हृत्यमदमानि देव कौवलं सर्वं दायानामपि सेवते परान् ।
द्वयेऽपि नाति द्वितीयेऽपि विपेदे पियः प्रधारो न विचारोचरः ॥'

२४ BP ०मतीत-वर्त्मान-मरिपय० । २५ BP पुत्राः । २६ P सोऽपुक्; B सोऽपु । २७ नाति P ।

९३) अथान्यसिद्धवसरे सानूनामा महामालः करेणुकन्वाधिरूढो राजपाटिकार्यं ब्रजम् व्याख्यतः देवं कारितसान्तूपसहिकार्यां देवनमधिकीर्पया तत्र प्रविशन् चारवेद्यास्कन्धन्यस्त् हस्तं कमपि चैत्यवासिनं सितवसनं ददर्श । ततो गजाद्वरुद्धं कृतोत्तरासङ्गः पश्चाङ्गप्रणामेन तं गौतमपिद्य नमथ्यके^१ । तत्र क्षणं स्थित्वा भूयस्तं प्रणम्य प्रतस्थे । ततः^२ स लज्जयाऽयोवदनः पातालं प्रविविक्षुरिच तत्कालं सर्वमेव परिहृत्य मलधारिश्रीहेमसूरीणां समीपे^३ उपसम्पदमादाय^५ संयेगरसर्वपरिणैः श्रीदातुडये गत्वा द्वादशगवर्पीणि^४ तपसेषे^५ । कदाचित्स मध्वी श्रीशुभुज्ञये देवपादानां नमस्करणाश्रोपगतोऽष्टद्वृष्ट्यमिव तं मुर्नि प्रणम्य तत्त्वरित्रविविचित्रितमनास्तदुगुरुं शुलादि प्रपच्छ । 'तत्त्वतो भवानेव गुरुरिति'^६ तेनोक्ते कर्णां पाणिभ्यां पिधाय मैवं मादिशैल-ज्ञातवृत्तयैवं विज्ञप्तयस्तेन ग्रोचे^७—

१३२. लो जेण सुदृशममिमि ठाविओ संजाएण गिहिणा वा । सो चेव तस्य जायद् धम्मगुरु धम्मदाणाशो ॥ १०
इति तस्मै भूलवृत्तान्तं निवेद्य तस्य दृढधर्मतां निर्ममे ।

॥ इति सञ्चिसान्तूष्टिधर्मताप्रबन्धः ॥

९४) अथानन्तरं^१ श्रीमयणलुदेव्या जातिस्मरणात्पूर्वं भववृत्तान्ते श्रीसिद्धराजस्य निवेदिते^२
श्रीमयणलुदेवी^३ श्रीसोमनाथयोग्यां सपादकोटिमूल्यां हेममर्यां पूजां सैहादाय यात्रायां^४ प्रस्त्यिता^५
याहुलोटनगरं सम्प्राप्ता । पश्चकुलेन कदर्थ्यमानेषु कार्पटिकेषु राजदेवविभागस्याप्राप्त्या सवाप्तं^६
भैष्णानिवर्त्यमानेषु भयणलुदेवी हृदयाददीर्घान्ततद्वैष्णवा स्वयमेव पश्चादव्याहुटन्ती औन्तराऽन्त-
रीन्तेन श्रीसिद्धराजेन विज्ञातीं-स्वामिनि ! अलमसुना सम्प्रमेण । कृतो हेतोः पश्चान्निवर्त्यते^७
इति राजोक्ते^८ 'शैदेव सर्वथाऽप्यं करमोक्तो भवति तदैवाहं श्रीसोमेश्वरं प्रणमामि नान्यथेति ।
पिं चानःपरमश्चनीरयोर्नियमम्ब्र' । इति^९ श्रुत्वा राजा पश्चकुलमाकार्यं तत्पृष्ठस्याङ्के द्वासप्तति-
स्यक्षानुत्पयमानान् विशृद्य तं पदकं विदार्थं भातुः श्रेयसे तं^{१०} करं सुवृत्त्या करे जलसुखुलं सुञ्चितं^{११}
मा । ततः^{१२} श्रीसोमेश्वरं गत्वा तथा सुवर्णशूलया देवैमन्यर्थ्यं तुलापुणगर्जदानादीनि महादा-
नानि^{१३} दद्यान्^{१४} मत्सेष्वदीर्घी कापि नाभूत्तं भविते ते दर्पोध्माता निशि^{१५} निर्भरे प्रसुसा^{१६} । तपस्विवेप-
पारिणा तेनैव देयेन जगदे^{१७} 'दैव भद्रीपदेवकुलमध्ये काचित्कार्पटिकनितम्बिनी यात्रायै आया-

१ AD राजा । २ जानि AD । ३ AD चार । ४ BP राजु । ५ BP राम्ब । ६ AD संर्ण । ७ A
राम्बान्तरं । * लोःपे D दुको निपाता: रंगोःपिता राम्बन्ते । ** ए ते सेनान्ये रामानाः प्रतिसोपिताः । मुनिवित्यविति-
ते रे तिकं भातः प्रशासनि निपात्येषु । मनिर्भृत्य चामानं रामायगामानुपीय भव ॥

मंगराषादालाग्नि भग्नो भारमि^{१८} पूरा । मुपामार्पिदं दद्यातः ते भावाद्युषे ॥

८ BP राजू । ९ BP राम्बे । १० AD संर्णे । ११ BP राम्बान्तरालाग्नि । † दृष्टिहास्तर्गतः भातः A भ्रमी
ए भावाने । १२ HP भान्तेत्तराल । १३ AD 'पां' जानि । १४ 'यात्रायां प्रविता' जानि BP । १५ BP 'राम्बू'
** । १६ DJ 'राम्बान्तराल । १७ Po राम्बान्तरालभू । P भग्नायीभू । १८ P विश्वराषेषु । १९ BP रामायिदेषु ।
११-१ राम्बान्तरालभावे AD 'भ्रामति भावं [ए A] शूलमि भावदेवति' इत्येवं भातः । २० D 'ते' भाविति ।
२१ BP राजु । २२ P राजा । २३ A भीमेश्वराम । २४ D 'पां' जानि । २५ D शुभामि; A जानि । २६ दृष्ट-
र्गते D दुको निपाता: लोःपे निपाते; रंगोःपिता राम्बान्तराल भूषिते दृष्टिहास्ति-
ते भावाने । दृष्टि भावान्तराल भूषिते निपात्येषु । दृष्टि भग्नायीभू दृष्टिर्विदं तिष्ठति ॥

दृष्टि भग्नायीभू भग्नायीभू भग्नायीभू भग्नायीभू ॥

२७ D भग्नायीभू । २८ D भग्नायीभू । २९ AD रुक्षा ।
३० D भग्नायीभू । ३१ D भग्नायीभू । ३२ AD रुक्षा ।

ताशस्ति । तस्याः सुकृतं याचनीयं त्वया' इत्थमादिश्य तिरोहिते तस्मिन् राजपुरुषैर्विलोक्य समानीता । तस्मिन्पुण्ये याचितेऽन्यददाना कथमपि 'याचायां किं व्यर्थीकृतमिति पृष्ठा' सती सा प्राह—'अहं' भिक्षावृत्त्या योजनशतं देशान्तरमतिक्रम्य श्वसने दिवसे कृतीयोग्यपासा पारणकदिने कस्यापि सुकृतिनः अकृतपुण्यां पिण्याकमासाय, तत्खण्डेन श्रीसोमेश्वरमभ्यर्थ्य, ५ तदंशमतिथये दत्त्वा खर्यं पारणकमकार्पिम् । भवती पुण्यवती, यस्याः पितृभ्रातरौ पतिसुतौ च राजानः, या^१ त्वं वाहुलोडकरं "द्वासस्तिलक्षान् मौचपित्या सपादकोटिमूल्यया पूजया" *अगण्यपुण्यमञ्जियन्ती मदीयपुण्ये कृशेऽपि कथं लुभ्यासि ?* । यदि^२ न कृप्यसि तदा किञ्चिद्वृच्छ्म । तत्त्वतस्तत्वं पुण्यान्मधीयं^३ पुण्यं महीतले^४ महीयः । यतः—

१३२. सम्पत्ता नियमः शक्तौ सहनं यौवने व्रतम् । दारिण्ये दानमत्वल्यमपि लाभाय भूयसे ॥

१० इति युर्गियुक्तेन वाक्येन तंस्या गर्वं निराचकारैः ।

१५) सिद्धराजसत्तु समुद्रोपकण्ठवर्ती एकेन चारणेन-

१३३. को जाणह तुह नाह चीतु^५ तुहालउं^६ चक्कवद । लहु^७ लंकह लेचाह मग्गु निहालइ करणउत्तु ॥

इति स्तूपमाने, द्वितीयेन चारणेनोक्तम्-

१३४. धाह^८ धौंजह पाय^९ जेसल जलनिहि ताहिला । तइं जीर्तां सवि राय एकु^{१०} विभिषणु मिल्हि महु ॥

१५ १६) एवं तत्र याचायां व्याप्तेते^{११} राज्ञि, 'छलान्वेषिणा यशोर्वर्मणा मालवकभूषेन गर्जरदेशो' उपद्रूप्यमाणे सान्तूसचिवेन 'त्वं कथं निवर्त्तसे?' इति ग्रोक्तैः, स^{१२} राजा—'यदि त्वं स्वसामिनः सोमेश्वरदेवयाचायाः पुण्यं ददासी'त्युदीरितस्तत्त्वरणौ प्रक्षालयं तत्करतले तत्पुण्यदाननिदानं जलचुलुकं^{१३} निक्षिप्य तं^{१४} राजानं निवर्त्तयामास । श्रीसिद्धराजः पत्तनमुषेल्य सान्तुमालविकन्द्रय-योस्ते वृत्तान्तमवयुध्य कुदं^{१५} वृषं मत्री एवमादीत्-'सामिन्! यदि^{१६} मया दत्तं त्वं सुकृतं याति, २० तंदा तस्य सुकृतमन्येपासीपि पुण्यवर्तीं सुकृतं मया भवते प्रदत्तमेवं । अथापर^{१७} येन केनाप्युपायेन परचक्रं स्वेद्वो प्रविशद्रक्षणीर्यैवेति एवं^{१८} वदता तेन नृपतिस्तुनीतः । तत्स्तेनैवामयेण मालय-भण्डलं प्रति^{१९} प्रतिष्ठासुः सचिवान् शिलिपनश्च सहस्रलिङ्गर्थमस्यानकर्मस्याये नियोज्य, त्वरित-गत्या तस्मिन्निष्पत्यमाने दृपतिः प्रयाणकमकरोत् । तत्र जीयकारपूर्वकं द्वादशवार्षिके विग्रहे सत्तायमाने^{२०} सति कथंचित् धारादुर्गभङ्गं कर्तुमभूषणः^{२१} 'अय मया धारा भद्रानन्तरं भोक्तव्यमिति

१ पाठोक्तव्य । २ P याचमाने । ३ BP अद्युपाता । ४ BP मया । ५ BP गतानि । ६ BP जातान्तर । ७ AD दान्तन । ८ P दिने । ९ D नाति 'शहृतपुण्या' । १० 'या वं' नाति BP । ११ 'गाहुडोडद्वा' इत्येव AD । १२ BP सप्तर्ण्याः । *१३ तप्तवादस्याने AD 'श्रीसोमेष्वरं धूतिवदी ता कथं मदीयपुण्यवद्वेष्टाति' प्राप्ताः पाठः । १३ AD परं पदि । १४ BP मम । १५ P नाति । १६ 'युक्ति' माति D । १७-१८ संवदं गर्वं विसरार्म BP । १९ D वीत । २० D ए एवेदि । २१ D छट । * असा: पंसया: स्पाने D उत्तरे 'इत्यादी स्तूपमानोभवत्' । दृश्य यात्यं दिष्टते । अरिमा गायात्रि तत्र नाति । २२ AB 'वं' इत्येव । २३ A गाहृद । २४ A पाह । २५ BP लहैया । २६ P एका B एकु । २७ AD व्याहृते । १-१ यत्प्रदानान्तरेवतादस्याने BP 'मालवकराजा इष्टानेषिणा गृहेष्टद्वे' एव पदः । २८ BP विक्रतः । २९ BP नानि 'स राजा' । ३० BP 'बुलुकं । ३१ 'तं राजात्' स्पाने BP 'मालवराजां यदोदासीं' । २-२ यत्प्रदानान्तरेवतादस्याने A प्रवो 'ततः भीषणतर्णं श्रीसिद्धराजां तदुत्तानायामेन तुरं' । D उत्तरे च 'ठाः श्रीसिद्धराजान्तर्णायामेन तुरं' स्पाने । पाठः प्राप्ताः । ३२ BP माति । ३३ AD पदः । ३४ AD ततः । ३५ पूर्वं शास्त्रा: BP च सन्ति । ३६ P 'पूर्वं' नाति । ३७ AD नाति 'अपापां' । ३८ BP *विकारीणः । ३९ 'पूर्वं' च AD । ४० BP 'ततः' नाति । ४१ D 'प्रति' नाति । ४२ P दृतर्दं नाति; D चतुर्य । १-१ पदः द्वान्तरं ताप्तं च विषते AD ।

प्रकाशः ३

कृतप्रतिशो दिनान्तेऽपि तत्कर्तुमशमतया सचिवैः काणिक्यां धारांयां भज्यमानायां पत्तिभिः परमाराजपुद्रे विपद्यमाने-इत्थं प्रपञ्चात् दृष्टः प्रतिज्ञामासूर्यं अकृतकृत्यतया पश्चादव्याखुटितु-मिच्छुसुजालसचिवं ज्ञापयमास । तेनापि त्रिकचतुष्कच्चत्वरप्रासादेषु निजपुरुषान्नियोज्य धारा-दुर्गभज्यवातीर्यां क्रियमाणायां तद्वासिना केनापि पुरुषेण 'दक्षिणप्रोत्तलयां यदि' परवलं हौकिते तद्वेद दुर्गभज्ये नान्यथेति' तद्वाचमाकर्ण्य स विज्ञासः सचिवसं व्यतिकरं राज्ञे गुसविज्ञकिया तिवेद्यमास । राज्ञापि तद्वात्तन्तवेदिना तंत्रैव हौकिते सैन्ये दुर्गमं 'दुर्गं विश्वम् यदाः पटह-नाम्नि वलवति दन्तावले समधिरुदः, सामलनाम्ना आरोहेकेण पश्चाद्गमेन, त्रिपोलिकपाददये आहन्यमाने लोहभेद्यामर्गलालायां भज्यमानायां वलाधिकतयान्तछुटितात्तसांद्रजात्कर्णाङ्गजसु-त्तार्य सर्वं यावद्वरोहति तावत्स गजः एवित्यां पपात । स 'गजः सुभट्टया तदा' विपद्य बड्डसरप्रामे स्थशशोधवल एव यशोधवलनामा विनायकरूपेणावततार ।

१३५. सिद्धिंस्तनश्चलतर्तपरिर्जितिदलितद्वितीयदन्ते इव । विश्राणो रदमेकं गजवदनः मुजतु वः श्रेयः ॥

इति तदीया स्तुतिः^{१३} । इत्थं दुर्गम्भे सूचिते सति समराधिरूढं यशोवर्माणं पद्मिर्गुणैरावध्य^{१४} तत्र निजामाज्ञां जगन्मान्यां दापयित्वा यशोवर्मस्तुप्या प्रत्यक्ष्यतःपताकया रेचिष्णुः श्री-पत्नेन प्राप् ।

• [८९] *क्षुण्णा: शोणिष्टामनेन कटका भग्नास्थारा ततः कुण्ठः सिद्धप्रते: कृपाण हृति रे मा भंसत क्षत्रियाः । 15
आहृष्टप्रवलप्रतापदहनः सम्प्राप्तस्थारीश्वरा पीत्या मालवयोरिदश्चुप्लिलं हन्तायथमेधिष्यते ॥

[१०] *क्षितिघव भवदीयः क्षीरधारावल्लखे रिपुविजयशोभिः थेत एवासिदण्डः।

किमुत कवलित्वेत्तुः फङ्गलैर्मालवीनां परिषतमहिमानं कालिमानं तनोति ॥

७०) "प्रतिदिनं सर्वदर्शनेष्वादीर्बादानायाहृष्यमानेतु यथावसरमाकारिता जैनाचार्याः श्री-हैमचन्द्रसुव्याप्ताः" श्रीसिद्धरत्जमासाव व्यपेण दुक्लदानादिभिराद्विजातासैः सर्वैरप्यप्रतिमप्रति-२० भाभिरामेद्दिव्यापि पुरस्फुलो नुपतये श्रीहैमचन्द्रसुव्याप्तादिव्यादिष्पि" पपाट-

१३५. भूमि कामगयि ! संगोमपरसैरासिञ्च रत्नाकराः । मुक्तास्त्रिकमातृनध्यादृष्टे । त्वं पूर्णकूम्ही भव ।

एत्या कल्परोद्दलानि सरलैदिग्वारणाः । तोरणान्यायच्च स्फङ्कर्येजित्य जगत्तं नन्वेति सिद्धाधिषः ॥

असिन्काव्ये निःप्रपदे प्रपद्यमाने तद्वचनचातुरीचमल्कृतचेता नप्रसं प्रशंसन्, कैथिदसहि-
प्पुभिः—‘अमच्छास्त्राध्ययनवंदादेतेपां विदृत्ता’ इत्यमिहिते राजा षष्ठा: श्रीहेमचन्द्राचार्या:—²⁵

* दूसरी शब्दाल्पात्ति वा दृष्टि एवादाः पादो रित्यते— 'समिवैः पतिष्ठिः पामाराजुन्तुयैः पश्चात्तीर्थिवैपदमानैः रात्रः स्मीक्षा' इत्यापेक्षिति 'पृथिव्यामहैः कर्पंत्यत्तिः' कर्पंत्यत्तिः विकारप्रयत्नामन्त्रेण पृथिव्यामहैः रात्र— ११८ 'दृष्टान् दृष्टान् दृष्टान् दृष्टिः विद्या आत्मानोपि पृथिव्यामहैः रात्रः । १ AD 'दृष्टिः' नामिति । २ ABD रद्यते । ३ A दृष्टान्दृष्टान्दृष्टान्दृष्टिः, B दृष्टान्दृष्टान्दृष्टिः; D दृष्टान्दृष्टान्दृष्टिः । ४ AD 'प्राप्तान्दृष्टिः' । ५ AD 'दृष्टान्' नामिति । ६ P नामिति । ७ D 'स गतः' नामिति । ८ P विद्यापृथिव्यामहैः रात्रः नामिति । ९ AD निरोपेते । १० AB वर्तिष्ठिति; P परिष्ठिति । ११ P रद्यते । १२ P नामिति वाचनविद्यं । १३ BP निरापरः । * 'दृष्टान् दृष्टिः वैक्षणेयः प्रयत्नः' । १४ P निरापरिः । १५ D 'साहृदैः' । १६ B 'प्राप्तान्दृष्टान्दृष्टिः' । १७ AD 'पृथिव्यामहैः विद्यान्दृष्टिः' ।

पुरा श्रीजिनेन श्रीमन्भहावीरेणोन्द्रस्य उरतः शैशवे घटद्वयाख्यातं तज्ज्ञेन्द्रव्याकरणमधीयमहे
वयमि'ति चाक्यानन्तरम्, 'इमां उराणवार्त्तामप्हायासाकमेव सन्विहितं' कमपि व्याकरण-
कर्त्तारं त्रृत् इति तत्पिशुनवाक्यादनु वृषं प्राहुः-'यदि श्रीसिद्धराजः सहायीभवति तदा कति-
पयैरेव द्विनैः पञ्चाङ्गमपि नृतनं व्याकरणं रचयामः' अथ वृषेण 'प्रतिपद्मिदं निर्वहणीयमि'त्य-
५ भिधाय तदिसुष्टाः सूरयः स्वं स्थानं यथुः। वृषेण तु 'यशोवर्मराजः करे निःप्रतीकारां क्षुरीं
समर्प्य तदग्रासने वयं गजाधिसृष्टाः पुरमध्ये प्रवेशं करिष्यामः' इति राज्ञः' प्रतिश्रव्यमाकर्ण-
शुज्जालनाशा' मन्त्रिणा प्रधानवृत्तिं सुश्रवा क्रिमिति राजा निर्वन्धष्टुष्टेन-

१३७. मा स सन्धिं विजानन्तु मा स जानन्तु विग्रहम्। आख्यात^{११} यदि शृण्वन्ति भूपास्तेनैव पण्डिताः ॥

इति नीतिशास्त्रोपदेशात्म्यवुद्धैव स्वामिना प्रतिज्ञातोऽयमर्थः। सर्वथाऽऽयतौ न हित' इत्युत्तम् ।

१० वृषस्तु प्रतिज्ञाभङ्गभीरुः^{१२} 'वरमस्तु परिहरामि न तु विश्वविदितं प्रतिश्रुतिमि'ति वृषेणोर्त्ते" मध्वी
दासमयी क्षुरिकां विधायै पाण्डुवर्णं संजरसेन तां^{१३} पिहिर्ता एषासनस्थय यशोवर्मणः करे समर्प्य
तदग्रासनस्थो वृपतिः श्रीसिद्धराजः परमोत्सवेन श्रीमदणहित्तुपुरं" प्रविवेचा। प्रायेशिकमङ्गल-
व्याकुलतांनन्तरं वृषेण सारिते व्याकरणकर्णवृत्तान्ते; वहुभ्यो दशेभ्यस्तत्त्वदेविभिः^{१४} पण्डितैः
संमं सर्वाणि व्याकरणानि पैत्तने समानीय श्रीहेमचन्द्रांचार्यैः श्रीसिद्धहेमाभिधानं अंभिनवं
१५ पञ्चाङ्गमपि व्याकरणं सपादलक्ष्यग्रन्थंप्रमाणं संवत्सरेण रचयाचक्ते। राजवाद्यकुम्भिमकुम्भे तत्तु-

६ अत्र Dd भाद्रो निश्चलितः समपिकः पाठ उपलब्धते—'कैविद्रुषहित्युग्मिन्मेने। देमचन्द्रजामा यिष्यः कदाचित्प्रवलुशित-
शिरा जलविहरणाय भजत् गत्वा भग्नवायस्तीप्रभितिसितो गवाक्षयेनालिगुरोदितेन सारिणा पात्राभुः। गुणो विश्वाः। तिळोऽप्तिया दुःहर्त-
देहि'। तदुत्तेव निःस्तोऽव्यग्रल्लितेवेचन्द्रव्याकरणार्थो सह शीकाशीरं प्रति। मार्त्ते नाडोलग्रासे सहस्रोपासे शीतरत्वती प्रसवा
जाता। निजस्तुर्तिर्दीर्घिता। प्रियोर्विनिर्दिते छोक्षसप्तशता ग्रामो वर्णितः। स्त्रिव्याप्ते प्रविशतः षेषां
न्तरिकार्ये विद्या समर्पिता। इत्युक्तं च—'मम मरणसमये मम शोपरि विनिर्भासिमण्डठे ममः स्तराणीयः। शोपे वर्त दारति'। पूर्वे
कृते इमसाने मध्यरात्रौ दाबेनोर्याय वरो दत्तः। श्रीहेमचन्द्रेण राजप्रयोधो याचितः। देवनन्देण इत्यादिवाराण्डिविया। पद्माकरेण
पाणिदलैः। अग्रात्तरे कृतकृती हेमचन्द्रो विलितः। कालैवीयमध्ये विहिकाप्रासादे विद्यान्तस्त्रय वसुभैरवानन्दः विरपद्मानीवृद्धिः। समेत,
द्वि रे चण्डे प्रचण्डे महां सुदोकादृ देही' ति भग्निर्वा शुरुण्यमयकर्णप्रमे शुक्रः। देवया मोदकैर्वृत्ते। तेन संवेदो तेऽपिताः। देमचन्द्र-
स्यापि 'हे शिष्य त्वमपि शृगाणे' उक्ते तेन तस्याति करो लम्भयित्वोऽकं 'व्यालि सांकं ददा लं भस्येया:' इवमुखे परमयोः पतिः।
ततः पत्ते आयातं शीज्वर्त्संहितेवः सन्मुखेष्व समानीय हेमचन्द्रं जगापिल्लं प्रवेश च वुरोहितविरहतं दूरं, रात्रा गुरुव उपरोप्य
हेमचन्द्रस्य पद्मशयाना कारिता। श्रीहेमचन्द्रस्योऽप्तयां चतुर्दशी च श्रीजयेवभवने प्रयाणितः। पौषधामो श्रीस्त्रिभद्रपर्यंतं
यन्तः वुरोहितेन राज्ञोऽप्ते उपहासितः—'महाराज! कीर्तयस्तरयाः? सर्वरसमोग्ने शूरीरपितृपैषयागृहे कामिग्रहः। परे ते किंते
भवद्वृत्ताः।' राजोर्कं—'आचार्यो अत्र समेष्यति तदा वक्ष्यते परोक्षे न!' शूरीरपितृपैषयागृहे कामिग्रहः। किं किं वाचयतो वर्तन्दे वृत्ते!^{१५}
सूरिमिः समप्रमाणि संहेष्यतः स्त्रूपिभद्रचरितं करिते। भादितोर्कं—'महाराज!

विभासिवरप्राप्तव्याप्तिवेशिति श्रीमुखपद्मं शुलितिं दृष्टे भोई गतः।

अद्वारं सर्वते पयोदधियुक्ते शुभनिते ये मानवालोपामिविद्ययित्प्रमाणः कृपमहो ददमः समालोचयताम् ॥

शुरुभिरुक्तं—'सिंहो वलीपो दिरद' इत्यादि। भादितोर्कं—'भासाकमेव शासामि परियासामोर पतयः संवताः।' गुरुभिरुक्तं—
शीतेन्द्रव्याकरणं किं भवद्वृत्ते वरुत्ता श्रीविनेन...'

१ AD ० जैनायाः। २ AD तदाचापाः। ३ D संक्षिप्तं दूरः। ४ D से प्राहुः। ५ P पैं प्राहुः। ६ AD
सतो यतोः। ७ BP नाति। ८ BP नाति। ९ A प्रसापः। १० 'ताता' प्रसापि AD। ११ A अवसरः।
१२ BP ० देवता व्याप्तिः। १३ BP नाति। १४-१५ एतत्पद्मव्याप्तासे AD 'ततो' इत्येव। १६ D परिपद्मः।
१७ BP व्युपवनात्। १८ B निर्माणः, AD नाति। १९ P संवेदः, B गूर्जः। २० AD नाति। २१ BP ० रातः।
२२ 'प्याङ्गलता' नाति AD। २३ D 'कर्त' नाति। २४ AD रातेरि। २५ AD एष। २६ AD नाति। २७ AD
द्विमायाः। २८ AD नाति। २९ B निर्माणः, P नाति।

प्रकाशः]

स्तकमारोत्प सितातपवारणे वियमाणे चामरग्राहिणीचामरयुग्मवीज्ञयमानं वृपमन्दिरमानीय
प्राज्ञवर्घपूजौपूर्वं कोशागारे न्यवीर्यत । ततो^१ राजाज्ञयान्यानि व्याकरणान्यपहाय तस्मिन्वेष
व्याकरणे सर्वत्राधीयमाने केनापि मत्सरिणा ‘भवदन्वयवर्णनाविरहितं व्याकरणमेतद्’^२ इत्युक्ते
श्रीहेमाचार्यः कुदुं राजानं राजमानुपादयगम्य^३ द्वात्रिंशचूषोकान्नानिर्माय^४ द्वात्रिंशत्सूचंपा-
देषु तान् सम्बद्धनिर्वं छेष्यपित्वा प्रातर्वपसभार्यां वाच्यमाने व्याकरणे^५ ।

५

१३८. हरितिव विश्वनव्यक्तिविक्षिप्तियुक्तः पिनाकपाणिरिव । कमलाश्रमध विश्वितिव जयति श्रीमूलराजनृपः ॥
इत्यादीन् चौलुक्यवंशोपस्तोकान् द्वात्रिंशत् सूत्रपादेषु, द्वात्रिंशत् श्लोकानवलोक्य प्रमुदित-
मना नरेन्द्रो व्याकरणं विस्तारयामासां । तथा^६ च श्रीसिद्धराजदिग्रिवजयवर्णने द्व्याश्रयनामा-
ग्रन्थः कृतः ।

१३९. ग्रातः । संवृणु पाणिनिः^७ प्रलपितं कातवकन्त्या वृथा मा कार्याः कडु शाकटायनवचः क्षुद्रेण चान्द्रेण किम् । १०
कः फण्टाभरणादिर्विष्टरवत्यात्मानमन्यरपि श्रून्ते यदि तावदर्थमधुराः श्रीसिद्धहेमोक्तः^८ ॥

१४०. अथ श्रीसिद्धराजेन पत्तने शशोवर्भराज्ञद्विपुरुपप्रभृतीन् सर्वानपि राजप्रासादान् सहस्र-
लिङ्गप्रभृतीनि^९ च धर्मस्यानानि दर्शयित्वा प्रतिवर्षं देवदायपदे कोटिद्वयव्यव्ययं निवेदैतत्सुन्दरम-
सुन्दरं चेति “एषः स एवमवादीत्—अहं द्यष्टादशलक्ष्मप्रामाणामालवदेशाधिपत्स्वत्तः”^{१०} परा भव-
तीत्रं फर्थं भवेयम्, परं महाकालदेवस्य दत्तैर्वृत्वाद्विवद्वच्यं मालवकास्तुज्ञानात्प्रभावाद्वृदि-
त्तात्समिता वर्त्तमाद् । भवदीयान्यव्यराजानोऽप्येतायदेवद्वयव्यव्ययनिवाहाक्षमाः, लृपसवेदवदय-
पदा विपदां पदं भवन्तो मूलनाशं विनक्षयन्ति ।

१४१. अथ श्रीसिद्धराजः कदापि^{११} सिद्धपुरे रुद्धैम्भाकालेप्रासादं कारपितुकामः कमपि स्थपति
सरसंनिधौ स्यापित्वा^{१२} प्रासादभरम्भलग्ने तदीर्यां कलासिकां लक्षद्वयपेणोत्तमर्णगृहात्^{१३} विमोच्य
तां^{१४} वेशशालाकामर्यां विलोक्यथन^{१५} ‘किमेतदि’ति राजा प्रब्रृच्छ^{१६} । ततो^{१७} ‘मया प्रभोरौदार्यपर्य-
क्षानिप्रित्तमेतत्कृतमिति स्थपतिशक्तवान् । ततस्तद्वयमनिच्छतोऽपि वृपतेः प्रस्तुपितम्^{१८} । ततः
‘क्रमेण’ व्यापो विशातिहस्तमैर्माणां परिएर्ण प्रासादं कारयामास । तत्र प्रासादेऽध्यपतिगजपतिनरपति-
प्रभृतीनामुक्तम्^{१९} भूतीनां भूतीं^{२०} कारपित्वा ततुरो योजिताज्ञालिं स्वां भूतीं निर्माप्य देशभूदेषि
मान्^{२१} प्रासादस्यमन्द्रं यान्वितवान् । तस्य प्रासादस्य^{२२} व्यजारोपप्रस्तावे सर्वेषामपि जैनभ्रासा-
दानां पताकायरोहं कारितवान् । यथा मालवकदेशे महाकालप्रासादे वैजयन्त्यां सत्यां जैनग्रा-
सादेषु न व्यजारोहं इति ।

- १ A ‘सामवर्षं’ नाडि । २ BP सरपं । ३ BP नाडि । ४ BP वृद्धा० । ५ AD ‘पृष्ठ’ नाडि । ६-७ पृष्ठ-
पृष्ठं रामायने BP ‘ही व्यापारा द्वे शूरां शूषा हातुपात्रवृक्षाय’ पदः पादः । ८ P नवीतात् विवाय । ९ D चूर्णित० ।
१० D नवार्थं रामायने । ११ पृष्ठमें D युक्तो ‘पीडुक्यवंशोपस्तोकेन षोडश् वाचयद्वयं सन्तोषप्राप्तासः । यथा— एष विकारेष-
पदे । तस्मात् ‘हरितिव’ पदः । १२ पृष्ठमें विकारेष । १३ BP ‘व्यापारा द्वयवृत्तिः’ विवाय । १४ BP
‘प्रभृती’ विकारेष । १५ AD ‘प्रभृती’ विवाय । १६ BP वृद्ध । १७ BP
‘प्रभृती’ । १८ A ‘व्यापारा’ । १९ AD ‘पृष्ठप्य’ । २० BP ‘व्यवसर्विहृष्टः’ । २१ AD ‘मविप्लविति’ विवाय ।
२२ BP ‘विकारेष’ । २३ A ‘व्यापारा’ नाडि । २४ P ‘व्यापारेषां’ । २५ P ‘संखाय’ । २६ AD ‘वृद्धिं’ ।
२७ AD ‘पृष्ठं वेष्यप्राप्तासः’ । २९ P ‘वाहृद’ । ३० AD ‘कालोरेष’ । ३० BP ‘वृद्धे मया’ नाडि ।
३१ BP ‘वृद्धे मया’ नाडि । ३२ D ‘विवितानिर्विते’ । ३३ A ‘प्रभृती’ परिएर्णः
प्रभृती विवितानिर्विते युक्तम् रामायने D प्रभृती परिएर्णे प्रभृती । ३४ BP ‘प्रभृती’ । ३५ AD नाडि । ३६ BP नाडि ।
३७ AD ‘वृद्धेष्वरप्रभृती’ ।

- १००) अन्यदा सिद्धुराजस्य मालवकमण्डलं प्रति पियासतः केनापि व्यवहारिणा *सहस्र-
लिङ्गसरोवरकर्मस्याये विभागे 'पात्प्रमाने तत्सर्वथाऽद्वैतैव कृतप्रयाणस्य कर्तिपादिनानन्तरं
कोशाभावात्* कर्मस्यां^३ विलभित्तमवगम्य, तेन व्यवहारिणा सुतस्य^४ पाश्वात्कस्यापि
धनाधिपत्त्वं चध्यास्ताद्वमपहार्य^५ तद्वण्डपदे उच्चलक्ष्यते 'द्रष्टव्, तेन कर्मस्यायः सदातः, इति
५ वाच्तो^६ शृण्वतो मालवकमण्डले^७ वर्षाकालं तस्युपो राज्ञो वचनगोचरातीताः प्रमोदः सदातः। इति
अथ प्राप्तपैष्यथवावन्नप्रगल्भयुद्धा धोर्णीमिकार्णवां विदधाने^८ वर्द्धपनिकाहेतोः प्रथानुष्टयै
प्रहितः^९ कोरपि मरुदेवायासी^{१०} वृपतिपुरतः सविस्तरं वर्षाश्वरूपं विज्ञप्यत्^{११} । नेत्रात्मागतेन
केनापि^{१२} गुर्जरधूतेण नरेण 'सहस्रलिङ्गसरो भृतमिति स्वामिन्! वर्द्धप्यसे'^{१३} हति तद्राक्षपानन्तर-
मेव सिक्ककपतितमार्जीरस्येव मरुद्वद्यस्य पदयतः सर्वाङ्गलग्नमाभरणं वृपतिर्गृहीताप ददौः ।
- 10 १०१) अथ वर्षानन्तरमेव^{१४} ततः प्रत्यावृत्तः क्षितिपतिः^{१५} श्रीनगरमहास्याने दत्तात्रायसो मञ्चरच-
नायां^{१६} कृतसर्वावसरसत्त्वं नगरप्रासादेषु घजवजमालोक्यं^{१७} 'क एते प्रासादाः?' इति व्रायणान्
प्रप्रच्छ^{१८} । तैर्जिनैवलालीनां प्रासादस्वरूपे निवेदिते सामयों^{१९} राज्ञः 'मया गुर्जरमण्डले जैनप्रासाद-
द्वानां पताकासु निपिद्वासु किं भवतामिह नगरे?' पताकार्थिज्ञायतनम्?^{२०} इत्यादिदृशंस्त्विज्ञप्याप्य-
चक्रे^{२१} 'अवधार्यताम्, श्रीमन्महांदेवेन कृतयुग्मारम्भे महास्यानमिदं स्वापयता' श्रीकप्रभनाम-
१५ श्रीकृष्णप्रासादो^{२२} 'स्वयं स्वापितो प्रदत्तस्वजौ च । तदनयोः प्रासादयोः सुकृतिभिन्नद्विषयमाणयो-
थव्यारो युग्म व्यतीताः । अन्यच^{२३} श्रीकृष्णप्रयमहागिरेः उरा नगरमेतदुपलकाभूमिः । यतो
नगरपुराणोऽनुक्रमम्-

१४०. पश्चायदादौ किल पूलभूमेदशोव्यभूमेपि विस्तरोऽश ।

उच्चलमण्डव तु^{२४} योजनानि मानं वदन्तीह^{२५} जिनेश्वरादेः ॥

२० इति । कृतयुगे आदिवेवः श्रीकप्रभस्तत्त्वसुन्मुखरतस्त्रामा भरतवण्डमिदं प्रतीतम् ।

१४१. नामेत्यो^{२६} स हृष्णो मरुदेवियुग्मो ये चत्तर समदृग् तुलियोगचर्यम् ।

तस्माहेष्वन्यवृष्टयः^{२७} पदमानन्त्रि सन्धः प्रशान्तकरणः समदृग् तुष्टीयै^{२८} ॥

१४२. अस्मो^{२९} मरुदेव्यां तु नामेत्यां उरुक्षः । दर्यवनर्वं धीराणां^{३०} सर्वाभ्यनमभरुतः^{३१} ॥

(अथ P प्रती निष्प्रगता जयिताः श्रोक्तः प्राप्यते-)

२५ [११] {प्रियव्रतो नाम सुरो मनोः स्याम्बुद्य यः । तस्मादीन्द्रस्तो नामः द्रवमलत्युत्कृष्णा ॥

* एत्यद्विद्वयेष्वापाठग्रन्थे A भास्ते प्रतापाः पदः—‘एत्यद्विद्वयेष्वापाठग्रन्थे यापितः । राज्ञः तमदोर्प्रापाश्वर्णं प्राप-
यापाश्वर्णोऽतः ततः वैशाभावात्’ । 1 D ‘सरोपा’ नामः । 2 DP सापाने विभागो । 3 D ‘स्वापानः’ । 4 D रिसार्दे ।
5 BP नामिः । 6 BP युष्माणोऽतः । 7 BP वार्षेऽप्यारिते । 1-1 एत्यद्वयेष्वापाठग्रन्थे BP ‘सरेषात् वर्षेऽप्यारिते’
परित्येऽप्ते राष्ट्राः । 8 AD ‘संस्कृते’ नामिः । 9 BP वसवतिः । 10 AD वार्षेऽप्ते राष्ट्रे । 11 AD वर्षेऽप्ते ।
12 A वर्षेऽप्तः । 13 AD सर्वेऽप्युत्तुरुषः । 14 A ‘प्यक्षापातः’ D वर्षेऽप्तः । 1 एत्यद्वयेष्वापाठग्रन्थे एवः AD वर्षेऽप्ते
परितः वर्षेऽप्तिः । 15 B नामिः । 16 D वद्वयेष्वापाठग्रन्थे । 17 एव एवः नामिः AD । 18 P एवः । 19-20 एत्यद्वयेष्वापाठग्रन्थे
नामिः AD । 21 AD वद्वयेष्वापाठग्रन्थे । 22 P युष्माणः । 23 BP नामिः । 24 P ‘वासेषात् युष्माणः’ युष्माणः ।
25 B नामिः । 26 BP विवरणं भवतामित्याप्तिः । 27 P ‘वासेषात् युष्माणः’ । 28 P नामिः । 29 B वासेषात् ।
१ एत्यद्वयेष्वापाठग्रन्थे परितः D युष्माणः परितः । 30 नामिः BP । 31 AD ‘संस्कृतान्तिस्मृतुः’ । 32 AD ‘प्राप्ते’ नामिः ।
33 P एवः । 34 BP वर्षेऽप्तिः । 35 BP युष्माणः । 36 D वार्षेऽप्ते युष्माणः । 37 Po वासेषात् युष्माणः । 38 B नामिः । DI
युष्माणः । 39 B नामेऽप्ते । 40 P वार्षेऽप्ते । 41 D ‘एत्य-

प्रकाशः ।]

- [९२] तमाहुर्वासुदेवांशं मीक्षधर्मविवितसंया । अवतीर्णं सुतवत् तसासीत् ब्रह्मपारगम् ॥
 [९३] तेर्णं वै भरतो ज्येष्ठो नारायणपरायणः । विश्वातं वर्षमेतद्वाऽन्ना भरतमद्भृतम् ॥
 [९४] अर्हन् शिवो भवो विष्णुः सिद्धैव तथा ब्रुधः । परमात्मा परथैव यद्बदा एकार्थवाचकाः ॥
 [९५] जैनं वौदं तथा ब्राह्मं शैवं च कापिलं तथा । नातिकं दर्शनान्याहुः पठेव हि मनीषिणः ॥
 [९६] तत्र—कुलादिवीजं सर्वेण प्रथमो विमलवाहनः । महदेववृ नामित्र भरते कुलसत्तमाः ॥ } 5
- इत्यादिपुरोणोक्तान्युदीर्यं विशेषप्रलयाय^१ श्रीबृप्तभद्रेवप्रासादकोशाच्छ्रीभरतभूपनामाङ्गितं पञ्चनवायां कांस्यतालमानीय दृपाय^२ दर्शन्यन्तो द्विजाः^३ जिनधर्मस्यायधर्मत्वं स्यापयामासु^४ । ततः प्रभृतिः^५ खेदमेदुरमानसेन^६ अवनीशेन हायनान्ते जैनप्रासादेषु ध्वजाधिरोपः कारितः ।

१०३) अथ श्रीपतने प्राप्तो वृष्टः 'प्रस्तावे' सरोवरकर्मस्यायव्ययपदेषु^७ वाच्यमानेषु सापराघव्य-वहारिसुतदण्डपदाल्लक्षवर्णं कर्मस्याये व्यवकलितमिति श्रुत्वा, 'तद्वृक्षवर्णं' तस्य गृहे प्रस्थापया-१० भास । ततः स व्यवहारी, 'उपायनपाणिर्णपोपान्तसुपेत्य किमेतदिति विज्ञपयन् कर्मस्यायव्यवहार-रिणो' वृष्टः "प्राह—८यः कोटिद्वयो व्यवहारी स कथं तादङ्गचौरः? त्वयाऽस्य धर्मस्यानस्य धर्मविभागः प्रार्थितोऽपि यज्ञ लवघस्ततः प्रपञ्चतुरुणं वृग्मसुखव्याघ्रेणैवान्तःशठेन प्रत्यक्षसरलेन इदं कर्म भवता^९ निर्ममे^{१०} ।" [इत्यादिवाक्यैर्मृशं स्वपिण्डतः^{११} ।]

१४३. यशान्तिरिदिवागारदीपिकाः प्रति विस्मिताः ।

शोमन्ते निति पातालव्यालमौलिमणित्रियः ॥

१४४. + न मानसे मायति मानसं ये पथ्या न सम्पादयति प्रसोदम् ।

अच्छोदमच्छोदकमप्यसारं सरोवरे राजति सिद्धमर्तुः ॥

{ एकदा श्रीसिद्धेन रामचन्द्रः पृष्ठः—'श्रीप्ये दिवसाः कथं पुरुतराः?' । रामचन्द्रः प्राह-

[१७] देव श्रीगिरिदीपमङ्ग भवतो दिव्येत्यात्रोत्सवे धावद्वीरुत्तरावलगानसुराक्षमामण्डली । 20

वातोदूतरजोमिलसुरसरित्सज्जातपङ्कसलीदूर्वा उम्बनचक्षुरा रविहयास्तेनैव बृद्धं दिनम् ॥

[१८] लव्यलक्षा विषेषेषु विलक्षास्त्वयि मार्गणाः । तथापि तत्र सिद्धेन्द्र दातेत्पुस्तकन्धरं यथः ॥

अथ कदाचिद्ग्रामा ग्रथिलाचार्यो जयमद्गलमूर्यः पुरुर्वर्णं पृष्ठा ऊनुः-

[१९] एतसास पुरस्य पौरवनिताचार्तुर्ततानिर्जिता मन्ये हन्त सरस्वती जडतया नीरं वहन्ती स्थिता ।

फीर्तिस्तम्भमिषोचदण्डलचिरामृतसूज्य वाहोर्धलाचर्चीकां गुरुसिद्धभूपतिसरस्तुम्बां निजां कच्छपीम् ॥ } 25

१ एतत्स्वाने BP 'प्रावस्तितदाप्यव्यस्यापनाय' एतत्पदम् । २ BP शूपतिसुरतः । ३ AD नालि । ४ P चक्रः
 B चक्रः । ५ नालि AD । ६ AD शूपता राजा । ७ BP नालि । ८ D 'सरोकरपदेषु' इत्येव । A सरोकरव्यपदे ।
 ९ AD 'वृक्ष' नालि । १०-१ एतद्वाग्मीनगंवारावत्याने BP 'प्रये तद्वृष्टे स्यापिते स उपाः' पृष्ठ पाठः । १० P प्रावयेव प्रत्ययं
 भासते । ११ 'पृष्ठः प्राप्तं स्याते AD 'प्राप्तादिः' । १२ AD 'प्राप्तादिः' । १३ AD व्ययेन्द्र क्षमे निर्मितम् । " केवलं D उल्लक
 पृष्ठेष्व प्राप्तं इत्यते । + B भासते नोत्पत्त्यमित्यं प्रत्ययम् । D उल्लकु उपः, अथ प्राप्तं पृष्ठे निर्माणं प्राप्तादिः तिरिते स्म्यते ।
 प्राप्तेष्व कार्यान्वयां भासते प्रियवादिनम् । केवलेषांस्ते प्रियं निर्मितम् प्रोक्षुपानम् ॥

मुण्डं प्रसदाकारं वाचान्वदीर्तीतः । हृदयं कर्त्तीभूतमेतद्वैरां लक्षणम् ॥

१ P मली इते एतम् प्राप्ताने । ६ एतद्वैष्णवान्तं सर्वते D उल्लक पृष्ठाप्राप्तादिःते । एतत्र प्राप्तिसामस्यद्विग्रहः ।

१०३) अथ॑ श्रीपालकविना सहस्रलिङ्गसरोवरस्य रचितायां प्रशास्तौ पटिकायामुत्कीर्णपां
तच्छेष्वनायां सर्वदर्शनेष्वाहृष्टमानेषु श्रीहेमचन्द्राचार्यैः 'सर्वविद्वज्ञनातुमते प्रशस्तिकाव्ये भवता
किमपि वैदृग्यं न प्रकाशयमि' त्युक्त्या पण्डितरामचन्द्रमनुशिष्यं तत्र प्रहितः । ततः सर्वैद्विद्विः
शोध्यमानायां प्रशास्तौ वृषोपरोधाच्छ्रीपालकवैर्द्धक्षदरक्षिण्याच्य सर्वेषु काव्येषु मन्यमानेषु-

५ १४५. कोशेनापि युतं दर्शस्पचितं नोच्छेत्तुमेतत्समं स्यसापि स्फुटकष्टकव्यतिकरं पुंस्त्वं च धर्ते नहि ।

एकोऽप्येप करोति कोशरहितो निकष्टकं भूतलं मत्वेवं कमला विद्याय कमलं यसासिमायित्यन् ॥

१५१. तैः सर्वैरपि अस्य काव्यस्य विशेषप्रशंसां कुर्वाणैः^१ श्रीसिद्धराजेन इष्टः श्रीरामचन्द्रधिन्यमेत-
दिव्यवादीत् । अथ तैरेव सर्वैरनुयुक्तः—'एतस्मिन्काव्ये सैन्यवाचको दलशब्दः, कमलशब्दस्य नित्य-
कुर्वत्वं च' इति दूषणद्वयं चिन्त्यम् । ततः 'तान् सर्वानपि पण्डितातुपस्त्व्य दलशब्दो राजा'
१० सैन्यार्थं प्रमाणीकारितः, कमलशब्दस्य तु लिङ्गातुभासनसिद्धं नित्यकुर्वत्वं केनाप्रमाणायत् इति
'पुंस्त्वं च धर्ते न वे' ल्यक्षरभेदः कारितः । तदा श्रीसिद्धराजस्य सज्जातद्विदोपेण^२ एं रामचन्द्रस्य
वसतौ प्रविशत् एव लोचनमेकं स्फुटितम् ।

१०४) अथ कदाचित् दाहलदेशीयनरपते:—

१४६. आयुक्तः प्राणदो लोके विस्तुतो मुनिवृष्ट्यमः । संयुक्तः सर्वयाप्निष्ठः केवलः सीणु वष्टुमः ॥

१५२. इति सान्धिविग्रहकैरानीतयमलपत्रेषु श्लोकमेनं लिपितं निशम्य मिमेतदिति इष्टात्मे प्राप्तुः—
'भवत्तनपदे एकैकप्रधाना भूयांसो विद्वांसस्तत्पार्थीहुर्वैषोडयं श्लोको व्याख्येयः' इति तद्वाग्नमा-
कर्ण्य सर्वैरपि विद्विन्निरज्ञातातदर्थं विर्विशृष्टाद्विर्विष्णेण इष्टा हेमाचार्या इत्पं व्याचन्यन्युः—'अथ अप्या-
क्षारी हारशब्दः । तस्य आ इत्युपसर्गं कृते आहार इति सर्वजीवप्राणद्रदः । वियुक्तो विहारः
सन् उभयथा यतीनां प्रियः । संपूर्वः संहारः सन् सर्वभावनिष्ठः । निरप्सर्गः श्रीणामेय
२० चक्षुमः हार इति' ।

१०५) *अन्यदा सपादलक्षक्षितिपतिना—

१४७. ओली^३ वाय न जपुहरू गोरीमुद्रमलस्त ।

इति समस्यादोपकार्द्धमन्त्र प्रहितम् । तैसौः फविभिरप्यमाणे

अद्विटी किम "ओमिहृ पटिपूर्वली चन्द्रम् ॥

इति उत्तरादेन^४ श्रीहेमचन्द्रो "मुनीन्द्रमां गूरणामास ।

२५

१०६) अथ^५ श्रीसिद्धराजो नवघणाभिपानमानीराणकं निष्ठातुभामः उरुपादधामः नित्यरैन्ये
पराजिते सति श्रीवर्द्धमानादिषु उरेषु प्राकारभक्तं^६ निर्माण्य व्यपत्य प्रयाणामयं गोत्रं । तदा

१ P इति । * D उन्नेष्व एतोऽपि "गृह्णतामनिदर्श" उरुपेषादेषु "व वायो" इति एव एव एव एव एव । १ D
तत्रात्मितिपतात् । २ D गृह्णतामनिदर्श । ३ एव एव एव एव एव एव AD "स्त्रीतोऽप्तिवाये वायामादे" इति इति ।
३ AD "व" वायि । ४ BP "व" वायि, AD "वाय" वायि । ५ D वायौ । ६ CAP ०११ । ७ P इति इति ।
"केव विर्विष्णेण" । ८ BP विर्विष्णेन । ९ B विर्विष्णेन एव एव । १० एव एव एव एव एव एव
वायादेवीत्यात्मितिपतात्मायामे तिर्विष्णेन एव
वायावाया । एवात्मा भवित्वात्मा इति । * BP एव एव एव एव (B एव) एव एव एव एव । १० D वायौ ।
११ AD "तोपत्तेष्व एवै । १२ D विष्णु विष्णुपाद, B विष्णु विष्णु । १३ BP वायौ । १४ AD वायौ वायौ ।
१५ AD देवकृष्णामा मुक्तिः । १६ AD वायौ । १७ AD वायावाय । १८ AD "वाय" वायौ । १९ BP वायावाय ।

ज्ञातस्वरूप एव गिरिमधिरुद्धा गङ्गोदकेन श्रीयुगादिदेवं स्वप्यन् पर्वतसमीपवर्त्तिग्रामद्वादशक-
शासनं श्रीदेवाय' विश्राण्यामास । तीर्थदर्शनाचोन्मुद्रितलोचन इवामृताभिपिक्त इव तस्यै' ।
'अत्र पर्वते सहृकीवनसरित्पूरसहूले इहैव विन्द्यवनं' रचयिष्यामीत्यदन्धप्रतिज्ञो हस्तियूपनि-
ष्टत्ये विहस्तमनसं मनोरथेनापि तीर्पिविघ्वंसपातकिनं धिग्मामिंति श्रीदेवपादानां मुरतो राज-
लोकविदितं स्वं निन्दन् 'सोनन्दो' गिरेवततात ।

१००) अथ श्रीदेवसूरिचरितं व्याख्यास्यामः—तस्मिन्नवसरे कुमुदचन्द्रनामा दिग्म्बरस्तेषु तेषु
देवोपु चतुरशीतिवार्द्दिनो निर्जित कर्णादेवाद्वूर्जदेवां जेतुकामः कर्णवर्तीं प्राप । तत्र
भद्राकश्रीदेवसूरीणां चतुर्मासके स्थितानां श्रीअरिष्टेमिग्रामासादे धर्मशास्त्रव्याख्याक्षणे वचन-
चातुरीमनुच्छिष्ठामाकर्ण्य तत्पिण्डैस्तद्वृत्तान्ते निवेदिते कुमुदचन्द्रसेपामुपाध्ये सतृणमुदकं
१० प्रक्षेपितवात् । अथ तैर्महर्षिर्पणितैः खण्डनतर्कादिग्रामाणप्रवीणैस्तस्मिन्नर्थेऽनाकर्णितकपादाङ्गाते
सति श्रीदेवाचार्यजामि तपोधनां शीलसुन्दरी' चेटकैरथिष्ठितां विधाय दत्यजलानयनादि-
भिः 'विविधाभिर्विडम्बनभिर्विडम्बप तेषु चेटकेष्वपहृतेषु तां' भृशं परामवासिर्भृत्यनापरामप-
वार्य' विनापरोऽस्यात्' ।

(अथ P आदर्शे निस्त्रगतान्यन्यत्राण्यामि पद्याति प्राप्यन्ते—)

- १५ [१०३] {हा कस्तु पुरोहं पुकरोमि असकण्या महं पहुणो ।
निपसासणनिकारे जो अवपरद् सो वरं सुगओ ॥—साज्जीवावयम् ।
[१०४] याः कण्ठगोपयरिपूर्कं प्रमाणव्याख्याश्रमो मयि वभूय गुरोर्जनस्य ।
एवंविधान्यापि विद्यनदम्बराणि वच्छासनस्य हद्वा मसृणः शृणोमि ॥
[विविधाभिर्विडम्बनभिर्विडम्बप तेषु चेटकेष्वपहृतेषु तां]
२० [१०५] दुर्वादिगर्वगजनिर्दलनामुद्गुश्चिः द्येवाम्बराम्बुदयमद्वलवालदूर्वी ।
श्रीदेवसूरिसुगोर्मुखीललाटपट्टे स्थितिं विवनुत प्रथमावताराम् ॥}

श्रीदेवसूरिभिरुक्तम्—'वादविद्याविनोदाय भवता पत्तने गन्तव्यम् । तत्र राजसभार्या 'भवता
सह वादं करिष्याम' इत्यादिष्टं स कृतकृत्यमन्यमान आशावसनः श्रीपत्तनपरिसं प्राप' ।
श्रीसिद्धराजेन मातामहशुरुरिति प्रत्युद्धमादिना सत्कृतस्तत्रायासान्दत्या तस्यै । श्रीसिद्धराजेन
२५ वादनिष्ठातातां एषाः श्रीहेमाचार्याः—'चतुर्सु विद्यासु परं प्राचीण्यं विद्याणं जैनसुनिगजत्पूरा-
विषं सिताम्बरशासनवच्छाकारं नृपसभाद्वारारहरं कर्णवर्तीस्थितं श्रीदेवाचार्यं वादविद्याविदं
वादीभक्त्यर्थात्मम्' प्राहुः । अथ राजा तदाहानाय प्रेपितविज्ञसिकायां श्रीसंघलेखनं सममाग-
तायां श्रीदेवसूरयः पत्तनं प्राप्य नृपोपरोपाद्वाग्देवीमाराधयामासुः । तया तु 'वादियेतार्तीय-
श्रीशान्तिसूरिविरचितोत्तराध्ययनवृहृत्तो दिग्म्बरवादस्यले चतुरशीतिविकल्पजाटोपन्नासे
३० भवद्ग्निः प्रतन्यमाने दिग्वाससो मुखे मुद्रा पतिष्ठतींति देव्योदेशानन्तरं उपसृत्य फुमुखन्दस-
स्त्रियो पण्डितान् प्रस्याप्य कम्भिन् शास्त्रे विशेषकौशलमिति शापिते—

१५३. देवादेवय किं कोमि सहसा लङ्घामिहेवानये जन्मद्वीपमितो' नपेयमया वारानिर्यि योपरे ।

१ D फ्रीदेवाचार्यं (१) । २ D जाक, AB जाति । ३ D विष्व इतिपात्रि । ४ D निर्मित । ५ मार्गीं पूर्व BP ।
६ AD महर्षिः । ७ P प्रत्येषेदं परं उम्पते । ८ इति भारत्य 'मूर्तिभिराम' हस्ति यस्त शरण इति शक्ति B भार्यां दांता ।
८ D गद । ९ A भवत्यदे । 10 AD वालपेत्तरम् । १ A भार्यां पण्डित्यमुख्यं इत्यन्दित्र शक्ति । 11 AD गद ।
12 AD 'देवी' नामि । 13 A 'द्वीरमयानये किमपता ।

प्रकाशः]

हेलोत्पादिततुद्वयवर्तशिरोग्रावदिनेत्राचलक्षेषोभविवर्द्धमानसलिं चधामि वा वारिधिम् ॥*

इति ततुक्तिश्वरणात्सिद्धान्तकुशलतां तस्यालीयसीमवगम्य जितं जितमिति^१ मन्यमानाभ्यां श्रीदेवाचार्य-श्रीहेमचन्द्राभ्यां प्रसुदितम् । अथ देवस्तूरिपभो रत्नप्रभाभिधानः प्रथमशिष्यः क्षपा-मुखे गुसवेपतया कुमुदचन्द्रस्य गुरुदरे गतः । तेन कस्त्वमिलभिहिते-अहं देवः । देवः कः ? । अहं ? । अहं कः ? । त्वं च्चा । च्चा कः ? । त्वं त्वं कः ? । अहं देवः [कुल आपातस्त्वं ? । स्वर्गात् । सर्वांगे का का वार्ता ? । कुमुदचन्द्रदिगम्बरशिरः पञ्चाशीति पलानि । तर्हि किं प्रमाणम् ? । छित्वा तोल्पत्याम् ।] इति तथोहक्तिप्रस्तुक्तिवन्ये चक्रघ्रन्थं अभिति, आत्मानं देवं, दिगम्बरं व्यानं च संस्यान्प्य पथागतं जगाम । तेन चक्रदोषप्रादुक्करणेन विपादनिपादसम्पाकात्-

१५४. हंहो खेतपटाः किमेप विकटीटोपोक्तिसुष्टुक्तिः संसारावटकोटरेऽतिविकटे मुखो जनः पात्यते ।

तथात्त्वविचारणात् यदि वी हेत्यकलेशलदा सर्वे कौमुदचन्द्रपञ्चिष्ठुगलं रात्रिदिवं ध्यापत ॥ 10

इमां तदुचितां कवितां निर्माये समायः कुमुदचन्द्रः श्रीदेवस्तुरीन् प्रति प्राहिणोत् । तदनु तवरणपरमपरमामुर्युद्दिवै मवाचगणितचाणकयः पण्डितमाणिकयः-

१५५. कः कट्टीत्वकष्टकेसरसटामारं सृज्जलत्रिणा कः कुनेन शितेन नेत्रकुहरे कण्ठयनं काङ्क्षति ।

कः सन्निष्ठति पद्मोद्धरशिरोरक्षावर्तं श्रिये यः खेताम्बरशासनस्य कुरुते वन्यस्य लिन्दामिमाम् ॥

अथ रक्षाकरपणितः-

१५६. नदैनिरद्वा युवरीजनस्य ग्रन्थक्तिरत्र शक्टं हि तत्त्वम् ।

तर्किं वृथा कर्कश्यतर्ककलौ तवाभिलापोऽप्यमनर्थमूलः ॥

इति कुमुदचन्द्रं प्रति सोपहासं प्राहिणोत् ।

अथ श्रीमण्डुदेवीं कुमुदचन्द्रपक्षपातिनीम्, अन्याशावर्तिनः सम्यांसत्त्वयाय नित्यमुप-रोपयन्तीं श्रुत्वा श्रीहेमचन्द्राचार्येण 'वादस्यले दिगम्बराः श्वीकृतं सुकृतमप्रमाणीकरिष्यन्ति 20 सिताम्बरासं स्यापिष्यन्तीं' ति तेषामेव पार्वतिद्वान्ते निवेदिते राज्ञी व्यवहारयहिर्मुखे दिग-म्बरे पक्षपातमुज्ज्ञांचकार ।

अथ भाषोत्तरलेखनाय सुखासनसमासीनः कुमुदचन्द्रः पण्डितरक्षप्रभक्षरणवारेणाऽक्षपटले समागतौ । तदधिकृतैः-

१५७. केवलिहौयो न भुज्जद चीवरसहिष्यस्त नविय निवारण । इत्थीमवे^१ न रिज्जद भयमेयं कुमुदचन्द्रस्त ॥ 25 इति भाषां कुमुदचन्द्रो लेखयामास । अथ सिताम्बराणामुत्तरम्-

१५८. केवलिहौयो वि भुज्जद चीवरसहिष्यस्त अतिय निवारण । इत्थीमवे^१ वि सिज्जद भयमेयं देवस्तीरण ॥

इति भाषोत्तरलेखनानन्तरं निर्णयोते वादस्यलवासरे श्रीसिद्धराजे समाजभागते, पद्मशीनभ-माणयेदिषु सम्येषु समुपस्थितेषु कुमुदचन्द्रवादी पुरो चायमानजयदिणिडमो प्रियमाणासितात-पद्मः सुखासनसमासीनः पुरो चंशाग्रलम्ब्यमानपत्रावलम्बः श्रीसिद्धराजसामार्यां दृपमसाक्षीकृत-30 सिंहासने निपसाद । प्रसुत्रीदेवस्तुरपश्च श्रीहेमचन्द्रसुनीन्द्रसहिताः समार्तिसहासनमेकमेवालंचकुः ।

* पृष्ठपत्र स्वाने BP भाषां 'बन्दीरामिद्वये किमप्य एकामिद्वयाते' इत्येकं पृष्ठं पात्यते । 1 इदं पृष्ठं परिं D इत्येकं । † एषा कोहक्षणा रूपः P प्रकाशः प्राप्य । 2 P उत्तरः । 3 P निर्देशः । 4 D निर्देशः समाप्तम् । 5 'परम' भाषित D । 6 BP उत्तरः । 7 P निर्देशः । 8 P प्रतिवायः । 9 P उत्तरः । 10 AD उत्तरः ।

अथ कुमुदचन्द्रवादी स्वयं ज्यायान् किञ्चिद्व्यतिकान्तशैशर्वं श्रीहेमचन्द्रं प्रति 'पीतं तकं भवता' ॥ इत्यभिहिते श्रीहेमचन्द्रसं प्रति 'जरातरलितमति: किमेयमसमञ्जसं श्रूपे ॥ भ्यंतं तकं पीता हरिद्रा' इति वाक्येनाथः कृतः 'युवयोः को वादी' ॥ इति षट्ठत्, श्रीदेवसूरीभिस्तिरस्तारकरणायं 'अयं भवतः प्रतिवादी' ल्यभिहिते कुमुदचन्द्रः प्राह—'मम वृद्धस्यानेन शिशुना सह को वादः' ॥ इति तदुत्तिमाकर्ण्य 'अहमेव ज्यायान् भवांस्तु' शिशुः, योऽयापि कटीवद्यरकं तियसंन च नादत्से' इति । राजा तयोर्वित्तण्डायां निषिद्धायामित्यं मिथः पणवन्धः समजनि—'पराजितैः अतेऽपैर्दिग्म्बरस्त्वयमङ्गीकार्यम्, दिग्म्बरस्तु देशल्यागा' इति निर्णीतपणवन्धात्तु स्वदेशकलङ्कभीरुभिर्देवाचार्यैः सर्वानुवादपरिहारपैर्देवानुवादपरायणैः कुमुदचन्द्रं प्रति 'प्रथमं भवान् कक्षीकरोतु पक्षम्' इत्यभिहिते—

- 10 १५९. खयोवशुतिमातनोति सविता जीर्णोर्णनायालयच्छायामाधयते शशी मशक्तामापानित यथाद्रयः । इत्यं वर्णयते न भस्तव यशो जातं सृष्टेगोचरं तथसिन्ध्रमरायते न रथते । वाचस्तवो मुद्रिताः ॥ इति वृत्तं प्रत्याशिर्प ददौ । 'वाचस्ततो मुद्रिताः' इति तदीयापशन्देन सभ्यासं स्वदस्तपन्धनमिति विमृशन्तो मुमुक्षुदिरे । अथ देवाचार्यैः—
१६०. नारीणां विदधाति निर्वृतिपदं येताप्यगोष्ठसत्कीर्तिस्तातिमनोहरं नयपथप्रस्तात्यहीनृदृष्टम् ।
- 15 १६१. यसिन्केवलिनो न निर्जिरपरोत्सेकः सदा दन्तिनो राज्यं तजिनश्चासनं च भवतर्शीलम् । जीयापिरम् ॥ नृपं प्रतीमामाशीर्प ददौ । अथ वादी कुमुदचन्द्रः केवलिभुक्ति-खीमुक्ति-चीयरनिराकरणपक्षोः पन्ध्यासं पारापतविहङ्गोपमया' स्वलितस्वलितया' गिरा प्रारम्भाणः सम्पैरन्तर्विहसद्विः प्रत्यक्षप्रदांसापरैः उत्तरिक्यमाणः कियदुपन्यासप्रान्ते उच्यतामिति' तेनोक्तः श्रीदेवाचार्यः प्रत्यक्षालोन्मीलितप्रचण्डपवनक्षुभिताम्भापिनिचितर्वीचीसमीचीमिर्यागिभर्वृद्धुत्तराध्ययनगृत्येत्यु-
२० रशीतिविकल्पजालोपन्यासप्रक्षमे' भास्तप्रतिभासप्रसरपरिम्लानायामानकुमुदः कुमुदचन्द्रः सम्प्रमध्रान्तचेतासदूचनान्यवधारयितुमक्षमो भ्रूयस्तमेवोपन्यासं समन्यपित्तयान् । श्रीसिद्ध-राज-सम्प्युतु च तिष्ठपत्रेष्वर्पि अप्यनेपमनेपलहरीभिस्तं प्रमाणान्मोरो मन्त्रपितुं प्रारन्ते' पोउदो दिने आकस्मिके देवाचार्यस्य कण्ठघ्रहे मात्रिकैः श्रीयशोभद्रसूरीभिरतुल्यकुमुदादर्पित्रप्रसाद-लव्यधरैस्तत्कषण्ठीठात्कषणात्कषणकृतकार्मणानुभावादू केशकन्दुः 'पहि' 'पातपांचके' । तथि-
२५ वनिर्गुक्षणावतुरैः स श्रीयशोभद्रसूरीभिरतुल्यकुमुदामन्दं निन्यमानः प्रमोदयि-पादो दधाते । अथ श्रीदेवसूरीभिरपन्यासोपक्षे कोटाकोटिरिति शब्दे प्रोक्ष्यमाने तत्प्रद-व्युत्पत्तिं कुमुदचन्द्रे षट्ठति कण्ठपीठे छुठिताएव्याकरणः पष्टितः काकंलः शाकायनव्याय-रणोदितटापृष्ठीएसुवनिष्पत्तं कोटाकोटिः कोटीकोटिः कोटिकोटिरिति तिदं शन्द्रव्यग्निर्णयं प्राह । अथ प्रथममेव 'वाचस्ततो मुद्रिता' इति स्वयं "पठितत्यापशन्द्रमनायातदा प्रातुर्नृत्युम-
३० मुद्रः 'श्रीदेवाचार्यं निर्जितोऽहमिति स्वयमुपरद् श्रीसिद्धराजेन पराजितव्यहारात्, भेद्या-रेणोपसार्पमाणः सम्भवत्पराभवायिर्भवादृद्द्वस्कोटं प्राप्य" विषेदे ।

१ D. गौरानिकालिग्रामान् । २ P. शिशुता लादे व पाणि गृहिणी । ३ AD. भर्तवर्ष । ४ AD. शास्त्रानि दार्शने निवासं च । ५ D. धीर्मित्यांपर्णीमित्याः । ६ AD. विद्युत्प्राप्तान् । ७ D. राजितमिता । ८ D. लक्ष्मीपै देवा । ९ D. श्वासो घट्यते । १० D. विद्युत्प्राप्तान् । ११ D. केताङ्कुडः । १२ P. विद्युत्प्राप्तान् । १३ D. लक्ष्मीपै ।

महादा:]

अनन्तरं तु श्रीसिद्धराजः प्रमोदमेदुरमना देवाचार्यभावप्रभावनं चिकीर्षिं धारितसितात्
पत्रचतुष्टयः प्रकीर्णकप्रकरबीज्यमानः सर्वं दत्तहस्तावलम्बः पूर्वमाणेषु यमलशङ्केषु रोदाकुक्षिन्
स्मरिविभ्रमं विव्रति निसामनिसानैः स्फूर्जद्वयतुगृहीयमाणदिग्नन्तराले वाहङ्गनाम्नोपासकेन लक्षणं
व्रयप्रमितद्रव्यव्ययकृतार्थकृतार्थिसायै वादिचक्रवर्तिन् । पादावधार्यतमिति स्तुतिव्रातैरमन्द-
जगदानन्दकन्दलानुकारिणि^५ मङ्गले सुहुसुहुरुच्यमाने श्रीदेवाचार्यान् वाहवेन्द्रं तेनैव कारित-
प्राप्तादे श्रीमन्महावीरनमस्करणपूर्वं वसतो प्रावेश्यत् । तत्पारितोपिके च चृपतिः सूरिम्पोऽनि-
च्छायोपि द्यालापमृति ग्रामदादशकं ददौ । तदुपस्थेकानश्चोका एवम्-

१६१. वत्प्रतिशुश्राचार्याय नमः श्रीदेवशुरये ।

वत्प्रसादिग्निवाल्याति सुखप्रशेषु दर्शनम् ॥

—इति श्रीप्रशुश्राचार्यः ।

10

१६२. यदि नाम कुमुदचन्द्रं नाजेष्यहेवद्विरिहमरुचिः ।

कथियरिधानमवाल्यात्तरमः खेताम्भरो जगति ॥*

—इति हेमाचार्यः ।

१६३. मेजेऽवकीर्णतां नमः योर्तिंकल्पामुपार्व्य यः ।

तां देवद्विरिच्छिय तं निर्ग्रन्थं पुमर्च्यधात् ॥

—इति श्रीजदयप्रभदेवः ।

15

१६४. वादविद्यावरोऽधापि लेखशालामनुज्ञाताम् ।

देवद्विरिप्रो^० साम्यं कर्थं सादेवद्विरिणा ॥

—इति श्रीमुनिदेवाचार्यः ।

20

१६५. नमो यत्प्रतिमार्पीत्कीर्तियोगपटं त्यजन् । द्विवेत्याजि भारत्या देवसुरिषुदस्तु वः^१ ॥

१६६. सप्तमात्रमयेषकेवत्तस्त्रयो भुक्ति तथा स्यापन्नारीणामपि मोदतीर्थमभवत्तर्मुक्तिपुत्रोचरैः ।

यः खेताम्भरशासनस विजिते नवे प्रतिष्ठायुत्तदेवाहुस्तोऽच्युयेयमहिमा श्रीदेवशुरिण्युः ॥

—इति मेस्तुजस्त्रीणां द्रव्यम् ।

॥ इति देवसूरीणां प्रवन्धः* ॥

१६७) अथ श्रीपत्तनवासलम्ब उद्दिक्षयदेवाकः आभडनामा वाणिक्षुपुञ्चः कांस्यकारकहृष्टे^{१4} वर्षे-25
फर्पणेण कुर्वस्त्र एव विद्योपकानर्जपित्वा दिनव्ययं कुर्वणो द्विसन्ध्यमपि प्रसुंश्रीहेमसूरीणां
परमपूछे प्रतिकामन् प्रकृतिनितुरतपाऽधीतागस्त्वयौद्वमतादिवत्परीक्षाग्रन्थो रत्नपरीक्षकाणां
साशिष्यात् तत्परीक्षादक्षः^{१5} कदाचिच्छ्रीहेमचन्द्रसुनीन्द्रेसन्निधौ धनाभावात्परियहप्रभमाणनियमा-
न्सकुपितान् गृहन् सामुद्रिकचेदिनिः प्रसुभिरापतौ तद्वाग्यवैभवप्रसरं^{१6} विन्दशद्रिस्तस्य लक्ष्यत्वय-
द्रम्माणां परिघरप्रमाणां^{१7} कारपदिः^{१8} सन्तुष्टतया व्यवहरन्, कस्मिन्प्रप्यवसरे कापि ग्रामे पिया-^{१9}
उत्तरनरालेऽनाम्रजं व्रजन्तमालोक्येकस्या अजायाः कण्ठे पापाणस्वप्नं रवपरीक्षकतया रवजातीयं

१ D-P वरानन्द विवरिः । २ D-P ऐसालेप्प दिवत्प्रसरेत् । ३ D-P वाहृ । ४ AD कन्दलमस्तिः ।

५ B पार्वतः D-P अर्देन् । ६ BP वा । ७ D विद्याप्रस्तावदेव वर्षम् । ८ D मुरादेव । ९ P वाल्यमुग्रः । १० P गुरुः । ११ BP मांद्र । १२ B कः । १३ D षष्ठिः । * BP इवं प्रसुभिरेवत्प्र-
प्यम् । १४ BP गृहृ । १५ BP 'त्रु' लालिः । १६ BP विचारः । १७ 'मुनीन्द्र' D नामिः । १८ P वैवर्ण्य-
१९ AD वाहृ । २० ABP वृष्टिः । २१ ABP वृष्टिः ।

परीक्ष्य तद्वोभात्तं मूल्येन कीत्वा मणिकौरेपार्वात्तमुत्तेजितं निर्माण्य श्रीसिद्धराजस्य^१ मुकुट-घटनाप्रस्तावे लक्ष्मूल्यद्रव्येण तं चृपायैव ददौ । तेन नीवीधेन मङ्गिष्ठास्यानकानि कदाचिदागतानि श्रीत्वा तद्विकायावसरे सांयात्रिकैर्जलचोरभयात्तदन्तर्भिताः काञ्चनकम्बिकाः पश्यन् सर्वेभ्यः स्थानकेभ्यस्ताः सञ्चयाह । तदमन्तरं सर्ववनगरमुख्यः श्रीसिद्धराजमान्यो जिनशासन-^५ प्रभोवकः आवकः प्रतिदिनं प्रतिवर्षं यद्यच्छया जैनमुनिभ्योऽशवक्षादि^६ ददानो गुप्तवृत्त्या नव्यानि धर्मस्थानानि जीर्णानि च स्पर्शस्तिरहितानि खदेशेषु विदेशेषु च समुद्धार ।

१६७. वल्लीच्छवाकुम इष मृत्त्वाच्छादितसमलीजमित्र । श्रावः प्रच्छब्दाकृतं सुठ्रातं शृशासदामेति ॥

॥ इति चसाह^७ आभडप्रबन्धः ॥

१११) अथान्यसिज्जवसरे श्रीसिद्धराजः संसारसागरं तीतिर्पुः प्रलेकं सर्वदेशेषु^८ सर्वदर्शनेषु^९ १० देवतच्चधर्मतत्त्वपात्रतत्त्वजिज्ञासया एच्छयमानेषु निजस्तुतिपरमिन्द्रापरेषु सन्देहोलाधिरुद्मानसः^{१०} श्रीहेमाचार्यमाकार्यं विचार्यं कार्यं प्रश्नत । आचार्यस्तु चतुर्दशाविद्यास्थानरहस्यं विमृश्येति पौराणिकनिर्णयो वक्तुमारेभे—‘यत्पुरा कथित् व्यवहारी पूर्वपरिणीतां पर्वीं परिलक्ष्यं संग्रहणीसात्कृतसर्वात्म्यः सदैव^{११} पूर्वपद्या प्रतिवशीकरणाय तद्वेदिभ्यः कार्मणकमणि पृच्छयमाने कथित्वैदृढेशीयो ‘रद्विभिन्नयज्ञितं तव पतिं करोमी’त्युक्त्वा किञ्चिद्विचिन्त्यवार्यं भेषजसुपनीय १५ भोजनान्तर्देयमिति भाषणाः स^{१२} गतः । कियदिनान्ते समागते क्षयाहनि तस्मिंस्तथा कृते स प्रथक्षां वृषभतां ग्राप । सा च तत्पतीकारभववुद्धयमाना *विश्वविभाषोदान्सहभाना निजं दुश्चरितं शोचन्ती कदाचिन्मध्यंदिने दिनेश्वरकठोरतरनिकरमसरतप्यमानापि^{१३} शाङ्कुलभूमिषु तं पतिं वृषभस्तुप^{१४} चारयन्ती, कस्यापि तरोमूर्त्ते^{१५} विश्रान्ता निर्भर^{१६} विलपन्ती, आलापं नभस्य-कस्मौच्छुश्राव । तदा तत्त्वात् विमानाधिरुद्धः पशुपतिर्भवान्या तदुख्वकारणं शृष्टो यथावस्थितं २० निवेद्य लस्यैव तरोदछायायां पुंस्त्वनिवन्धनमौपदं तत्रिर्व्यादादिश्य तिरोदधे । सा तदनु तदीयां छायां रेखाङ्कितां निर्माणं तन्मध्यवर्त्तिन औपथाङ्कुरातुच्छेय वृषभवदने क्षिपन्ती, तेनात्यज्ञातस्त्वरुपेणौपथाङ्कुरेण वदनन्यस्तेन स वृषभो मनुष्यतां^{१७} ग्राप । यथा तदज्ञातस्त्वरुपोऽपि भेषजाङ्कुरः सभीहितकार्यसिद्धिं चकार; तथा कलियुगे मोहात्तदपि तिरोदहितं पाद्यपरिज्ञानं सभक्तिकं सर्वदर्शनाराधनेनाऽविदितस्त्वस्पमणि मुक्तिप्रदं भवतीति निर्णयः १८ २५ इति हेमचन्द्राचार्यैः सर्वदर्शनसम्मते^{१९} निवेदिते सति श्रीसिद्धराजः सर्वदर्शनाराध^{२०} ।

॥ इति सर्वदर्शनप्रबन्धवन्धः ॥

११२) अथान्यदां निशि^{२१} कर्णमेस्प्रासादे दृष्टपतिर्नाटिकं विलोकयन् केनापि चणकविकपकारिणा^{२२} वणिगमादेशं स्वकन्ये न्यस्तहस्तः^{२३} तद्वीलापितेन विद्वायमाणमानसः भूयो भूपतस्तीपमानं सकृपूर्वीटकं परितोपितो गृह्णन् नाटकविसर्जनावसरेऽनुचरैस्तद्वेद्यहादि सम्यगवगम्य सौधमासाद्य ३० मुख्याप^{२४} । प्रत्यूषे भूषः^{२५} “कृतप्राभातिककृत्यः सर्ववसरेऽलङ्कृतसभामण्डपसं चणकविकपकारिणं

१ AD सिद्धराजमु^{२६} । २ P लेखदर्शनमुद्देशः । ३ नरस्त्रेतर्दै P । ४ DP साहः । BD^{२७} वसा । ५ B भासदस उत्तरिकायमव्यः । P भासदस उत्तरिकायः । ६ BP निर्वापाय । ७ P भासीदेपदम् । ८ B नावि । ९ P ‘दोलारिष्वः’ इत्येव । १० P ‘दूरो’ भासि । ११ P सर्वेषैः । १२ ‘स गतः’ भासि BP । * उद्दृत्यर्थः पापः । १३ B भासदेस नोपकायते । १४ B वस्त्रेषः । १५ P गोस्त्रेषः । १६ P भक्तामार्त्तं भासि । १७ P भासदेस नोपकायते । १८ P भासदेस । १९ D स्थाने । २० D वस्त्रेस भासदेस चकार । २१ P सात्री । २२ D विद्याप नामदेसं पर्वते । २३ AD वस्त्रेस । २४ B भूषति । P नावि ।

(गिनमाकार्यं) 'निशि स्कन्धन्यस्तहस्तभारेण ग्रीवा वाघते' इत्यभिहितस्तत्कालोत्पन्नमति-
तृप्यामास-द्रेय । असमुद्रान्तं भूम्भारे स्कन्धाविलुडे पदि सामिनः स्कन्धो न वाघते तदा
मात्रस्य निर्जीवस्य मम पण्याजीवस्य भारेण सामिनः का स्कन्धवाघेति तदीयौचित्यविज्ञप-
त्रमोद्याद्यृपः पारितोपिकं ददौ ।

॥ इति चणकविक्रियवणिजः ॥ प्रवन्धः ॥

5

११३) अथान्यस्यां निशि नृपतिः कर्णमेवासादत्प्रेक्षणं प्रेक्ष्य प्रत्यावृत्तः कस्यापि व्यवहा-
रो हर्म्ये बहून् प्रदीपानालोक्य किमेतदिति पृष्ठः स लक्षप्रदीपांस्तान् विज्ञप्यामास । असौ
न्यः 'स्वसौधमध्यमध्यास्य व्यतीतक्षणदाक्षण्यः, स धन्यंमानी तं सदः समानीयेत्यादिदेशा-
एतेपां सदा प्रदीपानां प्रज्ञालनेन भवतः सदा प्रदीपनम्, तद्वद्वदीयवित्तस्य क्रियन्तो लक्षाः?'
इत्यभिहितः स विद्यमानांश्चतुर्शीतिलक्षान्विवेद्यामास । तदनु तदनुकम्पाकम्पमानमानसः ।
कोशात्पोडशालक्षान् प्रसादीकृत्य तत्सैथे कोटिद्वजमध्यारोप्यामास ।

॥ इति पोडशालक्षप्रसादैवप्रवन्धः ॥

११४) अपान्यक्षिद्वयसे राजा वालाकदेशदुर्भूमौ सिंहपुरमिति ग्राहणानामग्रहारः
स्थापितः । तच्छासने पदुत्तरशतं ग्रामाः । ५अय श्रीसिद्धराजः कदाचित् सिंहभौतिविवैर्देशमध्य-
निवासं याचितः साग्रहमतीतीर्वर्तिनं आसांविलीग्रामं तेभ्यो ददौ । तथां तेपां सिंहपुराद्वान्या- 15
न्यादाय गच्छतामागच्छतां च दाणमोर्कं चकार ।

११५) अथ राजा^१ सिद्धराजेन मालवकं प्रति कृतप्रयाणेन धाराहीग्रामपरिसरमात्रित्य तदीयान्
पदकिलानाहृष्ट्य तच्चातुर्परीक्षाकुते निजां प्रधानां राजवाहनसेजवार्ली स्यापनिकार्यं समर्पयत् ।
अप नृपतो एतः प्रयाते तैः सर्वे रपि सम्भूत्य तदद्वानि प्रलेकं विद्यार्थं यथोचितं सर्वेऽपि^२ स्वख-
सीये निदधिरेण । अय दिग्यावैप्रत्यावृत्तो नृपस्तां स्यापनिकां तेभ्यो याचमानस्तद्वौकितानि^३ भि- 20
ग्रानि तदद्वानि पद्यन् सविस्मयं किमेतदित्यादिशास्तैर्विज्ञप्यान्वक्रे- 'सामिन्! एकः कोऽप्यस्य च-
स्तुतो गोपनविपौ न प्रभूषुः । मलिम्लुचानलादीनां' कदाचिदपाये सञ्चाप्यमाने सति कः प्रभोऽस्तु
स्तरं कर्तंति विमृद्धैतदसामानिवर्यवसितम् । तदा राजा विस्थायसेरमनास्तेपां चूच इति विरुद्धं ददौ ।

॥ इति धाराहीयन्द्रूचप्रवन्धः ॥

११६) अथ कशचिच्छीजयसिंहदेवो नृपतिर्मलवकं विजित्य प्रत्यावृत्त उच्क्षाग्रामे निवेदित- 25
स्कन्धावारस्त्वीर्माणीः प्रतिपद्मामातुर्देवुग्रपरिषूर्णाऽवाहादिभिहितैः परितोत्प्रयमाणस्तस्यामेव
निशि एतपृष्ठ्या तहुः ससुम्भविज्ञासुः कस्यापि ग्रामण्यो यहै गतः । गोदोदादिव्याकुलतायामयि
तेन 'फल्लवम्'^४ इति पृष्ठः 'श्रीसोमेश्वरस्य कार्पटिकोऽहं महाराष्ट्रदेशवासतन्य' इति तस्मै न्यवेद-
यत् । तेन च वृपते: पार्व्यं महाराष्ट्रदेशस्य तन्महाराजस्य च शुणदीपवृत्तान्ते शुच्छयमाने स वृप-

¹ P यन्मदाहृष्टः । 2 AD निहिते । 3 BP पराभारे । 4 P विषयविजितः । ५ परदन्तंते पक्षः षोडशा
दक्षिणां पदुपादां सोमेश्वरस्यामासां गणह्या एवंविवितः । 5 P विद्यय 'प्रसाद' नामितः । 6 B प्राप्तवे । 7 B सगः ।
8 AD विशिष्टाद्यन्तेः । ९ पदुपादां P वक्ता 'अय कशचिच्छीजयसिंहदेवुग्रपरिषूर्णाऽवाहादिभिहितैः' पदादां वाच्य विचेते । १० D
विषयविजितः । ११ B नामितः । १२ BD विषय 'वया' नामितः । १३ BP विषय 'वया' विषये । १४ B नामितः । १५
पराभारामानि । १६ B नामितः 'भागवतः' । १७ P विषय 'वया' विषये । १८ P विषय 'वया' विषये । १९ BP निशु । २० D यदा । २१ AD उदीक-
दिष्टः । २२ D नुराजियः । २३ D ग्रामीकर ।

७२

तेस्तस्य पणवतिराजगुणान् प्रशंसंस्तत्पार्थं च गूर्जराधीभरगुणदोपान् पृच्छत् ‘श्रीसिद्धराजस्य
मज्जापालनपाणिडल्यं सेवकेष्वप्यतुल्यवात्सल्यत्वं चेंत्यादीन् गुणान् वर्णयंस्तेन कृत्रिमदोपे उद्द-
धाव्यमाने स ‘असाक्षं मन्द भाग्यतया नृपतेरुव्रतालक्षण एव दोपः’ इत्यश्रूणि मुञ्चवृत्तपतिं निः-
तवृत्त्या परित्येष्वप्यमास । अथ प्रभातकाले सम्मूर्य सर्वेऽपि मिलिता नृपदर्शनोत्कणिताः
‘५ सौधमच्यास्य प्रभोः प्रणामानन्तरं तदतुल्यपल्यक्ते निविष्टाः । आसनदाननियोगिभिः प्रदत्तेऽपि
पृथगासने तत्पर्यङ्कसौकुमार्यं करस्पर्शेन विचिन्त्य ‘वयमिह सुखसुखेन निपणास्तिद्वामाः’ इति
द्वये सितमुखाम्बोजे तस्युः ।

॥ इति उच्चावास्तव्यग्रामणीनां प्रबन्धः ॥

११७) अथ कदाचिज्ञालाज्ञातीयमाङ्गनामा क्षत्रियः श्रीसिद्धराजसेवार्थं सभां समागच्छन्
१० प्रत्यहं पाराचीद्यं भूमौ निहसोपविशति । उद्धरन् तद्वृयमुत्तिष्ठति । तस्य च भोजने घृतपरि-
पूर्णः कुतुप् एव व्यये याति । तस्य तु घृताभ्युक्तदाढिकानिर्माज्जिने घृतपोडशोर्वशिष्यते । कदा-
चिद्विपुरापद्ये पथ्यावसरे पव्यमाणकप्रमित्यवाग्पृथ्यप्रान्ते आयुर्वेदविवादमृतोदकमद्विहारे
किमिति न पीतमुखालब्ध्यः । यतः—

११८. पिवेद्दृष्टसहस्रं तु यावत्ताम्भुदिरोऽरविः । उदिते तु शहस्राशौ विन्दुरेकोऽवदायते ॥

१५ रजन्या: पाक्षालयघटिकाचतुर्ष्ये स्तुर्यस्यानुद्याविषये यत्पयः पीयते, जलयोगः क्रियते, तद्वज्ञो-
दक्षन्, [तैदमृतोदकं] सूर्योदये समुत्पन्ने निरक्षेः प्रातर्युदुकं पीयते तद्विप्रम् । ततः विन्दुरेकोऽपि
घटशतायते । भोजनादेव यज्ञलं पीयते तदमृतम्, भोजनान्ते तत्कालपीत पयः छत्रं “छत्रोदक-
मिति भण्यते । तेन प्रोक्तं पुनः “पूर्वाङ्गं” भुक्तमर्द्धाहारं परिकल्प्य सम्प्रति पयः पीत्वा तु नररुद्धी-
हारं करित्यामी”त्युपक्रममाणसेनैव वैयेन निपिद्य । कदाचिदेऽनुपतिना निरायुधकाराणं एषाः
२० ‘समयोचितं मे प्रहरणमिति विज्ञप्यद्वन्यदा मज्जनावसरे हस्तिपक्षेर्यमाणं हस्तिनमालोक्य
सन्निहितम्बानेन शुण्डादण्डे निहत्य मरम्याननिरीडितस्य गंजस्य पृच्छत्याभागं गृह्णन् तर्दीयामुलेन
चलेनान्तस्त्रुटितस्य करटिन उत्तारिते हस्तिपक्षे” नृपतितः सोऽसुभिर्व्युज्यत । स तु गर्जेदेवशः
भूपाले पलायिते समायातम्लेच्छान् समरे स्वेच्छयोच्छेदयन् यत्र दिवे प्रापस्तत्र श्रीपत्तने माङ्ग-
स्पिण्डलमिति प्रसिद्धिः ।

॥ इति “माङ्गप्रबन्धः ॥

२५

११९) अन्यदा म्लेच्छे शैप्रधानेषु समायतेषु मध्यदेशादैगतान् वेषकारकानाहृय रहस्यं” किंवि-
दादिद्य विसर्जनं । अथापरसिन्सायाहवसरे” समागते प्रलयकालप्रचण्डपवनप्रादुर्भवे तु
सुधर्मसधर्मामास्यानीमासाय यावदवलोकते तावदन्तरिक्षादवतरन्ते मस्तकन्यसकाङ्गेनेष्टि-
कायुगेन काञ्चनशोभां विभ्राणं पलादयुगलमालोक्य भयप्रान्ते समाजलोके रूपचरणपीठे तदु-
३० पायनं विसुच्य भूपीठलुठनपूर्वं प्रणिपत्यति विज्ञप्यमास-“यदय देवतार्चनावसरे लङ्घनागा-

७ P ‘प्रसिद्ध’ नाति । ८ Dc चातुर्मित॑ । ९ Dc अस्त्र याते । 10 De विन्दुप्रसंशयायते । 11 केवल D उडेके दृते
दृष्टते । 12 PDo छत्रं उद्दोदक० । 13 D संसुक्त० । 14 P विहाय वास्त्र । 15 BP ‘उत्तारिते शूर्वं’ इति
16 D माङ्गसाङ्ग० । 17 BD मेच्छय० । 18 AD देशागवान् । 19 BP रहसि । 20 D सायंदे ॥

प्रकाशः]

महाराजाविराजः श्रीविभीषणो राजस्यापनाचार्यस्य रुद्रुक्तुलतिलकस्य श्रीरामस्याभिरामगुणग्रामाभिरामस्य भरतं, ज्ञानमयेन चक्षुपा सम्प्रति चौलुक्यकुलतिलकश्रीसिद्धराजावतारेऽवतीर्णं स्त्रीयं स्वामिनमवशार्थ—“अकुण्ठोत्कण्ठायमानमानसोऽहं” तत्र प्रणामकरणायामगच्छामीति, किं चा प्रसुमामवागमनेनानुग्रहीत्यती”ति विज्ञप्ययौ प्रहितवान् । तज्जिर्णये श्रीमुखेन समादिशतु देवः । ताभ्यामिलयभिहिते नृपतिः किंश्चिदन्तर्विचिन्त्य स तावेवं समादिशत्—“यद्युपेव प्रफुल्ला-⁵ यलुकलहरीप्रेर्यमाणाः स्वसमये स्वयमेव विभीषणमिलनाय समेव्यामः” इत्युदीर्यं निजकण्ठशङ्खारकारिणमेकावलीहातं प्रतिप्रभृतं प्रसादीकृत्यं आष्टच्छनावसरे⁶ ‘प्रसुणाहमन्यसिद्धपि’ प्रेत्यप्रे-पणावसरे न विस्मारणीयं इति विशेषविज्ञास्ति विधायानतरिक्षमार्गं तद्राक्षसद्बृन्दं तिरोधते । तदैव ते म्लेच्छप्रधानं पुरुषा भयान्ता; स्वपौरुषमुत्सृज्य वृष्टिपुरत आहृता भक्तिभरभासुराणि वचांसि वृवाणासद्राहे समुचितमुपायनमुपनीयं श्रीसिद्धराजेन व्यस्तुज्यन्ते । ¹⁰

॥ इति म्लेच्छागमनिषेधप्रबन्धः ॥

११५) अथानन्तरं⁷ कोल्लापुरुषनगरराजः सभायां वन्दिनः श्रीसिद्धराजस्य कीर्ति वित्तन्वन्तः । ‘तदा वयं तथ्यं सिद्धराजं मन्यामहे यदा प्रत्यक्षमप्यसाकं कमपि चमत्कारं दर्शयती’ व्येतद्वागेन [तेन राजा ते]⁸ परामृतास्तत्त्वरूपं नृपतेर्विज्ञप्ययामासुः । अथ स्वामिनि सभां निभालयति तच्चित्तवेदिनीं केनापि नियोगिनाऽङ्गुलिकैन्धनपूर्वकं निजाभिप्राये प्रादुःक्रियमाणे राजा रहसि⁹ 15 तत्कारणं एष्टो नृपतेराशयं खयं¹⁰ विज्ञप्यन् “इव्यलक्षव्रयसाध्योऽयमर्थः” इति वाक्यविशेषमाह । तदैव दैवज्ञनिर्दिष्टे मुहूर्ते स वृपालुक्षव्रयमुपलभ्य वणिज्यकारो भूत्वा सर्वभाण्डानि सद्वृद्ध्य मिद्दसद्भृतं¹¹ रवच्यवितं सुवर्णपादुकायुगलमतुलं योगदण्डं च मणिमयकुण्डलयुगलं च तद्रिवयो-गणिद्वयनं योगपदं च चण्डालं द्वयोर्विच्छन्द्रातकं¹² सह नीत्वा¹³ पन्धानमुलुक्ष्य कतिपयैरहोभिस्तव्यं द-चावासाः; आसशायां¹⁴ दीपोत्सवनिदित तदगरराज्ञोऽवरोधे महालक्ष्मीदृव्याः सपर्यापर्याकुलतया¹⁵ 20 तत्प्रासादमुपेषुयि स कृतकसिद्धपुरुषसेन सिद्धेवेष्णालङ्घतः, केनापि सद्भ्यस्तोतपतेन वर्यरेण नरेणानुगम्यमानो देव्याः पीठेऽक्षसात्प्रादुरासीत् । देव्या रङ्गंसुवर्णपर्युरमर्थी सपर्यां विश्चयं-स्तदयरोधाय तदिधानि चीटकानि ददानः श्रीसिद्धराजभामाङ्कितं सिद्धेवेपं पूजाव्याजात्तत्र नियोजयोत्पत्तनवशाद्वृद्धरस्कन्यमधिरूप्य यथागतमगात् । निशावसानसमयेऽवरोधैः¹⁶ स विरो-गिणपतिसंते वृत्तान्तं¹⁷ ज्ञापितः सन् भयप्रान्तो¹⁸ नृपः स्वप्रधानमुपुष्पैस्तं प्राभृतं सिद्धाधिपतये¹⁹ 25 प्राहिणोत् । अथ तेन नियोगिना भाण्डादिक्यविक्रयं संक्षिप्तं ‘भमागममनावधि नैतेषां प्रधानानां दर्शनं देयमि’ ति वैगवता पुरुषेण विज्ञप्यामास । तदनु श्वरिति कतिपयैर्दिनैस्तत्र समुपेतः, तत्त्वरूपं विज्ञप्तिसेषां प्रधानानां तदुचितामावर्जनां चकार ।

॥ इति कोल्लापुरुषप्रबन्धः ॥

1 B अकुण्ठोक्षपादमानामानः; P अकुण्ठोक्षितमानः । 2 A स च देवमादिदेवः । 3 D कुरु । 4 D नास्त्वेत-पद्म । 5 D नृपतयामि । 6 C P स्वेच्छप्राप्ताः । 7 B विस्तुवत् । 8 P ‘मम’ इवेद । 9 A कोलाकुपु; P कोलापुर । 10 D उपाळ पूर्वते गत्वा प्राप्तते । 11 B निवेदितः; P विद्या; D तत्त्ववेदिता । 12 P अत्युद्धि वृद्धा । 13 D भक्ति ‘संवं’ । 14 D रोदेत् । 15 AB चण्डालकं । 16 P शृणुत्वा । 17 D वृत्तुरो । 18 BP सम्भासायां । 19 AD रसये । 20 AD सिद्धरूपः । 21 ABD रसयोः । 22 AD ज्ञोपैतं । 23 AD नृपुरुषान्तं । 24 P भास्त्राद्वये प्रादुः; B भास्त्राद्वयमुपर्येत् । 25 D उत्तरावद्यायः ।

१२०) श्रीसिद्धराजेन मालवमण्डलादशोवर्मा नृपतिर्निवध्यानीतः । अवसरे क्रियमणे सीलणाभिधानेन कौतुकिना 'बेडायां समुद्रो मग्न' इति तत्त्वाग्रायनेनापशब्दं वृषे इति तर्जितो घेडासमानायां गर्जरधरित्र्यां मालवकनृपतिसमुद्रो मग्न इति विरोधालङ्कारमर्थापत्त्या परि हरन् प्रभोहेममर्थीं जिहां प्राप्त ।

५

॥ इति कौतुकीसीलणप्रबन्धः ॥

१२१) कदाचित्सिद्धराजस्य वाग्मी कथित्सान्धिविग्रहिको जयचन्द्रनाशा कासिपुरीश्वरेण श्रीमदणहिल्लुरस्य प्रासादप्रयानिपानादिस्वरूपाणि पृच्छते ति दूषणमुक्तम्—'यत्सहस्रलिङ्गसरोवर-वारि । शिवनिर्माल्यतयाऽस्तृश्यतया सेवमानो लोकद्यपविरोधेन तत्र वास्तव्यो लोकः' कथमुदितोदितप्रभावः स्याद् ? । सिद्धाधिपेन सहस्रलिङ्गसरः कारयताऽनुचितमिदमाचरितमिति तत्य १० नृपतेर्वचसाऽन्तः कुपितः^१ स वृषे प्रच्छ—'अस्यां वाणारस्यां कुतस्त्वं पयः पीयते ?' नृपेण 'विष्पथगाजलमित्यभिहिते 'किं नाम सुरसरिकीरं शिवनिर्माल्यं न ? यतः शिवोत्तमाङ्गमेव गङ्गानिवासमूमिः ।'

॥ इति जयचन्द्रराजां समं गर्जरप्रधानस्योक्तिप्रत्युक्तिप्रबन्धः ॥

१२२) कस्मिन्पृथ्यवसरे कर्णादविषयदागतेन^२ सान्धिविग्रहिकेण^३ श्रीमयणल्लुदेव्या पितुर्जय-१५ केशिराजः कुशलोदन्ते पृष्ठेऽशुभिश्रोत्वन इति^४ विज्ञप्यमास—'स्वामिति ! सुगृहीतनामा श्रीजय-केशिमहीमहीन्द्रोऽयानावसरे पञ्चरात्कीडाशुक्रमाकारयन्, तेन मार्जर इत्युचरिते वृषः परितो विलोक्य निजभोजनभाजनाधो' भागवतिंत्वमोत्तुमपश्यन्, 'यदि तव विद्वालयालेन' विनाशः स्यात्तदाहं त्वया सहगमनं करवाणी^५ति प्रतिज्ञाते स यावत्पञ्चरात्तुद्विषय तस्मिन्काव्यन्वाभाजने निषीदति तावदकसात्तेन वृक्कदंशेन तं विनाशितमवलोक्य परिवर्त्ताशनकवलः, उक्तियुक्ति-२० वेदिना राजवर्गेण निपिङ्ग्यमानोऽपि-

१६०. राज्यं यातु श्रियो यान्तु यान्तु प्राणा अपि धणात् । या मया स्वयमेवोक्ता वाचा मा यातु शाश्वती ॥ इतीष्टदैवतमिदत्तमेव^६ शिरं जंगेष्टस्तेनैव शुकेन सह दाक्षनिचितां चितां विवेशा^७ ॥ इति वाग्यार्कण-नाच्छोकाम्भोधिमग्रां श्रीमयणल्लुदेवीं विशेषप्रभांपदेशाहस्तावलम्बनेन विद्वज्ञनः समन्बुद्धधार ।

१२३) अथ पितुः श्रेयसे श्रीसोमेश्वरपत्तने याद्यां गता सती सा^८ सती विवेदीवेदिन^९ कमपि २५ ग्रामणमाकार्यं तदश्वलौ जलन्यासायसरे 'यदि भवद्यपातकं दद्वासि' तदा आददामि^{१०} नान्य-थे^{११}ति- तद्वचनविशेषप्रतितोपभावः गजाभ्यकाव्यानादिभिर्दान्युत्तु^{१२} पापघटमाद्वै । स च तत्सवं विप्रेभ्यो ददानः किमिति देव्या एष्टः प्राह—'प्राक्तनपुण्योपचर्यांदस्मिन् जन्मनि नृपतिः जननी भृत्या लोकोत्तरेरेभिर्दानैः सुरुतेर्भवी भवोऽपि श्रेयस्कर इति विमुद्य भवद्यपातकं मया जगृहे । भवत्या पापथटदाने उपक्रान्ते कथिदधमद्विजोऽपि पापघटं नीत्या, सं भवतीं च

१ P अप भी० २ P प्राताय० ३ P शशालुपर्यमंसी० ४ P प्रवन्धन्द० ५ P एवदन्तग्रंथस्याने D पुछ्ये 'हिविमोत्त्वं वद्दस्तदावया दासेवक भ्रो लोकद्यपविरोधिनिद्यग्रस्त्रोकः' प्रातायः पातः । ६ P दृढः । ७ D नान्ये 'मसुक्षि' । ८ P भागवत् । ९ P विमित्वात् । १० D 'लोपेनोत्त सा । ११ D 'भोजनाम्भोदयो । १२ AD विश्वेन । १३-B नान्ति । १४ P भात् । १५ AD नान्ति 'सा सर्वं' । १६ D विर्विते । १७ AD अरो । १८ D इत्यामि । १९ D 'विमितुं । २० AP उप्योदाय० D पुण्याद् ।

प्रकाशः] भवाम्भोधौ मन्त्रपिण्डतीति मया तु संन्यस्तसमस्तविच्छेन विच्छेतदादाय उन्नर्ददता लच्छाद-
ष्टुगुणं पुर्यं लक्ष्यमिति श्रेयः सज्जग्नहे ।

॥ इति पापघटस्य प्रबन्धः ॥

१२४) अथ कदाचिन्मालवकमण्डलं विगृह्य स्वदेशनिवेशं प्रति प्रचलितः श्रीसिद्धार्थिपोऽन्त-
राळे स अप्रतिमलैभिलैर्निरुद्धमध्वानमधधार्य तसिन्वृत्तान्ते ज्ञाते सति मध्वी सान्तुतामा⁵
प्रतिग्रामं प्रतिग्रामं घोटकमुद्ग्राह्य प्रतिवृष्टं पर्याणानि विन्यस्य मेलितातिदलस्तद्यथेन भिल्ला-
न्विचास्य श्रीसिद्धराजं सुखेन स्वदेशं समानीतवान् ।

॥ इति सान्तुमत्रिवुद्धिप्रबन्धः ॥

१२५) अथ कस्यात्त्रिविशि द्वावकुण्ठौ वण्ठौ श्रीसिद्धनरेवरस्य चरणसंबाहनाव्यापृतौ तं
निद्रामुद्वित्तलोचनं विचिन्त्य, तदायो नियहानुग्रहसमर्थं श्रीसिद्धराजं सेवकजनकल्पवृक्षं सर्वरा¹⁰
जगुणनिलयं प्रशंसांस । अपरस्त्वस्यापि भूपतेः प्रज्यराज्यप्रदं प्राक्तनं कर्मेव ठागितवान् ।
एवमार्किण्ठेन राज्ञा¹¹ तसिन्वृत्तान्ते तत्कर्मणः प्रशंसां विकलीकर्तुं स्वप्रशंसाकारिणः प्रेष्य-
स्यापरमिद्वाहन्यडिनेविदितत्त्वस्य प्रसादलेखमर्पयेत्—‘घदस्यै वण्ठाय तुरुद्धमशतस्य सामन्तता¹²
देपा’ इत्यालिख्य तं महामात्यश्रीसान्तुपार्ण्वं प्राहिणोत् । अथ स यावचन्द्रशालाया निःश्रेष्या-
मयरोहति तावत्प्रस्त्वलितपदः पृथिव्यां एतदीपदङ्गमझमझीकृतवान् । तत्प्राणानुगमिनाऽपरेण¹⁵
वण्ठेन किमेतदिति पृष्ठसेन स्वस्त्रस्ये निवेदिते स मञ्चकन्यस्तो गृहं गत्वा तं प्रसादलेखसमपरस्यै
समर्पितवान् । तत्प्राणेन महामात्यस्तस्यै शततुरुद्धमसामन्ततां दद्रौ । अथानयोर्यथावद्वृत्तान्तेऽ-
वधारिते नृपतिः कर्मेव वर्णाय इति तत्प्रतिमेने ।

१२६. नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं विद्या न चापि मतुजेषु कृता न सेवा¹³ ।

पुण्यनि¹⁴ पूर्वतपसा किल¹⁵ सञ्चितानि कार्ते फलन्ति पुण्यस वर्येषु शृक्षाः ॥

॥ इति वण्ठकर्मप्राधान्यप्रबन्धः ॥

१२७. सो लयउ कूडवरडो¹⁶ तिद्वयणमन्नमिम्मि जेसठनरिन्दो । छित्तू रायवंसे¹⁷ इक्के¹⁸ छुतं कर्यं जेण ॥

१२८. *महात्मो मद्धापात्रा मद्धासानं मद्धासरः । यत्कृतं सिद्धारेन क्रियते तन्न केनचित्¹⁹ ॥

१२९. मात्रयाप्यथिकं किञ्चित्त्र सहन्ते विनीपवः । इतीव त्वं धरानाथ ! धरानाथमपाकृथाः ॥

१३०. मानं हुत्वा सरसति विषयगे सौभाग्यमझीस्त्वय रे कालिन्दि तवापला कुटिलारा रेवे रस्त्वज्यताम्²⁰

श्रीसिद्धदुरुद्धुराणाणाटिरपुस्कन्येच्छलच्छोणितसोतोतावनदीनवीनवितारकोऽम्बुधिर्वर्तते ॥

१३१. श्रीमद्वृष्ट्यारिदेवनृपते सत्यं प्रयाणोत्सवे पानीयाशयशोणैः कर्टवो वीरवणाकाङ्क्षा ।

सीपस्त्रीयपर्विनानुसमयं सञ्चिन्त्य विन्तानुरुपेण भूत्वा रोदिति मदिका च हसति ध्यायन्ति वामं ह्विषः ॥

1 B 'सान्तु' इयेष; P सान्तु हृति नामा । 2 AD 'इलकोने' । 3 D 'स्वदेश' नामि । 4 P सान्तुदिप्रबन्धः D श्रीदीप्रबन्धः । 5 P भूत्वा । 6 P सामन्तवर्दं देये । 7 P लापत्त्य स्वलिङ्गः । 8 AD नामि 'प्रसादलेखे' । 9 P विद्यारितैव नहि एव हृतापि सेवा । B विद्या न चापि न व जन्महृतापि सेवा । 10 B भारायनि; P कर्मापि । 11 P विर । 12 A 'इयेषो' D 'इलकोने'; D जातो । 13 P 'पूर्वीमति' । 14 AD 'संवर्षंसे' । 15 P पञ्चे । * D उद्धके वै-
वाप्यमन्त्र ध्ययते । 16 A 'हृते नान्दनृपेण तर्ह' प्राप्तोऽप्य वाः । D उद्धके एषद्दं पर्यं प्राप्यते । . . .

१७६. ३सपादलखः सह भूरिलक्ष्मीराजाकभूपाय नताय दत्तः ।
द्वे यशोर्वर्मणि मालयोऽपि त्वया न सेहे द्विषि सिद्धराज ॥

—इत्याच्या वदुशः स्तुतयः प्रवन्धाश्च तदीया हेयाः ।

३संब० ११५० पूर्वं श्रीसिद्धराजजयसिंहदेवेन वर्षे ४९ राज्यं कृतम् ।

५ ॥ इति श्रीमेरुद्गात्रार्थेविवरिते॑ प्रवन्धचिन्तामणि॒ श्रीकर्ण-श्रीसिद्धराजचरित्र-
वर्णनो॑ नाम चृतीयः प्रकाशः ॥ श्रंथाप्र ५७४ ॥

(अब P प्रते निम्नलिखिता- श्लोका अधिकाः प्राप्यन्ते—)

{ तदुपश्लोकनश्लोका यथा—

- [१०६] विशुनापि शुनासीरसीरवृत्तिमतीयुपा । रुपा भुजिष्ठता नीताः पिशुना येन भूषुजः ।
१० [१०७] अपारापौरुषोद्धारं खड्डार गुरुमत्सरः । सौराष्ट्रं पिष्ठवानाजौ करिणं केसरीव यः ॥
[१०८] असंख्यहरिसैन्येन प्रथिसानेकभूमृता । वद्रः सिन्धुपतिर्येन वैदेहीदयितेन वा ॥
[१०९] अमर्पणं मनः कुर्वन् विष्णोर्विष्णुभृदुब्रतौ । अगस्त्य इप्त यस्त्वर्णमणोराजभग्नोपयत् ॥
[११०] शृंगीवा दुहिता तृष्णमणोराजस विष्णुना । दत्तानेन पुनस्तसै नेदोऽभृदुभग्नोरयम् ॥
[१११] द्विपां शीर्पाणि लक्ष्मानि दृश्या तत्पादयोः पुरुः । चक्रे शकमभरीशोऽपि शङ्कितः प्रणत शिरः ॥
१५ [११२] मालवस्तामिनः प्रौढलक्ष्मीररिष्टृः स्वयम् । समित्यपरमारो यः परमारमारयत् ॥
[११३] क्षित्वा धारापर्ति राजशुक्रपत्न्याष्टुपङ्करे । यः काष्ठापञ्चरे कीर्तिराजदंसीं न्यरीविशद् ॥
[११४] एकैव जगृहे धारा नगरी नरवर्मणः । दत्ता येनाशुधारास्तु वद्यूना सहस्राः ॥
१५ [११५] धारामङ्गप्रसङ्गेन यसासन्वस शङ्कितः । प्राघूर्णकमिपाद्वृदं महोदयपतिर्ददी ॥
[११६] सुधेव वसुधा लक्ष्म्य वाञ्छिता येन विदिपा । यसोङ्गमदसिर्वाहू राहूचक्रे तमाहवे ॥
२० [११७] जनेन मेने यः स्थामी कुमार इव शक्तिमान् । ताम्रचूडघजः सोऽभृत् किन्तु केकिधजः परः ॥
[११८] येन विद्यैरुचीरेण न स राजा जितो न यः । काष्ठा कापि न सा यस यशोभिः शोभिता न या ॥
[११९] गणेश्वयेव यसाग्राम्यकरस वृष्टिर्थेः । आज्यसारः करत्सोऽभृद् गौडो मोदकवृष्टः ॥
[१२०] शशयाने यातुधानेन्द्रं वद्रा वर्यरकाभिधम् । सिद्धराजेति राजेन्द्रयोर्जवे राजराजिषु ॥
२५ [१२१] रजोभिः समरोङ्गूर्वैर्यत्युरा भलिनीकृतम् । वत्पथात्कीर्तिक्लोलैर्येन भालिवभवतम् ॥
[१२२] महीमण्डलमातर्ष्टे तत्र लोकान्तरे गते । श्रीमान् कुमारपालेऽथ राजा रञ्जितवान् प्रजाः ॥}

६ AD आदर्शे पूर्वेद पथ लम्बते । १ P आदर्शे पूर्वेप शम्भः । २ AD आदर्शे इय पक्षि “सत्यं ११५० वर्षे उपविष्टे जपासिहृदेव । वथा देन राजा वर्षे ४९ राज्य कृतम्” एवात्मी इन्यते । २ P चार्यांवि इते । ३ AD श्रीकर्णश्रीसिद्धराज शोर्विविद्यरीतिरवानावदात्वर्णनो ।

प्रकाशः]

[९. कुमारपालादिप्रवन्धः ।]

१२६) अथ परमाहृतश्रीकुमारपालग्रबन्धः^१ प्रारम्भते—श्रीमदणहिलमुरपत्तने वृहति श्रीभीम-
देवे^२ साम्राज्यं प्रति^३पालयति, श्रीभीमेश्वरस्य पुरे वृक्षलदेवीनानीष्ठी पण्डाङ्गना पत्तनप्रसिद्धं गुण-
पात्रं रूपपत्रं^४ च । तस्याः^५ कुलयोगितोऽन्यतिशायायिनां प्राज्यमर्यादां वृपतिर्विशृण्य^६ तदृत्परी-
क्षानिमित्तं सपादलक्ष्मसूल्यां क्षुरिकां निजानुचरैस्तस्यै ग्रहणके दापथामास । औत्सुक्यात्तस्या-
मेव निशि वहिरावासे प्रसानलग्नमसाधयत् । वृपो वर्षद्वयं यावन्मालवकमण्डले विग्रहाग्रहा-
तस्यौ । सा तु वृक्षलदेवी तदृत्प्रग्रहणकप्रमाणेन तद्वर्षद्वयं परिष्वत्सर्वपुरुषा शीलर्लीलयैव तस्यौ ।
जिस्सीमपराक्रमो भीमस्तृतीये^७ वर्षे स्वस्थानमगतो जनपरम्परया तस्यास्तां प्रवृत्तिमधगम्य^८
तामन्तःपुरे न्यधात् । तदद्वजो हरिपालदेवः; तत्सुतविभुवनपालः; तत्पुत्रः कुमारपालदेवः । स
तु अविदितधर्मोऽपि कृपापरः परनारीसहोदरव्य । स तु सामुद्रिकवेदिभिः ‘भवदनन्तरमयं वृपो^{१०}
भविष्यतीं’ ति सिद्धवृपो विज्ञसत्तसिन्हीनजाताविवासहिष्णुतया विनाशावसरं सततमन्वेषया-
मास । स कुमारपालस्तं वृत्तान्तर्मापद्विज्ञाय तस्मान्वृपते: शङ्कमानमानसः तापसवेषण निर्मित-
नानाविधेशान्तरभ्रमणः क्षियन्त्यपि वर्षाण्यतिवाह्य सुनः पत्तनमागतः । क्षापि मठे^९ तस्यौ ।

१२७) अथ श्रीकर्णदेवस्य श्राद्धावसरे थदालुतया निमच्चितेषु सर्वेष्वपि तपस्विषु श्रीसिद्धराजः प्रस्तेकं तेषां तपस्विनां स्वयं पादौ प्रक्षालयन् कुमारपालनाम्रस्तपस्विनः कमलकोमलौ चरणौ कर- 15 तलेन संस्थश्य तदद्वैरेवादिभिर्लक्षणै राज्याहाँड्यमिति निश्चलया दशापदयत् । तदद्विनैसंसं विस्तु द्वयमानेस्तदेव वेषभावर्त्तेन काकनाशं नष्टः । आलिङगनाशः कुलालस्यालये मृत्पात्राणामापाके^१ रथ्यमाने तदन्तर्निधाय तदातुपदिकेभ्यो राजुरुपेभ्यो^२ रक्षितः । स ऋमात्ततः सञ्चरन् तद्विलोकनाकुलेन राजलोकेन आसितः सद्विहितां दुर्गमां दुर्गभूमिमनवलोक्य कापि क्षेत्रे ध्वाङ्ग-रक्षकैः^३ क्रियमाणैऽचिन्तकण्ठकिशाविशालायानिवये सुमुपनीयमाने तं तदन्तर्निधाय तेषु स्वस्या- 20 नमागतेषु पदिकेन तवानीते पदे सर्वया तत्रासम्भावनया कुन्ताग्रेण भेद्यमानेऽपि तर्सिस्तमनासाय व्यावृत्ते राजसैन्ये, द्वितीयेऽहनि क्षेत्रायिकृतैस्ततः स्यानादुद्धृतः पुरतः कापि प्रातरान्तर्वेजन् कापि तरुच्छायाया विश्रान्तः सन्, विलान्मूपकं मुखेन स्प्यनानाकमार्कपन्तं निमृततया^४ विटोक्य, यावदेकविशासंस्ख्यानि दृष्टा एनस्तेभ्य एकं गृहीत्वा तस्मिन्^५ विलं प्रविष्टे पाश्चात्यानि तु सर्वाणि स गृहीत्वा यावदिमृतीभवति तावत्स तान्यनवलोक्य तदर्थ्या विप्रेदे । स तच्छेक- 25 न्याकुठितमानसत्त्विरं परितप्य उरुतो ब्रजन्, कयापीन्यवच्या ब्रह्मुरगृहात्पितृगृहे ब्रजन्त्या, पथि पापेषामायादिनत्रयं भूत्कामपुक्षित्रिवास्तुल्यालंकर्षपरिमुद्रालिपालिकाम्येण महितीचके ।

१२८) तदनु स विविपानि^३ देशान्तराणि परिग्रमन्^४ सन्भीतीर्थं महं० श्रीउदयनपांचेशम्बलं
यापितुमात्रः । तं पौपत्पशालास्यत्तेमाकर्षय तत्रागते तस्मिन्द्वयेन एषः श्रीहेमचन्द्राचार्यः

1 P इन्द्राभृतदर्शकं । 2 P भीमीये । 3 AD 'प्रति' नामिः । 4 D पचडादेवीः । 5 AD पवने । 6 B-
नामिः । 7 D नामिः । 8 P विष्णुः । 9 B लद्धात्मा । 10 P 'पुरुषे यों' स्नाने 'हृती' । 11 P अवश्य ।
12 BP 'भास्त्र' नामिः । 13 BP धीरजसांदेशूरः स्नाने मठे । 14 B सन्यामातः । 15 D पाके । 16 D वास्त्वेक-
परः । 17 AD संयरुद्धः । 18 B किंमित्ते । 19 B सुर्वीया । 20 BP साक्षमातितुः । 21 D किंद्रिया द्वया ।
22 AD नामिः । 23 BP विष्णुषां देवान् । 24 BP 'धृष्टम् । 25 AD गारायामातितः ।

प्रकाशः]

ल्यजसींति भाषपमाणो मरुकाम औपथमिव तद्वचः पथ्यमपि न जग्राह । वृषस्तदाकारसंवरणो-
नाऽपन्हवं विधायाऽपरस्मिन्द्वसे वृपसङ्केतितैर्मल्लैस्तदङ्गभङ्गं कृत्वा नेत्रयुग्मं समुद्भूत्य च तं
तदायासे प्रस्थापयामास ।

१७८. आदौ मयैवापमदीपि नूनं न तद्वहेन्मामवहेलितोऽपि ।

इति भ्रामदुलिपर्णापि स्फृत्येत नो दीप इशावनीपः ॥

इति विमुशशिद्धिः समन्ततः सामन्तैर्भयभ्रान्तिचित्तैस्तः प्रभृति स द्वपतिः प्रतिपदं सिपेषे ।

१३१) तेन राजा पूर्वोपकारकर्तुः श्रीमदुदयनस्याङ्गजः श्रीवारभद्रदेवनामा महामात्यश्वके ।
आलिङ्गनामा ज्यायानप्रधानः, महं० उदयनदेवश्व ।

१३२) चाहडनामा कुमारः श्रीसिद्ध्राजप्रतिपत्त्वापुत्रः श्रीकुमारपालदेवस्याज्ञामवमन्यमानः
सपादलक्षीयभूपतेः पत्तिभावं वभार । तेन श्रीकुमारपालभूपतेन सह विग्रहं चिकीर्णुप्तं¹⁰
तत्रयं सकलमपि सामन्तलोकं लक्ष्मोपचारदानादिनां स्थायतीकृत्य दुर्वारस्कन्धावारोपतं
सपादलक्ष्मोणीपतिं सहादाय देशसीमान्तमागतः । अथ चौलुक्यचक्रवर्ती अभ्यमित्रीणतया
स्कन्धावारसमीपे निजं चमूसमूहं निवेशयामास । निर्णीते सम्भवासरे निष्कण्ठके क्रियमाणे
सीमनि सत्रीक्रियमाणाणां चतुरझसेनायां चउलिगनामा पट्टहस्तिनो हस्तिपकः कस्मिन्प्रया-
गति उपेणोकुद्यमाणः ऋधादुलुकं तत्वाज । अथ सामलनामाऽमात्रयुणपावं महामात्रो¹⁵
दुरुल्लंघुदानपूर्वकं तत्पदे नियोजितः सद् राजा, स कलहपञ्चानभन्नामानमनेकर्तं प्रक्षरितं
कृत्वा तदुपरि वृषसनं निवेश्य तत्र पट्टविशदायुधानि नियोजयन्सकलकलापसम्पूर्णः¹⁶
कलापके चरणौ नियोज्य स्थयमास्त्वद्यान् । तदासनस्थचौलुक्यभूपालोऽपि सङ्घामाधिकृतमुख-
पैस्तथापनिकां कार्यमाणेषु सामन्तेषु "चाहडकुमारभेदादाज्ञाभङ्गकारिपु-इति सैन्यविषुव-
माकलद्य तं नियादिनेमात्रदेशौ । समुखसेनायां सपादलक्ष्मितिर्मल्लज्ञात्वैसङ्केतादुप-²⁰
लक्ष्य विघटिते कटकवन्धे मयैवैकाकिना योद्वयमिति निर्णीय तेनायोरणेन स्वं सिन्धुरं तत्स-
प्तिपौ नेत्रुमादिशापि तमपि तथाऽकुर्याणं विलोक्य 'कथं' त्वमपि विघटितोऽसी' लादिश्चस्तेन
विज्ञप्याचक्षे-स्वामिन! कलहपञ्चाननो हस्ती सामलनामा हस्तिपक्ष द्वयं युगान्तेषुपि न विघटते,
परं परसिन्कुम्भकुम्भे चाहडनामाकुमारस्तारच्छविनिरपिस्त्रोऽस्ति यस्य हक्कया हस्तिनोऽपि
भज्यन्ते¹⁷ । अतं उत्तरीयाच्छलयुगलेन्म सिन्धुरश्चवणी¹⁸ विधाय स निजं गजं प्रतिगजेन सम¹⁹ संघ-²⁵
द्यपामास । अथ चाहडः पूर्वमात्मसात्कृतं चउलिगनामानमारोहकं जानन् कृपाणिकापाणिः श्री-
कुमारपालविनाशाशया, निजगजात्कलहपञ्चाननकुम्भे पदं ददानः तेन यन्ना पश्चात्कृते गजे स
भूमीपतितस्तद्यग्मीपदातिभिरथारि । तदनु चौलुक्यभूपतिना श्रीमदानाकनामा सपादलक्ष-
णः²⁰ "शत्रुसत्रो भवेत्वभिहितस्तन्मुखकमलं प्रति औचियाच्छिलीमुखं व्यापारयन् प्रधानः
धर्मप्रोक्षेति सोपहासमापया तं वशयित्वा नाराचेन निर्भिद्य कुम्भीन्द्रिकुम्भे पातपित्वा³⁰

1 P भान्दूपः 2 P नवनुग्रहः 3 D डः । 4 A उद्यनदेवस युत (D युते) चाहडः । 5 P द्वितिपदे ।
6 D हृषे । 7 BP उत्तरापि भगवान् शूरविना । 8 BP उद्यनदेव । 9 D उच्छ्वः । 10 BP परिपूर्णः ।
11 B यस्तः । 12 BP लालितः । 13 D उत्तरापि युते यन्तु । 14 D उत्तरापरः । 15 D लालितः । 16 D
रूपः । 17 BP युतः । 18 BP परम्परापरिपूर्णः । 19 AD लालितः । 20 BP "रूपतिः" इत्येव ।

जितं जितमिति हृदयाणः स्वयं पोतं भ्रमयांचकार । इति सर्वेषां सामन्तानां सर्वानपि तुरङ्गमात् स नृपतिराक्रम्य जग्राह ।

॥ इति चाहृष्टकुमारभ्यवन्धः ॥

१३३) तदनु चौलुक्यराजा कृतज्ञचक्रवर्तिना आलिंगकुलालाय सप्तशतीयाममिता विविदा ५ चित्रकूटपटिका ददे । ते तु निजान्वयेन लज्जमाना अद्यापि सगरा इत्युच्यन्ते । यैश्च छिन्नक- षट्कान्तरे प्रक्षिप्य क्षितिषो रक्षितस्तेऽङ्गरक्षकपदे प्रतिष्ठिताः ।

१३४) अथ^१ सोलाकनामा गन्धवेंडसरे गीतकलया परितोपिताद्राज्ञः प्रसादेऽ पोदशार्थिकं द्रम्माणां शतं प्राप्य, तैः^२ सुखभक्षिकां विसाध्य तया^३ वालकांस्तर्पयन् कुपितेन राजा निर्वा- सितः । ततो विदेशं गतस्तत्व्यभूपतेर्गीतकलया अतुलया^४ रक्षितात्प्रसादप्राप्तं गजयुगलमानी- 10 योपायनीकुर्वन्^५ चौलुक्यभूपालेन सम्मानितः ।

१३५) कदाचित्कोऽपि वैदेशिकगन्धवेंडसुपितोऽसी^६ मुपितोऽसी^७ति तारं^८ तुम्बारावं कुर्वाणः, 'केन मुपितोऽसी^९ति राजाभिहितो 'ममातुलया गीतकलया 'समीपागतेन, मया कौतुकाङ्गलन्य- स्तकनकशृङ्खलेन' चर्यता स्मरेण^{१०} इति विज्ञप्यामास । तदनु भूपतिना समादिष्टः सोलाभिधानो गन्धवराङ्गदङ्गवीमटन् सफीतगीताकृष्टिविद्यया कनकशृङ्खलाङ्गितगलं^{११} मृगं नगरान्तः समानीय 15 तस्य भूपतेर्दर्शयामास ।

१३६) अथ तत्कलाकौशलचमत्कृतमानसः प्रभुः श्रीहमाचार्यो गीतकलया अवधिं प्रपच्छ । स तु शुष्कदार्हणः पद्मवप्त्रोराहमवधिं विज्ञस्वान् । 'तर्हि तत्कौतुकं दर्शयेत्यादिष्टः, अर्दुदाङ्गिरे विरहकनामानं वृक्षमाद्येपादानाद्य तच्छुष्कशास्त्रालयण्डं' राजाग्नेण कुमारमृत्तिकया^{१२} झूसालयात्वे निवेश्य^{१३} निजया नवगीतगीतकलया सद्यः प्रोद्धुसत्प्रहृष्टं तं निवेदयन्, सनुपतीन् भद्राकशी- 20 देमचन्द्रसूरीन्^{१४} परितोपयामास ।

॥ इति "वृहकारसोलाकभ्यवन्धः ॥

१३७) अथ कदाचित्सर्वायसरस्यितश्चौलुक्यचक्रवर्ती^{१५} कौरुणदेवीयमद्विकार्जुनाभिपानराजो मागधेन "राजपितामह"^{१६} इति विन्दमभिधीयमानमाकर्ण तदसहिष्णुतया सभां निभालयद्वृप- चित्तविद्वा मद्विष्णा^{१७}स्मदेन योजितकरसम्पुटं दर्शयता चमत्कृतः, सभाविसर्जनानन्तरमझुलि- 25 चन्द्रस्य कारणं पृच्छत्वेवमवादीत्^{१८}—'यदस्यां सभायां स कोऽपि सुभद्रो'^{१९} विद्यते यं प्रस्याप्य २५ मिथ्याभिमानिनं चतुरङ्गदृपवद्वृपाभासं मद्विकार्जुनं विनाशयामः—दत्याशयविदा मया त्वदा- देशाक्षमेण चात्मलिपन्थश्चक^{२०}" इति तदैविज्ञसितसमनन्तरमेव तं एवं प्रति प्रयाणाय दलनायकी^{२१}— कृत्य पद्माङ्गुष्ठप्रसादं दत्या समस्तसामन्तेः समं विसर्जनं । स चानवच्छिद्धैः प्रयाणैः कुरुकुणदेवा- मधिगम्य^{२२} दुर्योदयारिपूरां कलविणिनाम्नौ सरितमुत्तरन् परमिन्हृषे आयासेषु दीपमानेषु तं

१ BP De एव चित्तुर्याका यद्यभिरेष्यनन्तरा स लोकाङ्गनामा । २ D नाति । ३ D तेव । ४ D नाति । ५ दृ- द्यन्तांविवरस्ताने P भट्टी प्राप्तात् यादः 'विद्विभेष्यनवा विदेशे गतः सर्वेषु करेणु सद्गवया रजितात्प्रत्यरूपेष्यन्त्यात्मानीव ।' ५ B भाद्रं दूषेणं पूर्वं विदेशे । ६ P सातीविन । ७-१ BP सामीव्यमुरेषु चौलुक्यविकारभूपतेन । ७ BP गद्योऽङ्गवद्वृ- प्रसादः । ८ P कल्पीशः । ९ AD शास्त्राः शास्त्रः । १० BP 'इतिकार्जुनासा । B •गृष्णविदिषा । ११ P विम्ब । १२ D द्वितीयः 'पी' शब्दो नाति । १३ B हेमचन्द्रपांच । P हेमचन्द्रपांच । १४ P वृहक । D भद्रदूर्धर । १५ P शुष्काः । १६ P नाति । १७ D दृष्ट्ये । P दृष्टं तेव श्रोपे । १८ P नाति 'तुम्बः' । १९ P श्वेषमारि । २० 'अ' नाति AD । २१ D दृष्टेविद्व । २२ P भासाम ।

संग्रामसद्वं विमृशेष स मल्लिकार्जुनवृपतिः प्रहरंस्तसैन्यं त्रासथामास । अथ तेन पराजितः स तेनापतिः कृष्णवदनः कृष्णवसनः कृष्णच्छत्रालङ्घनमौलिः कृष्णगुरुदरे निवसन, चौलुक्यभू-
मुजा विलोक्य 'कस्यासौ रेनानिवेशः ?' इत्यादिए 'कुङ्गात्रप्रत्यायृत्तस्य पराजितस्यास्वदसेना-
पतोः सेनानिवेशोऽयमि'ति विज्ञेष, तस्य 'व्रपया चमत्कृतचित्तः प्रसन्नया' दृशा तं सम्भावयं
स्तदपेवैवलवद्भिः सामन्तैः समे मल्लिकार्जुनेन जेतुं नुनः प्रहितः । ['स तु कौङ्गदेशं प्राप्य] तां ५
नदीमात्रात्य पद्यावन्ये विरचिते तेनैव पथा यथातुकम्^१ सैन्यसुतार्थं सावधानवृत्त्याऽसमसमरा-
रम्भे हस्तिकन्धाभिलूपं वीरवृत्त्या मल्लिकार्जुनसेव निश्चलीकुर्वन्^२ स आम्बडः सुभट्टो दन्तिन्द-
न्तमुशलसोपानेन कुमिभक्तमभ्यलभिलूप भाव्यदुक्षामरणरसः 'प्रथमं प्रहर, इष्टदैवतं वा सर'
इत्युग्ररन् धारालकर्णालकरवालप्रहरान्महिकार्जुनेन पृथ्वीतले पातथन्, सामन्तेषु तत्पररुण्ठन-
व्याप्तेषु केसरिकिशोरः करिणमिव लीलैवै जघान । तत्नमस्तकं स्वयेन^३ वेष्टप्रित्वा तस्मिन्देशो^४ १०
चौलुक्यचक्रवर्तीन आज्ञां दापयन् श्रीमदण्हिलूपुरं प्राप्य सभानियण्णेषु द्वासप्रतिसामन्तेषु
खामिनः श्रीकुमारपालवृपतेव्यर्थाणौ तत्तित्तरः कमलेन षूजयाभासाः^५ । तथा^६ चतुर्तु ४ शशारकोवी-
साढी १, माणिकउ पठेऽवृद्धृ २, पापस्वद् हातृ ३, संयोगसिद्धि सिमा ४; तथा हेमकुम्भा ३२,
मूढा ६ मौत्तिकानां, सेष्ठृ चतुर्दन्तहस्ति १, पात्राणां १२०, कोदीसार्द्दि १४ द्रव्यस्य दण्डः ।
ऐतेष्टुमिथु सह । तदवदातप्रीतेन राजा श्रीमुखेन श्रीमदाम्बाभिधानमहामण्डलेभ्यरस्य^७
"राजपितामह" इति विशदं ददे ।

॥ इति आम्बडप्रवचनः ॥

१८८) अथ कदम्पिदणहिलूपुरे भद्रारक^८ श्रीहेमचन्द्रस्त्ररयो दत्तव्रतापाः पाहिणिनान्न्याः
स्थानातुः परलोकावसरे कोटिनमस्कारपुण्ये दत्ते व्यापत्तेरनु तत्संस्कारमहोत्सवे क्रियमाणे विषु-
रसभमस्यानसंनिपौ तत्प्रसिद्धिः सहजमात्सर्यादिभानमहापमाने सूचिते सति^९ तदुत्तरकियां^{१०}
निर्यापं तेनैव मन्त्रुना मालयकसंस्थितस्य कुमारपालवृपालस्य^{११} स्कन्धावारमलंचकुः ।

१८९. आपणहै प्रथै होईवैहै कद प्रथै कीजै हृतिं^{१२} काउ^{१३} फेरेवा^{१४} भासुसह श्रीजृद^{१५} भासु न अतिथि^{१६} ॥

इति वचस्तर्चं^{१७} विमृशन्तः श्रीमदुदयनमन्त्रिणा वृपतेनिवेदितागमनाः कृतज्ञमौलिमणिना^{१८}
मूषेण^{१९} परोपरोपात्सौधमानीताः । तद्राज्यप्रासिनिमित्ताजानं सारपद्मृपः 'भवद्भिः सदैव देवता-
प्रियावसरेऽभ्युपेतव्यमित्युपरोपयन्-

२५

१९०. शुजीमहि यं^{२०} भैरवं जीवं यासो वरीमहि । शुजीमहि महीष्टु शुजीमहि किमीश्वरः ॥

इति द्युर्मिरिमिहिते रूपः-

१९१. "एकं मित्रं भूतिर्णीयं एका भारीं सुदरी वा दूरी वा" ।

एकं द्यार्तं वेदमप्यात्मकं वा एको देवः केशवो वा जिनो वा ॥

१ P नालि । २ P वृद्धप्रसरण । ३ BP मध्यात्मित्यर्थ । ४ P संभावय । ५ BP कास्ति कोष्ठस्त्रं प्राप्यम् ।
६ D नालीरु पर्य । ७ B स्वरू । ८ AD वालि 'इति' । ९ 'वाल' नालि BP । १० P मुषेण । ११ पृष्ठवर्णनाव्याप-
यक्ते AD 'भूमेद्युपेतव्यमित्युपेतव्यमित्यासं वस्त्रं वस्त्रं' पृष्ठातः पातः । ११ AD 'नालि वारा वस्त्रं'^{११} । १२ पृष्ठमे
ABD वस्त्रेषु 'भूमेद्युपेतव्यमित्युपेतव्यमित्यासं वस्त्रं वस्त्रं' पृष्ठातः पातः इति विदिः । १२ D वास्त्रवस्त्रं ।
१३ D वालि । १४ AD वृत्तो । १५ D शोर्व । १६ AD इति । १७ AD कृष्ण । B काव । १८ D कृष्ण ।
१९ ABD वृत्तो । २० A भवि । २१ AD वस्त्र वस्त्रं । २२ AD 'मनिता' । २३ नालि D । २४ ABP परं ।
२५ BP भूमेद्युपेतव्यमित्युपेतव्यमित्यासं वस्त्रं । २५ A 'दृश्य भारीं वस्त्रानां विषय वा' पृष्ठातः पातः ।

इति भगवक्षिप्रणीतत्वात्परलोकसमारचनाय भवद्दिः सह मैत्र्यमभिलपामी'ति व्याहरतः अंप्रतिपिद्मनुमतमिति तस्य महेऽपि परीक्षितचित्तवृत्तिः श्रीमुखेन स वृषः स्वलग्नाकारिणं वेत्त्रिणां सर्वदृयकं ददौ ।

१३९) अथ तत्र गतायाते सज्जायमाने स्त्रेरुर्णग्रामस्तवं कुर्वत्युर्बीपतौ पुरोधा विरोधादाम् ५ लिङः प्राह-

१४०. विश्वमित्रपराशप्रभृतयो येऽन्येऽमृपत्राशिनस्तेऽपि त्रीमुखयद्वजं सुलितं दृढैव मोहं गताः ।

आहारं सदृतं पयोदीपयितुं शुजनिं ये मानवत्तेषामिन्द्रियमित्रहः कथमहो दम्भः समालोक्यतम् ॥

इति तद्रचनानन्तरं हेमचन्द्रः प्राह-

१४१. सिंहो वली द्विरदश्वरमासमोजी संवत्सरेण रतमेति किलैकवेलम् ।

१० पारापतः सरगिलाकणभोजनोऽपि कामी भवत्यतुदिनं वद कोऽव द्वेषुः ॥

तन्मुखमुद्राकारिणि प्रत्युत्तरेऽभिहिते सति, 'दृपप्रत्यक्षं केनापि मत्सरिणैते सिताम्बराः सूर्य-मणि न मन्यन्ते' इत्यभिहिते-

१४२. अधारं धामधामाकं वयमेव हृदि॑ स्थितम् । यसास्तव्यसने जाते॑ त्यजामो भोजनं यतः ॥

इति प्राभाण्यनैपुण्याद्वयमेव सूर्ये भक्ताः नैते तत्त्वतः । इति॑ तन्मुखयन्ये जाते कदाचिद्देवता-१५ वसरक्षणे सौधमागते मोहान्धकारधिकारचन्द्रे श्रीहेमचन्द्रे यशस्वन्द्रगणिना रजोहरणोनपद्मं प्रमार्जये कम्बले तत्र निहिते, अज्ञाततत्त्वतया किमेतदिति चृष्णेण पृष्ठः प्राह-‘कदाचिद्दिव कोऽपि जन्मतुर्भवति तदाचाधापरिहारायाऽसौ प्रयतः ।’ पृष्ठा प्रत्यक्षतया जन्मतुर्निरीक्ष्यते तदैवेदं मुख्यते नापरथा, वृथाप्रपासहेतुत्वादि॑ति युक्तियुक्तां चृष्णेऽपि भाकर्पयते त्वं सूरिभिरभिदधे-‘भवता गैज-२० तुरगाया चमः किं प्रतिदृपतिरिपापुष्टियते कियते उत पूर्वमेव॑ पथायं राजव्यवहारस्थाप धर्म-व्यवहारोऽपी॑ति तद्गुणरज्जितहृदा पूर्वप्रतिपद्मे राज्ये दीप्तमाने॒ सर्वशास्त्रविरोप्तेतुत्पातः पदाह-

१४३. राजग्रतिग्रहदग्धयानां व्रादणानां युधिष्ठिर । । दग्धानामिव वीजानां पुनर्जन्म न विषये ॥

इदं पुराणोक्तम् । तथा च जैनागमः-

सदिही गिहिमते य रायपिण्डे किमिच्छण ।

इति [प्रभूकृतं श्रुत्वा॑] तत्सम्योर्पाचमल्कृतचित्तः श्रीपत्तनं प्राप्त॑ ।

१४०) भृपोऽन्यदा मुर्नि॑ प्रमच्छ ऋक्याऽसाकमणि यशःप्रसरः कल्पान्तस्यार्था भवति॑? इति तदीपां गिरं श्रुत्वा ‘किमार्कं इय विभ्यस्याऽन्यप्यकरणात्, यद्वा श्रीसोमेभ्वरस्य काष्ठमयं प्रासादं वैरिपिशीकरनिकरैरासदाक्षमःदीर्णप्रायं युगान्तस्यायिकीर्त्ये समुद्रे॑ति चन्द्रातपनिभया श्रीहेमचन्द्रगिरोद्धसन्मुदाम्भोधिन्दृपंसमेव महार्पयितरं शुक्रं देवतं मन्यमानो विज्ञातीनितरद्विजान् निन्दन्, ततः प्रासादोद्धराय तदेव दैवज्ञनिवेदितासुलग्रस्तथ पञ्चकुलं ३० प्रस्याप्य प्रासादप्रातरमनीकरत् ।

१ D भपादः । २ D सर्वसंवर्कः । ३ D भामिणः । ४ P रिताप भास्त्रम्भरेऽ । ५ P विरामैऽ । ६ D धर्मैऽ ।

७ P भाषेव । ८ P वद छं । ९ D शतं । १० D भैते क्षयवर्तये । ११ P विराप भास्त्रेऽ नै । १२ BP विनायेसामः । १३ P विवातान्यप । १४ P मनोपात् । १५ P यातः । १६ BP इत्यर्थो वदत्प । १७ BP वद-रातिः । १८ BP उद्देश्यमसामोऽपि । १९ D विवार्तनं भिन्नते द्विजान् ।

१४१) अन्यदा श्रीहेमचन्द्रस्य लोकोत्तरैर्गुणैः परिहृष्टहृदयो नृपो मन्त्रिश्रीउदयनमिति प्रच्छ-
“यदीदृशं पुरुपरतं कसिन् समस्तवंशावतंसे वंशे समस्तपुण्यप्रवेशे देशो निःशेषपुणाकरे नगरे
चं समुद्रवर्षम्” इति नृपादेशादतु स मध्यी जन्मप्रवृत्ति तच्चरितं पवित्रमित्यमाह—‘अद्वाई-
मनामनि देशो धुन्धुकाभिधाने ‘नगरे श्रीमन्मोहवंशे चाचिगनामा व्यवहारी सतीजनमतलिका
जिनशासनशासनदैवीव तत्सर्थमंचारिणी शारीरिणीव श्रीः पाहिणीनाम्नी चासुण्डागोत्रजाया ५
आद्यास्तरेणाङ्गाङ्गितनामातयोः पुष्पश्चाङ्गदेवोऽभूत्’। स चाष्टवर्षदेशः श्रीपतनात्तीर्थयात्राप्रसिद्धेषु
श्रीदेवचन्द्राचार्येषु धुन्धुकके श्रीमोहवसहिकायां देवनमस्करणाय प्राप्तेषु, सिंहासनस्थितदीपनि-
पद्याया उपरि सवयोग्यिः शिशुभिः समं रममाणः सहसा निपसाद । तदङ्गप्रत्यङ्गानां जगद्विलक्ष-
णानि लक्षणानि प्रेष्ठ्यं-अयं यदि क्षत्रियकुले जातसदां सार्वभौमचक्रवर्तीं, यदि वणिग-विप्रकुले
जातसदां महामालाः, चेदर्दनं प्रतिपद्यते तदा युगमधान इव कलिकालेऽपि^१ कूलयुगमवतारयति- १०
सं आत्मार्थं इति विचार्यं तद्वगरत्वास्तत्त्वैव॒व॒व॒ह॒रिभिः^२ समं तङ्गिप्सथा चाचिगौकैः^३ प्राप्तं तस्मि-
आचिंग ग्रामान्तरभाजि तत्पद्या विवेकिन्या स्वागतादिभिः परितोपितः ‘श्रीसङ्घैस्त्वत्पुण्यं
पाचितुभिहागत’ इति व्याहरन्ते, अथ सा हर्षाशूणि सुञ्चती खं रत्वगर्भं मन्यमाना, श्रीसङ्घैस्तीर्थ-
कूलां मान्यः, स मत्स्तुं याचते इति हर्षास्पदेऽपि विपादः । यतेः-एतस्य पिता नितान्तमिथ्या-
“हृषिः । ताहशोऽपि सम्भवति आमे नास्ति । अथ तैव्यवहारिभिर्स्त्वया दीपतामित्युक्ते” सदोपो-१५
त्तारणाय मात्रा दाक्षिण्योदभावशुणापादं पुत्रस्तेभ्यो गुरुभ्यो ददे । तदनन्तरं तया श्रीदेवचन्द्र-
सूरीरिति तदीयमभिधानस्योदीधि^४ । तैर्गुरुभिः सं दिशुः ‘दिश्यो भविष्यसी?’ति एषः, ओमित्यु-
धरनं प्रतिनिष्ठृत्तैः समं कर्णावत्यामाजगाम^५ । स उदयनमन्त्रिगृहे तत्सुतैः समं बालधारकैः
पाल्यमानो यावदास्ते तावता^६ ग्रामान्तरादागतश्चाचिगस्तं वृत्तान्तं परिज्ञाय पुत्रदर्शनावधिसं-
न्पत्ससमस्ताहारसेषां गुरुणां नाम भव्या कर्णावतीं प्राप्तः । तद्वस्तौ समागत्य कुपितः पिता२०
ईपत्तान् प्रणनामं^७ । गुरुभिः सुतानुसारेणोपलङ्घ्य विचक्षणतया विविधाभिराकर्जनाभिरावर्ज्ये,
“तत्त्वानीतेनोदयनमन्त्रिणा धर्मवन्युद्ध्वा निजमन्दिरे नीत्वा ज्यायाः सहोदरभक्त्या भोजयांचके ।
तद्वनु चाङ्गदेवं सुतं तदुत्सङ्गे निवेद्य पञ्चाङ्गप्रसादसहितं दुकूलव्रयं प्रत्यक्षं लक्षण्यं चोपनीय
सभक्तिकमावर्जितः । तं प्रति चाचिंगः प्राह—‘क्षत्रियस्य मूलये अशीलविकसहवर्म^८, तुरगस्य
मूलये पञ्चाशदपिकानि सप्तदशाशतानि, अकिञ्चित्करस्यापि वणिजो मूलये नवनवतिकलभाः २५
एतायता नवनवतिलक्षा भवन्ति । त्वं तु लक्षण्यं समर्पयन्नोदायर्थच्छङ्गाना कार्पण्यं प्राहुःकुरुपे ।
मदीपः “सुतस्तावदनर्थ्यो भवदीया च भक्तिरनर्थ्यतमा, तदस्य^९ मूलये सा भक्तिरेवासु”, शिव-
तिर्माल्यमिवास्तुयो मे द्रव्यैस्त्रयः^{१०} । इत्थं चाचिंग^{११} सुतस्य स्वरूपमभिवधाने प्रमोदपूरित-

१ P अपदः । २ पृष्ठस्तर्गतपाठस्याने D उठके ‘एतादेशे उद्यगस्य समस्तवंशावतंसे देशे च समलग्नाकरे नगरे च कल्पि-
मन्त्रयुक्तं’ देशः पादः । ३ AD उपुष्टुकगरे । ४ D द्वितीय, ‘शासन’ नदो नास्ति । ५ BP लक्ष्मीः । ६ AD गोमदा-
योदाया । ७ BP समवनः । ८ BP धीरूपः । ९ P ते आचार्याः । १० D वज्राग्रवदः । ११ BP चाचिगाप । १२ D धीरूपः । १३ B उचल, P ध्वाहृदे; D ध्वाहृत्योः । १४ AD नास्ति । १५ BP एत-
पिता । १६ BP सत्त्वाः । १७ BP भविहिते । १८ BP ‘हृषिप्याद’ नास्ति । १९ A भवेषिः । २० BP लोकिः । २१ BP क्षेत्रानि नेते । २२ BP धान । २३ AB ध्रुमः । २४ D भववितः । २५ BP ऋषिः सहसः । २६ D
शत्रिः । २७ AD मासुः । २८ D वसः । २९ AD भक्तिरूपः । ३० P द्रविणः । ३१ P चाचिंगे पञ्चममित्राने ।

चित्तः स मत्ती अकुण्ठोक्तण्ठतया तं परिरम्भ्य साथु सार्थिति वदन् एुनः^१ प्राह—‘मम उत्त-
तया समर्पितो योगिमर्कट इव सर्वेषां जनानां’ नमस्कारं कुर्वन् केवलमपमानपात्रं भविता,
गुरुणां दत्तस्तु शुरुपदं प्राप्य चालेन्दुरिव चिसुवननमस्करणीयो^२ जापते; अतो यथोचितं विचार्य
व्याहरेत्यादिष्टः स ‘भवद्विचार एव प्रमाणमिति वदन्’ गुरुणां पात्रं^३ नीतः । सुते शुरुभ्यो^४
५ दीपतं^५ । तदनु तस्य प्रब्रज्याकरणोत्सवश्चाचिगेन चके । अथ कुम्भयोनिरिचाप्रतिमपत्रिभाभि-
रामतया समस्तवाद्यायामभोगिसुठिन्ययोऽभ्यस्तसमस्तविद्याश्यानो हेमचन्द्र इति गुरुदत्तनाम्ना
प्रतीतः सकलसिद्धान्तोपनिषद्विषयाधीः पद्धिंशता सुरिणैरलङ्घृततसुर्गुष्मिः स्तुरिपदेभि-
पिकः । इति मन्त्रिणोदयनेनोदितां हेमाचार्यजन्मप्रवृत्तिमाकर्णं दृष्टे सुमुदेतराम् ।

१४२) अथ श्रीसोमनार्थदेवस्य प्रासादारम्भे सर्वदिलानिवेशो सज्जाते सति पञ्चकुलग्रहित-
१० वर्द्धोपनीयिक्षितिकां दृष्टे^६: श्रीहेमचन्द्रशुरोदैर्ग्रथन्—‘अयं प्रासादप्रारम्भः कर्तुं निष्पत्ययूहं प्रमा-
णभूमिमधिरोद्दृष्टे^७’ इति एव्यापरिवृद्धेनानुयुक्तः श्रीमान्किञ्चिद्वितं विचिन्त्य गुरुस्त्विवाचन्—‘पदस्य
धर्मकार्यस्यान्तरायपरिहाराय ध्वजारोपं यावद्विज्ञाव्रद्धासेवा, अथवा मध्यमांसनियमो द्रुयोरेक-
तरं किमप्यङ्गीकरोतु त्रृपतिः’ इत्यभिहिते^८ तद्वचनमाकर्णं^९ मध्यमांसनियममभिलपन्, श्रीनील-
१५ कण्ठोपरि उदकं विमुच्य तत्मैभिग्रहं जग्राह । संवत्सरद्वयेन तस्मिन् प्रासादे कलशाध्वजाधिरोपं याव-
न्निवृत्ते तं नियमं सुमुक्तुर्गुरुस्तन्त्रज्ञापयंस्तैरूचे—‘यद्यनेन निजकीर्तनेन सार्वदर्मद्वचन्द्रचूडं प्रेतिशुम्
हैसि, तद्यात्रापर्यन्ते नियममोचनावसरः’ इत्यभिधायोत्थिते श्रीहेमचन्द्रशुनीद्रे^{१०} ‘तदुणौरूमील-
कीलीरागरक्तहृदयस्तमेकमेव संसदि प्रशाशनं सः । निर्निमित्तवैरिपरिजनस्ततेजः एुक्तमसहिष्णुः—
१४३. उज्वलगुणमभ्युदितं क्षुद्रो द्रुष्टुं न कथमपि क्षमते । दग्धा ततुमपि शलभो दीपं दीपाचिंपं^{११} हरति ॥

इति न्यायात्मैष्टिमांसादानदोपमप्पद्वीकूर्तं तदपवादानवौदीति—‘यदयममन्दच्छन्दनानुवृत्तिपरः
२० सेवाधर्मकुशलः केवलं प्रभोरभिमतमेव भापते । यद्येवं न, तदा प्रातरुपेतः^{१२} ‘श्रीसोमेश्वरया-
त्रायां भवान् सहागच्छतु—इति गदितः स परतीर्थपरिहारात् तद्रागमिष्यतीत्यसन्मतमेव
प्रमाणम्’ उपस्तद्वाक्यमाट्ट्य प्रातरुपगतं श्रीहेमचन्द्राचार्य श्रीसोमेश्वरयात्रार्थमत्यर्थमभ्यर्थयन्^{१३}
२५ सूरयः प्रोक्तुः—‘एष शुभस्तितस्य किं निमञ्चपात्, उत्किञ्चित्तस्य किं केकारवश्ववर्णमिति लोकरुद्देशप-
स्तिनामधिकृततीर्थाधिकाराणां को नाम दृपतेरत्र निर्वन्धः’^{१४} इत्थं गुरोरङ्गीकारे ‘किं भवत्योरप्य
३० सुखासनप्रभृति वाहनादि च लभ्यतामि?’ तीरिते ‘वयं चरणचारेणैव सञ्चरन्तः उण्यमुपालभामहे;
परं वयमिदानीमापृच्छय यितीर्मितैः प्रयाणकैः श्रीशुद्धयोज्यनादिमहातीर्थनि नमस्कृत्य
भवतां श्रीपतनप्रवेशो मिलिष्यामः’ इत्युदीर्यं तत्त्वैव कृतवन्तः । त्रृपतेः समग्रसामय्या कर्ति-
पयैः प्रयाणकैः श्रीपतनं प्रासस्य श्रीहेमचन्द्रशुनीन्द्रिमिलनादतिप्रमुदितस्य सन्मुखागतेन गण्ड०
श्रीवृहस्पतिनाऽनुगम्यमानस्य महोत्सवेन पुरं प्रविश्य श्रीसोमेश्वरप्रासादसोपानेष्वाक्रान्तेषु
३५ भू॒प॑ठलुठनादनन्तरं चिरतरातुल्यायल्कालुमानेन गाढमुपग्रहे सोमेश्वरलिङ्गे^{१५} इते जिनादपरं देवतं

१ AD श्रीमानुदयनः । २ P नाति । ३ ‘केवलं’ P नाति । ४ BP निमुक्तनमस्यां लभते । ५ B लड्डु । ६ D
युरुणां । ७ P दृष्टे । ८ P सोमेश्वर० । ९ D शिलर० । १० AD वर्द्धोपनीयामि० । ११ P अधिरोहति० । १२ एव-
त्यदृपदस्याने P ‘तन्त्रव्या’ इत्येव । १३ D चंच । १४ D पद्मविद्युतैः । १५ BP दीपाचिंपरहाति० । १६ BP उत्ति-
कृत । १७ BP अपवादमेव । † पृष्ठदन्तगतपादस्याने AD आदर्शं ‘श्रीसोमेश्वरयात्रेत्यर्थमयैति० राशा तपाहृते’ इतादृष्ट-
संक्षिप्तः पाठः ।

न नमस्कुर्वन्तीति सिद्ध्यादग्वचसा ग्रान्तचित्तस्य श्रीहेमचन्द्रं प्रति एवंविधा गीराविरासीत्-
 ‘यदि युजयते तदैतीर्मनोहारिभिरुपहारैः श्रीसोमेश्वरमर्चयन्तु भवतः ।’ तत्थेति प्रतिपद्य सद्यः
 क्षितिपकोशादागतेन कमनीयेनोद्गमनीयेनालङ्घुततनुर्नपतिनिदेशाच्छ्रीवृहस्पतिना दत्तहस्ताव-
 लम्बः प्रासाददेहलीभयिक्षु फिविदिविन्त्य प्रकाशः—‘अस्मिन्प्रासादे कैलासनिवासी श्रीमहान्
 देवः साक्षादस्तीति रोमाश्वकञ्जुकितां तनुं विश्राणो द्विषुणीक्रियतामुपहारः’ इत्यादिश्य शिवपु-५
 राणोत्तरेक्षाविधिनाऽहाननावगुण्ठनस्त्रुद्रामच्छन्यासविसर्जनोपचारादिभिः पश्चोपचारविधिभिः
 शिवमर्चयन्त तदन्ते-

१८७. यत्र तत्र समये यथा तथा योऽसि सोऽस्यमिधया यथा तथा ।

वीतदोपकल्पः स चेद्यानेक एव भगवन्मोऽस्तु ते ॥

१८८. भवतीनादुरजनना रागादाः क्षयमुपागता यस । ब्रह्मा वा विष्णुर्वा महेश्वरो वा नमस्तसै ॥ १०

इत्यादिस्तुतिभिः सकलराजलोकान्विते राज्ञि सविस्यमवलोकमाने द्रैणदप्रणामपूर्वं सुत्वा
 श्रीहेमाचार्यं उपरते सति, भूपतिः ‘श्रीवृहस्पतिना ज्ञापितपूजाविधिः समधिकवासनया शिवा-
 चर्यनन्तरं धर्मदिलायां तुलापुष्पगजदानादीनि महादीनानि दत्त्वा’ कर्प्तरारात्रिकमुक्तार्यं समग्र-
 मषि’ राजवर्गमपसार्य तद्वभूयहात्तः प्रविश्य ‘न महादेवसमो देवः, न मम तुल्यो दृष्टिः, न
 भवतसदक्षे महर्पिरिति भाग्यवैभववशादयर्थसिद्धे विकसंयोगे वृद्धदर्शनप्रमाणप्रतिष्ठासन्दिरथे १५
 देवयतन्वे मुक्तिप्रदं दैवतमस्मिस्तीर्थं तथयया गिरा निवेदय’ इत्यभिहितः श्रीहेमाचार्यः किञ्चि-
 दिपा निधाय दृपं प्राप्त-‘अलं पुराणदर्शनोक्तिभिः; श्रीसोमेश्वरमेव तत्र प्रत्यक्षीकरोमि, यथा
 तन्मुखेन मुक्तिमार्गमवैपी’ति तद्वाक्यात्किमेतदपि’ जायदीतीति विस्यापद्मामानसे दृपे ‘निधि-
 तमध तिरोहितं दैवतमस्त्वेष । आवां तु गुरुत्क्षयुक्त्या निश्चलावाराधकौ, तदित्यं द्रन्द्रसिद्धौ सुकरं
 दैवताद्वाक्यकरणम् । मया प्रणिधानं क्रियते “भवता कृष्णागुरुस्त्वेष्य कार्यः” । तदा परिहार्यो यदा २०
 यपक्षः प्रवक्षीभूय निषेधयति । अयोभाभ्यामषि तथा क्रियमाणे धूमधूम्यान्वकारिते गर्भग्रहे
 निर्याणेषु नक्षत्रमालादीप्रदीपकेषु’ आकस्मिके प्रकाशे द्रादशात्ममहसीव प्रसरति, दृष्टे नघने
 सम्ब्रमादुन्मृत्यु यावदलोकते तावद्वलाधारोपरि जायजाम्बूनदद्युतिं चर्मचञ्जुपां द्रुतालोकमप्रति-
 मरुमसद्भाव्यसरूपं तपस्थिनमद्राक्षीत् । तं पदाङ्गुष्ठात् प्रभृति जटाजूटावधि करतलेन संसृष्ट्य
 निधित्यदेवतावतारः पवाहन्तुमित्यायनितलं प्रणिपत्य भक्त्या “भूपतिरिति विज्ञप्यामास्त-‘जग-२५
 दीपा । भवद्वर्णनालङ्घनार्थं दशौ, आदेशप्रसादालङ्घनार्थय श्रवणयुगलभिः’ति विज्ञप्य तृष्णीं स्थिते
 दृपे” मोदनिदादिनमुन्मातान्मुख्यादिति दिव्या गीराविरासीत्-‘राजन् । अयं महर्पिः सर्वदेवता-
 यताः । अजिप्रभरव्याप्तयालोककरतलकलितमुक्ताकलयत्कालव्याप्तिज्ञातस्यस्त्वः । एतदुपदिष्ट
 “यासन्दिग्मो मुक्तिमार्गः” इत्यादिश्य तिरोभूते भूतपतायुननीभावं भजति” भूपतौ, रेचितप्रा-
 णापामपवनः रुपीकृतासनयन्यः श्रीहेमचन्द्रो यांवद् ‘राजन् ।’ इति वाचमुवाच, तावद्विष्टदैवत-३०
 संदेताच्यपत्तरात्यानिमानः क्षितिपनः” जीवि! पादोव्यर्थार्थतामिति त्वयाहतिपरो” विद्ययनम्-

१ D नानि । २ P कर्त्ता ‘वृद्धमुखेन’ । ३ P सदस्य । ४ P विष्णुप्रसन्नतरं दृष्टः । ५ D स दृष्टः । ६ GBP
 रामानि । ७ BP स्मितेः । ८ AD ‘भूषि’ नानि । ९ D भूषि लिपे । १० D ‘भूषि’ स्थाने ‘इति’ । ११ BP पूर्णः ।
 १२-१३ D लिपे कम्बवः । १४ D विष्णुप्रसंगम् । १५ D भूषान् । १६ D नानि । १७ P विष्णुप्रसंगम् । १८ ADP
 भूषृ पूर्णः । १९ ‘पाद् राजन्’ लिपे—१ ‘पाद् राजन्’ । D वाजनम् । २० P विना न । २१ D वैरुपी ।

मौलिर्यंत्कुत्यमादिशेति व्याजहार । अथ तच्चैव वृपतेर्यावज्जीवं पिशित-प्रेसन्नयोर्नियमं दत्ता ततः प्रत्यावृत्तौ क्षमापत्तौ श्रीमदण्हिल्लपुरं प्राप्तुः ।

१२३) श्रीजिनवदननिर्गमपावनीभिः शुद्धसिद्धान्तगीर्भिः प्रतिवृद्धो लृपः प र भा हृ त विद्वं भेजे । तदन्धर्थितः प्रभुः त्रिपटिश्वलकापुरुषवरितम्, विंशतिवीतरागस्तुतिभिस्तेतं पवित्रं ५ श्रीयोगशास्त्रं रचयाचकार । प्रभोरादेशाचाज्ञाकारिष्वष्टादशदेशेषु चतुर्दशवत्सरममितां सर्व- च्छ्रुतेषु मार्त्तिनिवारितवान् ।

[१२४] *सपर्योऽपि सतर्तं गगते चरन्तो मीरुं धमा नहि सृष्टि शृगयोः सकाशात् ।

जीयादसौ चित्तरं प्रश्नहेमस्तुरिरेकेन येन श्वरि जीवकथो निपिदः ॥

[१२५] *कलाकलापैः स्तुमहर्दै श्रीहमचन्द्रभूषणैः (१)..... ।

१० रक्ष दक्षः प्रथमः समग्रात् शृगान् यदन्यो शृगमेकमेव ॥

तेषु तेषु च देशेषु चत्वारिंशादधिकानि चतुर्दशशतानि विहाराणां कारणामास । सम्प्रवत्वमूलानि द्वादशशतान्यहीकुर्वन्, अदत्तादानपरिहाररूपे लृतीयद्वते व्याख्यायमाने रुदतीवित्तदोपाद्, पापैकनिवन्धनान् ज्ञायितो वृपस्तदधिकृतं पञ्चकुलभाकार्यं द्वाससतिलक्ष्मप्रमाणं तदायपद्मं विपात्य मुमोच । तस्मिन्सुक्ते-

१५ १८९. न यन्मुक्ते पूर्वे रुपुनुहुपनाभागमरतप्रभृत्युर्वीनायैः कृतयुगकुत्रोत्पत्तिभिरपि ।

विशुद्धन्कारुप्याचादपि रुदतीवित्तमधुना कुमारस्मापाल त्वमसि महर्वां मत्तकमणिः ॥

इति विद्वद्द्विः स्त्रयमाने-

१९०. अपुत्राणां धर्मं गृह्णन् पुत्रो भवति पार्थिवः । त्वं तु सन्तोषते शुश्वन् सत्यं राजपितामहः ॥

इति प्रभुरपि स त्रृपतिमत्तुमोदयांचक्रे ।

२० १४४) अथ सुरापृष्ठादेशीयं सउंसरंनामानं विग्रहीतुं श्रीमदुदयनमच्चिराणं दलनायकीकृत्यं समस्तकष्टकवन्धेन समं [प्रस्थापयामास] स' श्रीवर्द्धमानयुरं प्राप्य श्रीयुगादिदेवपादान्निरन्तः: पुरः प्रयाणकाय समस्तमपडलेक्षरात्रभ्यर्थ्यं स्थयं विमलगिरिमागतः । विशुद्धअद्वया श्रीदेवपादानां पूजादि विधाय चावत्पुरतो विधिवैद्यत्वबन्धनां विधत्ते तावद्वक्ष्मामालाया देवीपूष्मानां दीपवर्तिमादाय शूपकः काष्ठमयप्रासादविले प्रविशान् देवावाहरक्षेस्त्वाजितः । तदगु स.भद्री समाधिभद्रा-
२५ त्काष्ठमयवैद्यत्वासादविध्वंसंसाक्षात् जीर्णोद्भारं चिकीर्षुः श्रीदेवपादानां पुरत एकमन्त्रादीनभिग्रहान् जग्राह । तदनु कृतप्रयाणः खं स्तुन्दधारासुपेत्य तेन प्रस्थर्थिना समं समरे सज्जायमाने परे: पराजिते वृपवले श्रीमदुदयनः स्थैर्यमुत्तरस्यै । तदा तत्प्रहारजर्जरितदेहै आवासं नीतः “ सकर्णं क्रन्दन् स्वजनैस्तत्कारणं एषः—सविहिते मूल्यौ श्रीशशुद्धाय-शकुनिकाविहारयोर्जीर्णोद्भारयान्द्यया देवकर्णं षुष्ठलशम्-मद्वी प्राप्तः । अथ तैः ‘भवद्वन्दनौ धामभट्टङ्गभद्रनामानौ युहीतमिग्रहै तीर्प-
३० द्वयमुद्धरिष्यतः—हत्यये वर्यं प्रतिसुवः’ इति तदद्वीकारात्पुलकिताङ्गो धन्यंमन्यः, अन्त्याराधनाकृते

१ ABD प्रसन्नानियमः । २ 'एः क्षमापातः शृणिष्ठाः, अन्यः क्षान्ते: वर्तिः'-D टिप्पणी । * एवत्प्रदूर्ये P प्राप्तेष्व उक्तते ।

† भर एवत्प्राप्ते पूर्णादैः श्विद्वरूप एवोपलक्षः । ३ P भाष्य । ४ P भूपतिः । ५ B सवत्ता; P मुखः D तुर्परः ।

६ B इलमादपैकृतः । ७ D विद्याय नाम्पवेदै पदम् । ८ D सोपि । ९ D भावितः । १० D विन्दतमधयः । ११ D समुच्चर्यः । १२ BP •शरीरः । १३ BP भावावदः A भावाते । १४ D कंते ।

स मन्त्री कमणि चारित्रिणमन्वेषयामास । तस्मिन्नानुपलभ्यमाने कमणि वण्ठं तद्रैपमानीय निवेदिते, मन्त्री तदद्वी^१ ललाटेन परिसृशान् तत्समक्षं दशधाऽराधनां विधाय श्रीमानुदयनः परलोकं प्राप । चण्ठस्तु चन्दनतरोरिव तद्वासनापरिमलेन क्षुद्रद्वृमवद्वासितोऽनशनप्रतिपत्तिपूर्वकं रैवतके जीवितान्तं चकार ।

१४५) अथाणहित्युपुरं प्रासैस्तैः सजनैस्तं चृत्तान्तं ज्ञापितौ वाऽभटाङ्गभटौ तानेवाभित्रहान् ५ गृहीत्या जीर्णोद्वारमारेभाते । वर्षद्वयेन श्रीशत्रुघ्नेण प्रासादे निष्पत्तेऽपेत्यागतमानुपेण वर्षापनि-कार्यां यात्ययामानायां एुनरागतेन द्वितीयेन पुरुषेण 'प्रासादः स्फुटित' इत्यूचे । तंतस्तस्त्रयुपार्यां गिरं निशम्य श्रीकुमारपालभूपालमाइच्छव मह० कपर्दिनि श्रीकरणमुद्रां नियोजय तुरंगमाणां चतुर्भिः^२ 'सहस्रैः सहस्रैः श्रीशत्रुघ्नेयोपत्तकां प्राप्य खनाङ्गा' वाहृपुरुनगरं निवेशयामास । सध्रमे प्रासादे पवनः प्रविष्टो न निर्यातीति स्फुटनहेतुं शिलिपिभिर्निर्णयोक्तम्, अमर्हने तु^३ प्रासादे^४ १० निरन्वयतां^५ च विमृश्याऽन्वयाभावे धर्मसन्तानमेवास्तु; पूर्वोद्वारकारिणां श्रीभरतादीनां पङ्कौ नामास्तु-इति । तेन मन्त्रिणा दीर्घदर्शिन्या बुद्ध्या विभाव्य भ्रमभित्योरन्तरालं शिलाभिर्निचितं विधाय वर्षव्ययेण निष्पत्तेऽप्रासादे कलशादण्डप्रतिष्ठायां श्रीपत्तनसङ्घं निमच्छणारपूर्वमिहानीय महता भद्रेन सं० १२११* वर्षे ध्वजाधिरोपं मन्त्री कारयामास । शैलमयविभवस्य भम्माणीयत्व-नीसत्कपरिकरमानीय निवेशितवान् । श्रीवाहृपुरे चृपतिपुर्वनान्ना श्रीत्रिभुवनपालविहारे श्री-१५ पार्वतार्थं स्थापितवान् । तीर्थपूजाकृते च चतुर्विश्वात्यारामान्नगरपरितो वर्षं देवलोकस्य प्रासवा-सादि दत्त्वा चैतत्सर्वं कारयामास । अस्य तीर्थोद्वारस्य व्यये-

१९१. पष्टिलब्धयुता कोटी व्ययिता यत्र मन्दिरे । स श्रीवामभट्टदेवोऽव वर्णते विवृद्धैः कथम् ॥

॥ इति श्रीशत्रुघ्नेयोद्वारपत्रन्धः ॥

१४६) अथ विश्वविश्वैकसु भद्रेन श्रीआङ्गभटेन पितुः श्रेष्ठसे भृशुपुरे श्रीशत्रुनिकविहारप्रासा-२० दभारम्भे व्यन्यमाने गर्त्तापूरे नर्मदासान्निध्यादकसान्निमिलितायां भूमी छादितेषु^६ कर्मकरेषु कृपा-परवशतयात्मानमेवामन्दं निन्दत् सकलभ्रुपुद्रस्तव ज्ञम्पामदात् । तत्साहसातिशयात्तस्मिन्प्रत्यूहे निराकृते शिलान्यासपूर्वे समस्तप्रासादे निष्पत्तेऽपेत्यादेन शिलादण्डप्रतिष्ठावसरे समस्तेनगरसङ्घा-द्विमच्छणारपूर्वं तत्रानीप विधेयितमशनवाक्षाभरणादिसन्मानैः सन्मान्य समस्तेषु^७ यथागतं प्रहितेषु, आसने लग्ने सज्जायमाने भद्राकथीहेमचन्द्रसूरिपुरस्सरं सन्धपतिं श्रीमदणहित्युपुरसङ्घं २५ तत्रानीयातुर्लैवात्सल्यादिभिर्मूर्ष्यणादिदानैश्च सन्तर्प्य ध्वजाधिरोपाय सञ्चरन्नर्थिभिः^८ 'सामन्दिरं सुपुत्रं कारपिता श्रीसुभ्रतप्रासादे ध्वजं महाध्यजोपेतमध्यारोप्य ह्यपौत्रकर्पास्तत्रानालत्यं लास्य विधाय तदन्ते भूपतिनाऽन्यर्थिते आरात्रिकं गृहम् तुरंगं द्वारभ्रदाय दत्त्वा' राजा स्वयं कृततिल-कायसरः, द्वाससल्या सामन्तेश्वामरपुरपवर्पादिभिः कृतसाहाय्यस्तदात्यागतार्थं वन्दिने कृतक-द्विष्टितरणो वाहुभ्यां शृन्या चलात्करेण लौण्णावतार्यमणारात्रिकमद्वलप्रदीपः श्रीसुवत्सस्य च^९

१ BP दत्त्वर्पे । २ A उपाच । ३ BP 'वड' नाचि । ४ P चू-सहस्रैष्टैः । B तुरंगसच्चतुर्मिः सदैर्यैः । ५ B नाचि । ६ BP पष्टिलब्धिनि नगरं न्यासाव् । ७ AD च । ८ D निष्पत्तेऽपेत्यादेन । *A सं० ६५; Da-b सं० ११५१ । ९ AB सहस्रदृष्टिः । P चूर्दशः । १० D विष्टेषु । ११ D 'सम्भा' नाचि । १२ A रामन्देषु; D साकन्देषु । १३ BD *पुष्टिः । १४ D स्वयं स्व मन्दिरे । १५ P विंतं । १६ AD *वस्ते । १७ B *स्वरात्माय; D *प्रगतात्मा ।

गुरोश्वरणौ प्रणम्य साधर्मिकवन्दनापूर्वं दृष्टिं सत्वरारात्रिकहेतुं प्रमच्छ । 'यथा दूतकारो भूत् सातिरेकाच्छिरः प्रभृतीन् पदार्थान् पर्णीकुरुते तथा 'भवानप्यतः परमर्थिप्रार्थितस्त्यागरसातिरेकाच्छिरोऽपि तेभ्यो ददासीति दृष्टेणादिष्टे 'त्थोकोत्तरचरित्रेणापद्धतहृदया विस्मृताजन्ममनुप्यसुतिनियमाः श्रीहैमाचार्याः-

५ १९२. किं कृतेन न यत्र त्वं यत्र त्वं किमसौ कलिः । कलौ चेद्ग्रहतो बन्म कलिरस्तु कृतेन किम् ॥

-इत्यमात्रभट्टमनुमोद्य क्षमापती यथागतं जग्मतुः ।

१४७) अथ तत्रागतानां प्रभूणां श्रीमदाम्ब्रभट्टस्मिकदीर्घोपात्पर्यन्तदशांगितस्त्याष्ट्विन्दिविज्ञसिकायामुपागतायां सत्यां तत्कालमेव-तस्य महात्मनः प्रासाददिवावरे दृश्यतो मिथ्यादाशां देवीनां दोपः सङ्खातः-इत्यवधार्थं प्रदोषकाले यत्राश्वन्द्रतपोधनेन समं वेचरगत्योपत्पत्त निमेयमा-

१० त्रादलद्वृतभृगुपुरपरिसरसुवः प्रभवः सैन्धवां देवीमनुनेतुं कृतकायोत्सर्गस्तया जिह्वाकर्पणदद्वगणनास्पदं नीयमाना, उद्भूते शालितन्दुलानप्रक्षिप्य यशश्वन्द्रगणिना प्रदीयमाने मुशलप्रसारे प्राक् प्रासादः 'कम्पितः, द्विर्ताये प्रहरे दीयमाने' सा देवीमूर्तिरेव स्वस्यानादुत्पत्त 'वज्रपाणिवज्र-प्रहरीरभ्यो रक्ष रक्ष' इत्युचरन्ती प्रभोश्वरणयोर्निंपपात । इत्यपनवयविद्यावलाच्चन्मूलानां मिथ्याद्वयन्तराणां दोपं निश्चय श्रीसुवतप्रासादमाजग्मुः ।

१५ १९३. संसारार्पणसेवयः शिवप्रप्रसानदीपाकुरा विश्वालभ्वनश्चएवः परमतद्यामोहकेत्प्रमाः ।

किं वासाकमनोमत्तज्जट्टालानकलीलामुपस्थानान्त नवरदमवथरणयोः धीमुवतसामिनः ॥

इति स्तुतिभिः श्रीमुनिसुवतमुपास्य श्रीमदाम्ब्रभट्टमुख्यालानेन पृष्ठकृत्य यथागतमाणुः । धीमद्दुद्यनन्तैव शकुनिकाविहारे घटीगृहे राजा कौदृष्णनपतेः कलशचित्तये स्वानवयये न्यास्ततः ॥

॥ इति श्रीराजपितामह-आम्रभट्टप्रबन्धः ॥

२० १९४) अथान्यसिद्धज्ञसरे कुमारपालं दृष्टपतिः पापिद्वलिप्सया कपार्दिमद्विष्णोऽनुमतेन भोजनानन्तरक्षेणे केनपि विदुषा चाच्यमाने कामन्दकीयनीतिशास्त्रे-

१९४. पर्जन्य इप भूतानामाधारः शृणिवीपतिः । विद्वेष्ये हि पर्जन्ये जीव्यते न तु भूपती ॥

पाक्यमिदमाकर्ष्य दृष्टेमेंय ऊ प म्या इति कुमारपालभूपाठेनाभिहिते सर्वेष्यपि सामाजिकेषु न्युञ्जनानि कुर्वाणेषु तदा कपार्दिमद्विष्णमयाद्यमुखं वीक्ष्य, "एकान्ते दृष्टपृष्ठ एवमयादीत्—ऊ प २५ म्या शब्दे स्यामिना स्वपुष्टवरिते सर्वेव्याकरणेषु अप्रप्रयोगे "एनिदिदन्दामुत्पत्तिनिर्मुञ्जनानि कियमाणे मम द्वेष्वाऽप्यवाद्यमुमत्वं "समुचितम् । तपा परमाराजकं विष्यं" न तु मूर्तां राजेति प्रती-प्रभूपालमण्डलेष्वपकीर्तिः प्रसरति । अतोऽस्मित्पर्यं उपमानं "उपमेष्यं" औपम्यं उपमा-इत्याचाः शब्दाः शुद्धा इति तद्यनानन्तरं राजा शब्दन्युत्पत्तिज्ञानहेतये पद्माशाद्वर्षेष्वमें फलाप्युग-

१ P वर्णनः । २ ABD भवतोः । ३ AD इत्यामानम् । ४ AD इत्याददम् । ५ D वर्णनः । ६ AD एव्याप्तिवारः । ७ P भास्तर्वताः । ८ P वर्णवतः । ९ इत्येषां दृष्टेणाप्यविद्यारोपारं चेत्पृष्ठं विद्यते । १० इत्याद्वद्यनवयये दिवान् । ११ D वर्णनः भवते । १२ BIP वर्णवतः । १३ D एव्याप्तेष्वप्रयोगेषु द्वयान् । १४ D एव्याप्तेष्वप्रयोगेषु द्वयान् । १५ P वृष्टे । १६ P विष व । १७ P वर्णनः । १८ D वास्तव्यादद् ।

श्रकाशः]

ध्यायस्य समीपे मातृकापाठात्प्रभृति शास्त्राण्यापरन्व्यैकेन चर्पणं वृत्तिकाव्यन्नयमयीतम् । विचारचतुर्सुखमिति विश्वद्भार्जितम् ।

॥ इति विचारचतुर्सुखश्रीकुमारपालाध्ययनप्रवन्धः ॥

१४९) कस्मिन्पञ्चज्वरसे विश्वेभ्वरनामा कविर्वाराणस्याः श्रीपत्तनमुपाग्रातः प्रसुंश्रीहेमसूरीणां
संसदि प्राप्तः । तत्र कुमारपालदृष्टान्तो विद्यमाने सः:- 5

१५०. पातु बो हेमगोपालः कमलं दण्डमुद्दहन् ।

इति भणित्वा विलम्बमानो नृपेण सक्रोर्धं निरैक्ष्यत ।

पट्टदर्शनपशुग्रामं चारयन् जैनगोचरे ॥

इत्युत्तरार्द्धपरितोपितसमाजलोकः श्रीरामचन्द्रदीरीनां समस्यां समर्पयामास-

१५१. न्यायिद्वा नयने मुखं च रुद्री से गहिते कन्यका नैतकाः प्रसुतिदयेन सरले शब्दे पिधातुं दृश्यौ । 10

सर्वापि च लक्ष्मे मुखशिङ्गोत्त्वाचित्तान्विरयमित्यं सम्यगता सर्वीमिभितो द्वयमीलनकोलिए ॥

व्यापिद्वाऽ । इति श्रीकपर्दिना महामालेन पूरितायां समस्यायां पश्चात्कविः' पश्चाशत्सहस्रं
मूल्यं निजं ग्रैवेयकं श्रीकपर्दिनः कण्ठे 'श्रीभारत्याः पदम्' इत्युच्चरश्वेशशयामास । अथ तद्वैद-
रध्यनमस्तुक्तेन नृपतिना स्वसंनिधौ स्थाप्यमानः-

१५२. कथशेषः कर्णोऽजनि जनकुशा काशिनगरी सहर्षं हेपन्ते हरिहरिति हस्मीरहरयः । 15

सरस्वत्याभ्यप्रयत्नलग्नोदप्राणयिनि प्रभासस्य क्षेत्रे मम हृदयमुत्कण्ठितमदः ॥

इत्युपत्व्याऽपृच्छ्यै नृपसत्कृतः स यथास्थानंमगतः ।

१५३) कदाचिद्देवश्रीकुमारंविहारे चूपाहूताः प्रभवः श्रीकपर्दिना दत्तहस्ताचलम्ब्या यायत्सो-
पानमारोहन्ति तावश्रत्तक्याः कछुके शुणमाकृप्यमाणं विलोक्य श्रीकपर्दी-

१५४. सोहगित सहिक्षुवृत्त चूतउ ताणुं करेह । 20

एवमुक्त्वा यावद्विलम्बते

पुष्टिहिं पञ्चद तर्णीयणुं^१ जसु गुणगहणु करेह ॥

इति श्रीप्रभुपादैरुत्तरार्द्धमपूरि ।

१५५) कदाचित्प्रथ्यै श्रीकपर्दिनवी प्रणामानन्तरं श्रीसूरिरिभिर्हृते किमेतदिति पृष्ठः स प्राकृत-
भाष्या ह र ड इ इति विज्ञप्यामास । प्रसुभिरुत्तम्-'किमयापि?' अनाहृतप्रतिभतया तद्चन्द्र-25
च्छलमाकलप्य कपर्दिनोक्तम्-'इदानीं तु न!' कुतोऽन्त्योऽन्याद्योऽभृत्, मावाधिकश्च । हर्षीश्वरू-
पूर्णद्वाः प्रभवः श्रीरामचन्द्रप्रभृतिपण्डितानां पुरस्तात्त्वातुर्णं प्रशशांस्युः । तैरज्ञाततन्वैः किमिति
पृष्ठो ह र ड इ इति शब्दच्छलेन हकारो रडः; असाभिरुत्तम्-'किमयापि?' इत्यभिहितमात्रेण
यत्प्रस्तर्त्यविद्वाऽनेन नेदानीमुत्तम् । यतः पुरा मातृकाशास्त्रे हकारः प्रान्ते पञ्चते अत एव
रडः; साम्यतं त्वस्मद्वामनि प्रथमस्तथा मात्राधिकश्च । 30

॥ इति ह र ड इ प्रवन्धः* ॥

^१ 'पृष्ठ वृत्तप्रयत्नप्रवन्धः' । हेत्येन P आदर्शः । 1 B याजारस्तः । 2 BP उपेतः । 3 D 'प्रभु' नामिः । 4 B भीष्मः P भीष्मिकः । 5 BP नास्त्रेतपदम् । 6 D 'एच्छमानो भाष्ट्यः' । 7 P यथागतः । 8 AD 'इमरपालविहारः' ।
9 D 'चाणुः' P चाणुः । 10 B 'जगुः' । 11 P जिता नः । 12 AD भाद्रः । 13 BD परिः । 14 D नास्त्रेतपदम् ।

* D पृष्ठ एवेदुः समाहिष्यपूर्वं शास्त्रं विषयते ।

१५२) कदाचित्^१ केनापि पण्डितेर्वशीशब्दे शकारस्तालव्यो दन्त्यो वेतिष्ठृष्टे यावत्प्रभवः किञ्चित्समादिशन्ति तावत्, जरौ देते^२ उर्वशीति पञ्चकं लिखित्या श्रीकपर्दिना प्रभोस्तसः मुक्तम् । तत्प्रामाण्यात्तालव्यशकारनिर्णयस्तदग्रे प्रसुभिरभिहितः ।

॥ इत्युर्वशीशब्दप्रबन्धः* ॥

५ १५३) अथान्यदा सपादलक्षीयराज्ञः किञ्चित्सानिधिविग्रहिकः श्रीकुमारपालनुपते: सभापाशु-पेतो^३ राज्ञा ‘भवत्सामिनः कुशालमि’ति एषः । स मिध्याभिमानी पण्डितमार्जी^४ च ‘विश्वं लातीति विश्वलस्तस्य च को विजयसन्देहः?’^५ । राज्ञा प्रेरितेन श्रीमता कपर्दिना मध्यिणा-व्युत्पन्नं आशु-गतौ इति धातोर्विरिव श्वलतीति नश्यतीति विश्वलः । अनन्तरं^६ प्रधानेन तज्जामदृपणं विज्ञाप्तः स राजा विग्रहराज इति पण्डितमुखाज्ञामं वभार । परसिन्वये स एव प्रधानः^७ श्रीकुमारपाल-१० नुपते: मुरो विग्रहराज इति नाम विज्ञपयन्, मध्यिणा श्रीकपर्दिना-विग्रो विगतनासिक एवं विधो^८ ह-राजौ खद्वनारायणौ कृतौ येन^९ इति । तदनन्तरं स त्रयः कपर्दिना नामखण्डनमीरुः कविवान्यध इति नाम वभार ।

१५४) अथान्यदा श्रीकुमारपालनुपपुरतः श्रीयोगदात्रव्याख्याताने सञ्चायमाने पञ्चदशकर्म-दानेषु वाच्यमानेषु-

१५ “दन्तकेशनखासित्वग्रहोम्यां ग्रहणमाकरे”

इति प्रसुकृते नूलपाठे पं० उदयचन्द्रं रोमाणं ग्रहणमिति भूयो भूयो वाच्यन्तं प्रसुभिर्लिपिमेदं एष स “प्राणितूर्धानाम्” इति व्याकरणस्त्वयेण प्राण्यज्ञानां सिद्धमेकत्वमिति लक्षणविशेषं विज्ञपयन्, प्रसुभिः शाधितो राज्ञा न्युञ्जयेन्न सम्भावितः^{१०} ।

॥ इति पं० उदयचन्द्रप्रपन्धः ॥

२० १५५) अथ कदाचित्स राजर्थिर्दृष्टिपूरभेजनं कुर्वन् किञ्चिद्विचिन्त्य कृतसर्वांहारपरिहारः पवित्री-भूय^{११} इति प्रसुं पपच्छ—‘यदस्माकं घृतपूरहारो युज्यते नवः?’^{१२} इति प्रसुभिरभिन्दिधं-‘विजित्वात्प्राणयोर्युज्यते, कृताभश्यनिपमस्य क्षत्रियस्य तु न । तेन पित्रिताहारस्यातुस्मरणं भवति’^{१३} इत्पर्मे-वेति पृथ्वीपतिरभित्याय पूर्वमक्षितस्याभश्यस्य प्रापयित्वं^{१४} ‘याचित्वान्’^{१५} द्वार्थिंशशशनसंक्षेपया एकस्मिन्^{१६} ‘मिडपन्चे’ द्वार्थिंशदिवारानकारयेति । राज्ञा तथाकृते, प्रसुदत्ते प्रतिष्ठैलम्बे पटपद्मान्ति जिज्ञासादमूलनायकपतिष्ठानं कारयितुं श्रीपत्रनमुषेयुपि कान्हूनामि व्यपहारिणि तप्तग्रामसुदये प्राप्तादे तद्विम्बं मुक्त्या यायुपहारान्युहीत्या स उनश्चैति तावदृपतेरहरक्षकैर्मिद्द्वे^{१७} द्वारि अन्तः प्रवेशमलभमानः किपति काले व्यतिक्रान्ते उत्पितद्वारिपालकैर्व्यतीते प्रतिष्ठोत्सवे^{१८} सतत्र प्रविश्य प्रभोः पादमूले लगित्या सोपालम्बं भूयां^{१९} ररोद । प्रसुभिरन्यथा दूरनेयं तस्य दुःखं विमुद्धप रहमण्डपादहिर्भूत्या नक्षत्रचारेण सदत्तं^{२०} लग्नमुदितं व्योम्नि विलोक्य ‘हृषपटिका-३० सम्पन्नेन नैमित्तिकेन यमिष्टुमें पिम्पानि प्रतिष्ठापितानि तेषां वर्यप्रपमाणुः । सम्प्रतितं लम्बे तु प्रतिष्ठितं पिम्पमिदं चिरायुर्दिति प्रसुभिरादिष्टम् । स तदैव प्रतिष्ठामकारपत्तत्प्रभूकं तथैव तदैः ।

॥ इत्यभश्यमक्षणप्रापयित्प्रपन्धः ॥

१ AP लग्नः २ D उक्तं भवते ३ P ग्रामपालः ४ P वारलेकर रामः ५ D इंद्रः ६ AD इंद्रः लामः ७ D लामः तुलः ८ AD एवः ९ AD शाश्वतः १० D लामपालं रामलेकर रामपालः ११ BP वृष्णि वर्षाः १२-१३ D वारलेकर रामः १४ लामपाल राम १५-१६ BP वारलेकर शाश्वतः १७-१८ D वारलिः १९ AD शाश्वतः शाश्वतः २० B वारलेकर २१ P लिला २२ D वारलेकर २३ AD वृष्णि वर्षाः २४ लाम राम २५ AD शाश्वतः

संकेतः ।

१५६) प्रधापहते घने पुरा कश्चिन्मूष्पको मृतस्तत्प्रायश्चित्ते राजा पाचिते तच्छ्रेष्ठसे' प्रसुभिस्त-
नामाङ्कितो विहारः कारितः ।

१५७) तथा च क्यापि व्यवहारिवध्याऽज्ञातज्ञातिनामग्रामसम्बन्धया पथि दिनत्रयं तु सु-
क्षितो वृपतिः शालिकरन्वेन सुहितीकृतसत्कृतज्ञातया तत्पुण्याभिवृद्धये करम्बकविहारं श्रीप-
त्तनेऽकारयत् ।

१५८) तथा युक्ताविहारस्यैवम्-सपादलक्षदेशो कश्चिद्विवेकी धनी^३ केशसंमार्जनावसरे प्रिया-
र्पितां यूकां करत्तेऽसद्गृह्यां पीडाकारिणीं तां तर्जयंश्चिरेण सूदित्वा व्यापदधामास । संनिहिते-
नामारिकारिपञ्चकुलेन सं श्रीमदणहिलपुरे समानीय वृपाय निवेदितः । तदनु प्रभूणामादेशात्त-
हण्डपदे तस्य सर्वस्वेन तत्त्वैव युक्ताविहारः कारितः ।

॥ इति युक्ताविहारप्रबन्धः ॥

१५९) अथ स्तम्भतीर्थे सामान्ये सालिगवसहिकाप्रासादे यत्र प्रभूणां दीक्षाक्षणो वभूव तत्र
त्रिमयंविम्बालङ्घतो निरुपमो' जीर्णोद्धारः कारितः ।

॥ इति सालिगवसहित्तद्वारप्रबन्धः ॥

१६०) अथ श्रीसोमेश्वरपत्तने कुमारविहारप्रासादे वृहस्पतिनामा गणः कामप्परतिं कुर्वाणः
प्रभोरप्रसादाद्वृद्धप्रतिष्ठः श्रीमदणहिलपुरं प्राप्य योद्यावद्यकेऽपि^४ प्रौढिं प्रातः^५ प्रभून् सिपेवे । १२५
कदाचिद्वातुर्मासिकपारणके प्रभूणां पादयोद्यावदशावर्तवन्दनादनु-

१६१) चतुर्मासीमासीर्विषयं पदमुर्गं नाथ निकाया क्याप्यर्थसाद्विकृतिपरिहारवतमिदम् ।
इदानीमुद्दिद्यन्विदित्यचरणगणिलोठितकलेखलक्षित्वैवैर्युनितिलक । वृत्तिर्भवतु मे ॥

इति विज्ञापयस्तत्कालागतेन राजा प्रसन्नान् प्रभून् विमृश्य स पुनरेव तत्पदद्रानपात्रीकृतः ।

॥ इति वृहस्पतिप्रबन्धः ॥

१६२) अन्यदा सर्वावसरस्यितेन राजा आलिगनामा वृद्धेप्रधानपुरुप इत्यपृच्छयत् “यदहं
श्रीसिद्धनृपतेर्हीनः समानोऽधिको वा?!” तेन चाऽछलप्रार्थनापूर्वे^६ श्रीसिद्धनृपतेरप्तनवतिर्णीणां द्वौ
योपौ; सामिनस्तु द्वौ युणौ तत्संख्या एव दोपाः^७ इति निवेदिते वृपतिर्णीपस्ये आत्मनि विरागं
दधानो यावच्छुरिकां पैक्षुपि क्षिपति तावत्तदा “तदाशयविदा तेनेति व्यज्ञपि-“श्रीसिद्धनृपतेरप्त-
नवतिर्णीणः सङ्क्रामाऽसुभद्रात्म्हीलम्पत्तादोपाभ्यां तिरोहितां^८; कार्यण्यादयो भवदोपास्तु^{२५}
समरशरता-परनार्यसहोदरतागुणाभ्यामपहुताः^९ इति तद्वचसा स पृथ्वीनाथः स्वस्थावस्थस्तस्यौ” ।

॥ इति आलिगप्रबन्धः ॥

१६३) अथ पुरा श्रीसिद्धराजराज्ये पाणिङ्गे स्पर्धमानो वामराशिनामा विषः प्रभूणां प्रति-
घानिदां विशिष्टामसहित्यः-

1 BP विषः । 2 BP प्राप्तिर्वं यस्यते भ्रेन विषः । 3 P यस्य । 4 A यस्य । BP कल्पन । 5 D
'मृ' वाति । 6 P वाति । 7 AD प्रसुरीशवालहित्या उद्दास । 8 AD 'मृ' वाति । 9 D प्राप्य । 10 D वाप्य ।
11 P इतीर्णस्युप्तः । 12 D प्रसुरीशवालहित्या उप्तः । 13 AD यस्य । 14 AB वृष्टद्वद्र । 15 AD
प्रसुरीशवालहित्या । 16 AD वृष्टद्वद्र योप्तः । 17 BP वृष्टिकामा चुर्विशिपति । 18 D वृष्टद्वद्रयः । 19 P विस्तुत्याः ।
20 P वृष्टद्वद्रयामाप्तः ।

२००. यूकालथशतावलीवलयलहोलोहुलत्कम्बलों दन्तानां मलमण्डलीपरिचयाहुर्गन्धरुद्वाननः ।
नासावंशनिरोधंनादिणिगणित्याठग्रीतिष्ठारुचिः सोऽयं हेमदसेवडः पिलपिलत्खङ्गः समागच्छति ॥

इति तदीयममन्दं निन्दास्पदं वचनमाकर्ण्णन्तर्भूतपर्यवर्त्तनापरं वचः प्रसुभिरभिहितम्—
‘पण्डित ! विशेषणं पूर्वमिति भवता किं नाधीतम् ? अतः परं सेवडहेमड इत्यभिषेयमिति’ ।
५ सेवकैः कुन्तपञ्चाङ्गागेन तंदाहत्य भुक्तः । श्रीकुमारपालनृपते राज्येष्वाङ्गो वथ इति तदृति-
च्छेदः कारितः । स ततः परं कणभिक्षया प्राणाधारं कुर्वाणः प्रभूणां पौषधशालायाः पुरतः
स्थितोऽन्नादिभूपतितपस्थिभिरधीयमानं योगशास्त्रमाकर्ण्णज्ञातयेदमपाठीत्-

२०१. आतङ्कारणमकारणदारणानां वक्रेण्ण गालिगरलं निरालि येपांशु ।

तेषां जटाधरफटाधरमण्डलानां श्रीयोगशास्त्रवचनमृतमुजिहीते ॥

१० इति तद्वचसाऽन्तर्भूतधारासारेण निर्वाणपूर्वोपतापास्तस्मै द्विगुणां वृत्तिं प्रसादीकृतवन्तः ।

॥ इति वामराशिप्रबन्धः ॥

१६३) अथ कदाचिद्वारणौ द्वौ सुराष्ट्रामण्डलनिलयौ दूहाविद्यया मिथ्यः स्पर्धमानौ ‘श्रीहेमच-
न्द्राचार्येण यो व्याख्यायते सोऽपरस्य हीनोपक्षयं ददातीति प्रतिज्ञाय श्रीमदणहिल्लुरुं प्राप्तुः ।
तदैकेन प्रसुस्तमागतेन-

१५ २०२. लिंगवाणिष्ठकाणि सा^{१३} पर्वं भागी शुह मरउ^{१४} । हेमस्थिरित्याणि^{१५} जे ईसर ते पण्डिया ॥

इत्युक्त्वा तप्त्यां^{१६} स्थिते तस्मिन्; श्रीकुमारविहारे आरात्रिकावसरानन्तरं प्रणामपरो दृपः
प्रभूणा दत्तपृष्ठिहस्तः क्षणं यावत्तिष्ठति; अन्नान्तरे प्रविद्य^{१७} द्वितीयञ्चारणः-

२०३. हेम तुहाला कर मरउ^{१८} जिह^{१९} अचन्दुर्यैरिदि । जे चंप दिष्टा शुहा तीहैं ऊहरी^{२०} सिदि ॥

इत्यनुच्छेदेन तद्वचसाऽन्तश्चमल्कृतो नृपतिरेतदेव भ्रूयोमूयः पाठ्यामास । तेन चिकृत्वः पठिते
२०४ किं पठिते पठिते लक्ष्मी दास्यसी ? ति विज्ञप्तस्तस्मै त्रिलक्ष्मीं दापयामास ।

॥ इति “चारणयोः प्रबन्धः ॥

१६४) कदाचिच्छ्रीकुमारपालनृपतिः श्रीसद्वाधिपतीभूय तीर्थयात्रां चिकीर्षुर्महता महेन श्रीदे-
वालयप्रस्थाने सज्जाते सति देशान्तरादायातयुगलिकया ‘त्वां प्रति डाहलदेशीयकर्णनृपतिरूपे-
तीति विज्ञासः । सेवदिन्दुतिलकितं लटाटं धधानो मद्विवारभेदेन साकं साध्यसद्यस्तसद्विषय-
२५ व्यमनोरथः प्रसुपादान्ते स्वं निनिन्द । अथ तस्मिन्नृपतेः समुपस्थिते महाभये त्रिविद्यवर्य-
‘द्वादशो यामे भवतो निवृत्तिर्भविष्यती’लादिदिय विद्युष्टो दृपः किंकर्त्तव्यतामूढो यावदास्ते
तायनिर्णीतवेलायां समागतयुगलिकया ‘श्रीकर्णो दिवं गत’इति विज्ञासः । दृपेण ताम्बूलमुत्सु-
जता^{२१} कथमिति शृष्टौ तावृचतुः—‘कुम्भकुम्भस्तरस्तः श्रीकर्णः निदी प्रयाणं कुर्वन्निद्रामुद्रितलो-
चनः कण्ठर्षीठप्रणापिना सुवर्णशङ्कुलेन प्रविष्ट्यग्रोषपादयेनोद्धम्बितः पश्चतामयितवान् । तस्य

१ D छास्त्र-। २ D चित्रेषोः । ३ B शिविगिनितिवालयनिष्ठाविष्णिः । ४ AD भूत-
मर्याद-। ५ BP अभिष्ठे । ६ P नाति । ७ D विहार नात्सम्बदः । ८ D ‘बृ’ नाति । ९ D भारां । १० D
दर्पणे । ११ P चचामूर्तु । १२ AD नाति । १३ B पृष्ठः । १४ D यदृ । १५ D भर्त । १६ D
भर्षणे । १७ P नाति । १८ D भर्त । १९ AD जाह । २० AD भर्षणू । २१ AD यां । २२ B उपर्या-
P उपर्यादृ । २३ D तदः । २४ D सौराष्ट्रप्रथमयोः । २५ AD उपर्या ।

प्रकाशः]

संस्कारनन्तरमावां प्रचलिताविंति ताभ्यां विज्ञाते तत्कालं पौपधवेशमनि समागतो नृपः प्रशं-
सापरः कथं कथमप्यपवार्य् द्वासप्तिमहासामन्तैः समं समस्तसंहेन च प्रभुणा द्विधोपदिश्य-
मानवत्मी धुन्युक्तकरनगरे प्राप्तः । प्रभुणां जन्मगृहभूमौ स्थायं कारितसपदशहस्तप्रभाषे ज्ञोलिका-
विहारे प्रभावानां विधित्सुर्जातिपिशुनानां विजातीनामुपसर्गमुदितं चीक्ष्य तान् विषयताडितान्
कुर्वन् श्रीशुद्धायतीर्थमाराधयामासे । तत्र^३ “दुखखक्षयों कम्मक्षयों” इति प्रणिधानदण्डक- ५
मुच्चरन् दैवत्य पाञ्चं विविधप्रार्थनावसरे-

२०४. इकाद फुल्लह माटि सामीउ “देयह सिद्धिसुहु । तिणिसउ” केही साटि कटरे भोलिम जिणवरह ॥
इति चारणमुच्चरन्तं निशम्य नवकृत्वः पटितेन नवसहस्रांस्तसौ नृपो ददौ । तदनन्तरमुज्जयन्त-
सन्निध्यौ गते तस्मिन्नक्षसादेव पर्वतकर्म्मे सज्जायमाने श्रीहेमचन्द्राचार्या नृपं प्राहोः-“इयं छत्र-
शिला युगपदुपेतयोरुभयोः” पुण्यवतोरुपरि निपतिष्ठतीति वृद्धपरंपरा^१ । तदावां पुण्यवन्तौ, १०
यदियं गीर्य सत्या भवति तदा लोकापवादः । नृपतिरेवातो^२ “देवं नमस्करोतु न वयमि”त्युक्ते
वृपतिनोपरुद्य प्रभव एव संहेन सहितौः प्रहिताः न^३ स्थम् । छत्रशिलामार्गं परिहृत्य परमिन्
जीर्णप्राकारपक्षे नव्यपद्याकरणाय श्रीवाम्भटदेव आदिष्टः । पचोपक्षये^४ व्यपीकृताख्यिपटिलक्षाः ।

॥ इति तीर्थयात्राप्रबन्धः ॥

(१६५) कदाचित्तृष्णिव्या आवृण्याय वृपतिना स्तर्णसिद्धये श्रीहेमचन्द्रसूरीणामुपदेशात्तदुरवः^{१५}
श्रीदेवचन्द्राचार्याः^१ “श्रीसहृद्वृपतिविज्ञसिकान्यामाकारितास्तीव्रतपरायणा महत्संहृद्वार्यं वि-
मृद्य विधिविहारकर्मणे पवित्रं केनाप्यलक्ष्यमाणा निजामेव पौपधशालामागता । राजा तु प्रत्यु-
द्धमदिसामर्थीं कुर्वन् प्रभुज्ञपित्तस्त्राययौ । अथ गुरोः^२ उरो वृपतिप्रभुवैः समस्तश्रावक्युतैः^३
प्रभुभिर्द्विदशावर्तवन्दन^४ दत्त्वा तौ श्रुततदुपदेशौ” शुभमिः पृष्ठे सङ्क्षिप्तार्थं सभां विसुज्य जवनि-
कान्तरितौ श्रीहेमचन्द्र-वृपती^५ तत्पादयोर्निपत्य सुवर्णसिद्धिद्याचनां चक्राते । ‘मम वाल्ये “वर्त-२०
मानस्य तमस्यापणं काष्ठभागवाहकात् याचितवल्लीरसेनाभ्यर्थं युज्मदादेशगद्धिसंयोगस्तुव-
र्णायभूव । तस्या वल्लीरमसक्षेतादिरादिष्टपतामि^६ ति श्रीहेमाचार्यं उक्तवति कोपादोपात् श्रीहेम-
चन्द्रं दूरतः प्रक्षिप्य ‘न योग्योऽसीति; अग्रे मुहूरसप्रायदत्तविद्यया त्वमजीर्णभाक्ष, कथमिमां
विद्यां भोदकप्रायां^७ तव मन्दामेर्ददिमि^८’ इति तं निपित्य नृपं प्रति ‘पतङ्गमयं भवतो नास्ति येन
जगदावृण्यकारिणी हेमनिपत्तिविद्या तव सिद्ध्यति; अपि च मारिनिवारणजिनमणिडत्पृष्ठधीकर-२५
पादिनि: पुण्ये: सिद्धे लोकद्वये किमतोऽप्यधिकमभिलपसी^९ल्यादिश्य तदैर्वै विहारकमं^{१०}कृतवन्तः॥

॥ इति सुवर्णसिद्धिनिपेष्यप्रबन्धः ॥*

{ ‘एतदा पृष्ठः राजा पूर्वमगस्त्यं तत्सर्वं कथितं प्रभुभिरिति । }
अ अ अ अ

१ P वारंतः । २ AB ब्रागापद् । ३ AD नामि । ४ AD देवद्व लामी । ५ AD लिष्टिरु । ६ D नामि,
P वर्त, A दृ । ७ AD दरो । ८ D परपरा । ९ D गीतस्त्रायासत्त्व । १० D ‘धर्व’ नामि । ११ AD लह
१२ D नामि । १३ D प्रयापा, प्रसद्यते । १४ D नामि । १५ P प्रभुणार्दिष्ट । १६ AD शुरी । १७ P सहिते ।
१८ ‘पन्द्र-दरा’ स्याने D ‘नन्दनायन्दिते वन्दनान्ते’ । १९ AD देशानन्दव । २० P नास्त्रेवत्पद । २१ AD सिद्धे ।
२२ P विद्या । २३ P लोकद्वयवस्त्रातो । २४ BP मुख्यो । २५ AD रघव । २६ P विहार । * P आदर्श
प्रदर्शप्रिष्ठाभ्यन्ते । † D एकाकृत एकाकृत विवरणे नाम्यत ।

१६६) अथ कसिन्नप्यवसरे सपादलक्षं प्रति सज्जीकृते सैन्ये श्रीवारभटस्यानुजन्मा चाहड-
 नामा मध्यी वानशौण्डतया दृष्टितोऽपि भूदामनुशिष्य भूपतिना सेनापतिश्चके । तेन प्रयाणद्वि-
 ग्रयानन्तरमस्तोकमर्थिलोकं मिलितमालोकय कोशाधिपोलुक्षद्रव्ये याचिते सति चपादेशात्-
 सिक्षददाने, अथ तं कशाप्रहररेणाहत्य सेनापतिः कटकान्निरचासयत् । स्वयं तु यद्वच्छया दानैः
 ५ प्रीणितार्थिलोकश्चतुर्दशातीसंख्यासु करभीष्वारोपितैर्द्विगुणैः सुभैः समं सञ्चरन् मितैः प्रग-
 णैर्वर्मयेरानग्रप्राकारं वेष्यामास । अथ तस्यां निशि सप्तशतीकन्यानां विवाहः प्रारब्धोऽस्तीति
 नगरलोकान् मत्त्वा तद्विवाहार्थं तथैव निशि स्थित्या प्रातः प्राकारपरावर्त्तं चकार । तत्राधिगतं
 स्वर्णकोटीः सप्त तथैकादशसहस्राणि चडवानामिति सम्पत्तिगमितां विज्ञप्तिकां वेगवत्तरं र्वपं
 प्रति प्राहिष्णोत् । स्वयं तत्र देशो श्रीकुमारपालवृपतेराज्ञां दापरित्वाऽधिकारिणो नियोजय व्यापु-
 १० इति । श्रीपतनं प्रविद्य राजसौधमधिगम्य वृपं प्रणनाम । वृपस्तु द्वितीलापावसरे तद्वृपारक्षि-
 तोऽप्येवमवादीत्-‘तच स्थूललक्ष्यतैव महदृपणं [*वादान्तिकयोः साधनादौ साधीयान् नेत्रीया-
 न्ययोगनिष्पत्तिः] रक्षामध्यः, नोऽवा चक्षुद्वेषिणोद्दु एव विदीर्घसे । यं व्ययं भवान् कुरुते तादृशं
 कर्तुमहमणि न प्रभृत्युः ।’ स इति शुतवृपदेशो वृपं प्रति ‘तथयमेव तदादिष्टं देषेन, एवंविषयं
 व्ययं कर्तुं प्रसुन् प्रभवति । यतः सामी परम्परया न वृपते: सुतः । अहं तु वृपुन्नः । अतो
 १५ मयैव साधीयान् द्रव्यव्ययः कियते । तेऽपेति विज्ञसे वृपतिस्तोर्पं करोतु रोर्पं च, निकपं निकपा-
 काक्षनश्चिप्यमासाद्य, अनर्थर्ता लभमानो वृपतिविसृष्टः स्वं पर्वं प्रपेदे ।

॥ इति राजधरद्वचाहडप्रवन्धः ॥

१६७) तथा 'तस्य कनीयान् भ्राता सोलाकनामा मण्डलीकसत्रागारमिति' विशदं थभार।

१६) अथ कदाचिद् आनाकनामा मातृज्वस्तीयस्तसेवागुणतुष्टेन राजा दत्तसामन्तपदोऽपि
 २० तथैव सेवमानः कदापि मध्यरिदिनावसरे चन्द्रशालापल्यद्वयस्तिस्य दृष्टतेः पुरोऽनिविष्टः सहसा-
 कमपि प्रेष्यं तत्र प्रासं प्रेष्य कोऽयमिति एष्टे दृष्टतिना^१ श्रीमदानाकः सं कमकरमुपलक्ष्य तत्स-
 ङ्केतान्निकेतनांनिर्गत्य सकौशशलं एष्टः पुत्रजन्मवद्वारपनिकां प्राथेयाभासः । स तया वार्त्तया तु
 दिनकरभयेव विकसितवदनारविन्दं तं^२ विसृज्य स्वं पदमुपेतः । राजा^३ किमेतदिति एष्टसेन
 सामिनः पुत्रोत्पत्तिरिति विज्ञतेः स च सुधारथवः स्वगतं किविद्वयार्थं तं प्रति प्रकाशं प्राह-
 २५ यज्ञन्म निवेदपितुमयं कर्मकरो वेत्रिभिरस्तत्त्वित पद्येभां भूयमाप^४ तायता एष्योपचयेनायं गूर्ज-
 रदेशो नृपो भावी, परमसिन्दुरे धबलगृहे च न; यतोऽतः स्यानादृतप्रपतिस्य तवाग्रे सुतोत्पत्ति-
 निवेदिता, " ततो हेतोर्नासिन्द्रागरेभरत्वम्^५ ।

॥ इति विचारचतुर्भुवेन श्रीकृष्णपालदेवेन निर्णीतो ॥ लघुणप्रसादराणकमयन्धः ॥

२०५. आज्ञावर्तिपु मण्डलेषु विपुलेष्यादश्यादरादच्छान्वेष चतुर्दश्य प्रसुमरां मारिं निवार्पीजसा ।

३०- कीर्तिस्तम्भनिभाष्यतर्दशयुवीसंख्यानिवारांस्तथा कृत्या निर्मितवान्तुमारनुपर्विज्ञनो निजेनोव्ययम् ॥

1 P कोरारप्रथात् । 2 AD चीं । 3 P शापमासा । * कोडिकला धंडि: AD भाद्रें प्रयते । 4 D खोरें ।
 5 D भाद्र । 6 AD 'इनि' नावि । 7 P नृपतिना भाइः । 8 B निरोद्धार, P नावि । † पुष्टिलंगप्रदायने P
 भाद्रें 'इन्हें उपजननम् पद्माविवेचे दिनकारमात्राविद्वित्तविन्द्रं सुनृपत्वमन्तं' एतादाः पादः । 9 P फिरिर्विनाः । 10 D प्र-
 यमाप । 11 P वृषागोःये निरेतिः । 12 D निर्विद्यु । 13 P विद्या नाम्य गणकं शास्त्रः ।

- [१२६] {कणटि गूजरे लाटे सौराष्ट्रे कच्छ-सैन्यवे । उद्यार्था चैव भैमेयां मारवे मालवे तथा ॥
 [१२७] कौंकणे तु तथा राष्ट्रे कीरे जांगलके पुनः । सपादलक्षे मेवाडे ढील्यां जालन्वरेऽपि च ॥
 [१२८] जन्मतामभयं सप्तन्यसनानां निपेधनम् । वादनं न्यायवृष्टाया खदीधनवर्जनम् ॥}

१६९) अथ प्रभोः कदाचित्, कच्छपराजलक्षराजभातुर्महासल्याः शापाच्छ्रीमूलराजान्वयिनां राजन्यानां लूतारोगः सङ्क्रामतीति सम्बन्धात्^१ यहिर्भर्मप्रतिपत्त्यवसरे प्रभोस्तुष्णितराज्यभारे श्रीकुमारपाले तच्छद्रेण प्रविश्य लूताव्याधिर्वाधामधात् । तहुःखदुःखिते सराजलोके राज्ञि प्रणिधानाक्रिजमायुः सवलं वीक्ष्याद्याह्नयोगान्यासेन प्रभवत्ते लीलयोन्मूलितवत्तः ।

१७०) कदाचि कदलीपत्रादिरुदं कमपि योगिनमालोक्य विस्मिताय वृपतये आसनवन्धेन चतुरहुलभूमिल्यागाद्व्याघरन्द्रेण निर्यतेजःयुक्तं प्रभवो दर्शयामासुः ।

१७१) अथ चतुरशीतिवर्षप्रमाणायुः पर्यन्ते निजमवसानदिनमवधार्यान्याराधनक्रियायामन-१० शनपूर्वं प्रतरव्यायां तदर्तिरत्तिताय वृपतये 'तेवापि पण्मासीशेषमायुरास्ते, सन्तत्यभावाद्विद्य- मान एव निजामुत्तरक्रियां कुर्यां इल्लुचित्य दशमद्वारेण प्राणोत्क्रान्तिमकार्युः । तदनन्तरं प्रभोः संस्कारस्याने^२ तदस्य पवित्रमिति राज्ञा तिलकव्याजेन नमधक्के । ततः समस्तसामन्तैस्त- दनु नगरलोकैस्तत्रयस्तत्त्वायां गृह्यमाणायां तत्र हेमवद्धु इत्यवापि प्रसिद्धिः ।

१७२) अथ राजा वाप्पाविलोचनः प्रसुशोकविकृचमनः सचिवैर्जित्प्रसुप्तावीत्-स्वपुण्या-१५ जितोत्तमतमलोकान् प्रभूत्वं शोचामि किं तु निजमेव सप्ताङ्गं राज्यं सर्वथा परिहार्ये राजपिण्ड- दोषदूषितं यन्मातृप्रसुदकमपि जगहुरोरङ्गे न लयं तदेव शोचामींति प्रसुणुगानां सारं सारं सुचिरं विलप्य प्रमूदिते दिने तदुपदित्विधिना समाधिमरणेन नृपः स्वर्णोक्मलंचकार ।

(अथ P आदर्शे निष्ठोवृता पतदुपशोकनश्लोकः प्राप्यन्ते-)

- [१२८] {पृथुप्रभूतिभिः पृथंगच्छद्विः पार्थिवैर्दिवपृथ । स्वकीयगुणरत्नानां यत्र न्यास इवापितः ॥
 [१२९] न केनलं महीपालाः सायकैः समराहणे । गुणलोकं कृष्णयैरेति निजिताः पूर्वजा अपि ॥
 [१३०] वीतरागतेर्वेष्य मृतविचानि मृत्वतः । देवसेव नृदेवस युक्ताभृदमृतार्थिता ॥
 [१३१] करवालजलैः स्तातो वीतरागमेव योग्रहीत् । वैरां वाप्पामुत्तराभिनिवीराणां न तु थियम् ॥
 [१३२] शूराणां सम्मुखान्तेष्य पदानि समरे ददी । यः पुनर्स्तकलघ्रेष्य मुखं चक्रे पराज्ञात्मम् ॥
 [१३३] हृदि प्रविष्टयद्यावाणिक्षेत्रान्धूर्णितं शिरः । जाङ्गलक्षोणिपालेन व्याचक्षाणैः पैररूपि ॥
 [१३४] वृद्धारतप्रभाकर्म नशं गर्वादकुर्वेतः । कणदाः कुरुणेयस्य वक्तव्यार शरैः शिरः ॥
 [१३५] रागाद् भृषालभृषाल-भृषिकार्णयोरुष्टे । शृदीतो येन यूधानीं स्तनादिव जयत्रियः ॥
 [१३६] दक्षिणशितिर्प्रतित्वा यो जग्नाद् द्विपद्वयम् । तदशोभिः करिप्यामो विवृं नश्यद्विपद्वयम् ॥
 [१३७] दिदारं कुर्यात् वैतिविनाकृचमण्डलम् । महीपाण्डलमुद्दृष्टविश्वारं येन निर्ममे ॥
 [१३८] पादलग्रंमहीपालैः पशुमिथ वृणान्तेः । यः प्रार्थित इत्यत्पर्महिंसाप्रतमप्रहीत् ॥} 30

१७३) सं० ११९९ चर्पपूर्वं ३१ श्रीकुमारपालदेवेन राज्यं कृतम् ।

१ P भरतो एव एतप्रज्ञेऽप्यत्रं प्राप्यते । १ D नाति । २ D संभालतीति स न्यापि उमारपाले भाद्रमधाव । सम्बन्धव- ।
 ३ D एम्बुद्धम् । ४ D नाति । ५ D संस्कारदद्वु ।

१७४) सं० १२३० वर्षेऽजयदेवो राज्येऽभिपित्तः ।

(पत्रक्षणनामकाऽपि P आदर्शे पते विशिष्टाः शोकाः प्राप्यन्ते—)

[१३१] {भूपालोऽजयपालोऽभूत्कल्पदुमसमस्ततः । चक्रे वसुन्धरा येन काङ्गनकिञ्चना ॥

[१४०] दण्डे मण्डपिका हैमी सह भर्तैर्मतङ्गजैः । दच्चा पादं गरु येन जाङ्गलेशादगृहात् ॥

५ [१४१] जामदग्ध इवोदामधामसमस्तिभास्करः । क्षत्रास्त्रक्षालितां धात्री श्रेत्रियवा चकार यः ॥

[१४२] दानानि ददते नित्यं नित्यं दण्डयतो नृपात् । नित्यषुद्धतो नारीर्यसासीत् विग्रहः समः ॥

[१४३] धृतपार्थिनेवयो निष्कान्तेऽध शतकरौ । नयन्ताभिनयं चक्रे मूलराजस्तद्ग्रन्थः ॥

१७५) अस्मिन् अजयदेवे' पूर्वजप्रासादान् विध्वंसयति सति सीलणनामा कौतुकी नृपते:

पुरुः प्रारब्धेऽवसरे कृतकामपदुतां मायथा निर्माय तत्र स्कलिपतं तृणमयं देवकुलगच्छकं उत्त्रेभ्यः

१० समर्प्य 'ममानन्तरं भक्तयतिशयेनारायनीयमि' लृगुशिष्यान्व्यावस्थायां यावदास्ते तावत्तेन लघुत्पुत्रेण तत्त्वूर्णं चूर्णितमाकर्ण्य 'ऐ उत्त्राधम!' श्रीमद्यजयदेवेनापि पितुः परलोकानन्तरं तद्वर्स्यस्यानानि विध्वंसितानि, त्वं त्वद्युत्तर्वै मयि विद्यमानेऽपि चूर्णयन् अधमाधमतां गतोऽस्मीति तत्स तद्वसरालापेन् सद्वप्नो नृपत्ससादसमझसाद्विरराम । तद्विनावाशिष्टाः श्रीकुमार-

विहारा अद्यापि दृश्यन्ते । श्रीतारङ्गदुर्मुख अजयपालनामा अजितनाथो धूतेरित्युपायेन रक्षितः ॥

१५ १७६) तदनु श्रीअजयदेवेन श्रीकपर्हिमन्त्री महामात्यपदं दातुमल्यमध्यर्थितः । 'प्रातः

शाकुनान्यवलोक्य तदनुमत्या प्रभोरादेशमाचरिष्यामी' ल्यभिधाय शकुनगृहं गतः । ततः

सप्तविंश्ट दुर्गादेव्याः पाचितं शाकुनमवाप्य तच्छकुनं एष्पाक्षतादिभिरभ्यर्थ्यं कृतकूलं' मन्य-

मानः पुरगोपुरान्तः' प्राप्तो नदन्तं वृषभमीशानदिग्भागे विलोक्यातिशयसरेमनाः' सं निवा-

समासाद्य भोजनानन्तरं सख्यद्वेन यामिकेन शाकुनस्वरूपं पृष्ठः श्रीकपर्दीं तदद्ये तत्स्वरूपमा-

२० दिश्य तांस्तुष्टाव । ततो मरवृद्धः'-

२०६. नवुचारेऽव्यवप्यमे दुर्गे' संनिहिते भये । नारीकार्ये रणे व्याधौ विपरीता प्रशस्तते ॥

इति प्रामाण्याद्वयानासन्नव्यपसनतया मतिप्रश्नात्प्रतिकूलमप्यनुकूलं मनुषेऽपि । यस्तु' वृषभो भवता

शृगः परिकर्तिपतः सोऽपि भवद्युपापत्त्या विवस्याद्युत्तरं पद्यर्थद्वाहनोद्धारजगर्वतः । इति तदुत्तिः

मयमन्यमाने तस्मिन्नामाच्युच्य तीर्थान्यवगादुः' गते, स नृपतिना प्रसादीकूलां मुद्रामासाद्य महता

२५ महेन समधिगतनिजसौर्ये विश्रम्य निशि नृपतिना विधृतः समानप्रतिष्ठैरभिर्यितुमारव्यः ।

२०७. जो करिपाण कुम्भे पायं दाण्डं मुचिएः' दलद । सो सीहो विहिषतोऽग्ने जन्मद्युपर्याप्तिणां सहृद ॥

इलादि विशृशन्कटादिकार्याणां प्रक्षेपकाले-

२०८. अधिभाः कनकस दीपकपिद्या विश्राणिताः कोट्यो' वादेषु प्रतिवादिनां विनिहिताः शात्वार्थगम्य गिरः ।

उत्तरात्प्रतिरोपितेनुर्पतिभिः शारीरिक फीडितं कर्तव्यं कृतमधिता यदि विधेस्त्रिये सजा वरम् ॥

३० स सुधीरिति कौन्यमधीर्यस्तथैव व्यापादयांचक्रे ।

॥ इति मन्त्री' श्रीकपर्दीप्रवन्धः ॥

१ P विना नान्यप्रद पदः । २ P विना नान्यप्रद । ३ AD व्यापि । † एकदन्तमध्येत्यस्याने ABD 'भगवत्मोर्तीवि रत्तरालप्येन' एकादशः पदः । † पृष्ठमन्तं पक्षि, P भाद्रो एवोपठन्ते । ४ P इवहृतमार्ता । ५ P गोउतिर्णः । ६ P नामसः । ७ ABP नाति । ८ D तपा । ९ D मुते । १० D दस्यता दृप्तः । ११ D तद्राशत उपमः । १२ D कृद्यन्तरामादुः । १३ P मुतिः । १४ P सो विहिषेण सीहो । १५ AD परितुर्णः । १६ P रातपः । १७ AD तपः कार्यः । १८ AD 'मन्त्री' नामिः ।

प्रेक्षाः]

- १७७) अथ प्रवन्धशतकर्ता रामचन्द्रस्तु तेन भूपापसदेन तस्तात्रपटिकार्या निवेश्यमानः-
२०१. महिवृद्ध सच्चाचरह जिणि सिरि दिन्हा पाय । तसु अस्थमणु दिणेसरह होइ तु होउ चिराय ॥
इत्युदीर्घं दशनग्रेण रसनां छिन्दन विष्व एव व्यापाद्यांचक्रे ।

॥ इति रामचन्द्रप्रवन्धः ॥

- १७८) अथ राजपितामहः श्रीमानाम्रान्बदस्तर्जोऽसहिष्णुभिः सामन्तैस्तैः समं तदा लङ्घाव- ५
सरैः प्रणामं कारथद्विराक्षिप्त एवमवार्दीत्- 'देवदुद्धा श्रीवीतरागस्य, गुरुदुद्धा श्रीहेमचन्द्रमहर्षेः,
स्वामिदुद्धा कुमारपालस्यैव मे नमस्कारोऽस्मिन् जन्मनीति । जैनधर्मवासिनससधातुना तेनेत्य-
भिहिते रुद्धे राजा युद्धसज्जो भवेति तद्विरामाकर्ण्य श्रीजिनविष्वं समस्यच्यर्द्दनशानं प्रपाद्याङ्गी-
कृतसद्वामदीक्षो निजसौधाद्राज्ञः परिग्रहं निजभट्टवातेन तुपनिकरमिव विकिरन् घटिकागृहे
प्राप्तः । तेयां भलीमसानां सङ्घजनितं कश्मलं धारातीर्थं प्रक्षालय तत्कौतुकालोकनागताभिरप्सरो- १०
मिरहं पूर्विकया विष्यमाणो देवभूयं जगाम ।

२१०. यं भैरुवीर्यं वरमपि च खिङ्गदनकुते वरं वेश्याचार्यं वरमपि महाकूटनिषुणैः ।
दिवं याते दैवादृद्यनसुते दानजलयौ न विद्विर्भार्यं कथमपि वृद्धभूमिवलये ॥

२११. विभिर्विर्भार्यभिर्मार्तिविभिः पैष्ठस्त्रिभिर्दिनैः । अत्युप्रपृथपापानामिहैव फलमञ्चुते ॥

इति पुराणोक्तप्रामाण्यात्स कुनृपतिर्वयजलदेवनामा प्रतीहारेण क्षुरिकया हतो धर्मस्यानपातन्- १५
पातकी कृमिभिर्भेद्यमाणः प्रद्यक्षं नरकमन्तुभूय परोक्षतां प्रपेदे ।

सं० १२३० पूर्वं वर्षे ३ अजपदेवेन राज्यं कृतम् ।

- १७९) सं० १२३३ पूर्वं वर्षे २ चालमूलराजेन राज्यं कृतम् । अस्य मात्रा नाइकिदेव्या परमर्दि-
न्मपतिसुतपोतसंगे विशुद्धं सुतं तृप्तं निधाय गाडरांशब्दनामनि धाटे सङ्घामं कुर्वत्या म्लेच्छराजा
तत्सन्यादकालगातजलदपटलसाहाय्येन विजित्ये । २०

[१४४] [*चापलादिव यात्येन रिद्धता समराङ्गये । तुरुप्काधिपतेयेन विप्रकीर्णं वहयिनी ॥

[१४५] *यदित्यस्त्वस्त्वच्छक्षालस्त्वमुद्दिविलोक्यन् । पितः प्रालेयशैलस न स्वरत्यर्तुदाचलः ॥

[१४६] *द्वृत्युभूमिते तत्र धात्रा कल्पतुमभूते । उज्जगामात्तुजन्मास्य श्रीभीम इति भूषति ॥

१८०) सं० १२३५ पूर्वं वर्षे २३ श्रीभीमदेवेन राज्यं कृतम् ।

[१४७] *भीमसेनेन भीमोत्तमं भूपतिर्वं कदाचन । वक्षापकारिणा तुलयो राजहसदमक्षमः ॥ २५

अभिन् राजनि राज्यं कुर्याणि श्रीसेहडनामा मालधूपतिर्गर्जरदेशविघ्वंसनाय सीमान्त-
मागतः ततः प्रधानेन सम्मुखं गत्वेत्यचादि-

१८२. प्रापो रात्मार्णणं । पूर्वसामेव राजते । स एव विलयं याति पथिमाशावलम्बिनः ॥

इति पितृदासुपशुर्ति' तद्विरामाकर्ण्य स पथाद्यिवृते । तदनु तेनं तत्पुत्रेण श्रीमद्वृन्दामेवनामा
गृन्दरद्वा॑भद्रोऽपारि ।

१ D दिन । २ P रिता निरि । ३ AD सोदम सोद । ४ AD प्राप्तोद्देश । ५ D 'पातन' नामि । ६ D 'मुर्चं
दृष्टि' नामि । ७ A रित्य । ८ B गारुदा । ९ P भारते पूर्व पश्चिमाध्यद्यवं प्राप्तते । १० AD नामि पश्चिमद्यम् ।
११ D नामि । १२ P गृन्दरपाता ।

१८१) श्रीमद्भीमदेवराज्यचिन्ताकारी व्याघ्रपल्लीयसङ्केतप्रसिद्धः श्रीमदानाकनन्दनः श्रीलवण-
प्रसादध्विरं राज्यं चकार । तत्सुतः साम्राज्यभारथवलः श्रीवीरधवलः । तन्माता मदनराज्ञी देव-
राजनान्नो भगिनीपते: पदक्षिलस्य भगिन्यां विपन्नायां तस्य वहुतरमनिर्वह्माणमापद्वारं निशम्य
तन्निवैहणाय लवणप्रसादाभिधपतिमापृच्छय शिशुना वीरधवलेन समं तद्र गता सर्ता तेन
५ सृष्टहणीयगुणाकृतिरिति गृहिणी चक्रे । श्रीलवणंसाङ्कृतान्तं सम्यगवगम्य तं व्यापादपितुं निशि
तद्वै प्रविष्टः । निश्वृतीमूर्य स यावदवसरं निरीक्षते, तावत्स भोजनायोपविशन् वीरधवलं विना
नान्नामींति भूयो भूयो व्याहृत्य निर्वन्धात्समानीयैकसिन्नेव स्थालेऽशक्तकसादापतितशरीरिणं
कृतान्तमिव सातङ्कमालोक्य इयामलास्यो मा भैपीरिति तेनोचे-‘यदहं त्वामेव हन्तुमागतः पर-
मसिन्मन्दने वीरधवले वात्सल्यं साक्षाच्क्षुपा निरीक्ष्य तदायहानिर्वित्तोऽसी’त्युक्त्वा तेन
१० सत्कृतो यथागतं जगाम ।

१६३) श्रीधरलक्ष्मापुर्णा

१८२) वीरध्वलस्यापरपितृकांः राष्ट्रकूटान्वयाः साक्षण-चामुण्डराजादयो वीरवतेन^४ सुखनतल-
प्रतीताः ।

१८३) अथ स धीरघवलक्षण्यित्रिय उन्मीलितकिञ्चित्वेतनस्तसान्मातृदृष्टान्तात्परमाणस्तहृहं
व्यक्तत्वा निजमेव जनकं सिपेवे । स तु' आजन्मोदार्यगाम्भीर्यस्यैयनयविनयोचित्यदयादानदा-
१५ क्षिण्यादिगुणशालीं शालीनतया कण्टकग्रस्तां कामपि सुभाकृत्य पित्रापि कियत्कृतजनपदम्-
सादो द्विजन्मना चाहडनाशा सचिवेन चिन्त्यमानराज्यभारः ग्रामवाटवंदामुक्तामणिना पुरा-
श्रीमत्पत्तनयास्तव्येन तत्कालं तत्रायात्तेजः पाठमञ्चिणा सह सौहार्दस्त्वपेदे ।

[१०. वस्तुपाल-तेजःपालप्रवन्धः ।]

१८४) अथ प्रकृतमश्चिणो जन्मप्रयन्तं सुमः*-कदाचिद्धीमल्पत्वते भद्रारकशीहरीभद्रस्त्-
२० रिभिव्यर्थ्यानावसरे कुमारदेव्यनिधाना काचिद्विघवातीष रूपवती [याला'] सुहुर्ष्वहुर्निरी-
द्धयमाणा तत्र स्थितस्याशराजमध्यिणद्वित्तमाचकर्षं । तद्रिसज्ञनानन्तरं मध्यिणानुयुक्ता उरव
इष्टदेवतादेशाद्-‘असुष्या: कुक्षौ सूर्यचन्द्रमसो र्भाविनमयतारं पद्यामः । तत्सासुद्रिकानि
भूयो भूयो विलोकितयन्तः’ इति प्रभोर्विज्ञाततत्त्वः स तामपहृत्व निजां प्रेयसीं कृतव्यान् ।
ऋग्मात्तस्या उदरेऽवतीर्णां तायेव ज्योतिष्केन्द्राविष्वं वस्तुपालतेजःपालाभिधानौ सचिवाव-
२५ भूताम् ।

१८७) अधान्यदा श्रीर्थरथवलदेवेन निजव्यापारभारायान्पर्यमानः प्राक् ससौपे तं सप-
तीकं भोजयित्वा श्रीअनुपमा राजपद्धै श्रीजयतलदेव्यै निजं कर्षेमयताडङ्गुरम् कर्षेमयो
मुक्ताकलसुवर्णमयमणिधेणिभिरन्तरिताभिर्निंपद्ममेकावलीहरं प्राभृतीचकार । मध्निः

1 P 'प्रियमनिकामा'। 2 BP नाति 'धीकरण'। 3 AD नातुरा। 4 D नात्वादेव।
 5 D 'माता' नाति। 6 D सत्योदयं। 7 P 'गामीस्त्रैपैर्वारिगुणाती' ह्यं। 8 P 'मृत्युषूल'। * P विद्या भव्य-
 विद्यावस्थाने 'महिलासु जन्मयाऽप्येषम्' प्राप्तस्तं पत्तयम्। 9 P व्रतादेव एव सद्दो विधते। 10 BP अत्याह।
 11 B 'केवलार्थितवद्'।

प्रकाशः]

प्राभूतमुपदैकितं निपिद्य निजमेवं व्यापारं सर्वपयन् 'यत्तवेदार्तीं वर्त्तमानं वित्तं तत्ते कुपि-
तोऽपि प्रतीतिपूर्वं पुनरेवाददामी'ति अक्षरपत्रान्तरस्यन्धपूर्वकं श्रीतेजःपालाय व्यापारसम्ब-
न्धिनं पञ्चाङ्गप्रसादं ददौ ।

२१३. अकरात्कुरुते कोशमधधादेशरक्षणम् । शुक्तिंवृद्धिमयुद्धाच स मध्मी बुद्धिमांश सः ॥

१८६) निखिलनीतिशास्त्रोपनिषद्पण्णधीः स्वसामिनं वर्द्धयन् भानूदये कालपूजया विधि- ५
चंच्छीजिनमर्चित्या, गुह्यां चन्द्रनकर्पूरपूजानन्तरं द्वादशावर्त्तवन्दनादनु यथावसरप्रत्याख्या-
नपूर्वमध्यमेकैकं श्लोकं गुरोराध्योति । मध्मावसरानन्तरं सद्यस्करसवतीपाकभोजनानन्तरं, मुञ्जाल-
नामा महोपासकस्तदङ्गलेखकोऽवसरे रहस्यि- 'स्वामिनाऽहर्मुखे शीताज्ञमाहार्यते किं वा
सद्यस्कमि'ति पृच्छन्तं मध्मिणा' ग्राम्योऽयं इति द्विस्त्रिर्वर्धीर्य कदाचित्क्रोधात्मवन्धात् पशुपाल
इत्याक्षिप्तः । स धूतवैर्यं 'उभयोः कश्चिदेकतरः स्यादित्यमिहते' तद्वचथातुरीचमत्कृतचित्तेनै॑१०
मध्मिणा' 'अनधिगतभवदुपदेशाव्यनिरहम्, तद्विज्ञ ! यथास्थितं विज्ञप्त्यतामि' लादिष्टः स वाग्मी
ग्रोवार्थं 'यां रसवतीमतीव रसस्तुं सद्यस्तां प्रभुरभ्यवहरति तां प्राक्षुण्यरूपां जन्मान्तरित-
तपास्यनशीतलां मन्ये' । किं वेदं मध्मा गुरोः सन्देशवचनमाविष्कृतम्, तत्त्वं तु त एवावधार-
यन्तीति तत्र पादाववधार्यताम् ।' तेनेति विज्ञसः श्रीतेजःपालनामा मध्मी कुलगुरुभद्रारक-
श्रीविजयसेनस्तुरीणामन्यर्णमागतः । शुहिर्घर्मविधि॒१५ शुरुन् प्रपञ्च । तैरुपासकदशाभिधससमाझा-
ज्ञिनोदिते देवपृजावद्यक्यतिदानादिके गृहिधर्मे समुपदिष्टे, ततःप्रभृति स देवतार्चनविशेषजैन-
मुनिदानाय धर्मकूलमारब्धवान् । वर्षपित्रियदेवतावसरायपदेन पृथक्कृतेन पट्टिंशत्सहस्र-
प्रमणेन द्रव्येण याउलायामे श्रीनेमिनायथप्रासादः समजनि ।

(अन्त P आदर्शे निष्पाता विशेषाः श्लोका लिखिता छन्दन्ते-)

[१४८] सांयानिकज्ञो येन कुर्वाणो हरणं वृणाम् । निपिद्दस्तदभूदेष धर्मदाहरणं भुवि ॥

[१४९] सृष्टास्यैनिपेद्याय विद्यावाच्यधिवेदिकाम् । पुरुजसिन् वारिततेन तक्षविक्रियविषुवः ॥

[१५०] यज्ञगूर्नं यत्र यज्ञादं तस्त्र तदचीकरत् । उत्पत्तिहत्यानां हि रिक्तशूण्यहेतवे ॥

[१५१] अकलपयदनल्यानि देवेभ्यः काननानि यः । हरनेत्रायतिपास्य यत्र न सराति सरः ॥

[१५२] रम्मास्तम्मानिर्तप्स वनेषुपूर्विपेतिं । मनोज्ञामनोवैः स्वर्गस्तीन्दर्धमाददे ॥

[१५३] संगृहीनानि हरीतशुकुचित्यशिवणिडिभिः । धर्मशास्त्रसधर्माणि यदोद्यानानि रेतिरे ॥

[१५४] दर्यपूर्व शुमनोभावं श्रीमत्तामतुलमयम् । काननानां स्वयन्धनां स्वयन्धनामिवाकरोत् ॥

[१५५] आददानाः पर्यपूर्वं परत्तासारोपु यासाराः । विराजनेतरां पारावाराण्विव पयोधराः ॥

[१५६] अक्षरपद्यं वार्षीर्यार्थी यः कियातः । सुधायामपि मायुर्यं वज्रलैर्गलहस्तितम् ॥

[१५७] ताः प्रापाः कारितास्तेन वर्द्यां पितृतां पदः । दृष्ट्यन्साक्षानि पाल्यानां न रूपं पश्यतां दद्यः ॥

[१५८] मरार्पनतरी ब्रदपुरी येनाय निर्ममे । यस्मां ग्राघन्ति सामानि नरा नार्यस्तु वद्यतः ॥

[१५९] क्षुद्रं वेष्यता दुर्भः कीर्तिंहृष्टैः पर्दैसि । दशापि ग्राहिता येन दिव्यः वेताम्बरपत्रम् ॥

1 D धर्मर्यापः । 2 D वाप्राक्षरामवायदः । 3 A D रेगादिः । 4 D वन्दनः । 5 B रूपीतः । 6 P ज्ञ-
पेत्यन्तः । 7 BP विद्ये ईः । 8 AD वाचिः । 9 AD यामेषे देवा येषाः । 10 AD देवायम्भिर्जितः । 11 P
द्युम्पः । 12 AD 'सिद्धः' इत्येवः । 13 AD वाचिः । 14 BP याम्युग्राः । 15 D मन्यते । 16 D 'पृथिपम्' इत्येवः

- [१६०] येन पौष्पशालात्ताः कारितात्तारितात्मना । मध्ये वेताम्भर्यासां विशुद्धिः सुंधर्या वहः ॥
 [१६१] यस पौष्पशालासु यतयः संवसन्ति ते । सदा येषामदाराणामात्मभूसम्भवः कुरुः ॥
 [१६२] ज्ञानालयं यस तज्ज्ञुर्याचां देवी ददे मुदा । निर्त्य येनैष धर्मस्य गति द्वाहमापीक्षते ॥

१८७) अथ सं० १२७७ वर्षे सरस्वतीकण्ठाभरण-लघुभोजराज-महाकवि-महामात्य-श्रीवस्तु-
 ५ पालेन महायात्रा प्रारेते । गुरुपादिष्टे लग्ने तत्कृतसङ्ग्राहियत्वान्विषेकेण श्रीदेवालयप्रसाने उपक-
 म्यमाणे दक्षिणपक्षे दुर्गादेव्याः स्वरमाकर्ण्य स्वयं तद्विदा शाकुनिकेन किंश्चिन्तयति । केश्चिन्म-
 रुद्धः 'शकुनं भारितं विधेही' द्यभिदधानः, शकुनाच्छब्दो वलीयानिति विचार्य पुरात्महिरावासेषु
 श्रीदेवालयं संस्थाप्य शकुनव्यतिकरं एषो मार्गेवैपम्ये शकुनानां वैपरीत्यं श्लाघ्यते । राज्यविकल-
 तायां तीर्थमार्गाणां वैपम्यम् । तथा यत्र सा दुर्गा इष्टिपर्यं गता तत्र कमपि दक्षं पुरुषं प्रस्थाप्य सं
 10 प्रदेशो दर्शयताम् । तथाकृते स पुरुषं इति विज्ञप्यामास- 'यत्तस्मिन् वरण्डके' नवीक्रियमाणे सा-
 द्वैत्रयोदशो घरे' (यहे?) निपण्णा देव्यभूत् । अथ स मरुद्वद्वो 'देवी भवतः सार्वद्वयोदशसंख्या
 यात्रा अभिहितवती' अन्त्यार्द्ययात्राहेतुं भूयः एषे स प्राह- 'इहातुलमद्गलावसरे तद्वक्तुं न युक्तम् ।
 समये सर्वं निवेदिय्यामीति वाक्यानन्तरं श्रीसङ्खेन समं स मञ्ची पुरतः प्रयाणमकरोत् । सर्वं
 15 संख्या-वाहनानामद्वपञ्चमसहस्राणि, एकविंशतिशतानि श्वेताम्भराणाम्, विशाती द्विवास-
 15 सामूँ; सङ्घरक्षाधिकारे सहस्रं तुरंद्रमाणाम्, सप्तशती रक्तकरभीणाम्, सङ्घरक्षाधिकारिणश्च-
 त्वारो महासामन्ताः । इत्थं समग्रसामद्या मार्गमतिक्रम्य श्रीपादलिपिः पुरे स्वयं कारिते श्रीमहा-
 वीरचैत्यालङ्घनस्य श्रीलिलितसरसः परिसरे आवासान् दापयामास । तत्र तीर्थराधनां विधिवदि-
 धाय मूलप्रासादे काब्धनकलशाम्, प्रौढजिनयुगलम्, श्रीमोहेरुवायतार-श्रीमन्महावीरचैत्यालाभ-
 कमूर्ति-देवकुलिकामूलमण्डपेणरुभयतथत्थतुष्टिकाद्वयपङ्कि-शकुनिकाविहार-सल्यावतार-
 20 चैत्यपुरतो रजतमूलयं तोरणम्, श्रीसङ्ख्योदया मठाः, जामि'सप्तकस्य देवकुलिकाः, नन्दीभ्यरा-
 वतारप्रासादः, इन्द्रमण्डपेण्वतः तन्मध्ये गजाधिरुद्धश्रीलिपयणप्रसाद-चीरधवलमूर्ती, तुरङ्गाधिरुद्दे-
 निजमूर्ती, तत्र सप्तं पूर्वपुष्पमूर्तयः, सप्त गुह्मूर्तयश्च, तत्सन्धिं चतुष्पिकायां ज्यापोद्वाग्रोम-
 हं०मालदेव्य-लूणिगयोराधकमूर्ती, प्रतोली, अनुपमासरः, कण्ठिंपक्षमण्डपतोरेणप्रभृतीनि
 25 यहूनि 'धर्मस्यानानि रचयांशके । तथा नन्दी-वरकर्मस्याये कण्ठेलीयापाणसत्कजातीपोडश-
 स्तम्भेषु पावकंपर्वतात् जलमार्गाणानीयमानेषु समुद्रकण्ठोपकाषे उत्तार्यमाणेषु, एककः स्तम्भ-
 स्तपापक्षे निमग्नः यथा निरोह्यमाणोऽपि न लभते । तत्पदेऽपरपाणस्तम्भेन प्रासादः प्रमाण-
 कोटि नीतः । वर्णान्तरे वारिधियेतावशात्पङ्कनिमग्नः स एव स्तम्भः प्रादुरासीत् । सचियसमा-
 देशात्तस्मिस्तत्र सञ्चार्यमाणे प्रासादो विर्दीण इति निवेदितुमागताय परप्रभापकायापि पुरुषाप
 हैमां जिह्वां स मञ्ची ददौ" । दक्षः किमेतदिति एषे 'अतः परं तथा कृष्णिद्वर्मस्यानानि इतानि
 30 कारविष्यन्ते यथा युगान्तेऽपि तेषां नान्तो भवति । अतः पारितोपिकं द्वानम् । वामूलानृतीप-
 वेलायामयं प्रासादः समुद्रतो विजयते । श्रीपालिताणके च विशालां पौष्पशालांकारपामास ।
 श्रीमद्बुद्धयन्ते च श्रीसङ्खेन सह प्राप्तो मष्टी । तत्र च तदुपव्यकायां तेजलण्डे" यक्षारितं नन्यं

1 D 'कृष्ण' नाति । 2 D परमदामः । 3 A चिं, B चेत्, P चेत्, D 'देवाचर्षेण' । 4 D नालेषपरम् । 5 D
 भास्त्रियात् । 6 A 'प्रश्निनिवर्मस्यानानि' इत्येव । 7 D विनपम् । 8 D 'पावङ' शरो भाषि । 9 'भर्ति पुरुषः'
 नाति AD । 10 P भरुष A इत् । 11 D रक्षरे भाषि ।

वर्णं तथा तन्मध्ये श्रीमदाशाराजविहारं, तथा कुमारदेवीसरश्च, निरुपमं विलोक्य ध्वलगृहे^५ वर्णं तथा वर्णार्थार्थतास्मि^६ ति नियुक्तेरुच्यमाने 'श्रीमद्भुरुषां योगयं पौषधवेदमास्ति नास्ति'^७ इति मञ्चिणादिष्टे तत्त्वज्ञापाद्यमानमाकर्ण्य विनयातिक्रममीरुर्गुरुभिः सह वहिर्दीपितावासे^८ तस्यौ । प्रातरुद्यन्तमास्त्वा श्रीशैवेषकमकमलयुगालममलमध्यर्व्य ख्यंकारितश्रीशब्दुख्यावतारतीर्थे प्रभृत-प्रभावनां विधाय, कल्याणव्रयचैत्ये वर्यसपर्यादिभिस्तुचितीमाचर्यं, स मत्ती पावचृतीये दिनेऽवरोहित तावद्भुभ्यां दिनाभ्यां निष्पत्ते पौषधौकसि मञ्चिणा समं गुरवस्तत्र समानीतास्तान् प्रशादांसुः; पारितोपिकदानेनानुजगृहुः । श्रीमत्पत्तने प्रभासक्षेत्रे^९ चन्द्रपत्तं प्रभावनया प्रणिपत्त्वं यथोचित्यादभ्यर्थं च निजेऽष्टापदप्रासादेऽष्टापदकलशं समारोप्य तत्रत्वदेवलोकाय दानं ददानः, प्रसुं श्रीहेमाचार्यैः श्रीकुमारपालवृपतये जगद्विदितं श्रीसोमेश्वरः प्रत्यक्षीकृत इति पञ्चदशाधिकर्यपत्रातदेश्यधार्मिकपूजाकारकमुखादाकर्ण्य तत्त्वरित्वचित्तिमना व्याख्यातमानो भागं लिङ्गोप-१० जीविनाभसदाचारेणान्वादाने निषिद्धे तत्पराभवं विज्ञाय वायटीयश्रीजिनदत्तसूरिभिर्निजोपासक-पार्थक्त्वसिन्क्षणे पूर्यमाणे सति दर्शनानुनयार्थं तत्र समागताय मञ्चिणे-

२१४. रत्नाकर इव धारवारिभिः परिपूरणात् । गम्भीरिमाणमाथते शासनं लिङ्गधारिभिः ॥

२१५. यदु लिङ्गिनोऽनुवन्धने संविदा अपि साधवः । तदचौ^{१०} चन्द्रपते कसाद्वामिकैर्वभीरुभिः ॥

२१६. प्रतिमाधारिसोऽव्येषां तजनित विषयं पुरः । लिङ्गिनां विषयस्थानामनर्चा तु विरोधिनी ॥

२१७. लिङ्गोपजीविनां लोके कुर्वन्ति येऽवशीरणाम् । दर्शनोच्छेदपापेन लिप्तन्ते ते दुराशयाः ॥

*आवश्यकवन्दनानिर्युक्तौ-

२१८. तित्यथरगुणा पडिमासु नत्यं निसंसर्यं वियाणन्तो । तित्यथरो ति^{११} नमनो सो यावह^{१२} निलरं विडलं ॥

२१९. निलं विणपन्तरं एव नमसन्ति^{१३} निजरा विउला । जद्विं गुणविष्पहीनं वन्द्व अज्ञपुसुद्धीए ॥

इति तदुपदेशाद्विर्मार्जितसम्यक्त्वदर्पणो विशेषाद्वर्णनपूजापरः खस्यानमासदत् ।

२२०. अथ ज्यायसा सोदरेण मं० लूणिगनान्नामा परलोकप्रयाणावसरं ज्युदे विमलवसहिकायां प्रम पोग्या देवकुलिकैका कारपितव्ये^{१४} ति धर्मव्ययं याचित्वा तसिन्विपत्ते तद्वाइकेभ्यस्तद्वुवमल-भमानश्चन्द्रवालाः स्वामिनः पार्थिवाच्यां भूमि विमलवसहिकासमीपेऽभ्यर्थं तत्र श्रीलूणिगवस-द्विष्टादं भुवनश्रव्यचैत्यशालाकारुपं कारयमासिवात्^{१५} । तत्र श्रीनेमिनाथविम्बं संस्याप्य प्रतिष्ठितम् । तद्वुणदोपविचारणाकोविदं श्रीजावालिपुराच्छ्रीयश्वोवीरमञ्चिणं समानीय मत्ती ग्रासाद्व-२५ रुपं प्रच्छ । तेन^{१६} प्रासादकारकस्तुत्वादः शोभनदेवोऽभ्यधायि-‘रङ्गमण्डपेषु’शालभञ्जिकामियु-नस्य विलासदीनस्तीर्थकृत्प्रासादे सर्वपालुचितः, वास्तुनिपिद्वश । तथा गर्भगृहमवेशादारे सिं-शाभ्यां तोरणमिदं देवस्य विशेषपूजाविनाशि । तथा पूर्वेषुरपूर्तियुतगजानां पुरतः^{१७} “प्रासादः कारापकस्यायतिविनाशी” । “इत्यपत्रीकाराहं दूषणव्ययं विज्ञस्यापि सूद्धभृतो यदुपत्यते स भावि-र्मणो दोषः” इति निर्णयं स “यथागतमयोगतः । तदुपस्थोकनस्थोका एवम्-

१ P बहिरागतेषु । 2 AD वर । 3 P नाति । 4 D ‘प्रसु’ नाति । 5 P नुवनाद । 6 P तदेव । 7 P इति । * एतत्पदमित्यागाद्यं च P अस्तै नोन्नमद् । 8 B तिष्पत्ति । 9 A गमद । 10 B नन्मतु चिः । 11 P अस्त्रामात् । 12 D तदेव । A वा । 13 AD नम्भने । 14 AD विसाड । 15 AD शालप्रश्नात्मे । 16 B श्रावदं, AD ग्रासद । 17 AD विनाशि, Db भावविनाशः । 18 P विहार ‘हृति’ नाति । 19 AD ‘प्रोपो’ नाति ।

२२०. यशोर्वीरं पश्योषुकाराशेति नद्वर्मीं हिता । नद्रध्युमाय स्थापाः भीमस्तो लाम्हनम्हतान् ॥
 २२१. चिन्दवः भीयशोरीरं शूल्यमभ्या मिरपर्वाः । संख्यामन्तो रिपीयन्ते तर्षेकं पुरस्त्वगाः ॥
 २२२. यशोर्वीरं लिखलाम्ब्यां यावथन्द्रं रिपित्व । न माति द्वन्ते गामदापनप्यधरदध्यम् ॥
- ५ [१३३] ['न मापः स्थाप्यने कैविद्वाभिनन्दो न भन्यते । निष्कलः छालिदामोपि यशोर्वीरत नक्षिपी ॥
 [१३४] 'प्रज्ञाप्यने सतीं साधाय यशोर्वीरं मधिमा । मुखे दलायुगा शोद्धी करे थीः स्तन्मुद्रया ॥
 [१३५] 'र्विवासं गुणालेन शाकुमानेन्द्रमधिमा । रिखेन्द्रेष्य नन्दिन्वा वैरतेन निरक्षिता ॥
 [१३६] 'उद्धीर्येन न यादृ तदं यदं ते रिनयो नहि । यशोर्वीरं यदधित्र्यं सा च गा च न च त्वयि ॥
 [१३७] 'पस्तुपाठ-यशोर्वीरं भत्यं शादेश्वासुनी । एतो दानसनामो भृत्यनोर्लभ्या क्षेप्त्र ॥]
 || इति श्रीशुभुज्यादितीर्पानां याप्राप्यपन्नः ॥
- १० १८०) अथ श्रीवस्तुपाठस्य स्तम्भतीर्यं सद्वनाम्ना नौविक्षेपेन समं विघ्रहे रुद्धायमाते भीम-
 शुभुरान्महासाध्यनिकं शादुनामानं श्रीवस्तुपालं प्रति पालकालस्त्रमालीतपान् । स तदपिहृतं इता-
 निवासो नगरप्रयेशमार्गान् शाकुसद्धीर्णितामालोत्पत्त्य उपयहर्ताणां पितानि यानामात्रप्रणार्पनि च
 पीड्य प्रहितैर्पन्दिभिः श्रीवस्तुपाठेन समं समरत्यासरं निर्णाय यावथतुरद्वैतेनं गामयते ताष-
 ट्युर्यस्तुपाठेन पुरः कृतो वृद्धजातीयो भूषणपालनामा सुनयो 'यदि शादुमनरंपाहं प्रदरामि
 १५ तदा फरिलां धेनुमेष्ये ते यावर्णिकार्यं 'कः शादु?' इति तदूर्धमिति प्रसादुभ-
 देनोदिते तं 'पातेन' निपाल्य उनरनपेव यीत्या द्विर्मीपं शुभीपेशं पातिते सर्वते 'करं सम्प्रसाम्नी-
 प्यात् शादुपातुल्यमि' त्युचरन् महासाध्यनिस्त्रादुनेय तत्त्वुन्नयनां शापमानेनाहुणा, कुन्तामेन
 प्रहरत्, सतुरग एकेनेय प्रहारेण' व्यापादितः । तदूर्धु श्रीवस्तुपाठेन समराद्वृणदग्धिना रेतार्थ-
 किञ्चोरेणेय शादुरेण्यं गताप्यमिय व्यापितं दिनो दिव्यमनेऽजल् । [प्रभावीपिताको मारिकः गर-
 २० यद इति ।] तदूर्धु भूषणपालगृह्यस्यानं भूषणादेभरत्यामारो मधिमा कालिः ।

इतन्त्र आतिंशब्दपारितोपिके श्रीमत्रिणा पोडशसहस्रद्रम्माणां दातिः प्रसादीकृता । क्वचिचिन्तातुरस्य मत्रिणो भूर्मि सृग्यमाणस्य समागतः सोमेश्वरदेवः समयोचितमिदमपाठीत्-

२४४. एकस्त्वं भुवनोपकारक इति श्रुत्वा सतां बलिपतं लजानन्त्रशिराः स्थिरतंलमिदं यदीक्ष्यसे वेदि तद् ।

वाग्देवीपदनारविन्दितिलकः श्रीवस्तुपालः स्यर्यं पातालाद्रालिमुदीर्धीपुरसकृन्मार्गं भवान् मार्गति ॥

मत्रिणास्यं काव्यस्य पारितोपिकेऽष्टौ सहस्राणि प्रदत्तानि । तथा-

२४५. त्वचं कर्णः द्यनिर्मांसं जीवं जीमृतवाहनः । ददौ दधीचिरस्थीनि...-

इति त्रिपु पदेषु पण्डितेष्वधीयमानेषु पण्डितजयदेवः समस्यापदमिव-

वस्तुपालः पुनर्वसु ॥

इत्युच्चरन् सहस्रचतुष्टयं लेखे ।

तथा सूरीणां दर्शनप्रतिलाभनावसरे केनापि दुर्गतद्विजातिना याचनया त्रिप्रियुक्तेभ्यः कृपया 10 पटीमुपलभ्य मत्रिणां प्रति समयोचितमित्यूचे-

२४६. क्वचित्तूलं क्वचित्तद्वं कार्यासास्य क्वचित्कवित् । देव । त्वदरिनारीणां कुटीतुल्या पटी मम ॥

एतत्पारितोपिके मत्रिणा दत्तानि पञ्चदशाशतानि ।

तपा वालचन्द्रनाम्ना पण्डितेन श्रीमत्रिणां प्रति-

२४७. गौरी रागवती त्वयि त्वयि वृपो वद्वद्रस्त्वं उतो भूत्या त्वं च लसद्गुणः शुभगणः किं वा वह शूमहे ॥ 15

श्रीमत्रीथर ! नूतमीश्वरकलायुक्तस ते युज्यते वालेन्दुविषयेष्वकै रथयितुं त्वतोऽपरः कः प्रभुः ॥

इत्युक्ते तस्याचार्यार्पदस्थापनायां द्रम्मसहस्रचतुष्टयं व्यधीकृतम् ।

१११) कदाचिन्मेच्छपतेः सुरताणस्य गुरुं मालिमं भैखतीर्थयात्राकृते इह समागतमवगम्य त्रिप्रियुक्तेभ्यां श्रीलवण्यमसाद-वीरघवलाभ्यां श्रीतेजःपालमद्वी मन्त्रं पृष्ठ एवमाल्पातवान्-

२४८. धर्मच्छश्रपेणे वा सिद्धिवृषुथाबृजाप् । स्वमारुदेहपणेन तदिदं द्रविणार्जनम् ॥

20

इति नीतिशास्त्रोपदेशोन तयोर्वृक्यपोरिव छागमुन्मोच्य पायेधादिना सत्कृत्य च तं तीर्थं प्रहितवान् । स च कियद्विर्वेणः “पश्चाद्व्यावृत्तः श्रीमत्रिणा तदुचितनैपथ्यादिभिः सल्कृतः स स्थानं प्रापस्तीर्थगुणानां विसरान् श्रीसुरताणपुरतः श्रीवस्तुपालेष्व वर्णयमास । स सुरताण-स्वदूनन्तरम्-असाकं देशे भवानेवाध्यक्षोऽहं तु भवतः सेलभूत, तत्त्वयाहं यत्कृत्यादेशोनेव संवदानुग्रामश्च इति प्रतिवर्षं तत्प्रहितयमलकपव्रेणोपकृथ्यमानः श्रीमत्रीथः श्रीशत्रुजयभूमिगृह-25 पोर्णं श्रीपुणादिजिनविम्बं घन्यंमन्यमानस्य सुरताणस्यालुज्ज्या तेष्वशर्वित्यन्पा भैख्माणीनाड्याः स्वन्याः प्रयत्नशतेरानीतयाम् । तस्मिन्द्वायां रोहति श्रीमूलनायकस्यामर्पात्पर्वते विद्युत्पातः सम-जनि । ततः प्रभृति श्रीमत्रीथरस्याजीवितान्तं श्रीदेवपादैर्दर्शनं न ददे ।

११२) कस्मिद्वित्पर्वणि श्रीमदनुपमया निरूपमे सुनीनामकदाने यदृच्छया वीयमाने कार्यात्सु-क्षात्तदागतः श्रीवीरपथवलदेवः सिताम्परदर्शनेन” द्वारपदेशं पापिण्यमभालोक्य विसप्तस्त्रेरमा-30

1 P भार्यां पैरेण एवं रथं अन्वये । 2 A भवितः; D नाति । 3 एतत्पदमि D नाति । 4 BP योहदासद्वयः । 5 D भवितः; BP भवितः । 6 ABD भवादीत्-उद्या । 7 P यता । 8 P युवे । 9 P यवारे । 10 D चतुष्टयं नाति । 11 D पुराणः । 12 P संव । 13 P इतरैः । 14 D-d नाति । 15 A युम्भणः; B युम्भाणी युम्भाणी । 16 ABD युम्भणी युम्भणी । 17 D चतुष्टयं ।

नासो मन्त्रिणमभिहितवान्—‘हे मधिन! इत्यं सदैवाभिमतदैवतवत् किमसी न सहित्यन्ते । तथा चेदशक्तिस्तदर्द्विभागो ममस्तु । मामकमेव सर्वं’ वा दीप्तां सदैवेलतः कारणान्नोद्यते । तथा कृते भवतो वृथायास एव स्यादि’ति तन्मुखचन्द्रविनिर्गतौर्गोभिर्निर्वाणोपतापः ‘सामिनः किया-नद्विभागः, सर्वमेव भवदीयमेवे’त्युक्त्वा’ पर्टी न्युञ्जनीचक्रे’ ।

५ १९३) अन्यदा यतिदानावसरे मिथो मुनिजनसम्मर्द्धात् श्रीमद्भुषपमायाः प्रणमत्याः प्राज्ञा-ज्यरूपं घृतपात्रं पृष्ठे पतितमालोक्य कुपितं तेजःपालमन्त्रिणमिति सान्त्वतवती ‘यत्व स्यामिनः प्रासादान्मुनिजनपुण्यपात्रपतितैराज्यैरद्वैऽभ्यद्वै भवतो’ति तल्पूर्णदानविधिचमत्कृतो मशीपञ्चाङ्गप्रसादपूर्वम्-

२२९. दानं प्रियवाक्षसहितं ज्ञानमगरं ज्ञानान्तिं शौर्यम् । स्यागसहितं च विर्चुं दुर्भमेवत्तुभृद्रम् ॥

१० इति युक्तोक्तिपूर्वं च तां मशी प्रशाशनं । इत्यनेकधा दानावदातनिकपरेखां प्राप्तां-

२३०. लक्ष्मीश्वला शिवा चण्डी यशी सापब्यूषिता । गङ्गा न्यगमामिनी वाणी वाङ्साराऽनुपमा रुपः ॥
इत्यादिभिः स्तुतिभिर्जनाचार्यैः स्तूपते स्त ।

१९४) अथान्यदा पञ्चग्रामसङ्क्रामाधिस्तुदयोः श्रीवीरध्वल-लवणप्रसादयोः श्रीवीरपवलपत्री राज्ञी जयतलदेवी सन्धिविधानहेतुवे जनकं प्रतीहार’ श्रीद्वारोभनदेवमुपागता । ‘किं वै वैधव्याद्वीरीः १५ सन्धिवन्धं कारयसि?’ इति तेनाभिहिता । वीरचूडामणे: पत्युः श्रीवीरध्वलस्त्रोत्रितमारोपयन्ती सा ‘पितृकुलविनाशाशङ्क्या भूयो भूयोऽहमेवं व्याहरामि । तुरगष्टाधिस्तुदे तसिन्वीरे’ स कोऽस्ति सुभद्रो यस्तस्तन्मुखे स्यास्यती’ति व्याहृत्य सा सामर्येव प्रतस्ये । अथ तसिन्समरसंरम्भे प्रहार-व्याप्त्याकुले श्रीवीरध्वले भुवस्तलमलंकुर्वते* किञ्चिदनन्तर्भग्ने समग्रसुभट्टवर्णं ‘एक एवायं पतिः पतित’ इति सकलं निजघलमुत्साहयन् श्रीलवणप्रसादः । समस्तानपि रिष्णू लीलायैव समूलकायं २० कपितवान् । इत्यमेवार्विशातिकृत्यः सत्त्वगुणरोचिष्यू रणरसिकतया क्षेत्रे पितुरम्भे पतितः ।

२३१. यः पञ्चग्रामसङ्क्रामभूयौ भीमप्राकमः । वार्तैः पपात सज्जात्वैश्वरो न तु गर्वतः ॥

१९५) श्रीवीरध्वलस्यायुपर्यन्ते प्रतीतीर्थं प्रस्थितस्यं दत्तमेकथा सहस्रगुणमुपदभ्यत इति स्तुदे: श्रीतेजःपालेन जन्मसुकृतं ददे । तदनु तसिन् सामिनि विपद्वे तत्सौभाग्यातिशयात्सेव-कानां विंशत्याधिकशतेन सहगमनं चक्रे । तदनु श्रीतेजःपालेन प्रतवने यामिकान्मुक्त्वा लोकस्य २५ स निर्वन्ध्यो निषिद्धः ।

२३२. आपान्ति यान्ति च परे ऋतवः क्रमेणः सज्जात्वैरद्वयुममगत्वरं तु ।

वीरेण वीरध्वलेन विना जनानां वर्णां विलोचनयुगे हृदये निदायः ॥

१९६) अथ श्रीमन्त्रिणा वीरध्वलस्यं सुतो” वीसलदेवो राज्येऽभिपित्तः । श्रीअनुपमदेव्या विपत्तौ तेजःपालस्य आस्ते धैर्यावनिवर्तमाने तद्रागतैभद्रा० श्रीविजयसेनस्तुरिभिर्यलवत्तुरूपे-३० रूपदामितायां विपदि किञ्चिदेतनया सापद्रपः श्रीतेजःपालः सैरिणोचे—‘वयमसिद्धयसरे भयतः

१ P ‘भस’ श्वेतः २ P नाति ‘सर्वं च’ ३ P भवतो कृपा भवतः ४ P इत्युर्पि ५ P चर ६ D तामर्ते ।

७ PD प्रति ८ M प्रति ९ AD वीरपदे । * ABD भद्रें प्रतलवदादे एव ‘क्ष पदमान्’ रुपि छोडे उपितो छन्ने ।

१० D प्रसिद्धेन । ११ ११ प्रतलद्रव्य BP नाति । १२ D तंत्र पाला रुपोऽप्यापत्ति । १३ D विहार ‘पूर्णिमा’ नाति ।

कैतवमालोकयितुसुपेताः ।' श्रीवस्तुपालेन किमेतदिति पृष्ठे गुरवः प्राहुः-'यदसामि शिशो-
सेजःपालस्योपयामाय धरणिगपार्वीदनुपमा कन्या याचिता तदा स्थिरपद्मदानादतु' तस्याः
कन्याया एकान्ते विस्तरां निवास्य तत्सम्बन्धमहाय चन्द्रप्रभमिडप्रतिष्ठितक्षेत्राधिपतेरस्यौ
द्रम्माणां भोगंमध्युपयाचितींचक्रे । इदानीं तद्विद्योगे ग्रन्थेरामनस्यमित्युभयोर्धृत्यान्तयोः
कस्तथः ?' इति तन्मूलसङ्केताच्छ्रीतेजःपालः सहवदयं दृढीचक्रे ।

११७) अयान्यदावसरे मध्यी वस्तुपालः पूर्णायुः श्रीशब्दज्ञयं विद्यासुरिति भत्वा उरोधाः
सोमेभवदेवस्तत्रागतोऽनर्थेष्वासनेषु^१ मुच्यमानेष्वज्ञुपविशान् हेतुं पृष्ठ इत्याह-

२३३. अक्षदानैः पश्यपानैर्धर्मस्थानैर्धर्मतलम् । यशसा वस्तुपालस्य रुद्रमाकाशमण्डलम् ॥

इति स्यानाभावाद्योपविद्यते इति तदुक्तेस्थितपारितोपिकदानपूर्वं तमाषुच्छय मध्यी^२ पथि-
परियतः । औकेवालीयाद्यामे देश्यकुलां दर्भसंस्तरमाल्लो गुरुभिराधनां कार्यमाण आहारप-
१० रिहारपूर्वं पर्यन्ताराधनया प्रध्वसितेकलिमलो युगादिदेवमेव जपन्-

२३४. सुकृतं न कृतं किञ्चित्सतरं संसरणोचितम् । मनोरथैकसाराणमेवमेव गतं वयः ॥

इति वाक्यप्रान्ते नमोऽहम्नो नमोऽहश्च इत्यक्षरैः समं परिहतसप्तधातुयैद्वशरीरः^३ स्वकृतकृतो-
पमसुकृतफलेषुपभोक्तुं खलोकमलंचकार । तत्संस्करार्थानेषुज्ञश्रीतेजःपाल-सुतजैत्रसिंहान्यां
श्रीयुगादिदेवदीक्षावस्यामूर्त्तिनालंकृतः स्वर्गारोहणप्राप्तादोऽकारि ।

२३५. अद्य मे फलवती पितुराशा भातुराशिपि^४ शिखाऽङ्गुरिताऽद्य ।

यद्युगादिजिनयाविकलोकं श्रीनयाम्यहमरेपमसिनः ॥

२३६. नृपव्यापासपेभ्यः सुकृतं सीकृतं न यैः । तान् धूलिधावकेऽन्योऽपि भन्तेऽधैर्मतरात्मरान् ॥

इत्यादीनि श्रीवस्तुपालमहाकवे: काव्यानि स्वयं कृतान्यस्मृनि ।

२३७. पूर्णः शामिगुणैः स वीरपवलो निःसीम^५ एव प्रशुविद्वद्विद्विः कृतभोजराजविशुदः श्रीवस्तुपालः कविः । २०
तेजःपाल इति प्रथमनिषेधेनकथं मध्यीश्वरस्तत्त्वायानुपमा गुणैरसुपुमा प्रस्तक्षरमहीरभूत् ॥

॥ इति श्रीमेरुदुङ्घासार्यविरचिते^६ प्रयन्पचिन्वामजौ श्रीकुमारपाल-भूषालप्रभुत्वमधीश्वरवस्तुपाल-
तेजःपालपर्यन्तमहामुख्ययोर्वर्णनो^{*} नाम चतुर्थः प्रकाशः ॥ मंथां ८२४[†] ॥

¹ AD शब्देऽकिं । 2 D स्विता हवा तदृ । 3 D 'सिद्ध' स्वाने 'क्रित' । 4 P 'भोग' नामि । 5 A अदि-
स्थिरी । D रसायनी । 6 P भवर्पूर्वस्तानेषु मण्डपमनेतु । 7 A च भूर्वृ । 8 AD •पाटेन । 9 P नामि । 10 P
ते । 11 P निष्ठा । 12 P आपुमय । 13 D नारी । 14 P 'स्वशक्तिः' इत्येव । 15 P •पदे । 16 AD
पूर्वेषैः । 17 P भूतपादः । B अपमलान् । 18 D निर्मान । 19 P •पार्याक्षिःहृते । * D धीरुमारात्मवेशीश्वरपद-
रात्मवेशीश्वरपदवेशो । † A B ८०४ ।

[११. प्रकीर्णकप्रवन्धः ।]

अथ पूर्योक्तेभ्यो महागुरुपचरितेभ्यो यान्यवशिष्टानि तानि, तदितराणि चेह व्रकीर्णक-
प्रकाशे प्रारम्भन्ते । तथाथ-

१९८) सर्वीपस्कुरच्छिप्रास्ववन्त्यामवन्त्यां पुरि पुरा श्रीविक्रमार्कन्तुपः स्वसद्यागारे वैदेशिकं
५ लोकं भोजनानन्तरं निद्रापरं सम्पन्नदीर्घनिद्रामाकर्णं विस्मयसेरमानससदृक्तानं जिज्ञासुस्तान्
सर्वानपि वसनपिहितान्विधाप्य तदातां चापन्द्रुतां निजाङ्गया विधाय एुनक्षणागतान्वयगांतपैव
भोजयित्वा प्रदोषे चोष्णोदकं तैलं च तेषां चरणपस्त्रिचारणानिमित्तमुपर्नाय तेषु तेषु प्रसुरेषु
महानिशायां कृपाणपाणिर्टपतिर्भूतीभूय स्वयं यावत्तत्र तस्यौ तावदकसात्तत्र कोणीकवैद्यो
प्रथमं धूमोद्धर्मं तदनु शिखारेत्वामध्य दीपकणारदप्नोलंकृतं सहस्रफलं" नारां तिर्गतमवलोक्य
१० तपिव्रचमल्लूतो राजा यावत्साकृतं पद्यति तावत्स कर्णान्दः किं पात्रमिति तदिनसुसान् पान्धान्
श्वेयेकं प्रभच्छ । अथ ते धर्मपात्रं गुणपात्रं तपःपात्रं स्पष्टपात्रं कामपात्रं फीर्तिपात्रमित्यादीनि
वदन्तोऽज्ञानतया यदच्छया तस्य शापान्मृत्युमामृतन्तीति विलोक्य, अपि श्रीविक्रम एव तत्त्व-
रोक्त्य योजिताङ्गलिः-

२३८. भोगीन्द्र ! बदुधा पात्रं गुणयोगाद्वैतुवि । मनःपात्रं तु परमं शुद्धश्वदापविवितम् ॥

१५ इति स' निजाशयसेव भाष्यमाणं श्रीविक्रमं परितोपादु "परं शृणु त्वम्" इति प्राद । अपि श्रीवि-
क्रमोऽमूलं पधिकानुब्रीययेति तेन वरे याचिते स विश्वापं विशेषात्परितोपयामास ।

॥ इति श्रीविक्रमस्य पात्रपर्याक्षाप्रयन्थः ॥

१९९) अथ कदाचित्पादलीपुद्रपैत्तनेऽक्षादमन्दानन्दे नन्दे राजि पश्चत्यमागते कम्भिक्रियस-
त्काले तत्रागतः परुषपर्येशविद्यया नृपदेहमधितस्यो । तत्सद्वैततो द्रितीयो द्रिजो" दृपदारम्-
२० पैत्य वैदोऽप्तारमुद्भावाहरन्मत्युद्भीवितो न्यः कोशार्णक्षेत्रसंस्थां स्वर्णालश्रमदापात् । अपि तदृतान्तं
विश्वाप महामाल्यः "नन्दः उरा कदर्पेऽन्तर्मृतं साम्बतं तु तश्चेत्यार्थं विचार्यमिति यदसंसं विद्ये विश्वा-
परकायप्रयेशाकारिणं वैदेशिकं सर्वय शोषणं फापि गृहतं केनापि परिरेष्यमाणमाक्षणे विना-
प्रयेशाद्भूमीकृत्य गूर्वमेव नैन्दं निरुपमसतिवैभयापिजमार्ये साप्राप्तये निर्याहगामास ।

॥ इति नन्दप्रयन्थः ॥

२००) अपि वैदेशमहासराने देवादित्यविश्वतुथी यानकालविभया अतिस्पृष्टपात्रं सुन्मगानिपाता
"प्रातः सूर्यं प्रख्यात्तुलिं शिरान्ती" अज्ञाततप्त्योगान्नोगादापानमन्तर् । अपि "कर्त्तव्यसामद्वारां
पितृन्यामयगुण्यं मन्द्रासमन्दासरसुद्रया" असमवृत्तमिति तां प्रति विधिर्मृत्याहृता गता वाचुयो-

१ AD वैदेशः २ P विद्यतः ३ D 'वै' कृतः ४ D 'वै' वैते 'वै' ५ B वैदेशवैदेशः ६ D वै
प्रथम्पिन्नतापत्त्वे ७ P वैदेशः ८ BP वैदेशवै ९ D वै १० AD 'न' वैदेशः ११ D 'वै' वैदेशः
१२ P वैदेशः १३ P वैदेशवैदेशः १४ P वैदेशवैदेशः १५ AD 'तो' वैदेशः १६ A वैदेशः D वैदेशः
१७ AD वैदेशः १८ P वैदेशवै १९ D वैदेशवै २० P वैदेशवै २१ BP वैदेशः २२ B वैदेशवै २३ D वैदेशवैदेशः २४ AD वै

दृष्टभ्य नगर्या अन्यसे मुमुक्षे । तथा तत्र प्रसूतः सूतुः क्रमेण वर्द्धमानः सचयोनिः शिशुभिः
निःप्रिकृ इति निर्भर्त्स्यदानो मातुः समीपे पितरं पृच्छन् तथा न जाने इत्यभिहितः । तज्जन्मयै-
राग्यान्मुमुक्षोऽपि प्रलक्षीभूय सविता सान्वनापूर्वं करे कर्करं समर्प्य, भवन्मातुः सम्पर्कका-
रिणमर्कं लं ज्ञापयन् 'भवतः पराभवकारिणं प्रलयऽयं क्षिप्तः शिलास्पृष्ठे भविष्यतीत्यादिश्य निर-
पापयस्य कर्त्तराणि' क्षिप्तो च विद्व तवैऽनर्थनिवन्धनं ज्ञापयन्त्सिरोपत्थं । अत्थेत्थमभिभवकारिणः
कांथिवृ व्यापादयन् शिलादिल्य इति सान्वयनान्ना प्रतीतः । तत्पगरराजा तत्परीक्षायै तथाकृते
तमिलपालं शिलया तथा कालधर्ममवाप्य स्वयमेव भूपतिरभूत् । सदा' सवितुमसादी कृते
दैषपिधिस्त्रो न भवत्र इव स्वरविहारी पराक्रमाकान्तदिग्यलयं चिरं रात्यं कुर्वन् जैनसुनिसंसर्गात्प्रा-
दुर्भग्नभूतं सम्यक्त्वरत्नः श्रीशतुज्जयस्य महातीर्थस्यामानमहिमानमवगम्य जीर्णोदारं चकार ।

१०१) कदाचिच्छालादिल्यं सभापतीकृत्य चतुरद्वासमायां 'पराजितेन देशायागिनां भावधिमिति' १०
एणन्यपूर्वं सिताम्बर-सौगतयोर्वादे सक्षायमाने पराजितान् सिताम्बरान् सविपयात्सर्वान्
निवैस्य श्रीशिलादिल्यजामेयमभेषणं मल्लनामानं क्षुद्रकं तत्र तस्यिवर्तं समुपेक्ष्य स्वयं जितका-
दितः श्रीविमलगिरी श्रीमूलनायकं श्रीयुगादिवं बुद्धस्त्रेण पूजयन्तो वौद्वा यावद्विजयिनस्ति-
ष्टिनिः तावत्स मल्लः क्षत्रकुलोद्वत्वात्स्य वैरस्याविसरन् कृतप्रचिकीजैनदर्शनाभावात्प्राप्नेव
सविपयाधीयन् रात्रिविद्वं तद्वीनचित्तः कदाचिद्दीप्यमीष्मवासरेषु निशीयकाले निद्रामुद्रित-१५
लेन्ते समस्तनागरिकलोके दिवाभ्यस्तं चाक्षं महत्तमियेगेनानुस्मरन्, तत्कालं गगने सञ्चरत्या.
श्रीभारत्या के मिष्ठाः? ॥ इति दावदं शृष्टः । स परितो वक्तारमनवलोक्य 'वह्ना' इति तां प्रति प्रति-
कर्मनं प्रतिपाद्य, पुनः पष्मासान्ते तस्मिन्वेवावसरे' प्रत्यावृत्यावाग्नेवत्याः 'केन सह?' इति भूयो-
भिहितः । तदा त्वनुस्मृतपूर्ववाक् 'युद्धतेन' इति प्रत्युत्तरं ददानः तदवधानविधानं चमत्कृतया
'अभिमतं वरं वृणीत्वं' इत्यादिएः 'सौगतपराजयाय कभाषि प्रमाणग्रन्थं प्रसादीकुरु' इत्यर्थम-२०
भूयित्य, नयनकवन्धन्यापूर्णेनानुजग्ने । अथ भारतीप्रसादादेवागततत्त्वः श्रीशिलादिल्यमतुज्जान्य
सापातमठेषु तटोदकप्रभेषपूर्वं दृपतिसनायां पूष्यादितपण्यन्वन्पूर्वकं कण्ठपीडावतीर्णश्रीवामदेव-
तापायेन श्रीमहात्मासंसरसैव निरुत्तरोचकार । अथ राजाज्ञया सौगतेषु देशान्तरं 'गतेषु जैनाचा-
मेवाहृतेषु स मल्लो धौदेषु जितेषु 'वारीं' । तदल्लु चूपरम्यर्थितेर्गुरुभिः पारितोपिके तस्मै सूरिपदं
देवं' श्रीमहवादिसूरिनामा । गणभृत्प्रभावकतया नवाद्वृत्तिकारकश्रीभयेवस्त्रूरि' प्रकटी-२५
हेत्य श्रीस्तम्भनकतीर्थस्य विशेषोन्नत्ये श्रीसहृदेन चिन्तापक्त्वे नियोजितः ।

॥ इति मल्लवादिप्रवन्धः ॥

१०२) अथ सरुमण्डले पल्लीग्रामे काळू-पाताकौ भ्रातरौ निवसतः । तयोः कनीपान्धनवान् इया-
पांसु तद्वृभृत्यावृत्या वर्तते' । कर्मिविविशीधसमये दिवसकर्मवृत्तिश्वान्तः प्रावृद्धकाले काळूपा-
क्तः प्रसुतः कनीपासाऽभिदेषे- 'भ्रातः खर्कीया केदाराः पयःपूरः स्फुटितसेतवस्त्रवतु निविन्नता' ३०

१ BP 'वैताम्बन्ते' कुपुः । 2 D कर्करः । 3 P दृ, B नाति । 4 BP नाति । 5 तितेषु । 6 P चूपृ-
7 D चूपा च । 8 P दिवदः । 9 AD 'प्रभू' नाति । 10 P D देशादिवेत । 11 AD चिरं । 12 P चूपृ च
प्येत । 13 AD देशः । 14 D 'वितार' नाति । 15 AD रेती । 16 AD देशादिवेत । 17 A चक्षे । 18 AD
रेती । 19 P चौक्षति । 20 D काळूः ।

इत्युपालब्धः । स तदात्वलक्षणस्तरः स्वं निन्दन् कुदालं स्कन्धे निवेश्य यावत्तत्र याति तावत्कर्म-
कारान् स्फुटिन्सेतुवन्धरचनापारान् समालोक्य 'के यूथम्?' इति एषाः 'भवद्ग्रातुः कामुकाः' इति
तैरभिहिते 'कापि मदीपाः कामुकाः सन्ति?' इति एषे 'बलभ्यां सन्ती'ति ते प्राहुः । अथ सोऽप्य-
वसरे सर्वसं पिठेरे आरोप्य तं मूर्खं दधानः श्रीवलभीमवाप्य गोपुरसमीपवर्त्तिनामाभीराणां
५ सज्जिथौ 'निवसन् अल्यन्तकुशतया तै रङ्ग इति दत्ताभिधार्नस्तार्णसुटर्जं विधाय तदवष्टम्भेन
यावत्तस्यौ तावत्कथित्कार्पटिकः कल्पपुस्तकर्णमाणेन रैवतकशैलावलाखुना सिद्धरसमादाय मार्ग-
मतिकामन् काकूप्यंतुम्बडीति सिद्धरसादृशारीरिणां वाणीमाकर्ण्य विस्मयसंरमना जातभीर्वलभी-
परिसरे तस्य सच्छद्धनो वणिजः सद्गनि रङ्ग इति तत्त्वाम निःशङ्खतया तत् सरसमलाखु तत्रोपनि-
धीचक्रे । स ख्यं श्रीसोमेश्वरयात्रायां गतः । कस्मिन्नपि पर्वणि पाकविशेषाय चुद्धीनिपोजितायां
१० तापिकायमलाखुरन्प्राह्नलितरसविन्दुना हिरण्यमरी तां निभाल्य स वणिग्रन्ति सिद्धरसं चेतसा
निर्णय तदलाखुसहितं गृहसर्वस्मन्यन्त्र नियोजय स्वं गृहं प्रदीपनेन' भस्मीकृत्य परसिन् तुर-
गोपुरे^१ सौधं निर्माप्य तत्र निवसन्, कदाचित्प्राज्ञायज्यविक्रयकारिण्याः स ख्यं शृणुं तोलयंस्त-
दद्विणं निरेष्य घृतपात्राधः कृष्णचित्रकुण्डलिकां विमृश्य^२ केनापि कैतवेन तदृच्यतयादप-
हृत्य चित्रकसिद्धिं स्तीचकार । कदाचित्स्यागण्यपुण्यवैभववशात्मुवर्णेषु लपसिद्धिरजापत । इत्थं
१५ चित्रिपतिसिद्धा कोटिसंख्यानि^३ धनानि संगृह्यापि कदर्यवर्यतया कापि सत्पात्रे तीर्थे वानुकम्प्या
वा तस्या श्रियो न्यासो दूरे तिष्ठतु, प्रत्युत सकललोकसंजिहीपया तां लक्ष्मीं सकलस्यापि विम्बस्त्र-
कालरात्रिरूपामदर्शयत् ।

२०३) अथ स्वसुताया रात्रिवचित्काम्बन्दकङ्कतिकायां राजा स्वसुतायाः कृते प्रसभमपहृतायां
तद्विरोधानुरोधात्स्वयं तत्र^४ रूपेच्छमण्डले गत्वा यलभीभङ्गाय तव्याचिताः काश्वनकोटीस्तस्य
२० दृष्टपकोटीरस्य^५ समर्प्य प्रथाणमचीकरत् । तदनुपकृतस्तु एकाः^६ छवधरो विशाशोपे सुसन्नाम्
दृवस्येष्वनीपतौ^७ पूर्वसङ्केतिनेन केनापि उंसा सममित्यालापमकरोत्-'असत्त्वामिनां मध्ये'
२५ मूरपकोटि^८ नहि । यदयमभ्यपतिर्महीमहेन्द्रः केनाप्यङ्गातकुलशीलेनासाधुना साधुना वापि
वणिजा नामकर्मभ्यां रङ्गेण प्रेरितः स्वर्यपुण्ड्र^९ शिलादिल्यं प्रति यद्यचालेति पर्यां तथायां
तद्वाचमाकर्ण्य किञ्चित्येति विचिन्तयन् तस्मिन्द्वनि दृष्टः प्रयाणकविलम्बमकरोत् । अथ
३० रङ्गः साशङ्क्षेत्तद्वात्तान्तं निषुणाष्ट्यावगम्य काश्वनदानेन तस्य काश्वननुसिमामातृश्यु तुनः परसि-
न्प्रत्युषे विचारोपिचार्यं वा कृतप्रयाणोऽप्य महाननेन्द्रध्यलितः । 'सिंहस्त्रैकपदं यथैति न्यायाच-
लित एव राजते । यतः'^{१०}

२३९. मृगेन्द्रं वा मृगार्दिं वा हरिं व्याहरतां जनः । तस्य चोभया^{११} श्रीदा^{१२} लीलादलिवदन्तिः ॥

इत्यस्य स्वामिनो निःसीमपराक्रमस्य सन्मुखे कः स्यादृतीति तद्विरा प्रोत्साहयान् म्धे-
३० च्छपतिमेंरीनिनादपथिरितरोदः कन्द्रं प्रयाणमकरोत् । इत्थ तस्मिन्वयसरे^{१३} वलभ्यां श्रीचन्द्र-

१ P 'उच्यते' नाति । २ D सर्वप्रेष्यस्तरः । ३ P इच्छाकृतः । ४ P 'पुष्टाः' नाति । ५ P काषायाः । ६ D-
'सिद्धरसात्' नाति । ७ D प्रदीपेन । ८ AD गोपुरे । ९ AD मध्यवं । १० P विशाये । ११ D संस्मापितामि ।
१२ D 'काषाय' नाति । १३ AD नाति । १४ 'स शृण्योर्योर्य' स्वानेऽD 'भ्रमी' । १५ AB दक्षयपते । १६ P
पृष्ठिरीर्णी । १७ P मधी । १८ AD मधूः शोभी । १९ P एत्यामदं । २० P लालडः । २१ P नाति । २२ P
हंसी । २३ AD इत्यमि । २४ P श्रीम- । २५ D जाहे ।

इनविममन्वाक्षेत्रपालान्यां सहितमधिष्ठातृवलाद्वगनमार्गेण शिवपत्तनसुवि भूपर्णीवभूव । रथा-
पित्ता अप्रतिमा' श्रीवर्द्धमानंप्रतिमा चादृष्टवृत्त्यापिष्ठातृवलेन सञ्चरन्ती पथि आविनीपूर्णी-
कासां श्रीमालघुमलंचकार । अन्या अपि सातिशया देवमूर्तयो यथोचितं भूमागमलंचकुः ।
तदर्थेवतया च श्रीवर्द्धमानसूरीणां चोत्पातज्ञापनावसरे-

२४०. का त्वं सुन्दरि जल्य देविसद्यो । किं कारणं रोदिषि ?,
मङ्गं श्रीवलभीपुरस्त भगवन् ! पश्याम्यये' प्रत्यये' ।
भिक्षायां सुधिरं भविष्यति पयो लब्धं भवत्सायुधिः
स्यातव्यं मुनिभिलदेव रुधिरं भस्त्रिन्यो जायते ॥

५

एवमुत्पातेषु सद्यायमानेषु पुरोपरिसरं प्राप्तेषु म्लेच्छसैन्येषु देशभद्रसमासादितपङ्केन रङ्केन
प्रदशन्यादकान् कनकवितरणीयहुधा विभेद्य तस्य हंयस्यारोहणकाल एव तैः किंयमाणे १०
भिक्षान्दसांराविणे तार्थ्यवदुद्दीप्त तस्मिंसाक्षर्ये दिवमुत्पत्तति, किंकर्त्तव्यपतामूढः स शिलादित्य-
सौन्दर्यां । तदनु तैर्लीलपैव बलभीमङ्गः स्तुतिः ।

२४१. पण्डितप्रापासप्ते' तित्रिसयादृं अद्वक्मेऽज । विष्फमकालाउ वत्रो वल्हीमङ्गो समुप्तवो ॥
॥ तैः श्रीशिलादित्यराज्ञ उत्पत्तिसत्या रङ्कोत्पत्तिसत्कृतो वलभीमङ्गव्येति प्रवन्धन्यम्* ॥

*२४१) अथ श्रीतदमालनगरे श्रीरदाशेखरो नाम राजा । स कदाचिद्विग्यात्राप्राप्यावृत्तः पुरम्-१५
प्रेषण्योत्सर्वे विपणिश्वेणि शृद्धारितां सूर्यमाणः कसिद्विष्टि हृदे काष्ठपात्रीयुतं कुद्वालमालोक्य
कौश्यवेशानन्तरं प्राभृतपाणी मद्वाजने समाप्ताते 'सुविनो यूपम्?' इति द्वपालापाननन्तरं तैः 'न
सुविनो रथमिति विज्ञापे विश्वमध्रान्तचिर्त्तात्' विशूज्य कसिद्विष्टि निर्व्यक्तुनांवसरे पुरप्रथाना-
गद्वारे 'हिं न सुविनो यूपम्?' इति एषाः । अपि च काष्ठपात्रीयुतकुद्वालस्तोर्ध्वीकरणकारणम-
त्रैग्रामाने इति विश्वप्रयामासुः- 'यत्र सामिना काष्ठपात्रादिकम्पयपारितं,' स वित्तेभ्यः स्ववित्त-२०
मृणामजानन् काष्ठपात्रिकृपैव' स्ववित्तसङ्कलनां ज्ञापयितुं सङ्केतं चक्रे । तथा च न सुविनो वय-
मिने सामिनः सन्तानानापात् । कोटीध्यकुद्वालकुलं नगरमिदं सामिना चिरकाललालितमन्य-
गणापात्कैवल्यं परां कोर्दी नीपत् । इति पुरातनस्यानः पुरस्य वन्ध्यात्वं उद्धवा निधाय वृपवंश-
द्वये नोनमन्तः पुरं चिरीं नीपत् । इति पुरातनस्यानः केनापि प्रथानशाकुनिकेन समं
गृह्णयागरं प्राप्ताः । कामपि दुर्गतनितन्विनीमासक्षमप्रसवां काष्ठभारयाहनेकायुर्ति विरोधिस्तदुः-२५
गृह्णयोपय दाकुनवित् तामक्षतादिनिरन्धर्ययन्, तैः किमेतदिति एषः प्रात्- 'यः कश्चिदद्वा
प्राप्तं तुया स प्राप्तव वृत्ते भार्या, चेष्टास्पतिमतं प्रभाणमिद्यसन्नन्दनं यृतान्तममुममन्यमानाः
कानेप्राप्ताः' नृताय प्राप्तपूज्य यपापत्तिर्तं तत्त्वमर्हं नियेदित्यन्तः । अपि चोदयेद्वारमाना दृष्ट-
प्राप्तं गतापार्थार्थं प्राप्तमाणामिष्टं देवतं मर्मलभिहिते सा मरणाभगव्याकुला प्रदोष-
प्राप्तं गतासननुग्राप्त दाकुमद्वं कुम्भे तापसता भरतं पार्थ तत्त्वम् ॥ १ गत्ता-३०

पूरीकृत्य एुनरपि राज्ञे विज्ञप्याचक्षुः । अथ काचिन्मृगी सन्ध्यादयेऽपि पयः पानं कारयन्ती तम्
तु दिनं वृद्धिमन्तं कारयामास । तस्मिन्वसरे देव्या महालक्ष्म्याः पुरतष्ठूशालायां हरिण्याश्च-
लुणां पादानामधः शिशुरुपं नाणकं नृतनं सज्जायमानमाकर्ण्य कचिन्नर्थीनो द्वृप उत्पन्न इति प्रस्तुतया
वार्त्तया श्रीरत्नशेखरः सैन्यानि प्रतिदिशं तं शिशुं विशसितुं माहिणोत् । तैर्यवादेवलोक्य लब्धो-
५ इपि वालहत्याभीतैः स सायं पुरगोपुरे गोकुलखुररवैर्यथायं वालो विपक्षः सन् स्वयमपवदाय
न भवतीति दूरस्यैर्याधनमुक्तस्तावत्त्रायातं गोकुलं तं मूर्तिमन्तं पुण्यमुक्तमिव पालभालोक्य
तैरेव पदैः स्तम्भितमिव तस्मै । अथ पाश्चात्यपक्षात्पुरो भूष द्वृपमो द्वृपमासुरं तं शिशुं पदाना-
मन्तराले निधाय गोधनं सकलमपि प्रेरयामास । अथ तं वृत्तान्तं द्वृपोऽवधार्य तैः सामन्तनग-
रलोकेस्तं वालमानीय उप्रीपमाणः श्रीपुत्र इति दत्तानिधानः प्रवर्द्धयामास ।

१० २०५) अथ श्रीरत्नशेखरे राज्ञि दिवं गते तस्य राज्ञः कृताभियेकस्य साम्राज्यं पालयतः पुन्नी
समजनि । सा च समृप्णसर्वाद्वावयवसुन्दराऽपि कपिमुखी । तेन वैराघ्येण विषयविसुखतां
विभ्राणा श्रीमातेति नामधेयं वभार । सा कदाचिजातजातिस्मृतिः पितुर्ये सं पूर्वमवं लिदे-
दितवती-‘यदहर्मर्दुदाद्रौ’ पुरा कपिपलीत्वमनुभवन्ती कस्यापि शास्त्रिन एकस्याः शास्त्रायाः
शास्त्रान्तरं सञ्चरन्ती केनापि तदतुल्येन शिल्पेन विद्वतालुः पञ्चत्वमासदम् । तदधोर्वर्तिनि
१५ कामितीर्थकुण्डे यावद्लितं वृषुः पणात तावत्तीर्थातिशयान्नामकं वरुमानुपाकारमभवत् ।
यन्मस्तकं तु तत्त्वयैवास्ते तेनाहं कपिवद्भाम । अथ श्रीपुत्रद्वृपस्तस्यास्तन्मस्तकं कुण्डे प्रक्षेपितुं
निजानांसपुरुषान्समादिदेश । तैस्तु सुचिरात्तत्र तदवस्थं विलोक्य तपाकृते सा श्रीमाता
मानवानना समजनि । ततःप्रभृति सा भातरपितरावनुज्ञाप्यादर्वुदसंव्यगुणा तस्मिन्नेवाऽर्वुदे
२० तपस्यन्ती, कदाचिद्ग्रन्थनगमिना योगिना ददृशे । स च तत्स्वान्वर्ध्यापहतहृदयो गगनादुर्तीर्थं
प्रेमालापर्वतं ‘त्वं मां कर्थं न वृणोपि?’ इति एषां सेव्यवादीत्-‘सम्पतं तावत्क्षणदायाः
प्रथमो यामो व्यतीतः; तुर्यपामस्य ताप्रचुडेषु रुतमकुर्याणेषु ययस्मिन्गो कल्याचिद्विद्यया द्वाव-
श्चापद्या हृद्याः’ कारथसि ततो भवन्तममिकं^१ करोमीति तदुक्तिसमन्तरमेव तत्र कर्मणि
चैक्येष्टकं नियोज्य यामद्वयेन निर्माणिते सर्वपथानिवहे, श्रीमाता स्वशक्तिवैभवेन कृतकाम-
चूदरवं कारयन्ती, तेनामाद्य ‘विवाहाय सज्जीभवेत्यभिदपे । ‘त्वं पथायां निष्पात्यमानायां
२५ कुकुटरवः समजनिष्टे^२ ति तयोरेकं भवन्मापया कृतकं कृकवाकुरवं को न वेत्ति?’ इत्युत्तरं
ददानः, स सरित्तीरे तज्जाम्योपदीकितविवाहोपहारः, श्रीमात्रा ‘समस्तवियामूलं तप्तिशुलमि-
हृप विहाप पाणिपीडनाय सञ्जिहितो भवेत्याहृप, प्रेमोपहृतचित्ततपा तत्पता कृत्वा सामीप्य-
मुपगतः । तत्पादयोः कृतकान् शुनो नियोज्य हृदये तेन विशुलेनाहत्य मारितः’ । इत्येति
३० सीमशीलर्लीलापितेन सं जन्मातिशाहितवती । तस्यामस्यपदशीलायां व्यतीतायां श्रीएद्वराजा
नागो यदा चलति तदा पर्यंतकम्पो भवति । अतः शिवरहितास्तथ सर्वेऽपि प्रासादाः ।

॥ इति श्रीपुत्रराजन्तपुरीश्रीमाता-प्रपनयः ॥

१ 'पद्माद' सामे D 'पद्म ल' । २ P सं१ । ३ 'सामकनगद्वेष्टिल' सामे D 'समं बमरेष लभेष्टिल' ।
पृष्ठ लम्पा । ४ P लम्प । ५ P भुद्वे लिर । ६ BP लम्प । ७ D 'भाव' लम्प । ८ D लम्प । ९ D लम्प ।
१० D लम्प । ११ P लम्पात्तिः । १२ P पर्वतम् ।

२०६) कदाचिच्छौडदेशो गोवर्द्धनो नाम राजाभूत् । तत्र^१ सत्त्वमे निवद्वा सभामण्डपसुरतो न्यायिना^२ हन्यमाना न्यायधषटा^३ निनदति । अन्यदा तस्यैकस्तुनोः कुमारेण रथास्तुदेन पथि सञ्च-
ताप्तात्प्रया कश्चिद्वित्सतरः पथि^४ व्यापादितः तन्माता सौरभेषी नयनान्यामज्जसमशूणि
वर्णती सपराभवप्रतीकाराय शृङ्गाश्रेण न्यायधषटामवीचदत् । तदृष्टवाटङ्कारं^५ दृषो निवास्या-
हुनकीर्तिस्तमर्जुनीवृत्तान्तं मूलतोऽवगम्य निजं न्यायं परां कोटिमारोपयितुं प्रातः स्यं स्वन्वने
निवेद्यै प्रियपुणोऽपि तमेकसेव पुत्रं पथि नियोज्य तदुपरि तां धेनुं साक्षीकृत्य^६ रथं आमया-
मास । तस्य भुभूजः सत्त्वेन तस्य सुतस्य भूयसा भाग्यवैभवेन रथस्य रथाङ्गे समुद्धृते स कुमारो
न विष्णः ।

॥ इति गोवर्द्धनवृपप्रबन्धः ॥

२०७) अथ कान्त्यां पुरि पुरा पुराणवृपतिश्चिरं राज्यं निर्गर्वः कुर्वन्, कदाचिन्मतिसागराभि-
षानेन प्रियसुहृदा महामालेनाऽनुगम्यमानो राजपाटिकायां व्रजन्, विष्वर्यस्तान्यस्तेन तुरङ्गेण
शेषगद्यियमाणे चतुरङ्गचमूलके क्रमेण दर्वीयसि संज्ञायमानेऽन्यतिजवे जवनेऽधिरुद्धस्तदानुप-
दिकः सचिवः^७ कियत्थपि भूभागे उच्छ्रिते सति मार्गोङ्गाङ्गनपरिश्रमादत्यन्तसुकुमारतया सधिर-
पृष्ठित्यादिपदे नृपतौ कृतानन्तरकृत्यः, तं तुरङ्गमं तद्वेषं च सहादाय प्रदोषसमये पुरं प्रविशन्,
राज्यस्यानुसन्धानचिकीः सीमालैभूपालभयात्कमपि नृपतेः सवयसं सरूपं च कुलालमालोक्य^८
तद्वेषपाणीर्घ्यं तुरगेऽपिरोप्य सौधप्रवेशानन्तरं देवै तं व्यतिकरं निवेद्य, सचिवेन पुण्यसार इति
नाम^९ विधाय स एव नृपतीचक्रे । इत्यें^{१०} कियत्थपि गते काले स सचिवश्चमूसमूहवृत्तः प्रतिनृपतिं
भूति प्रतिष्ठातुः स्वप्रतिहस्तकप्रायं कमपि प्रथानपुरुपं नृपतिसेवाकृते नियोज्य^{११} स्यं देशान्तर-
विद्वास्तकरोत् । अथ स पृथिवीपतिर्निरहुङ्गो वेद्यापैतिरिव स्वैरविहारी तदनन्तरं पुरकुम्भकार-
गान्मसत्तानाहूय मृन्यान् हयान् करिकलमन्तरभवृपंभादीश्च निर्माय तैः समं चिरं चिक्रीड ।
१२ एवं स्विते समस्तराजलोकस्यावहेलनां नृपतेनिश्चाम्य ततः स्कन्धावारात् स सचिवः स्वल्पपरि-
च्छ्वें^{१३} नृपुपेलव्यवार्दीत्-^{१४} 'पस्त्वमिद्रानीमेवाविस्मृतकारभावः स्वभावचलाचलतर्यां यदि कामपि
मर्यादां न मन्यसे, तदा त्वां निर्विषयीकृत्य कमप्यपरं कुलालयालं भूपालं करिव्यामींति तदुन्निः-
छुदः^{१५} स दृपः सभायामुपांशुभूमौ 'कोऽत्र भोः ?' इति व्याहृतिसमनन्तरमेव सजीवं^{१६} तैत्तिश्चित्र-
पदातिमिः स सचिवः सन्दानितः । तदसम्भाव्यं महदाश्र्यं "विष्वर्य तत्प्रसुप्तभावाविर्भावच-
१७ मलूनपिच्छास्तपदयोर्निपत्य सं मोचयितुमल्यर्थमर्थर्थयन् नृपेण तथा कारिते स सभक्तिं
विज्ञप्यामास-^{१८} 'भवतः साम्राज्यदाने निमित्तमात्रोऽहम्, तय प्रभावादालेख्यस्तपाणि अपि सच्चे-
तर्नीयैर्थं निदेशवशंवदाने भवन्ति तत्र प्राकृतान्येव^{१९}" कर्माणि कारणमत एव भवान्युण्यसार
२० इति साम्यपनामा ।

॥ इति पुण्यसारप्रबन्धः ॥

१ AB एविष्णः; D एवायाः । २ BP न्यायेन । ३ AD नामिः । ४ P 'भवतः' नामिः । ५ P चं पश्चानिवादः ।
६ AD विरेत्वः । ७ D साक्षात्कृतः । ८ P गण्डः । ९ D विष्वर्यस्तपत्येन । १० P विना वान्मवः । ११ D शीमालः ।
१२ P जामपेषं । १३ P नामिः । १४ AD विरेषः । १५ A एवाः । P विद्याः; DB एवायाः । B एवायाः । १६ P
पदम् । १७ P विद्याय वान्मवः 'पृष्ठम्' । १८ P विरिदः । १९ P सहवच्छयः । २० P इविष्णः । २१ D सक्षमाः ।
२२ P एविष्णत् । २३ BP जामकानि ।

२०८) अथ पुरा कुसुमपुरे नगरे^१ नन्दिवर्द्धननामा राजकुमारो निर्जच्छवधरेण समं देशान्तरविलोकनं कुलुकी पितरावनाष्टच्छय यद्यच्छया गच्छन् भत्यूर्पकाले कापि पुरे प्रातः । तत्राऽप्युचिणि नृपतौ पञ्चत्वमुपागते सति सचिवैरभिपित्तः पद्महस्ती निविलेडिपि नगरे यद्यच्छया ग्रामं ग्रामं स सम्ब्रमं^२ तथागतः । तं वृपं कुमारमासनमपि दुःखमिव विस्तृत्य परं छवधरमभ्यपि-५ श्वत् । स च तत्प्रानैर्महता महोत्सवेन^३ पुरं प्रवेश्यमानो राजकुमारमपि तथैव महत्वा प्रतिपत्त्या सह गृहीत्वा सौधं गतः । 'अहं राजलोकस्य स्वामी त्वं तु मम' इत्युचितैरुपचारवचनैस्तमन्तरि-१० तमारराघ । स तु राजा राजगुणानामनहीं निरवधिदुर्मेधा वर्णाश्रमपालनापरिधामान्मिज्ञो यथा यथा प्रजापीडनपरः साम्राज्यं कुरुते तथा तथा पशुपतिमूर्खो विषुतराजेष स कुमारः प्रतिदिनं हीयते । कस्मिन्द्वयप्यसरे तं तथास्थितं कुमारं स वृपतिसत्तचुताहेतुं शृच्छन् 'वुमं प्रतया त्वं'

१० यद्यप्तजाः पीडयसि तेनालन्तमनीचिदेन कृशतामावहामि ।

२४२. वासो जडाण मज्जे दुर्जीही सामिसवर्णपीडिलग्ना । जीविजद वं^४ लाहो क्षीणचं^५ विम्हजो^६ कीरा ॥

इति भया गाधार्यः सत्यापितोऽस्तीति तद्वचनानन्तरं 'यदस्याः प्रजायाः पापनिरतापा अप्य-१५ एषोदयेनावद्यं भाविपीडनावसरेऽहं वृपतीकृतः । यदि प्रजायाः परिपालना लोकेशोऽभ्यलितिष्प-त्तदा भवत एव पद्महस्ती पट्टाभिपेकमकरिष्यदि^७ति तदुचित्युक्तिभ्यां भेषजाभ्यामिव निगृहीत-२० रुद्ध स कुमारो वपुः पीडरतां व भार ।

॥ इति कर्मसारप्रबन्धः ॥

२०९) अथ गौडदेशो लप(ख)णावत्वां नगर्यां श्रीलक्ष्मणसेनो नाम वृपतिरमापतिपतनाङ्गा^८ सचिवेन सर्वयुद्धिनिधानेन^९ चिन्त्यमानराज्याधिरं राज्यं चकार । स त्वनेकमत्तमातद्वैस्त्यसद्वा-२५ दिव भद्रेनान्धनतां^{१०} दधानो मातद्वीसद्वप्नकुलङ्कुलभाजनमज्जनि । उमापतिपरस्तु तदव्यतिकरमव-गम्य प्रकृतिकृतपा च स्वामिनोऽनाकलनीयतां^{११} च विचिन्त्य प्रकारान्तरेण तं योपयितु सनाम-एषप्रभारपदे शुशृष्ट्यामूर्नि काव्यानि लिलेत्य-

२४३. शेषं नाम शुणत्वपैय वदनु सामाविकी सच्छता किं शूमः शृन्विरां मैंन्द्रन्त्यशुचयः स्वार्याचर्वपारे^{१२} ।

किं चातः परमति ते सुतिपदं त्वं जीविरं देहिना त्वं वेन्नीचपयन गच्छति पयः कस्त्वा निरोदु धमः ॥

२४४. त्वं वेत्सव्यरसे शृष्णेण लघुना^{१३} का नाम दिग्दन्तिनां व्यालैः करुणभूषणानि तुवुरे^{१४} हानिन्द हेत्तामारे ।

२५ मूर्दन्यं तुरुषे जडांशुमयशः किं नाम लोकत्रीर्थीपसामुज्जवान्यपरस लगतामीरोजसि किं श्राद्धे ॥

२४५. उिन्द्रं प्रदायितो यदि प्रथयति प्रेरेतु सरल्यं यदि क्षीयः कीडति भातुर्भिर्यदि रति धरे शमशने यदि ।

सद्वा संहरति प्रजा यदि तथापाधाय भक्ष्या मनलं सेवे करवाणि किं प्रिजगती शून्या स एवेत्यरः ॥

२४६. एवसिन्महृति प्रदोषसमये राजा त्वमेकलवो लक्ष्मीममुरुहौ पिपाय इमुदे किं तो^{१५} तनोपि भिः ।

यद्वाक्षी लितिरय यत्वं तुमनः भेषीयु सम्मापना त्वं राजकरमोऽसि उपरापितु धारापि नैर धमः ॥

१ AD शाश्वतः २ AD 'पित' शाश्वतः ३ BP इत्येवः ४ P शाश्वतः ५ P गृहेऽपि ६ 'प्रभ' शाश्वतः ७ AD शाश्वतः श्वावे D 'वाम' । A 'प्रभम्' । ८ AD गत्याप्तः । ९ P मंदृष्टः । १० AD शाश्वतः । ११ AD रेतीरा । १२ P लालितः । १३ P वर्षः । १४ AD शिविः । १५ D विद्योः । १६ D 'प्रभ' शाश्वतः । १७ AD विष्णा । १८ D मरात्पत्तः । १९ D व्याजोऽसीरी । २० P पराप्तः । २१ P इत्येव शाश्वतः । २२ AD शुणः । २३ P कुर्वे । २४ BP च । २५ P वर्षः ।

२४७. 'सद्गुच्छसद्गुणमहार्हमनर्थ्यमूल्यकान्ताधनस्तनतोचितचारुमूर्ते ।

आः पामरीकठिनकण्ठविलग्भमग्नं हा हार हारितमहो भवता गुणित्वम् ॥

कसिन्नपि सर्वावसरं प्रस्तावेऽतानि वीक्ष्य^१ तदर्थमवगम्य तस्मिन्नन्तद्वेषं दधौ । यतः-

२४८. प्रायः सम्भ्राति 'कोशाय सन्मार्गस्योपदेशनम् । विलग्ननासिक्सेव 'यद्वदादर्शदर्शनम् ॥

इति न्यायात्सामर्पतया तं पदभ्रष्टं चकार ।

अथ स वृपतिः कदाचिद्वाजपादिकायाः प्रत्यावृत्तो दुरवस्थमेकाकिनमुपायविधुर्मुमापतिधरं^२
तं वीक्ष्य क्रोधाद्वधाय हस्तिपकेन हस्तिनं प्रेरयामास्त । स तु निपादिनं प्रति प्राह-'यावदहं
राजोऽप्ये किञ्चिद्विद्धिम तावज्ज्वानिवार्यतां गजः ।' तद्वचनात्तेन तथाकृते उमापतिधरः प्राह-

२४९. नमस्तिषु धुलियूसरवपुर्णाष्टिमारोहति व्यालैः क्रीडति नृत्यति स्वदसृग् चमोदहन् दन्तिनः ।
आवाराद्रहिवेषादिचरितरावद्वरागो हरः^३ सन्तो नोपदिशनित यस्य गुरवस्तस्येदमाचेष्टितम् ॥

इति तद्विज्ञानाद्वृशेन वशंवदमनोगजो निजचरित्रे^४ किञ्चित्सानुशयः स्वममन्दं निन्दंस्तदूच्य-
समं शर्नर्निर्पित्य तं पुनरेव प्रधानीचकार ।

॥ इति लक्षणसेनोमापतिधरयोः प्रवन्धः ॥

२५०) अथ कासिनगर्यां जयचन्द्र^५ इति वृपः प्राज्यसाम्राज्यलक्ष्मीं पालयन् पञ्चरिति विरुद्धं
यमार । यतो यमुनानग्नायायिगुवावलम्बनमन्तरेण चमूसमूहव्याकुलिततया कापि गन्तुं न प्रभ- 15
वति । कसिन्नप्यवसरे तत्र वास्तव्यस्य कस्यापि शालापते: पव्वी सूहवनाक्षी सौन्दर्यनिर्जितज-
गप्तव्यैणा, भीषमग्रीष्मतां जलकेलिं विधाय सुरसरित्तिरे तस्थुषी सा खञ्जनाक्षी, व्यालमौलि-
स्तिं खञ्जनं वीक्ष्य तमसम्भाव्यं शकुनं कस्यापि द्विजन्मनः^६ स्लातुमायातस्य पदोर्निर्पित्य तद्वि-
चारं पद्मच्छ । स निमित्तवित् 'चेन्मदादेशं सदैव तनुपे तदा तत्र विचारमहं निवेदयामीति
तेनोक्ता तत्र पितृनिर्विशेषस्य मान्यामाज्ञां^७ सदैव मूर्धा तां वहामीति प्रतिज्ञापरायास्तस्याः 20
'सप्तमेऽहनि त्वमस्य वृपतेरयमहिपी भविष्यसी'ति आदिश्य द्वावपि यथागतं जग्मतुः । अथ
निमित्तविदा निर्णयेते वासरे स राजा राजपादिकायाः प्रत्यावृत्तः कापि रथ्यायां नैपद्यविहीना-
मपि अगण्यलावण्यपुण्याद्वार्णां तां शालापतिवालां विलोक्य स्वचित्तसर्वस्वचौरीमूरीकूल्याग्रमहिपी
चकार । तदनु तथा कुतन्ज्ञाया^८ विर्म प्रति स्वां प्रतिज्ञां^९ सरन्या वृपाय तस्मिन् विद्याधरनिमित्ते
विज्ञेष पटद्वप्रणादपूर्व तस्मिन् विद्याधरे आद्यमाने, विद्याधराभिधानानां द्विजानां सप्तशती- 25
मागतां विलोक्य तमेकमुपलक्षितं पृथक् कृत्वा शेषेषु यथोचितं सत्कृत्य विस्तुष्टेषु वृपतिः 'यथे-
स्मिते पर्याप्तेति विद्याधरं विपद्धिधुरं प्राह । राजादेशमसुदितेन तेन 'अङ्गसेवा सदैवास्तु' इति
मार्घिते वृपतिना तथेति प्रतिपद्मे, तस्य निरचयिचातुर्यं पर्यालोच्य सर्वाधिकारभारे^{१०} धुरन्धरो
व्यथापि । स च क्रमेण सम्पन्नसम्पन् निजद्वात्रिंशदवरोधयुरन्धीणामनुवासरं जात्यर्कपूर्पूराभ-

^१ एवं पदं प्रभ आदर्ते नोपलक्ष्मयम् । १ D कसिन्नप्यवसरः । २ P +समये । ३ P निरीक्ष्य । ४ D सन्ति प्रोपाय ।
५ P विज्ञाप्तयेत्त । ६ P नाति 'उपायविषु' । ७ P विद्याय नाम्यत्र 'उमापतिपरं' । ८ P व्यपारयामास । ९ D +रागादे ।
१० D अर्थप्रविषु । ११ P जयवद्धन् । १२ P 'प्राप्य' नाति । १३ P द्विवतः । १४ D सामान्या मयाज्ञा । १५ AD
व्यथापि । १६ AD विप्रमनिष्ठो । १७ P सर्वम्यापात्मारे ।

रणानि कारयन् प्राच्यानि निर्माल्यानीत्यवकरकूपिकाणां व्याजयन् साक्षादैवतावतार इव दिव्य-
भोगान् भुज्ञानेऽष्टादशजह्नासहस्राणां ब्राह्मणानामभिलयिताभ्यवद्वारदानादनु स्वयमश्वाति ।

२११) अथ कदाचित् नृपतिना वैदेशिकभूपतिमभिषेणयितुं चतुर्दशविद्यधरो विद्याधरो
राजादेशादेशान्तराण्यवगाहमानः किंचिद्विन्धनविहीने देशो विहितावाससंस्तेषां विद्याणां पाककाले
५ सूपकाराणां तैलाभ्यक्तवस्तुकूलान्येवेन्धनीकुर्वन् तान्विप्रान् रूढ्यैव भोजयामास । अथ प्रतिरिपुं
निर्जित्य जितकासितया व्यावृत्य प्राप्तिनिजपुरीपरिसरः पिण्याकाभिलापात् दुकूलज्वालनेन कुपितं
भूपतिमवगम्य सं गृहमर्थिभिर्लुप्ताप्य तीर्थोपासनवासनया सञ्चरन्, आनुपदिकेन वृप-
तिनानुनीयमानो मानोवततया वृपतेराशयं स्वाभिलापसम्भवेन निवेद्य, कथंकथंचिदाएच्छय
निजमवसानमसाधयत् ।

१० २१२) तदनन्तरं सूहवदेव्या निजाङ्गजस्य कृते युवराजपदवीं याचितो वृपः 'सङ्गृहिणी-
पुत्रायासद्वेशो राज्यं न युज्यते' इति वोधिता द्वैपतिं लिघांसुम्लेच्छानाहृतवती । अथ स्थानपुरु-
षाणां समायातविज्ञसिक्या तं व्यतिकरमवधार्ये लघ्यपद्मावतीवरप्रसादं सादरं करमपि दिव्या-
ससं निमित्तं पृष्ठवान् । स पद्मावत्याः सप्रत्ययं म्लेच्छागमनिषेधल्पसमादेशं वृपतेरिव्विस्पवान् ।
अथ कियदिनानां प्रान्ते तान् संनिहितानाकर्ण्य स आशाम्बवः' किमेतदिति एष्टस्त्वामेव निशि
१५ वृपतिप्रत्यक्षं पद्मावत्याः पुरो होममारभत । अथ निरवद्याकृष्टिविद्यया होमकुण्डाज्वालामाला-
न्तरिता प्रत्यक्षीभूय श्रीपद्मावती तुरुक्कागमनिषेधभुक्तवती । अथ सामर्पयः क्षणपणकस्तां कर्णयो-
र्धृत्वा' क्रोधानुवन्धात् 'तेषु संनिहितेषु किं भवत्यपि वितर्थं त्रूपे?' इति तेनोपालक्षिभता सती
२० सैवमवादीत् 'त्वं यां पद्मावतीमतीव भक्त्या एच्छासि साऽसत्प्रतापवलात्पलायांचक्रे । अहं तु
म्लेच्छगोत्रदेवतं मिथ्याभापणेन लोकं विश्वास्य म्लेच्छैर्विद्यासं कारयामींत्युदीर्घं तस्यां तिरो-
हितायां म्लेच्छसैन्येन प्रातर्वाराणसीं वेष्टिनां चेष्टया जानन् तद्वन्ध्यनैर्वैतुदेवाशतीमितनिस्वा-
२५ नयुग्मनिस्वेऽपहुते वले सति प्रवलम्लेच्छवलंभ्याकुलीकृतमनास्तं सूहवदेव्या अङ्गजं निजगजे^१ ।
नियोज्य जाहृवीजले स राजा' ममत्व ।

॥ इति जंयचन्द्रप्रबन्धः ॥

२१३) अथ जगदेवनामा क्षत्रियः त्रिविधामपि वीरकोटीरतां विश्रत्, श्रीसिद्धचक्रवर्तिना
२५ समान्यमानोऽपि" तद्वृग्मच्चवशीकृतेन वृपतिना परमर्दिश्रीर्परमर्दिना समाहृतः सोपोरोधं पृथ्वी-
पुरम्धीकुन्तलकलापकलं कुन्तलमण्डलमवाप्य यावत्तदागमं श्रीपरमर्दिने द्वाःस्यो निवेदयति
तावत्तत्सदसि काचिद्विवित्ता विवसना पुष्पच्चलचलनका" नृत्यन्ती तत्कालमेवोत्तरीयं समा-
दाय सापत्रपा सा तत्रैव निषप्साद । अथ राजदौवारिकप्रवेशिताय श्रीनिगदेवाय परिरक्षमेप्रियाला-
३० प्रभृति सन्मानदानादनु प्रधानपरिधानदुकूलं लक्ष्यमूल्यातुलयोद्भृपटयुगं प्रासादीकृत्य तस्मिन्
महाहोसननिविष्टे सभासम्भ्रमे भग्ने सति वृपस्तामेव विट्टर्दा" नृत्यापादिदेश । अथ सा औ-

१ D 'वा' नाडिः Do सहया० । 2 D चुद्रंविधापयोऽपि प्रैविगो देशाद० । 3 P वृद्धंसामात० । 4 BD वृ-
पति० 5 P आशाम्बवः । 6 P विश्व । 7 P नास्त्वेवरद० । 8 P युष्टार्द० । 9 AD उड़० । 10 AD निते
मद्वै । 11 P विश्व 'राजा' स्थाने 'गजः' । 12 P चयत्पन्द्र० । 13 D सन्माम्बोऽपि । 14 P परमर्दिना । 15 D
पुष्पच्चलनका । 16 D नास्त्वेव दश्वै । 17 P विष्टर्दा० ।

वित्तपत्रशब्दव्युथव्याप्तिर्थ्यर्थं 'श्रीजगदेवनामा जगदेकपुरुषः साम्प्रतं समाजगाम तत्तत्र विवस्नाहं त्रिहेमि । ख्रियः छ्वीष्वेव यथेष्टु चेष्टन्ते' इति तस्या लोकोत्तरया प्रशंसया प्रमुदितमानसस्तं व्यप्रसारीकृतं वसन्युगं तस्यै वितीर्णवान् ।

अथ श्रीपरमहिंप्रसादतो देशाधिपत्ये सञ्जाते सति ऋणग्रस्तस्तदुपाध्यायः श्रीजगदेवस्य मिलनाप समागतः काव्यमिदं प्राभूतीचकार । तद्यथा-

३५०. *अश्वधतत्त्वालिनो भगवतः कसापि सङ्गीतकल्पासक्तस च तस्य कुन्तलपतेः पुण्यानि मन्यामहे ।

एकः कामदुषामदुष भरुतः सूनोः सुवाहुर्दीर्घं प्रत्यक्षप्रतिपक्षभार्गव भवानन्यस चिन्तामणिः ॥

अस्य काव्यस्य पारितोपिके तस्मै स स्थूललक्ष्मो लक्ष्माद्व वित्तार ।

३५१. चक्रः पप्रच्छ पान्त्यं कथय मम सखे कास्ति किं स प्रदेशो

वस्तुं नो यत्र रात्रिभवति भुवि चिरायेति स प्रत्युवाच ।

नीते मेरो समाप्तिं कनकवितरणैः श्रीजगदेवनामा

सुर्येऽनन्तहिंतेऽसिन् कर्तिपरदिवसैर्वसरादैतस्तुष्टिः ॥

३५२. दोषारक्षणदक्षदक्षिणभुजे दाक्षिण्यदीक्षाशुरौ श्रेयः सद्बनि धन्यजन्मनि जगदेवे जगदातरि ।

र्वन्ते विदुपां गृहाः प्रतिदिनं गन्धेभग्नर्वयोरालानदुमरसुदामधटनाव्यग्रीभवस्तिकराः ॥

३५३. लघि जीवति जीवन्ति वलिकर्णदधीचयः । दारिश्च तु जगदेव ! मयि जीवति जीवति ॥

३५४. दरिद्रान् सुजतो धातुः कृतार्थान् कुर्वतस्तथ । जगदेव ! न जानीमः कथं हत्तो विरस्यति ॥

३५५. जगदेव ! जगदेवासादमधितिष्ठतः । त्वद्यथा॒श्विलङ्घस्य नक्षत्रैक्षत्वायितम् ॥

[३५६] *कीर्तिं जातजात्येव चतुर्मोधिमज्जनात् । प्रतापाय जगदेव ! गता मार्चण्डमण्डलम् ॥

[३५७] *सति क्षत्रियदेवाय जगदेवाय भूमुजे । यद्यशः पुण्डरीकान्तर्गंगनं भ्रमरायते ॥

[३५८] *एकः ध्माचक्रपीठे वितरति कनकं श्रीजगदेवदेवो

सज्जा दीनाः सहस्रं सततमिति मनो मा विपादास्पदं भूः ।

आदित्याः किं कियन्तः प्रवलतमतमस्तोममज्जनौष-

प्राणव्राणप्रवाणप्रवणहरिसुरुषुणदिक्षकवालाः ॥

३५९. अगाधः पायोधिः पृथु धरणिपांचं विषु नमः समुत्तो मेरुः प्रथितमहिमा कैटमरिषुः ।

जगदेवो वीरः सुरतरुदारः सुरसरित् पवित्रा पीयूषपृष्ठुतिस्मृतवर्षीति न नवम् ॥

‘न नवमिति जगदेवार्पिता समस्या पण्डितेन पूरिता ।

[३५१] *तथ्या पार्थकथा वृथा चलिर्यं शकोऽननी भूचरो

लोकः सम्प्रति साहस्राङ्करिताश्वर्येऽपि मन्दादरः ।

दृष्टः कंतरिषु न कल्पतरणा शून्यं महीमण्डलं

योज्यो न सरविग्रहस्त्वयि जगदेवे जगदातरि ॥

[३५२] *पद्मयं दुर्वारः किरति किण्ठेणिमनिर्य यशः श्रालेवाशुर्दिग्यि दिग्यि जगदेव ! भगवतः ।

वदा सद्व राकाभयसमयमालोक्य भुवनं कुहृवन्दो जातः पिकनिकरस्तुक्षयणः ॥

१ D पृष्ठापांचः । 2 P सर्वा । 3 D नाल्लेत्तरां । * D कुलके इदं पथ मूलपृष्ठं न रम्पते । 4 D पदः
१ P ए । 6 A D व्ययः । 7 P पृथुपनिराग्रं । * मृतिद्विष्टानि पदानि P आद्रभैं एतोपलम्बन्ते ।

[१७९] *सत्रासा इव सालसा इव लसदुर्गार्वा इवाद्वा इव व्याजिका इव चक्रिता इव उग्रो ग्रान्ता हवार्ता इव । त्वद्धै प्रे निपतनित कुत्र न जगदेवयमोः सुभूत्यां वात्यावर्तनननितोत्पलदलद्वेषिणीद्वयः ॥

इत्यादीनि वृहनि काव्यानि यथाश्रुतं ज्ञातव्यानि ।

अथ श्रीपरमहिंसेदीनीपते: पटमहादेवी श्रीजगदेवस्य प्रतिपन्नजामिः । कदाचित् राजा 'सीमा-
५ लभूपालपराजयाय प्रहितः श्रीजगदेवो देवार्चनं कुर्वन् छलघातिना परथलेन निजं सैन्यमुपहृतं
शृण्वन् तमेव देवतावसरं न मुमोच । तस्मिन्नवसरे प्रणिथिषुपसुखाज्ञगदेवयराजयमन्तुष्टपूर्व-
मवधार्य महिर्पी श्रीपरमहीं प्राह—'भवन्नाता संग्रामचीरताऽहंयुता' विश्राणोऽपि रिपुभिर्मानतः
पलायितुमपि न प्रभूष्णुरजनि । इति नृपतेर्मर्माविधं नमोऽक्षिभाकर्ण्य प्रत्यूपसन्ध्याकाले साराज्ञी
प्रतीचिदिशमालोकितवती, राजा 'किमलोकसे?' इत्यादिष्टे 'सूर्योदयमि'ति; 'मुग्धे । किं सूर्यो-
१० दयोऽपरस्यां दिशि किमलोकसे?' सा तु 'विरचिप्रपञ्चप्रतीपः प्रतीच्यामपि प्रयोतनोदयो
द्वृघटेऽपि घटते परं क्षत्रियदेवजगदेवस्य भङ्गस्तु न' इति दम्पत्योः प्रियालाये, देवार्चनानन्तरं
जगदेवः पञ्चशत्या सुभैः समं समुत्तिथतश्चण्डांशुरिव तमस्काण्डम्, केसरिकिशोर इव गजयू-
धम्, वात्यावर्तं इव धनाधनमण्डलं । निविलमपि प्रत्यर्थिपार्थिवकु(व)लं हेलैवै तद्दलयामास ।

२१४) अथ स परमदिनामा वृषो जगत्युदाहरणीश्वरं परमैर्थर्यमनुभवन् निद्रावसरवर्ज रात्रि-
१५ निदं व निजौजसा विच्छुरितं शुरिकाभ्यासं विदधानोऽशानावसरे परिवेषणव्याकुलं प्रतिदिनमैकं
सूपकारमधूपः कृपाणिकथा निमन् पश्यधिकेन शतत्रयेण भक्तकाराणां वर्षे निषेव्यमाणः कोप-
कालानल इति विशुद्धे व भार ।

२५७. आकाश ग्रसर प्रसर्पत दिशस्वर्वं पृथिव एव्य भव प्रत्यक्षीकृतमादिराजयशां युभाभिरुज्जृभितम् ।

प्रेक्षध्वं परमहिंपार्थिवयशोराशेषिकाशोदशाद्वीजोच्चासविदीर्णदाडिमदशा' ब्रह्माण्डमारोहति ॥

२०

इत्यादिभिः स्तुतिभिः स्तूपयमानविरं साम्राज्यसुखमनुवभूत ।

२१५) स च सपादलक्षीपक्षितिपतिना श्रीष्टवीरजेन सह सञ्चातविग्रहः समराजिरमधिस्तदः
स्वसैन्ये पराजिते सति^{१०} कान्दिदीकः कामपि दीर्घं यहीत्वा पलायनपरः खां राजधानीमाजग्राम ।
अथ तस्य पैरमहिंपार्थिवस्यापामानितपूर्वे: कोपि तत्पूर्वेसेवको" निविपथीकृतः पृथ्वीराजराज-
सम्भासुपेतः प्रणामान्ते 'किं दैवतं परमहिंपुरे विशेषात्सुकृतिभिरिज्यते?' इति खामिनादिष्ट-
२५ सत्काळोचितं काव्यपिदमपाठीत्-

२५८. मन्दश्चन्द्रिकीरटष्टूजनरसस्त्वा न कृष्णाच्चने सम्भः^{११} शम्भुनितमिवनीप्रणातिषु व्यग्रो विधातुग्रहः ।

नाथो नः परमद्यनेन वदनन्यसेन संरक्षितः पृथ्वीराजनराधिपादिति तुष्ट तत्पत्तने फूज्यते ॥

इति स्तुतिपरितोपितः 'स राजा तं यथेष्टितेनं पारितोपिकेष्टानुजग्रहः । सं च यिः सप्तकृ-
त्वस्त्रासितम्लेच्छाधिषो द्वाविंशतिमवेलायां स एव म्लेच्छाधिषतिः' पृथ्वीराजराजधानीसुपेत्य
३० निजदुर्दरसकन्धावारेण समवात्सीत् । चासितमक्षिकेव भूयो भूयो रिपुरूपतेररति

१ P देवति । २ D धीमालः । ३ D धीत्रयतः । ४ P रिपुरातः । ५ D मर्मानिशालः । ६ D 'क्षदपित्'
नाति । ७ AD 'धना-' नाति । ८-९ एतदन्यार्थं वाच्यं P आदत्ते एव लम्बम् । १० P धीवोम्प्रासितपदादिमदुलः । ११ D
राज्यः । १० D नाति । ११ 'परमहि' नाति AD । १२ D मालित्वपेत्संपदो । १३ D लभः । १४ A धीतिः
नेति । १५ पददन्यार्था वाच्यः D उल्लक्षे परिवा । १६ D वयः । १७ P दुर्पतः ।

प्रथमः]

मनोगतामवगस्य प्रभोर्निः सीमप्रसादपात्रं द्वितीयमिव गात्रं^१ तुङ्गनामा क्षात्रं तेजो वहन् सुभट्ट-
कोटिकोटीरः स्वप्रतिविम्बल्पेण शुद्धेण समं म्लेच्छपतेरनीकं प्रविश्य तस्यै^२ । निरीक्ष्यसमये तस्य
प्रिपोर्मुखदरात् परितः खादिराङ्गाधगधगायमानां परिखां निरीक्ष्याङ्गजं जगाद्^३ 'अस्यां भम प्रवि-
ष्टस्य एषे पदं ददानो म्लेच्छपति निगृहणे^४ ति पितुरादेशान्ते 'कार्यमेतन्मासाध्यतमम्, किं^५
च निजजीविताकाङ्गाधा पितुर्विपत्तिदर्शनम्; तदहमस्यां विशामि भवन्त एव तमन्तं नयन्तु^६ । इत्युक्त्वा तेन तथाकृते खामिकायां पर्यासप्रायं मन्यमानस्तमरातिं लीलया निगृह्य यथामतमा-
जगाम । विभात्मूलिपिष्ठायां निशि विपत्रं स्वं खामिने निरीक्ष्य परं दैन्यं दधन् म्लेच्छसेन्यं
पलायांचके । स तुङ्गसुभट्टस्तुङ्गप्रकृतितया नृपतेः कदाचिन्न ज्ञापयामास । कसिन्नप्यवसरे
राजमान्यतया नितान्तपरिचितां तुङ्गपुच्छवृभूतमङ्गलवलयामालोक्य सम्भ्रमान् नृपतिना
पृच्छयमानेऽपि पदोधितिव गम्भीरतया मौनमर्यादया किमप्यविज्ञप्यन् निजशपथदानपूर्वकं^{१०}
एषो निजगुणकथापनकं दुष्करमिति तथापि प्रभोरभ्यर्थनया निवेद्यमानमस्तीत्यभिधाय तद्व-
त्तान्तं प्रत्युपकारभीरुर्यथावस्थितं निवेदयामास ।

२५९. इयमृच्छिपामलौकिकी भद्रती कापि कठोरचिनता ।
उपकृत्य भवन्ति निःस्पृहाः परतः^७ ग्रत्युपकारयाङ्गाया^८ ॥

॥ इति तुङ्गसुभट्टप्रवन्धः ॥

15

२१३) अथ कदाचित्तस्य म्लेच्छपतेः सुनुर्दृपतिः पितुर्वेंसं सरन्, सपादलक्षक्षितिपतिर्विग्रहका-
म्या सर्वसामद्या समुपेतः पृथ्वीनाथस्य नासीरवीरयनुद्दरत्वारैः प्रावृपेण्यधाराधरधारासरैरिव
तस्मिन्ससेन्येऽपि आसिते पृथ्वीराजस्तदा तदानुपदिकीभावं भजन, महानसाधिकृतपञ्चकुलेन
व्यज्ञपि—'करभीणां सप्तशत्यापि महानसपरिस्पन्दः सुखेन नोद्दते, ततः कियतीमिः करभीमिः
प्रसुः प्रसीदतु' इति विज्ञासो नृपतिः 'म्लेच्छपतिमुच्छेय तदौषिकमाङ्गिध्य^९ भवदभ्यर्थिताः करभी^{१०}
प्रसारीकरित्यामीं ति तत्सम्बोध्य उनः प्रयाणं कुर्वन् सोमेष्वरनाम्ना प्रधानेन भूयो भूयो निपि-
ष्यमानः, तत्पक्षपातग्रान्त्या नृपतिना निगृहीतकर्णः, तदल्यन्तपराभवात् तस्मिन् प्रभौ सामपर्णे
म्लेच्छपतिं प्राप्य तदभिनवपादुः करणतस्तान् विघ्वस्तान् पृथ्वीराजस्कन्धावारसन्निधी समानीय,
पृथ्वीराजराजः एकादश्युपवासकृतपारणादतु सुमस्य तत्वासीरवीरैः सह म्लेच्छानां^{११} समरसं-
रम्भे सुआप्यमाने निर्भरनिद्रानिद्रायमाण एव^{१२} तुङ्गकैरूपतिनिवैध्य स्वसौषे नीतः । उनरप्येका^{१३}
दश्युपवासपारणके नृपतेदेवतार्चनावसरे म्लेच्छाङ्गा प्रहितं पैत्रिपात्रीकृतं मांसपाकं गुरुद्वान्त-
निरुपयन्तपैव^{१४} देवतारापनैवयप्रये सति शुनाऽपद्विष्यमाणे तस्मिन् पिशिते 'किं न रक्षसि?' पामि-
कैरित्यनिहितः, 'करभीणां सप्तशत्या दुर्बहं पत्पुरा भम महानसं तत्सान्प्रत दुर्देवयोगादीङ्गी
दुर्दशां प्राप्तमिति कौतुकाकुलितमानसो विलोक्यन्नसी^{१५} ति तेनोक्ते 'किं काचिदद्यापि त्वयुत्सा-
द्यमापित्यविशिष्यते? इति तैविज्ञासे 'यदि स्वस्याने गन्तुं लभेत तदा दर्शयामि वपुः पौरुषमि^{१६} ति ३०

१ D. निष्ठामात्रः २ P. निष्ठामात्र नामिदं पदः ३ AD. यु० ४ AD. 'परसेन्य' इत्येव ५ P. विहाय भवन्त्र

'भयान्त्रं' स्वादं 'पापान्' तस्फः ६ BP. इत्येव ७ BP. भीरैः ८ D. कास्त्रोत्तरादं ९ D. म्लेच्छविष्यवर्णं १० D. 'दृष्ट' कृषिः ११ D. तत्र १२ D. दृष्टः

यावदभिपेक्ष्यति तावत्तत्र चित्रशालायां शूकरनिवैहैर्हन्यमानान् म्लेच्छानालोक्यासुना
मर्माभिघातेनाव्यन्तपीडितसुरुक्षपार्थिवः पृथ्वीराजं कुठारशिरश्चेदपूर्वं संजहार ।

॥ इति चृपतिपरमर्हिं-जगद्वैष्णवधीपतीनां प्रवन्धाः ॥

२१७) अथ शतानन्दपुरे परिखीभूतजलधौ श्रीमहानन्दो नाम राजा, भद्ररेखेति तस्य
५.राज्ञी । अन्तःपुराप्राचुर्यात् 'तां प्रति विरक्तचेता उपतिरिति', पतिसंवननकर्मनिर्माणव्यापृता'
नानाविधान् वैदेशिकान् कलाविदश्च पृच्छन्ती कस्यापि यथार्थवादिनः सत्यप्रत्ययस्य कार्मणकर्मणे
किञ्चित्सिद्धयोगमासाय तत्प्रयोगावसरे-

'भ्रममूलबलात्मीतिः पतिद्वेषोऽभिधीयते ।'

इति वाक्यमनुस्मरन्ती सतीव तथोगचूर्णं जलधौ न्यधत्त । 'अचिन्त्यो हि मणिमञ्चौपर्यीनां
१० प्रभावः' इति तद्वेषोपजामाहात्म्याद्वशीकृतो वारिधिरेव सूक्ष्मिमान् निश्चिता तां निलम्बुपेत्य रेते । इन्थ-
मकसादाधानवतीं प्रतीकैस्तद्विधैर्निर्णय सकोपो शूष्पो यावत्तस्याः प्रवासादिदण्डं कमपि विष्ट-
शति तावत्तस्याः संनिहिते निधननिर्वन्धे प्रलक्षीभूय 'जलधेरपिष्ठातृदैवतमहमि'ति खं ज्ञापयन्
मा भैर्धीरिति तामाश्वास्य प्रति दृपं प्राह-

२६०. विवाहयित्वा यः कन्यां कुलजां शीलमणिडताम् । समद्ध्या न पश्येत स पापिष्ठिरः स्मृतः ॥

१५ इति त्वामवज्ञकारिणं प्रलयकालमुक्तमर्यादया सत्त्वतःपुरपरीवारां दुर्वारवारिणि 'मज्जयिष्यामि'
इति भयभ्रान्ताया अनुनयपराया 'अथं मरीय एव स्तुः, तदसै साम्राज्योचितं नव्यां सुव-
महमेव दास्यामी' त्वभिघाय कचित् कचित् पर्यास्यपह्यत्यान्तरीपान् प्रादुश्चकार । तानि सर्वाण्यपि
लोकेषु कौङ्कणानीति प्रसिद्धानि ।

॥ इति कौङ्कणोत्पत्तिप्रवन्धः ॥

२० २१८) अथ पाटलीपुत्रे पत्तने वराहनामा कश्चिद्विद्युष्णाङ्गमूः आजन्म निमित्तज्ञानश्रद्धालुर्दुर्गत-
त्वावस्तुन् रक्षितुं पश्चाद् चारण्यन् कापि द्विलात्तेल लग्रमालिख्याकृततद्विसर्जनः प्रदोषकाले गृहसु-
षेतः । कृतसमयोचितकूलो निशीथकाले भोजनायोपविष्टो लग्रविसर्जनमनुस्मृत्य निरातङ्कवृत्याया
यावत्तत्र याति तावत्तदुपरि पारीन्द्रमप्युपविष्टमवगणण्य तदुदराधोभागे पाणिं प्रक्षिप्य लग्रं
विमृजन् सिंहस्तप्रभाय प्रत्यक्षीभूय रविरेव 'वरं वृणु' इत्युच्चाच । अथ 'समस्तनक्षत्रग्रहमण्डलं
२५ दर्शयेति वरं प्रार्थयमानः स्विमानेऽधिरोप्य तत्रैव नीतो वस्त्रान्तं यावद् ग्रहाणां वक्रातिचारो-
दयास्तमनादीन् भावान् प्रक्षलयस्तुपान् परीक्ष्य उनरिहायातो मिहिरप्रासादाद्वाराहमिहिर इति प्रसि-
द्धाख्यः श्रीनन्ददृष्टेः परमा मान्यतां दधानो वाराहीसंहितेति नवं यजोतिःशास्त्रं रचयांचकार ।

२१९) अथ कदाचित्स निजपुत्रजन्मावसरे निजशृङ्खे घटिकां निवेदय तया शुद्धं जन्मकाललग्रं
निर्णय जातकयन्थप्रमाणेन ज्योतिश्चक्रे । स्वर्यं प्रत्यक्षीकृतग्रहचक्रज्ञानवलात्तस्य सूनोः संवत्स-
३० रशतप्रमाणमायुर्निर्णयत्वान् । तन्म्होत्सवे चैकं श्रीभद्रवाहनामानं जैनाचार्यं' कनीयांसं सोदरं
विहाय दृपप्रभृतिकः स कोऽपि नास्ति य उपायनपाणिसद्वामैः न जगाम । स निमित्तविज्ञनभक्ताय

१ B निकैरः । २-३ एवदन्तगते चार्यं D उत्तरे परिज्ञम् । २ D व्याप्रत्या । ३ P प्रयोगवासरे । ४ D वास्तव-
शत्रु । ५ एवत्यान्तगतः पाठः D उत्तरे परिज्ञः । ५ P प्रसिद्धिमातुः । ६ P वाह्यमुत्तुः । ७ D 'यावद्' नाडि ।
८ D जन्मददोः । ९ P जैनमुत्तुः । १० D 'वाह्यम्' नाडि ।

शक्तिः]

शक्तालमध्विणे तेपां सूरीणामनागमनकारणमुपालभगर्भिं जगौ । तेन ज्ञापितास्ते महात्मानः सम्पूर्णश्रुतज्ञानकरतलकलिताभलकफलवकालव्यास्तस्य शिशोर्विशतितमे दिने विडालान्मृत्यु-^५ भ्रुपदिशन्तो वर्यं नागता इति 'तेपामुपदेशभूतां वाचं वराहमिहिराय निवेदितायां' ततः प्रभृति निजकुदुम्बं तस्य शावस्यावश्यकीं तां विपदं निरोहु विडालरक्षाप्य शतश उपायान् कुर्वन्नपि निर्णीते दिने निशीयेऽक्षमाद्वालस्य मूर्धिं पतितयाजगलया स वालः परलोकमवाप । ततस्तच्छ्री-^{१०} कश्चुदुष्टिधीर्घिर्विषः श्रीभद्रावाहुगुरुवो यावत्तद्वेद्वामायान्नित तावत्तद्वाङ्गणे समस्तनिमित्तशास्त्रपुस्त-कान्येकत्र पिण्डीकृतानि संनिहितदहनान्यालोक्य, किमेतदिति षष्ठः सांवत्सरः समत्सरस्तान् जैनमुनीनुपालभ्रयन् 'एतानि रोहन्मोहसन्दोहकारीणि धक्षयाम्येव, यैरहमपि विप्रलघुः तेनेति सतिवंदमुदिते, तैः श्रुतज्ञानवलात्तज्ञन्मलं सम्यक् तस्मै निवेद्य सुक्षमेक्षिकथा तद्वद्यत्वे ज्ञापिते विशितादिनान्येव भवतित । इत्थं शास्त्रविरक्तावपनीतायां स ज्योतिषिपक इति जगौ—'यद्व-^{१५} द्विविडालान्मृत्युरपदिष्टस्तदेव व्यभिचरितमिंति' तेनाभिहिते तामर्गलां तत्रानाय्य तत्रोत्कीर्ण विडालं दर्शयन्तो 'भवितव्यताद्यत्ययः किं कदापि भवति?' इति महर्पिभिरभिदधे ।

२६१. कस्यात्र च रुद्धते गतः कः कायोऽयं परमाणवोऽनपात्माः ।

संस्थानविशेषपनाशयजन्मा योक्तव्ये द्वयमिति ॥

२६२. अभावप्रभवैर्मायाविभवभावितेः । अभावनिष्ठापर्यन्ते सतां न किश्ते भ्रमः ॥

इत्युक्तियुक्तिभ्यां प्रवोद्य ते मर्हपयः स्वं पदं भेजुः । इत्थं वोधितस्यापि तस्य मिथ्यात्वधत्त-^{१5} रितस्य कनकप्रान्तिरिव तेषु' मत्सरोच्छेकात्तद्रक्तानुपासकान्निभिचारकर्मणा कांथन पीडयन् कांथन व्यापादयन् तदृत्तान्तं तेभ्यो ज्ञानातिशयादवधायार्थं पर्सर्गज्ञानये 'उवसगगहरं पासं' इति नृतनं स्तोत्रं चर्याचकुः ।

॥ इति वराहमिहिरप्रबन्धः ॥

15

20

२६३) अथ व्याख्याभिधाने भूभृति रणसिंहनामा राजघुत्रस्तत्रन्दनां भूपलनान्दां सौन्दर्यनिर्जित-^{२५} नामगलोक्येवालामालायोक्य जातानुरागतया तां सेवमानस्य वासुकेः सुतो नागार्जुननामा समजनि । तेन पातालपादेन सुतस्लेहमोहितमनसा सर्वासामपि महौपधीनां फलानि भूलानि दलानि च भोजितेः ततस्तप्तमावान्महासिद्धिभिरुद्धृतः सिद्धुरुपात्तया पृथ्वीं विगाहमानः शातवाहनवृ-पते: कलागुरोर्गीरीयसर्वीं प्रतिष्ठामुपागतोऽपि गगनगमिनीं विद्यामध्येतुं श्रीपादलिसपुरे पालितांच्चा-^{२०} यान् सेवमानो मानोज्जितमंतिभेजनावसरे पादलेपभ्रमाणेन गगनोत्पतितान् श्रीअष्टापदप्रभृती-नि तीर्थानि नमस्कूल्यं तेपां वस्त्रानमुषेषुपां पादौ प्रक्षालयं ज्ञातस्सोतरवात्संख्यमहीयधीनामा-स्वाद-चर्ण-धारणादिभिर्निर्णीय च युस्तवगणाय्य कृतपादलेपः कृकवाकुकलापिवदुत्पत्तन्^{२५} अवदतटे निपतंथ तद्रणग्रेणिजर्जरिताङ्गो गुहमिः किमेतदित्यनुयुक्तो व्यथावृत्तान्तं निवेद्यन्, तत्त्वातुर्य-चमत्कृतचेतोभिस्तच्छिरसि पद्महस्तप्रदानपूर्वकं 'पाटीकतन्दुलोदकेन तानि भेषपाजान्यन्यज्य ३०

^{१-१} १-१ एषत्पादप्रदानाते २ P 'तेपामुपदेशे वराहमिहिरप्य मंत्रिणा निवेदिते' एष पाठः । १ BP विडालकालरक्षायत्रं ।
^२ BP नातिः । ३ D नाति 'रीत्यामोऽ' । ४ D 'पात्र' नाति । ५ D व्यक्तिरिति । * पृष्ठायं गपस्त्रेण लिखितं D उपलक्षे ।
^६ D व्याकान्तिरितः । ७ तेषु' स्वादे D 'उपायान्तुर्' । ८ D 'उपायान्' नाति । ९ P नातिरितः । १० P लोकानां ।
^{११} B तस्य नामः । १२ P भर्ती । १३ P भर्ती । १४ AD परदिष्टाः । १५ 'पानोत्कृतं' स्वाने D 'प्रत' स्वरः ।
^{१६} P प्रमदः । १७ D उपायानाः ।

तत्पादलेपाद् गगनगामी भूषा' इति तदनुप्रहादेकां सिद्धिमासाथ 'श्रीपार्वनाप्तुरतः साएः
मानो रसः समस्तन्त्रैणलक्षणोपलक्षितं पतिव्रतावनिर्मर्यमानः' कोटिरेणी भवतीति तन्मुग्ना-
दाकर्ण्यं च; यत्तुरा समुद्रविजयदावाहेण विकालवेदिनः श्रीनेमिनापमुग्नात् [युत्त्वा] महाति-
शायिनः श्रीपार्वनाप्तस्य विष्मयं रवामयं निर्माण्य श्रीद्वारारथसां प्राप्तादेव न्यत्स्तम्, द्वारारथतादाक्षानन्तरं
५ समुद्रेण शावितायां तस्यां उरि, तद्य समुद्रे तमिन्निम्बे तपैव विषमाने फान्तोलसांप्याप्तिरुस्य
प्रपत्तिनाम्नो यानपात्रे देवतातिशयपवशात् स्सलिते, इह निनविष्मयमस्तीति द्वित्यशाया निर्णय
नाविकांसंत्र विष्मयं सप्तसंलैप्यामतन्तुमिः सन्दानितमुद्दृत्य निजायां उरि विनितातीतला-
भात् ख्ययंकृतप्राप्तादेव न्यत्स्तयान् । तत्सर्वातिशायिविष्मयं नागार्जुनः शसिद्वरससिद्धपेष्ठष्टुत
सेर्वातिश्यास्ते विष्मयं तत्त्वातो रससाप्तनाए श्रीशतप्राप्तादेवस्तीति' पन्द्रहेत्वाभिगानां
१० प्रतिनिश्च सिद्धद्वयन्तरसाप्तिश्यात्तदान्तोय रसमर्दनेन कारणति नः । इत्यं शूयो भूयसत्र गतापाते
सति यन्मुखद्वाया सा नागार्जुनपात्रं तदीकानीनं मर्दनज्ञेतुं एच्छन्ती लोकपि राक्षसमया कोटि-
वेधरसस्य यापावस्थितं वृत्तान्तं नियेदपद्, तस्याथ चन्द्रगोचरातीतं रात्मारं द्वयोर्ज्ञान्यसा-
मान्यं सौजन्यं प्रवर्द्धयामास । अथ कदाचित्तया निजाद्वृत्ययोरभिन्नं वृत्तान्ते नियेदिते तो तामुखी
रात्रयं परित्यज्य नागार्जुनसमलकृतां शुभमागतौ कैलयेन तस्य रसस्य निजाद्वया पुष्टवेषो पद्म
१५ नागार्जुनो भूम्ले तत्र तामर्पदानेन परितोष्य रसायात्तं शुच्छतः । सा ए तमिन्नासाया तदैवं सल-
यणां रसयतीं 'कुर्वतीं' रप्त्यास्यां व्यतीतायां तमिन्न शाराभिति रसयतीं शुच्यति रसति, इद्विनैः
सिद्धे रसमिति ताम्यां नियेदितपती । अप व्रतिपद्माभागिनेयान्यां ताम्यां रसप्रसानदालसाम्यां
पासुकिना निर्णयतद्भार्गुकृत्युभिति परम्परया झातत्त्वाम्यां तेनैव शक्रेण तपीय स निजां ।
स रसः शुभतिष्ठित्यादैवताभिघानाव तिरोहितो पन्त्रय । यद्य स रसः सम्भवतसाप्त लक्ष्मनकू-
२० निजानं श्रीपार्वनाप्ततीपं रसादप्ततिशायिरकलद्वालिपिताह्वद्वद् । ततः रित्याकार्त्तेन
सदिष्मयं पदनमाप्तवज्ज भूम्पन्नरितं पन्त्रय ।

२१. (अ) अप श्रीशतप्राप्तादेवाशात् पण्मासीं यापादाप्तान्ति निर्माणपताम्' निर्माणं कठि-
नीप्रयोगेण नयाद्वृत्तार्थी नियुतायां श्रीप्रपदेष्यर्थाणां' युपुष्य यातुर्वृत्ते यन्मुखं यतिरोगं पापा-
दपादः श्रीपरणेन्द्रनाम्या रितरसार्पस्त्रमाल्याय तद्युपिन्दिपा विनिर्व श्राद्यं निरामर्पीहृत तदीपं
२५ श्रीपद्मनयदेष्यगृह्णाणामुपदिदेवा । श्रीसंपेन सह रसागतामाय ते गृहणः प्रथयनीं सुर्विं रितो-
पाप गोपादपार्विर्विर्वितापां शुष्य नवं द्वारितातिरालयमपादत्वं' 'कुर्वन्नाग्राद्यंविरात्ममे शुतं
तत्र श्रीपार्वनाप्तविष्मयं ग्राम्यतुः । देष्मादेवोन ए तदृक्षं गोप्यमेव नियमेन्नो' नियमे ।

२२. 'पन्नाद्रेति' पन्नामर्पदेवो देष्माये लोकिनः नामो नामस्तुर्देवतान्नेः नामगन्मेः ॥ ३३ ॥
आन्तर्यामिन्वप्तेनपरेण दत्ता नागार्जुनार्पिनः शताभ्यन्वरं तुरं ग रसः पापार्पनतो मिनः ॥

२२२) अथ पुराऽवन्त्यां पुरि कथिद्विमः पाणिनिव्याकरणोपाध्यायतां कुर्वाणः सिग्रासरित्या-
नवर्त्तिविन्नामणिगणेशश्रणमगृहीताभिग्रहः; छात्रैः फक्षिकाव्याख्यानप्रश्नादिभिस्त्वेजितः
कदाचित् प्रावृप्ति तत्या सरितः पूरे प्रसर्पति कृतद्वयम्पापातः; दैवात् सहृदितवृक्षस्तन्मूले कराव-
लम्बनस्तत्तीरमासाद्य प्रत्यक्षं परशुपाणिं प्रणमन्, तेन तत्साहस्रानुष्ठानेन वरं वृणीष्वेल्यादिष्टः;
पाणिनिव्याकरणस्योपदेशं प्रार्थयमानस्तेन तथेति प्रतिपद्य खटिकापणपूर्वै* प्रतिदिनं व्याकरणे ५
व्याख्यायमाने पणमासीपर्यन्ते व्याकरणे समर्थिते सति लम्बोदरं निर्विलम्बमनुज्ञाप्य तत्प्रथ-
मादर्शं सहादाय तां पुरीं प्रविश्य कस्यापि पुरस्य श्विष्टले निपण्ण एव सुच्चाप । ततः प्रत्युपे
प्रेष्याभिस्तं तथावस्थितं प्राप्य विपणिरमणीं तद्रुत्तान्तं ज्ञापिता सती ताभिरेव तं समानीय
प्रेषुोलपल्यद्वे भुक्तः । अहोरात्रव्यायान्ते किञ्चित्प्रक्षन्निद्रिघ्वशालादिचित्रं चित्रकारि पद्यन्
स्वर्लंकसमुत्पद्मात्मानं मन्यमानस्तथा पणहरिणीदशा ज्ञापितवृत्तान्तः ज्ञानपानभोजना-१०
द्विभिर्भक्तिभिः परितोपितो नृपसमायां समुपेतः; पाणिनिव्याकरणं यथावस्थितं व्याचक्षाणो
दृप्यमृतपिण्डितैरशेषैः सत्क्रियमानस्तदुपातं सर्वसं तस्य समर्पयामास ।

२२३) अथ' तस्य ऋगेण चतुर्पां चर्णानां लिप्यञ्चतत्त्वः प्रिया अभवन् । तथा क्षत्रियाङ्गजः
श्रीविकर्माकः, शशीसुतो भर्तुहरिः, स हीनजातित्वात् भूमिगृहस्तो गुप्तवृत्त्याऽध्याप्यते ।
अपरे वयः प्रत्यक्षः; पाव्यन्ते । एवं भर्तुहरिरज्जुसङ्केतेन॑ तेपामध्याप्यमानानाम्- 15

२२४. दानं भोगो नाशतिस्तो गतयो भवन्ति वित्तस् । [यो न ददाति न भुक्ते तस्य दृतीया गतिर्भवति ॥]

इति पाव्यमाने' भर्तुहरिरज्जुसङ्केतेऽप्सज्जायमाने प्रत्यक्षच्छात्रैक्षिभिस्त्वरादेव एच्छयमाने स
कुप्रितः उपाध्यापः-॒॒॒ वेदेयासुत । अद्यापि' रज्जुसङ्केतं न कुरुपे' इत्याकुष्टः' प्रत्यक्षीभूय शास्त्र-
कारं निन्दन्-

२२५. आयाश्वतलव्यस प्राणेभ्योऽपि गरीयसः । गतिरेकैव वित्तस्य दानमन्या विपत्तयः ॥ 20

इति पाठाद्वित्तस्यैकामेव गतिं भेदे । तेन भर्तुहरिणा वैराग्यशतकादिप्रवन्धा भूयांसश्चकिरे ।

॥ इति भर्तुहरिउत्पत्तिप्रवन्धः ॥

२२६) अथ श्रीधारायां मालवमण्डनस्य श्रीभोजराजस्यायुर्वेदवेदी कथिद् वाऽभटनामाऽऽयुर्वेद-
देवादितानि कुप्रथ्यानि विधाय तत्प्रभावात् रोगान् प्रादुःकृत्य उनसत्त्विग्रहाय सुश्रुतविश्वतैर्भ-
पदैः पर्यैश्च ताप्तिगृहण, नीरमन्तरेण क्रियत्वालं जीव्यते इति परीक्षार्थं तत्परिहस्य, दिनत्रयान्ते 25
पिपासापीडितात्मालोष्टुपुद इत्यपाठीत्-

२२७. फणिद्वृणां फचिद्वितीं फचिद्वियतदीतलपू । फचिद्वेषसंयुक्तं वारि क्षापि न वारितम् ॥

इति पारिसत्त्वात्कारियादिभिरुपाठीत् । तेन निजानुभूतो वाऽभटनामा प्रसिद्धो ग्रन्थो
प्रियपे' । तस्य जामाताऽपि लघुपाहृदः व्यशुरेण वृद्धद्वादेन सह राजमन्दिरे प्रयातः । प्रत्युप-
कर्षेण भीनोत्तरं शर्हिरेष्टिं विदेष्यप वृद्धपाहृदेनाय नीक्षतो यूपित्युक्ते लघोर्षुवन्मन्त्रं वि-३०
योग्यम् श्रीभोजेन फारणं एषः स 'स्यामिनः शर्हिरेष्य निशादीषे गृहणच्छायाप्रवेशसूचितो राज-

* II प्रथम भवित्वेन वा उप॑ वा वा । 1 P शीर्षः । 2 P नाति । 3 D वृहिमंडेन । + AD वास्त्वेन सोहस्र
एव व्याप्तं व व्याप्तेः । १-१ एव व्याप्तं विदेषः पर्याय अभावं । ४ D इत्युप॑ । A इत्यादिः । ५ P व्याप्तरात् ।
६ AD व्याप्तः । ७ AD व्याप्तः । ८ D वृहिमंडिः ।

यक्षमणः प्रवेशोऽभूदि'ति देवतादेशोनातीनिद्रियं भावं विज्ञपयन्, तत्कलाकलापचमल्कृतेन राजा
तस्य व्याधे: प्रतीकारतयानुयुक्तो लक्षत्रयमूलयं रसायनं निवेदयन्, पद्मिर्भासैस्तावता द्रव्यव्य-
येन परमादरेण च तस्मिन् रसायने सिद्धे, प्रदोषप्रसमये तद्रसायनं काचमये कुम्पके विन्यसा नरे-
न्द्रपल्लवङ्गे निधाय प्रत्यूषे देवतार्चनानन्तरं तद्रसायनमत्तुमिच्छुः, रसायनधूजायद्वापनादनु-
५ सज्जीकृतायां समग्रसामग्र्यां स लघुरगदंकारी केनापि कारणेन तं काचकुम्पकं भूमावास्ताल्य
व भज्जु । आः किमेतदिति राज्ञोक्ते रसायनपरिमलवलादेव' पलायिते व्याधौ व्याधेरभावाद्वातु-
क्षयकारिणानेन' वृथा स्यापितेनालभू, यदद्य शर्वरीविरामे सति सा पूर्वोक्ता कृष्णा छाया प्रभो-
वैपुरपास्य दूरं गतैव दृशो, इत्थर्ये देवः प्रमाणमि'ति तदीयसत्यप्रत्ययेन परितोपितो राजा दारि-
द्याद्रोहि पारितोपिकं प्रसादीचकार ।

१० २५) अथ ते सर्वे व्याधयस्तेन चिकित्सितेन भूतलादुच्छेदिताः, खलोंकेऽभ्यनीकुमारवैद्ययोः
खपराभवं निजगदुः । अथ तौ तया प्रवृत्त्या चिद्रीयमाणमानसौ नीलवर्णविहङ्गमयुग्मीभूय
व्याधिप्रतिभटस्य लघुवारभटस्य धचलगृहवातायनत्तेच बलभ्यां निविष्टौ 'कोऽरुक्त' शब्दं चक्रतुः ।
अर्थं स आयुर्वेदवेदी नेदीयांसं तदीयं शब्दं साभिप्रायं चेतसि चिरं विचिन्त्य-

२६७. अंशाकमोजी धृतमति योऽन्यसा' पयोसान् शीलति नातिपोऽम्भसांसाम् ।

१५ अमुक विरुद्ध् वातकृतां विदाहिनो चलतप्रयुक्तं जीर्णभुगत्पशीरुक्तं ॥

इति^१ भणितानन्तरं किञ्चिद्दैमल्कृतचित्तो तौ प्रयातौ । पुनर्द्वितीयदिने द्वितीयवेलायां ताढक-
पक्षिरूपं विधाय प्रात्कनशब्दं कुर्वाणी समायातौ वैद्यगृहे । पुनस्तोपोवर्चः^२-

२६८. यपर्सु^३ यस्तिषुति शरदि पितृति हेमन्तशिशिरयोरति ।

माधृति मधुनि ग्रीष्मे स्वपिति भवति सग । [नरः] सोऽरुक्त ॥

२० इति भणितानन्तरं पुनरेव गतौ । 'तृतीयदिने योगीन्द्ररूपं कृत्वा तद्दहे समागतौ' । तयोर्वचः-

२६९. अमूमिजमनाकाशग्रहद्वान्तर्मंशारिजम् । सम्मतं सर्वशास्त्राणां वद वैद्य ! किमौपधम् ? ॥

एउनर्वेदवैद्यः-

२७०. अमूमिजमनाकाशं पश्यं रसविवितम् । पूर्णचार्यां समाल्यातं लद्धनं परमापधम् ॥

तत्ते निजाभिरायसद्वशप्रत्युत्तरत्रयदानेन^४ चमल्कृतचित्तो वैद्यौ प्रत्यक्षीभूय यथाभिमतं वरं
२५ वितीर्य स्वस्थानं भेजतुः ।

॥ इति वैद्यवाग्भटप्रवन्धः ॥

२२६) अथ धामणउलिंग्रामे वास्तव्यो धाराभिधानः^५ कोऽपि नैगमः विद्या वैअवणस्पर्दिष्ट्युः
सद्वापित्यसासाद्य मात्यद्वद्विषयव्ययव्यतिकरजीवितजीवलोकः पञ्चभिरङ्गजैः समं अरियताच-
लोपलव्यकायां विहितावासः, दिग्म्बरभक्तेन केनापि गिरिनगरराज्ञा^६ सिताम्बरभक्त इति स
३० स्वल्पयमानस्तद्योः सैन्योः समरसंरभ्ये प्रवर्त्तमाने सति अमानेन रणरसेन युध्यमाना देवभ-

^१ १ D पारिमद्येव । २ P 'क्लेन' नाति । ३ D 'छपु' नाति । ४ D रुः । ५ A भासाकः । ६ A युग्मां-
भंगा । ७ D नाति योऽम्भसा । ८ D विशुः । ९ D नापूर्वोः A वापूर्वतः । १० P पद्मपुरुः । ११ D रामायुः ।
१२ D इत्यभानि । १३ D 'किञ्चित्' नाति । १४ D 'पशः प्रतिपशः । १५ P वर्णः । १६-१७ शत्रुग्निं वर्णः P पशी-
पतिता । १८ D भद्रम्बप्यम् । १९ इते पशं D पुलकं मूढप्रम्भं नाति । २० A पाणुरुः । २१ A पाराम् P
नाति । २२ D रामेन ।

स्त्यातिशयवद्भूतमा प्रोत्साहितसाहस्रा विपद्य ते पञ्च तुत्राः पञ्चापि क्षेत्रपतयो वभूयुः । तेषां क्रमेण नामानि-कालमेघः १, मैघनादः २, मैरवः ३, एकपदः ४, त्रैलोक्यपादः ५-इति वभूयुः । तीर्थप्रलवनीकं पञ्चतां नयन्तस्ते पञ्चापि गिरे; परितो विजयन्ते स्य ।

२७) अथ तत्पिता धाराभिधान एक एवावशिष्टः कन्यकुञ्जदेवो गत्वा श्रीवप्पभट्टसूरीणां ५ व्याख्याक्षणप्रक्रमे श्रीसङ्खस्याज्ञां दत्तवान्-‘यद्वैचतकतीर्थे दिग्म्बराः कृतवसतयः सिताम्बरान् परापठिडल्पान् परिकल्प्य पर्वतेऽपिरोद्धु न ददति’ अतस्तान् निर्जित्य तीर्थोद्धारं कृत्वा निजदर्शनप्रतिष्ठापरेव्याख्याक्षणो विधेयः इति तद्वच्चनेन्धनप्रोज्यलितप्रतिवैष्प्रज्यवलनादामनृपतिं सहादाय तेन समं तां भूधरशरामवाप्य उपरिभिर्नैवीदस्यलेन दिग्म्बरान् पराजित्य श्रीसङ्खसमक्षं श्रीअम्बिकां प्रलक्ष्यकृत्य ‘इक्षोवि नमुखारो’ ‘उज्जितसेलसिद्धरो’ इति^{१०} तदुक्तां गाथामाकण्ये सिताम्बरदर्शने स्थापिते सति पराभूता दिग्वसना वलानकमण्डपात् ज्ञाम्पापातं वितेतुः ।

॥ इति क्षेत्राधिपोत्पतिप्रबन्धः ॥

२८) अथ कदाचिद्ग्रावान्या भव इति एषः-‘यत्त्वं क्रियतां कार्यटिकानां राज्यं ददासि?’ इति तद्वाच्यादतु ‘यो लक्षसङ्ख्यानामपि एक एव वासनापरस्तस्यैव राज्यमहं वितरामी’ति प्रत्ययदर्शनाय गौरीं पङ्कमग्रां जरतीं गर्वां विधाय स्वयं नरस्येण तदस्यः पङ्कात्तामुद्धर्तुं पान्थानाकारयन्^{१५} तैरासदासोमेश्वरदर्शनोत्कृष्टप्रस्तुत्यमानः कृपावता केनापि पथिकवृन्देन तस्यामुद्धर्तुमारव्यायां सिद्धस्येण शिव एव तान् व्रासयन् कथिदेक्^{२०} एव पथिको चतुर्युमप्याद्यत्य तस्या गोः समीपं नौजक्षत् । स एव राज्यार्थं इति षष्ठकं कृत्वा गौर्या दर्शितः ।

॥ इति वासनाप्रबन्धः ॥

२९) अथ कथित्वार्पिदिकः सोमेश्वरयाद्यायां श्रज्ञं पथि लोहकारौकसि^{२५} प्रसुप्तः । तस्य लोहकारमार्या पतिं निहत्य कृपाणिकां कार्यटिकशीर्थं निधत्ती बुम्बारचमकंरोत् । आरस्केण तद्वाच्यत्वं तस्यापराधिनः करी छिन्नी । स संदैव दैवस्योपालम्भनपरः निशि प्रत्यक्षीभूयेत्युक्तः-‘शणु, त्यं सं पारभवस्’^{२०} ‘कदाचिद्दजा’ केनापि एकेन सोदरेण पाणिभ्यां अवणयोर्धृता, तदपरेण मारिता । ततः सा अजा मृत्वा इयं योपिदजिति । येन व्यापादिता स साम्प्रतं पतिरभूत् । यत्त्वया कण्णौ विषुतौ तदा तय समाप्तमे जाते सति करी छिन्नी । तत्कथं ममोपालम्भः? ।

॥ इति कृपाणिकप्रबन्धः ॥

२५

२३०) गुरा शत्रुघुरनगरे श्रीशङ्को नाम नृपतिस्तत्र नामकर्मभ्यां धनदः श्रेष्ठी । स कदाचित्करिक्षणातादतर्दां कमलां विनृश्येषायनपाणिर्वृपेषान्तसुपेत्य तं परितोत्प्य च तत्प्रसादाकृतायां सुविच्चन्निर्भन्दनैः सह समालोच्य सुलग्ने विनप्रासादमचीकरत् । तत्र प्रतिष्ठितविम्बानां स्थापनां^{२५} विधाय, तस्य प्रासादस्य समारचनाय वद्वन्यायदाराणि रचयन्, तत्सपर्यापर्याकुलतया नानाविषयकुमुख्यशायलर्समलकृतमनिराममारामें च निर्माण्य, तद्यन्तकेषु गोष्ठिकेषु^{३०} नियुक्तेषु, उदिते प्राचनान्तरायकर्मणि क्रमात् संद्विष्यमाणसम्पद्यमर्णतया तत्र मानम्त्वानिमाकलश्यान-

१ P इत्यरकः । २ D संक्षिप्तसंक्षिप्तिः । ३ ‘भूतिः’ स्वाने D ‘प्रार्गं-’ । ४ P आग्रहः । ५ D इत्यादि । ६ D रामार्पित्युत्तमाकारपदः । ७ P ओःपदः । ८ P बारयुदः । ९ P वरोत्तिः । १० D नात्रि । ११ D वद्या नानदेः । १२ A इत्यग्नः । १३ P नात्रि । १४ D नात्रि ।

तिदूरवर्त्तिनि कापि ग्रामे कृतवसतिर्नगरयातायातेन सुतोपात्ताजीविकः किष्मन्तमपि कालमति-
वाहितवान् । अथान्यस्मिन्नवसरे सक्षिप्तिते चतुर्मासकर्पर्वणि तत्र यापिभिः सुतैः समं स धनदः
शङ्खपुरं प्राप्य निजप्रासादसोपानभिधिरोहन्, निजारामपुष्पलाविकयोपाधनीकृतपुष्पचतुःसरिकः
परमानन्दनिरस्ताभिर्जिनेन्द्रमन्धर्य, निशि गुरुणां पुरः स्वं दौस्थ्यममन्द निन्दन्, तैः प्रद-
५ त्तकपर्विद्यक्षाकृष्टिमञ्चोऽन्यदा कृष्णचतुर्दशीनिशीये तमेव मन्त्रमाराधयन्, प्रत्यक्षीकृतात् कप-
र्विद्यक्षात् गुरुपदेशातश्चतुर्मासकावसरे पुष्पचतुःसरिकपूजापुण्यफलं देहीति प्रार्थयन्, तेन^१ ‘एक-
स्यापि पूजाकुसुमस्य पुण्यफलं सर्वज्ञेन विना नाहं वितरीतुं प्रभूप्णुरिति; किं तु कपर्विद्यक्षस्तस्य
साधर्मिकस्यातुल्यवात्सल्यसम्बन्धे तद्वाग्नि चतुर्पुं कोणेषु सुवर्णपूर्णान् चतुरुः कलशान् निधी-
कृत्य तिरोदधे । स प्रातः स्वसदानि समागतः धर्मनिन्दापराणां नन्दनानां तद्वद्रव्यं समर्पया-
१० मास । तेऽपि निर्वन्धात् पितुः पार्थं तद्विभवलाभहेतुं पृच्छन्तस्तेषां हृदि धर्मप्रभावाविर्भावाय
जिनपूजाप्रभावतः परितुष्टेण कपर्विद्यक्षेण प्रसादीकृतां तां संपदं निवेदयामास । तेऽपि सम्पन्न-
सम्पत्यस्तदेव जन्मनगरं समाश्रित्य निजधर्मस्थानसमारचनपरा जिनशासनप्रभावनां विविधां
कुर्वन्तो वैधर्मिकाणामपि मनस्तु जिनधर्मं निश्चलीचकुः ।

॥ इति श्रीजिनपूजायां^२ धनदप्रवन्धः ॥

15

॥ इति श्रीमेष्टुज्ञाचार्यविरचिते^३ प्रबन्धचिन्तामणी विक्रमादित्योदितप्रवदिवेचनप्रमुखं जिनपूजायां^४
धनदप्रवन्धपूर्वनवर्णो नाम प्रकीर्णकाभिधानः पञ्चमः प्रकाशः समर्थितः^५ ॥

असिन्प्रकाशे ग्रन्थसंख्या ७७४ । समस्तग्रन्थे ग्रतिश्लोकं ग्रन्थायां ३१५० ॥

ग्रन्थकारस्य प्रशस्तिः ।

दुप्रापेषु वहुश्रुतेषु शुणवदृष्टेषु च प्रायशः
शिव्याणां प्रतिभाभियोगविगमादुच्छैः श्रुते सीदति ।
प्राज्ञानामध भाविनामुपकृतिं कर्तुं परामिच्छता
ग्रन्थः सत्पुरुषप्रबन्धघटनावक्रं सुधासववत् ॥ १ ॥

प्रबन्धानां चिन्तामणिरयमुपात्तः करतले
स्यमन्तस्य आन्ति रचयति चिरायोपनिहितः ।
हृदि न्यस्तः शस्तां सृजति विमलां कौस्तुभकलां
तदेतसाद् ग्रन्थाङ्गवति विवृथः श्रीपतिरिव ॥ २ ॥

यथाश्रुतं सङ्कलितः प्रबन्धैर्यन्त्ये मया मन्दधियापि यत्रात् ।
मात्सर्वमुत्सार्ये^१ सुधीभिरेप प्रज्ञोद्गौरैस्त्रिमेव नेत्रः ॥ ३ ॥
यावदिवि कितवाविव रविदाशिनौ श्रीडतो ग्रहकपदैः ।
ग्रन्थस्तावन्दद्वत् सूरिभिरुपदिश्यमानोऽयम् ॥ ४ ॥
श्रवोदशावन्ददशतेषु चैकपश्चायिकेषु क्रमतो गतेषु ।
वैशाखमासस्य च पूर्णिमायां ग्रन्थः समार्पि गमितो मितोऽयम्* ॥ ५ ॥

क ३ क ३ क ३

नृपश्रीविक्रमकालातीत^२ संवत् १३६१ वर्षे वैशाखसुदिं १५ रवावद्येह श्रीवर्द्धमानपुरे
प्रबन्धचिन्तामणिग्रन्थः समर्पितः ।

॥ समाप्तोऽयं प्रबन्धचिन्तामणिग्रन्थः ॥

१ P दुप्रापेषु । २ P प्रबन्धमण्ये । ३ P उल्लम्ब ।

* D एक दूरार्थ दिव्यलीलाने वर्डूरे प्राप्तेन, परं APD^a भाद्रां मृत्युन्य परं समुपलभ्यते । † प्रत्ययं P प्रतीकान्तः । AD 'वैशाख' सर्वे 'काश्यम्' वार्ता विद्यते स भावित्वानुकूल एव ।

तिदूरवर्त्तिनि कापि ग्रामे कृतवसतिर्नगरयातायतेन सुतोपाचाजीविकः कियन्तमपि कालमति-
वाहितवान् । अथान्यसिद्धावसरे सज्जिहिते चतुर्मासकर्पवर्णि तत्र यायिभिः सुतैः समं स धनदः
शङ्खपुरं प्राप्य निजप्रासादसोपानमधिरोहन्, निजारामपुष्पलाविकयोपायनीकृतपुष्पचतुःसरिकः
परमानन्दनिर्भरस्ताभिर्जिनेन्द्रमन्यर्च्य, निशि शुरुणां पुरः सं दौस्थ्यममन्दं निन्दन्, तैः प्रद-
५ त्तकपर्दियक्षाकृटिमन्नोऽन्यदा कृष्णचतुर्दशीनिश्चिये तमेव मन्त्रमाराधयन, प्रत्यक्षीकृतात् कप-
दियक्षात् शुरुपदेशतश्चतुर्मासकावसरे पुष्पचतुःसरिकपूजाएष्यफलं देहीति प्रार्थयन्, तेन^१ एक-
स्यापि पूजाकुमुमस्य पुण्यफलं सर्वज्ञेन विना नाहं वितरीतुं प्रभूष्णुरिति; किं तु कपर्दियक्षस्तस्य
साधमिकस्यातुल्पवात्सल्पसम्बन्धे तद्वाग्नि चतुर्पुर्णोणेषु सुचर्णपूर्णान् चतुरः कलशान् लिधी-
कृत्य तिरोदधे । स प्रातः स्वसद्यानि समागतः धर्मनिन्दापराणां नन्दनानां तद् द्रव्यं समर्पया-
१० मास । तेऽपि निर्वन्धात् पितुः पाश्वे तद्विभवलाभेतुं एच्छन्तस्तेषां हृदि धर्मप्रभावाविर्भावाय
जिनपूजाप्रभावतः परितुष्टेन कपर्दियक्षेण प्रसादीकृतां तां संपदं निवेदयामास । तेऽपि सम्पन्न-
सम्पत्तयस्तदेव जन्मवगरं समाग्रित्य निजधर्मस्थानसमाचनपरा जिनशासनप्रभावनां विविधां
कुर्वन्तो वैधर्मिकाणामपि मनस्तु जिनधर्मं निश्चलीचकुः ।

॥ इति श्रीजिनपूजायां^२ धनदप्रबन्धः ॥

॥ इति श्रीमेरुद्वाचार्यविरचिते^३ प्रबन्धचिन्तामणी विक्रमादिसोदितपात्रविवेचनप्रमुखं जिनपूजायां^४
धनदप्रबन्धपर्यन्तवर्णनो नाम प्रकीर्णकाभिधानः पञ्चमः प्रकाशः समर्थितः^५ ॥

^१असिन्द्रकाशे ग्रन्थसंख्या ७७४ । समस्तग्रन्थे ग्रतिश्लोकं ग्रन्थायां ३१५० ॥

कुल्त्वा परिणेया नान्यथा' इति पीयूपकल्पां वाचमाकर्णं तस्याः सविधे सुवुद्धिनामदूर्तीं अनु-
कूल्यं प्राहिणोत् । सा तां सप्तरथं प्रणिपत्य व्यजिज्ञपत्-‘सामिनि राजकन्ये! धन्यतमासि; यत्वा-
मध्यादशेदेशसन्नाद् समस्तसामन्तसीमन्तमणिमयूपमालालहृतचरणकमलयुगलश्चैलुक्यवक्र-
वर्तींश उद्गृहुभमिलपति ।' इति तद्रचसा सुखमोटनया नाट्यनन्ती सोपहासोङ्कासं सैवं प्राह-
“सर्वि ! अलं नरकान्तप्राल्यसाम्राज्यप्रातिलोभनवार्ताविस्तरेण । परमनुकूलमेव दयितं समीहे । ५
युरुगा हि परुपाशया नानाविधातुरागचक्षः, तैः किं क्रियेत । यतः-

अन्नाः[पि]वरं कन्या रूपयौवनवत्यपि । निष्कलेनानुकूलेन न कृपत्या विडम्बिता ॥ ३ ॥

परं शृणु,-

निष्कलेन दयितेन विवाहितानां यद् योपितां सुखपदं न तर्दीथरेण ।

भासीरथीं वहति यां शिरसा गिरीशो लक्ष्मीपतिः सूश्राति नैव पुनः पदापि ॥ ४ ॥

10

‘तथा वृथा जानीहि मद्वरणाभिलापम्, दुष्पूरा मे प्रतिज्ञा भर्तीमहेन्द्रेणापि ।' इत्युक्तवर्तीं
युवतीं सा प्राह-‘सखि ! भवत्या अहं प्रियसस्वी अनुपलपनकर्तव्याऽसि, तद् ब्रह्म साभिमत-
मिति । अहं तथा सुवुद्धिर्नाम यथा पूरयत्मि ते प्रतिज्ञां तेन कुमारपालेन भूपालेने’ति उक्ता
सा प्रोत्याच-

सत्यवाक् पतलक्ष्मीषुक् सर्वभूताभयप्रदः । सदा सदासन्तुष्टुयो मे स पतिभवेत् ॥ ५ ॥

15

*[ब्रुहूरं दुर्गतेर्वन्धूरं दूतान् सप्तपौरुषान् । निर्वासयति विविच्चात्स शिष्ठे मे पतिभवेत् ॥ ६ ॥

मत्सोदरं सदाचारं संसाप्त्य हृदयासने । तदेकचिचः सेवेत स कृती मे पतिभवेत् ॥ ७ ॥

इति तद्राचमाकर्णं सकर्णा सा व्यजिज्ञपत्-‘शृणु सुलोचने ! तदाहं यथार्थनामा, यदा ते प्रतिज्ञां
श्रीहेमसूरीन् पुरस्कृत्य समग्रजनसमक्षं तव प्रतिज्ञातानन्यान् समर्थ्यं त्वां परिणयति, तदा मां
विदध्यं स्वसर्वीं मन्येया, अन्यथा न तृणायेति ।' इत्युक्त्वा नृपसंसदि तस्या दुष्पूरं सद्वरमचक-20
पत् । सोऽपि तदवज्ञाकुकूलानभेन (?) सन्तस्सान्तः परोमर्ति विभ्राणः, तयैव सुवुद्ध्याभिदधे-
‘हे श्रीनिधे ! विधेहि धीरताम्, किं दुष्करं पौरुषाधिष्ठितानाम् । तथा वास्ति निरपायश्यायः(?) ।
अनुसर्यते हेमचन्द्रभर्हिं, श्रूपन्ते तद्वाचांसि ।' इति तथा प्रेरितो विनयदत्तहस्तावलम्भ्यो ययौ
उपसूरिषु, ननाम तत्पदामन्युजान्, पप्रच्छ तत्कनीसद्वृष्ट्यान्तम् । ‘वत्स ! पूरय तस्याः समी-
हितं चेत्स्याः परिणीतीयाऽस्ति । निःसीमोद्वतये परिणेतारं भोस्यते (?) एषा । यतः-

25

१-२ यथा ३-४ अद्वान्तर्वते वर्णने A. आदर्ते न विधते । १ P. कान्तेन तेन च किं च ।

* पृष्ठाचार्यान्तर्वतेवर्णनस्याने A. आदर्ते निजावतारितं संक्षिप्तेष्व वर्णनं प्राप्यते । यथा-‘इति तस्याः प्रतिश्वरं दुष्वरमाकर्णं
मा विविलेद्वप्यमानीनी सं पद्मुशारा स्वपिंतं सर्वेषां निराशमन्नोद । तदतु सं चूर्णं तद्विद्योगामामिमभासाहृष्टव्यं श्रीहेमचन्द्रभर्हिं
भासेनि प्रविष्येदिवान्-यः कम्पयात् हृष्ट्योद्दुष्कृष्टः संगरः स तदाप्युपयत्तेऽहित्यानुकूलानाहेतुश्च । जतत्वामपि निर्मायतया सिमीय
स्वनि सीमोद्वतये स सर्वेषां परिणेतुषुपूर्वितेव । यतः-

पर्यन्तां सतीसुतमवशजातां लभ्याधिकां याति न कः प्रतिष्ठाम् ।

श्रीपौरुषकर्णां गिरिराजपुरीं शोपलस्योदयं यथाधिगमय ॥

इति देन नहर्पिणा प्रतिशोष्य कान्तेनापानमिष्टान्, माहाप्रिवद्य वसा, लम्पदानं चके । अप सं ३२१६ मार्गं सुदि २ द्विनीयलम्भे यद्वति
संस्कारणद्वाक्षर्यो रथयपकालहृष्टो द्विष्ट्रियागिवद्वानकृष्टः सम्भव्यानुवर्णेण सम्भव्यानुवर्णेण किमाल्यवत्तरपो तुरमस्ति-
देवाविनि-वाचानांस्मां दीर्घसत्त्वप्रयत्नमहृष्टः शोपप्रवेसद्वाति भ्रुद्वर्णया कम्पानन्या कृतप्रोह्णः श्रीभन्महादेवशत्त्वाद्यतः साक्षि स
दूरसंतर्दिमयाः पाति जग्ना ।'

परिशिष्टम्-

कुमारपालस्य अहिंसाया विवाहसम्बन्धप्रवन्धः ।

नाथून्न भविता श्रीमद्देवद्वयरिसमो गुरुः । श्रीमात् कुमारपालश्च जिनभक्तो महीपतिः ॥ १ ॥

अथ चौलुक्यचक्रवर्तिनः प्रभुप्रतियोधान्मारिनिवारणप्रवन्धश्चैवम्—कसिन्नप्यवसरेऽणहिन्दु
५ पुरे श्रीकुमारपालदेवयनामा नृपो वाहकेत्यां वज्रन् सौन्दर्यनिर्जितसुरसुन्दरीं वालेन्द्रुचदनां^१ सदा-
चरणप्रसरणशीलामणि मन्दुचरणप्रचारां शुनिभिः समं क्रीडां कलयन्तीं शुकोमलवचःप्रपञ्च-
महकारितविजगल्लनां सम्मितमधुराकृतिं^२ कामप्येकां वालिकां वीक्ष्य तदूपापहृतचित्तः सद्विनिः
हितप्रसादचित्तं ‘केयमित्यादिशङ्सतेनेति विज्ञप्यर्थके—‘अपारश्चुताकृष्णपरारहन्वतया सञ्चात-
कलिकालसर्वज्ञप्रसिद्धेऽद्विद्यभेदभिन्नतपस्समाराधनवशंवशीकृताएमहासिद्धेनिःद्वेष्वपालमौ-
10 लिमणित्युभ्यितपादपीठस्य भगवतः श्रीहेमचन्द्रमहर्यंरात्रमवासिनी अहिंसानामी कनीपद् ।

*अस्या याधातथ्यानुरूपनिरूपणविधौ न प्रगणन्ते स्मृतिपुराणवचांसि भूयांसि । किन्तु सकल-
जनुजातजनकायितश्रीजिननायकोपदिष्टस्पष्टसिद्धान्तोपनिषदावासितहृदा केनापि मुनिषुद्धवेन
प्रस्तुपाताऽस्याः स्थितिरीतिः, नान्येनेति वाचमाकर्ण्य स्वसौधमध्यास्त नृपतिः । परं तस्या:
स्वरूपावधोधाय तथाङ्गीकाराय च परमरसिको भाग्यसौभाग्यादि तदङ्गीकारेण कृतार्थं कर्तुकामो
15 विवेकनाम्ना मित्रप्रवरेण आदिष्टवर्तमना तेषामेव मुनीनां आत्ममासाद्य तत्पुरः कीडता
सदाचारनाम्ना तद्वाचा प्रख्याततदागमप्रवृत्तीन् समचित्तपृतीन् तान् श्रीहेमचन्द्रसुरिमहर्यन्
सहर्षं समर्कियुक्तिर्क्षितितलमिलन्मौलिरानम्य तस्याः स्वरूपं प्रमच्छ । तैरथोचे—‘शुणु
नृपुङ्गव॑’* विजगदेकसार्वमौमस्य श्रीमर्ददर्माधिपस्यानुकम्पामहादेव्याः कुक्षिसरसीराजहंसी
निःसीमसोन्दर्या अहिंसाभियेयं कनी । यस्मिल्लये सुतेयमजनि तद्वयग्रहवलं ततिपत्रा सर्वविदा
20 एवमादिष्टम्—यदिप्रमतीव उप्यवती सुदतीशिरोमणिर्दुहिता । पुत्रजन्मोत्सवादप्यस्य जन्म
शायम् । यतः—

श्रियाऽमोर्ध्वं विधिं वाचां देव्या व्यालोक्य विश्रुतीं । दुपुष्ट्रदुःखाद्वार्केन्द्र तापमद्वं च मुखतः ॥ २ ॥

अतः कमात् वर्द्धमाना कन्याऽसौ अनुरूपवराप्राप्त्या वृद्धकुमारी नृत्या केनाप्यनुरूपेण महीमहे-
न्द्रेण सोपरोधमूदा सतीं सतीमतक्षिका तमुद्वोढारं च खं च जनकं च परामुद्रेतः कोटि नेत्य-
25 तीती । इस चोद्रोदा लीलयैव महामोहमहीरं जित्या परमानन्दभाजनं भवितेति श्रुत्वा वृपोऽवादीत्
—‘प्रभो ! अबुनार्ददर्मांश्च श्रीयुपमवरणकमलमुपासती श्रीयुपमद्वयसैव परिणेतु शक्येत नान्येन ।
ततः प्रसीदन्तु पूज्यपादाः, विपीदन्तु विपादाः, प्रवर्तीतां महामोहजयः, प्राप्नोमि परमानन्द-
मिति चचःपर्यन्ते गुरुराह—‘इयं वृद्धकुमारी । दुःपूरस्तस्याः सङ्गः । तं सद्गतं तस्या एव पाश्चां-

^१ पूर्वत्वार्थः पादः A. भाद्रं नाति । १ 'कृ' नाति P । २ P समिदिग्न सरशारामानं तद्वारापिष ।

* पूर्वद्वितीयकार्यात् पर्यन्तं A. भाद्रं नाति । एवेक्षयाते ‘इति नितम्य दृशः कश्चिर् तान् महर्यन् भीमभार तमकिं
साप्तमामार्पे वृद्धात् वृद्धीर्थस्ये’ इत्येक्षया सर्वित्यं पक्षः ।

२ पूर्वत्वार्थं पर्यन्तं A. भाद्रं नाति । एव तु भूत्य स्याते ‘वृद्धापर्यन्ते उद्गते वामउद्धर्य उस्ता सर्विते मुकुरिमाप्नी हृषी-
प्राणहृषीप् ।’ पूर्वार्थं सक्षिप्ता पर्यन्तिर्वते ।

क्षुत्या परिणेया नान्यथा' इति पीयूपकल्पां वाचमाकरण्य तस्याः सविषेद्य सुवुद्धिनामदूर्तीं अनु-
कूल्य प्राहिणोत्तुः । सा तां सप्तश्चयं प्रणिपत्य व्यजिज्ञपत्-'सामिनि राजकन्ये! धन्यतमासि; यत्वा-
मष्टादशदेशसव्वाद् समस्तसामन्तसीमन्तमणिमयूपमालालहृतचरणकमलयुगलब्दौलुक्यचक्र-
वर्तीश उद्ग्रोहुमभिलपति' । इति तद्वचसा सुखमोटनया नाटयन्ती सोपहासोऽलासं सैवं प्राह-
‘सस्वि! अलं नरकान्तप्राज्यसाम्राज्यप्राप्तिलोभनवार्ताविस्तरेण । परमनुकूलमेव दपितं समीहे । ५
पुरुषा हि परुषाशया नानाविधानुरागवन्तः, तैः किं कियेत । यतः-

अनद्य[पि]वरं कन्या रूपयौवनवत्येषि । लिप्कलेनानुकूलेन न कुपत्या विडम्बिता ॥ ३ ॥

परं शृणु, ।-

निविकञ्चनेन दपितेन विवाहितानां यद् योपितां सुखपदं न तदीश्वरेण ।

भागीरथीं वहति यां शिरसा गिरीशो लक्ष्मीपतिः सृश्नति नैव पुनः पदापि ॥ ४ ॥

‘तथा वृथा जानीहि भद्ररणाभिलापम्, दुःपुरा मे प्रतिज्ञा महीमहेन्द्रेणापि ।’ इत्युक्तवर्तीं
युवतीं सा प्राह-‘सस्वि! भवत्या अहं प्रियसस्ती अनुपलपनकर्तव्याऽसि, तदृ वृहि खाभिमत-
भिति । अहं तथा सुवुद्धिर्नाम यथा पूर्ण्यामि ते प्रतिज्ञां तेन कुमारपालेन भूपालेनेति उक्ता
सा प्रोवाच-

सत्याकृ फलक्ष्मीषुकृ सर्वमृतमयप्रदः । सदा सदारसन्तुष्टस्तुष्टो मे स पतिर्भवेत् ॥ ५ ॥

*[सु]पुरं दुर्गत्वेन्दूरं दूरान् सप्तपौरुषान् । निर्वासवति यवित्तात्त शिष्ये मे पतिर्भवेत् ॥ ६ ॥

मत्सोदरं सदापातं संसाप्य हृदयासेन । तदेकचित्तः सेवेत स रुही मे पतिर्भवेत् ॥ ७ ॥

इति तद्वचसाकरण्यं सकर्णा सा व्यजिज्ञपत्-‘शृणु सुलोचने! तदाहं यथार्थनामा, यदा ते प्रतिज्ञां
श्रीहेमसूरीन् दुरुकूल्य समप्रजनसमक्षं तव प्रतिज्ञातान्यर्थान् समर्थ्य त्वां परिणयति, तदा मां
विद्वर्थां स्वसर्वां मन्येथा, अन्यथा न तृणायेति’ । इत्युक्तत्वा नृपसंसदि तस्या दुःपुरं सङ्ग्रहमचक-
भृत् । सोऽपि तदवज्ञाकुकूलानभेन (?) सन्तसस्त्वान्तः परामरति विभ्राणः, तयैव सुवुद्धाभिदधे-
‘हे श्रीतिष्ठे! विधेहि धीरताम्, किं दुष्करं पौरुषाधिष्ठितानाम् । तथा वास्ति निरपापश्यायः (?) ।
अनुसर्यते हेमचन्द्रमहर्षिः, श्रूपन्ते तद्वाचांसि’ । इति तथा प्रेरितो विनयदत्तहस्तावलम्ब्यो यदौ
उपसूरीपू, ननाम तत्पदाम्बुजान्, पमच्छ तत्कनीसङ्ग्रहवृत्तान्तम् । ‘वत्स! पूर्य तस्याः समी-
हितं चेत्तस्याः परिणीताऽस्ति । निःसीमोन्नतये परिणेतारं भोस्यते (?) एषा । यतः-

१-२ तथा ३-४ भद्रान्तर्गतं वर्णने A आदर्ते न विद्यते । १ P कान्तेन तेन च किं च ।

* पूर्णाराधान्तार्पालिनस्त्वाने A आदर्ते निप्रवापारितं संक्षिप्तमेव वर्णनं प्राप्यते । यथा-‘इति तस्याः प्रतिश्ववं दुःध्वमाकरण्यं
मा विष्टवेदृप्रभामिनी लंणं पदमुपाता स्तमिन्दं संवंधा निरामकोत्त । रद्वतु त वृंणं तद्वियोगमिनमधाकल्यं श्रीहेमचन्द्रमहर्षि-
भर्मीः प्रतिशोधितावान्तः-यः क्षयाया इवरलोकुपूर्वः संगतः स दवायुमयोक्तिवृद्धिदत्तुहृष्णादेतुष्ट । अतद्वामसि निर्मायवया निर्माय
मनि-सीमोष्टवे सा संयं वरिणुमुखियेव । यतः-

धन्यं सर्वीमुच्चमद्युद्यतारां लभ्यतिकर्त्त याति न कः प्रतिष्ठाम् ।

श्रीरोदक्षन्द्यो गिरिरात्मवृषी गोप्यलयोप्रथय यथापिगम्य ॥

इति वेन महर्षिन् प्रतिशोध्य तानामविप्रहान् प्राप्यविलय वस्ता सम्बद्धनं षट्के । अयं सं १२१६ माये गुरु२ २ द्विरीपदो वलदति
मध्यामग्रहवास्त्वो वृषभप्रधान्तुयो इवाण्णानिवद्वानकृष्णः सम्बद्धायुचरेण तमें भद्रासदेवद्याया दियमाणाद्यव्यावरणो गुरुमहिं-
र्षीपरिर्देव-जन्मत्वेषां दुष्प्रमाणप्रदमद्वः वीर्यवेदमद्वारी अनुकूल्या कन्पानन्मा हृष्णाद्वृगः भीमन्महादेवलाइः साक्षि र
दुष्प्राणिहिंगाया: परिवै नमाह ।'

धन्यां सतीपुत्रमवशजातां लब्ध्याधिकां याति न कः प्रतिष्ठाम् ।
क्षीरोदकन्यां गिरिराजपुर्वा गोपस्तथोग्रथ यथाधिगम्य ॥ ८ ॥

इति तद्वचनमाकर्णं दूरितदुरितावर्लिं योजिताङ्गलिं तं भूपालपुङ्गवं नानाभिग्रहान् ग्राहयित्वा
तस्याः प्रदानेनाऽनुजग्राह । ततः प्रमोदः सङ्खजे । संवत् १२१६ वर्षे मार्गसुदि द्वितीयायां वल-
५ वति लग्ने संवेगमतङ्गजास्त्रो रक्षत्रयालङ्कृतशरीरः शुभमनः परिणामवसनवान् दक्षिणपाणिवद-
दामकङ्गणः सम्यक्षसितातपवनिवारितापव्यापः श्रद्धासोर्दर्थं क्रियमाणलवणावतरणे गुरुभ-
क्ति-देशविरति-समिति-युसि-प्रमुखसुखीजागिणीगणदीयमानधघलमङ्गलः अमारिघोषे एतत्प-
र्णादितिर्वसे..... (?) पटहेषु वायुमानेषु प्रोत्सारितेषु परिग्रहप्रमाणपटेषु दूरितेषु पापावकरेषु
सद्गोपसुमनः श्रेणिवासितासु सद्यायगरजवीथीषु पौष्पधगारद्वारमाससाद्* । तदा अनुकम्पामहा-
१० देव्या कन्याजनन्या कृतप्रोङ्गणः श्रीमद्वृत्तः साक्षिं स दृपवरेन्द्रो अहिंसायाः पार्णि जग्नाह ।
तदा तारामेलपर्वणि परमानन्दः । अथ पद्मविश्वस्तस्तद्विष्णुपरिमाणत्रिपष्टिरुपचरित्राणि नवाङ्गवे-
दीमहोत्सवेन समानिन्ये । वेदिपठधास्याने कर्पद्वपञ्चकन्यासद्यवहरे ते विंशतिर्वीतरागस्तवा-
नवाः । तत्र वंशो २ एककं शामीकाष्म् । तत्पदे श्रीयोगशास्त्रप्रकाशाः १२; तथा लक्षण-साहित्य-
१५ तर्केतिहास-प्रमुखशास्त्ररचना तत्परिकरः । मूलोत्तरशुणाभ्यां दृढीकृत्य वेदिकार्यां ज्ञानानलमु-
द्दीप्य, तत्र 'चत्तारी भंगल' इति मङ्गलान्यदात् । द्वाससतिलक्षप्रमाणरुदतीकरमोचनं कन्या-
मुखमण्डने राजा दत्तम् । तत्कालमेव तस्याः पद्यवन्धं कारयित्वा तत्पितुयोग्यानावासान् १४४४
विहारान्कारयामास । ततः सा हिंसा सप्तव्या अहिंसायाः परोक्तिं तथाविधामालोक्य भर्तुः
पराभवनिवेदनाय पितुर्धातुः समीपसुपागता । चिरदर्शनादभिभवैरूप्याचानुपलक्षिता तेने-
त्वभिदधे-

२० . का त्वं सुन्दरि ! ?, मारिसि तनया ते तात धातः प्रिया,
कि दीनेव ?, पराभवेन, स कुतः ?, कि कथ्यतां कथ्यताम् ।
देमाचार्यीगिरा पराकृत्युग्यानां दृढक्रमहतोदारान्
माष्टार्थं कुमारपालन्युपतिः क्षीणीतलादाकृपत् ॥ ९ ॥

इति तद्भग्नितेरनन्तरं श्रीकुमारपालदेवस्य सत्यप्रतिज्ञस्यापि तस्य लिङ्गिनो गिरा त्वयि रक्तायां
२५ विरक्तचित्तां विमृश्य, अतःपरं भवत्याः स' कोऽपि प्रवरः वरः करिष्यते यस्तवैव एकातपञ्चं
कुरुते । धीरा भव' इति तां सम्बोध्य स्वसमीपे स्थापयाचक्ने । अथाहिंसादेव्या सादृशं श्री-
कुमारपालवृपतिर्जीवत्रयि, असमानंमहान्दसुखमनुभवन्, 'चतुर्दशाधर्पाणि यावत् सुखेनासा-
मास' । तदनु कीर्ति एवंप्रियामपि देशान्तरे प्रस्याप्य यदा स्वर्णोक्मलं धक्कार, तदैव तस्य प्रियस्य
३० सप्रेमप्रसादललितान्यनुसरन्ती कलिमलिनं जनं परिजिहीर्षिहिंसाऽनेव भूमिनाथेन' सम-
गमनं कृतवती' ।

॥ इति श्रीकुमारपालस्य अहिंसाया विवाहसम्बन्धप्रयन्थः ॥ शुभं भवतु ॥
[A सं० १५०९ वर्षे फागुणसुदि ९ वार रवौ पठता लप्ती ॥ ७ ॥]

1 A. नाति । 2 A. भव्य श्व स । 3 A. 'असमान' नाति । 4 A. अनुभूत । 5 नास्तेतत्तद् A । 6 A. भूपेन ।
7 A. चके ।

प्रवन्धचिन्तामणिप्रन्थान्तर्गतपदानुकमणिका

—अकाराद्यनुक्रमेण—

| | पदाङ्क | पृष्ठाङ्क | | पदाङ्क | पृष्ठाङ्क |
|----------------------------|--------|-----------|-----------------------------|--------|-----------|
| अ | | | | | |
| अकारात्मकरुते कोशः० | २१३ | ९९ | अर्थस्तावद् गुणात्मावद्० | [१] | ५ |
| अकल्पयदन्लपानि० | [१५१] | ९९ | अर्थम्यः कनकस्य दीपकमिश्रा० | २०८, | ९६ |
| अकारायद्यं धारी० | [१५६] | ९९ | अहं च शिवो भवो विष्णुः० | [१४] | ६३ |
| अशुद्धसतवालिनो भगवतः० | २५०, | ११५ | अलं कलङ्कशङ्खार० | [७७] | ४३ |
| अगाधः पायोधिः० | २५६, | ११५ | अलङ्कारः शङ्काकरनरकपालं० | [४४] | २४ |
| अजिंतले गुणास्तेन० | [१६५] | १०२ | अशाकभोजी धृतमत्ति० | २६७, | १२२ |
| अथ मे फलवती पितृ० | २३५, | १०५ | अथा वहन्ति भवनानि० | [५२] | २९ |
| अधाम धामधामार्क० | १८४, | ८२ | अद्यो हाटककोट्यत्रिनवति० | ५५, | २७ |
| अधिक्षरात्रिभिर्मिसैः० | २७, | १८ | अष्टमो महदेव्यां तु० | १४२, | ६२ |
| अन्त्योऽप्यादः समजनि० | १, | १ | असंख्यहरिसैन्येन० | [१०८] | ७६ |
| अन्यप्रसुयाण कालो० | ६३, | २८ | असेव्या मातङ्गाः परिगतिः० | २३, | १५ |
| अन्दानैः प्रथापानै० | २३३, | १०५ | असौ गुणीति मत्वेव० | ११९, | ४८ |
| अन्नदण्डे सिवमवषेऽ | [६२] | ३९ | अहिंसा लक्षणो धर्मः० | १०५, | ४२ |
| अपारपौरुषोद्ग्राहं० | [१०७] | ७६ | | आ | |
| अपुरुणां धने गृह्णान्० | १९०, | ८६ | आः कण्ठशोपरिपोपफलं० | [१०४] | ६६ |
| अस्मुद्युता चसुमती० | ९५, | ४० | आकाश प्रसर प्रसरत दिश० | २५७, | ११६ |
| अभावप्रवैभवी० | २६२, | ११९ | आज्ञामञ्जो नरेन्द्राणां० | २३, | १४ |
| अभिरामगुणग्रामो० | [८८] | ५५ | आज्ञावर्तिषु मण्डलेषु० | २०५, | ९४ |
| अभूमिज्जमनाकाशमहद्वान्त० | २६९, | १२२ | आत्मकारणमकारणदारणानां० | २०१, | ९२ |
| अभूमिज्जमनाकाशं पर्यं | २७०, | १२२ | आददानाः पयःशूर० | [१५५] | ९९ |
| अमर्पणं मनः कुर्वन्० | [१०९] | ७६ | आदौ मर्यावायमदीपि० | १७८, | ७९ |
| अमुर्मी चोराप्रतिनिहत० | ५२, | २६ | आपणपदं प्रशु हीर्षयह० | १७९, | ८१ |
| अमेष्यमभाति विवेकश्न्या० | [५७] | ३८ | आपदेष्यं धनं रक्षेत्० | ४३, | २५ |
| अम्ब्यपक्षं गुणक० | १२३, | ५१ | आपद्रवं इससि किं० | [३६] | २४ |
| अम्भा तुप्ति न मया० | १०३, | ४२ | आपात्याधिगमान्मयैव० | ९८, | ४० |
| अम्भीणित सन्देशदृ० | ७, | ८ | आयान्ति यान्ति च पर० | २३२, | १०४ |
| अम्भ एतलइ संतोषु० | [१०१] | ६५ | आयासयत्तलव्यस्य० | २६५, | १२१ |
| अम्भमरसाः सरस्ते० | ४६, | २६ | आपुकः प्राणदो लोकेऽ० | १४६, | ६४ |
| अपि एषु विषयः पुरा० | १०१, | ४० | आसनालगलदावृद्ध्युक्ष्या० | [७२] | ४२ |
| अर्पा न पर्नि न च मुश्चति० | ८०, | ३५ | आवर्तिवा जिवाराते० | [१४] | १६ |

प्रबन्धचिन्तामणे

१३०

| | ह | इ | उ | ए | ओ | क |
|--------------------------------|-------|-----|----------------------------------|-------|-----|---|
| इकह फुलह माटि० | २०४, | ९३ | कर्वालजलैः स्तातां० | [१२१] | १५ | |
| इणि राजिं हनु काञ० | [२८] | २२ | कर्णाटे गूर्जे लाटे० | [१२५] | १५ | |
| इदमन्तरमुष्मकृतये० | ४४, | २६ | कर्णे लग्निरूप्येषां० | [१६९] | १०२ | |
| इग्नुच्चधियामलौकिकी० | २५९, | ११७ | कलाकलापैस्तु महदं० | [१२४] | ८६ | |
| इयं कटी मत्तगजेन्द्रगामिनी० | [४५] | २४ | कवर्णिहि विरहकरालियं० | ६०, | २८ | |
| | | | कविषु कामिषु योगिषु भोगिषु० | १२६, | ५२ | |
| | | | कसिषुजले य रेह० | १२, | ११ | |
| | | | कसु करु रे पुत्र कलत धी० | [४४] | ५१ | |
| उम्या ताविउ जिहिं न किउ० | २८, | १९ | कसात्र च रुद्यते गतः० | २६१ | ११९ | |
| उज्जनलुणमभ्युदितं शुद्रो० | १८६, | ८४ | कह नाम तस्त पावं० | २०, | १२ | |
| उत्थायोत्थाय बोद्धव्य० | ११२, | ४६ | कः कष्टीरवकण्ठेसरसदा० | १५५, | ६७ | |
| उद्धाम्युदनादनृत्याचिखिनी० | [५४] | ३० | काण्डानां सह कोदण्ड० | [१६८] | १०२ | |
| उद्धमकेद्य पदलग्नमेकं० | ३३, | १९ | का त्वं सुन्दरि जल्य देवि सद्यो० | २४०, | १०९ | |
| उत्त्राद्युक्तुकावधिरुजलता० | १०७, | ४३ | कानीनसु मुनेः स्वानव्य० | [७१] | ४२ | |
| उपतिष्ठन्तु मे रोगाः० | २६, | १८ | कालेन करवालेन० | [२४] | २० | |
| उपरुद्धन् विरुद्धनां० | [२२] | २० | कायं करोमि न च चारुरं० | [५०] | २९ | |
| उमया सहितो रुद्रः० | ४, | ४, | कियन्मात्रं जलं विप्र० | ४९, | २६ | |
| | | | किं कृतेन न यत्र त्वं० | १९२, | ८८ | |
| एत जम्मु नगहं गियउ० | ७५, | ३२ | किं च यदनस्तमिते० | ४८, | २६ | |
| एकस्त्रं भुवनोपकारक० | २२४, | १०१ | किं ताए पदियाए० | [५५] | ३७ | |
| एकं मित्रं भूरपतिर्वा यतिर्वा० | १८१, | ८२ | किं नन्दी किं भुरारिः० | [६७] | ३९ | |
| एकः क्षमाचक्रपीठे० | [१७६] | ११५ | किं वर्ष्यते कुचन्दं० | [७५] | ४३ | |
| एकैव जग्नह धारा० | [११४] | ७६ | कीर्तिते जावजाय्येव० | [१७४] | ११५ | |
| एतसिन्महति प्रदोपसमये० | २४६, | ११२ | कुमुदवनमपथि श्रीमद्भ्योज० | ७९, | ३५ | |
| एतसास्य पुरस्य० | [९९] | ६३ | कृतहारानुकारेण० | [६] | १३ | |
| एपाऽङ्गतिरं वर्णाः० | ७८, | ३२ | केवलिहुओ न भुजद० | १५७, | ६७ | |
| एपाऽङ्गतिरं वर्णाः० | [६६] | ३९ | केवलिहुओ वि भुजद० | १५८ | ६७ | |
| एपा तटाकमिपतावक० | | | को जाणइ तुह नाह० | १३३, | ५८ | |
| | | | कोणे काङ्क्षणकः कपाटनिकटे० | ७३, | ३१ | |
| ओलि ताव न अणुहरद० | १४७, | ६४ | कोशेनापि युतं दलैल्यचितं० | १४५, | ६४ | |
| | | | कौरवेश्वरसैन्यस० | [१०] | १३ | |
| कच्छपलकं हत्वा० | ३०, | १९ | कौङ्कणे तु तथा राष्ट्रे० | [१२६] | ९५ | |
| कतिपयदिवसस्थायी० | ४७, | २६ | कच्चितूलं कच्चित्क्षत्रं० | २२६, | १०३ | |
| कतिपयपुरुशामी कायव्यय० | ८८, | ३७ | कचिदुण्णं कचिन्धीतं० | २२६, | १२१ | |
| कथाशेषः कर्णोऽजनि जनकशा० | १९७, | ८९ | क तरुणे प महायनमध्यगः० | [४६] | २४ | |
| कन्ये कासि न वेत्स मामपि० | [८२] | ५० | | | | |
| कथलितरु विज्ञागिरी० | १९, | ११ | | | | |

| | | | | | |
|--------------------------------|-------|-----|----------------------------|-------|-----|
| क्षणं क्षीणात्मारा नृपतय० | [७८] | ४३ | जगदेव जगदेव० | २५५, | ११५ |
| दितिधर भवदीयैः० | [९०] | ५९ | जनेन मेने यः स्थामी० | [११७] | ७६ |
| दिशा धारापति राज० | [११३] | ७६ | बन्मायेऽपि चतुःसहस्रशरदो० | २६३, | १२० |
| दुष्णाः शोणिभृतामनेन कटकाऽ | [८९] | ५९ | जह सरसे तह सुके विं० | १६, | ११ |
| दुत्खामः पथिको मदीय० | ८३, | ३५ | जन्त्मामभयं सप्तव्यसन० | [१२७] | ९५ |
| दुद्राः सन्ति सहस्रशः० | १२८, | ५३ | जा मति पच्छइ सम्पज्ज० | [४२] | २४ |
| दोषीरक्षणदक्षदक्षिणमुजे० | २५२, | ११५ | जामदग्न्य इवोद्धाम० | [१४१] | ९६ |
| ख | | | जे यका गोलानई० | [३७] | २४ |
| एवोदयुतिमारनोति सविता० | १५८, | ६८ | जेसल मोडि म घाँह० | १५१, | ६५ |
| ग | | | जैन बौद्धं तथा ब्राह्मं० | [९५] | ६३ |
| गणेशसेव यसाये० | [११९] | ७६ | जो करिवराण कुम्भे० | २०७, | ९६ |
| गतप्राया रात्रिः कुशततु० | १०९, | ४४ | जो जेण सुदूधमस्मिं० | १३१, | ५७ |
| गय गय रह गय तुरय गय० | ३९, | २३ | ज्ञानाल्यं यस तच्छ्रु० | [१६२] | १०० |
| गवाश्मार्गप्रिभक्तचन्द्रिको० | [४७] | २७ | क्ष | | |
| गुरुणा विकर्मणाय० | [८५] | ५५ | शोली तुद्विनि किं न मृद० | ३८, | २३ |
| गूर्जराणामिदं राज्यं | २१, | १३ | त | | |
| गृहीता दुदिगा तर्पण० | [११०] | ७६ | तदं गरुआ गिरनार काढ० | १५०, | ६५ |
| गोपीपीनपयोधराहतमुरुः० | [८१] | ५० | तत्कर्णार्जुनयोर्वैरं | [८७] | ५५ |
| गाँरी रागमती त्वयि त्वयि युपो० | २२७, | १०३ | तत्त्वाथावजनिए विष्टपमणिः० | [१३] | १६ |
| च | | | तत्त्वतं यन्न केनापि० | ५३, | २७ |
| चकः प्रच्छ पान्धं० | २५१, | ११५ | तत्र छुसलादिवीज० | [९६] | ६३ |
| चर्तुर्मासीमासीच वदयुगं० | १९९, | ९१ | तथा पार्यकथा वृथा वलिरयं० | [१७७] | ११५ |
| चन्द्रयालासु यालानां० | [७] | १३ | तमाहुर्वासुदेवांशं० | [९२] | ६३ |
| चापलादिव वाल्येन० | [१४४] | ९७ | तव प्रवापन्वलनाजगाल० | [५८] | २७ |
| चिचि विसाउ न चिरियह० | [३३] | २३ | तसिन्धय कथाशेषे० | [१८] | २७ |
| चिन्वागममीरुपादननरत० | १००, | ४० | तस आरुसुतः श्रीमान्० | [२६] | १९ |
| चूडातप्रामारुप्रं० | [१३४] | ९५ | ताः प्रपद कारितास्तेन० | [१५७] | २० |
| चेतोद्वा युवतय० | [८०] | ४९ | ताण पुरो य मरीह० | १५, | ९९ |
| चौढः क्रोडं पयोधेर्विशति० | ७२, | ३१ | तित्यपरगुणा पडिमासु नस्थि० | २१८, | १०१ |
| चोरमागपविश्वेष्यो० | [५] | ९ | तेषां वै भरतो ज्येष्ठो० | [९३] | ६३ |
| स्पारि परद्वा धेनु दृ० | [३५] | २९ | तेहि वि न किं पि भणिए० | ६८, | ३० |
| छ | | | त्वांगः कल्पद्रुम इव धुवि० | १२७, | ५२ |
| ठिमं प्रदग्धिरो यदि प्रधयति० | २४५, | ११२ | त्रिपुरी विपरीतवी० | [९] | १३ |
| ज | | | त्रिमिर्पर्विभिर्मासै० | २११, | ९७ |
| बंसद रावण जार्द्दिपउ० | ५९, | २८ | त्वचं कर्णः शिविर्मासं० | २५५, | १०३ |

प्रबन्धचिन्तामणे:

१३३

त्वयि जीवति जीवन्ति० :
त्वं चेत् सञ्चरसे वृषेण लघुना०
द्

२५३,
२४४,

११५
११२:

दशिणथितिर्पं जित्वा०
दण्डे मण्डपिका हैमी०
दरिद्रान् सुज्ञो धातु०
दर्शयन् सुमनो मामाव०
दानं प्रियवाक्सहितं०
दानं भौगो नाशतिसो०
दानं वित्ताद् क्रतं वाच०
दानानि ददतो नित्यं०
दानोपहरदारित्यं०
दारिश्चानलसन्तापः०
दासिन्हि नेह न होइ०
दिग्गासा यदि तत्त्विमस्य०
दुर्वादिग्वर्गजनिदर्लनाद्युश्चश्री० [१०५]
दूर्वा॒ इयामलयन्ति सन्तत०
देव अम्बारी सीप०
देव त्वं जय कासि लुभक०
देव दीपोत्सवे जाते०
देव श्रीगिरिदुर्गमलु भवतो०
देवादेशय किं करोमि सहस्रा०
देवे दिग्वियोद्यते धृतधनु०
देशामीद्यो ग्राममेकं ददाति०
दो मुह निरक्षर लोह०
दुतमुन्मूलिते तव०
द्वाम्यां यत्त हरित्विमिन्न च०
द्विपां शीर्पाणि लक्षणिं०

थ

धर्मच्छब्रप्रयोगेण०
धर्मलाभ इति प्रोक्ते०
धाइ धौश्चापाय०
धारपत्वा त्वयात्मानं०
धारारथी धरमहीश्वरणने०
धाराभद्रप्रसरेण०

२२८,
६,
१३४,
६६,
६९
[११२]

११५
११२:

धिग् रोहणं गिरिं दीन०
धृतपार्थिवनेष्ये०

२,
[१४३]

१६
९६

न

न केवलं महीपालाः०
नमस्तिष्ठति धूलिपूरवपु०
नवीनिरुद्धा युवतीजनस्य०
नयो यत्प्रतिभावर्थात्०
नद्युतारेऽध्वैषप्ये०
न भिक्षा दुर्भिक्षे पवति०
न माधः श्लाघ्यते कैथित०
न मानसे माध्यति मानसं मे०
न यन्मुक्तं पर्यं रघुनहुपनाभाग०
न सा समा यत्र न सन्ति वृद्धा०
नामेरयो स वृप्तमो०
नारीणां विदधाति निर्वृतिपदं०
नाहं सर्वफलोपभोगवरपितो०
निजकरनिकरसमृद्धा०
नियउयरपूरणमिम्य०
नृपव्यापारप्रयोग्य०
नेव सयं तं पुजाइ०
नैवाकृतिः फलति नैव कुलं न शीलं १७०,

प.

पञ्चाद्यत् पञ्च वर्षाणि०
पञ्चाशदादौ किल०
पञ्चाशद्रुतमाने शिवमवनयुगो०
पढमो नेहाहरो०
पणसयी वाससवं०
पयःप्रदानसमर्थ्याद०
परपत्यणावन्नं०
परिओससुन्दराद०
पर्जन्य इव भूतानाम०
पाणिग्रहे पुलकितं०
पाणिपङ्कजवर्तिन्या०
पातु वो हेमगोपालः०
पादलमैर्महीपालेः०

३४,
१४०,
१२४,
१७,
२४१,
[५८]
६९,
१३,
१९४,
९७,
[२०]
१९५,
[१३८]

२२
६२
५२
११
१०९
३८
३०
२२
११
४०
१९
८९
९५

| | | | | | | |
|--------------------------------|---------|-------|-------------------------------|-------|-----|--|
| पिवेदसहस्रं तु० | १६८, | ७२ | मन तंचोलु म भागि० | [१०२] | ६५ | |
| पुणे (ने) वाससहस्रे० | ८, १७७, | ८, ७८ | मवीशकरसंसर्गीत० | [१७२] | १०२ | |
| पूर्णः स्वामिगुणः स वीरधवलो० | २३७, | १०५ | मन्दथन्दकिरीटद्वजनरस० | २५८, | ११६ | |
| पृथुकार्त्तस्वरपात्रं० | [६८] | ४१ | मत्स्तकस्थायिनं सृत्युं० | १११, | ४६ | |
| पृथुप्रभृतिभिः पूर्वे० | [१२८] | ९५ | महालयो महायात्रा० | १७२, | ७५ | |
| प्रकाशयते सतां साक्षात्० | [१६४] | १०२ | महिवीदह सचाचरह | २०९, | ९७ | |
| प्रतापो राजमार्तिण्ड० | २१२, | ९७ | महीमण्डलमार्तिण्डे० | [१२२] | ७६ | |
| प्रतिभाधारिणोऽप्येपां० | २१६, | १८१ | महुकारसमा बुद्धा० | ८६, | ३६ | |
| प्रहरपुरुजमन्द्रध्यानवर्द्धिः० | [७६] | ४३ | मा जाण कीर जह० | १४, | ११ | |
| प्रापः सम्प्रति कोपाय० | २४८, | ११३ | माणुसदाँ दस दस दसा० | ११६, | ४७ | |
| प्रियवत्रो नाम सुतो० | [९१] | ६२ | मावधाय्यधिकं किञ्चिन्न० | १७३, | ७५ | |
| श्रीणिताशेषविद्यातु० | ११८, | ४७ | मानं बुद्ध सरस्वति विपथगे० | १७४, | ७५ | |
| श्रौद्धश्रीलक्ष्मा न जातपुलका० | [११] | १३ | मान्धाता स मदीपति० | ३५, | २२ | |
| व | | | | | | |
| वभूव भूपतिस्तस्य० | [२३] | २० | मा महूड कुरुद्वेषं० | [४०] | २४ | |
| वलि गरुया गिरनार० | [१००] | ६५ | मालवसामिनः प्रौढ० | [११२] | ७६ | |
| वारो विद्वान् वापषुव्रोधिपि० | ७६, | ३७ | मा स सन्धि विजानन्तु० | १३७, | ६० | |
| विन्दवः श्रीयशोबीर० | २२१, | १०२ | मीनानने प्रहसिते० | ९, | १० | |
| भ | | | | | | |
| भजेन्माधुर्कर्णी वृत्तिं० | ८५, | ३६ | मुखे हारावासिन्यनयुगले० | १२२, | ५० | |
| भववीजाङ्गुरजननाऽ० | १८८, | ८५ | मुगमासाइ पृष्ठुर्ह० | ८७, | ३७ | |
| भवार्घवरी ब्रह्मपुरी० | [१५८] | ९९ | मुज्जु भण्ड मुणालवह० | ३६, | २३ | |
| भीमसेनेन भीमोऽय० | [१४७] | ९७ | मूलाकं श्रूते शास्त्रे | २४, | १६ | |
| भुजीमहि वर्यं भैश्यं० | १८०, | ८१ | मूगेन्द्रं वा मृगार्हं वा० | २३९, | १०८ | |
| भूपालोऽजयपालोऽभूत० | [१३९] | ९६ | मृतका यत्र जीवन्ति० | [५३] | २९ | |
| भूमि कामगति ! स्वगोगमय० | १३६, | ५९ | मृतो मृत्युर्जरा जीर्णा० | ११५, | ४६ | |
| मेकः कोटरश्यायिमिश्रविष्विष० | ७०, | ३० | मेदिन्यां लब्धजन्मा जितवलिनि० | ३१, | १९ | |
| मेजेवकीर्णतां नदः० | १६३, | ६९ | य | | | |
| मोगीन्द्र वहुधा पात्रं० | २३८, | १०६ | यच्छुद्धास्त्वेच्छक्षाल० | [१४५] | ९७ | |
| मोजरात्र यथा ज्ञातं० | ७४, | ३२ | यत्कद्धुणाभरणभूषित० | [४८] | २८ | |
| मोजे यदि दिवंगतेऽतिवलिना० | १२५, | ५२ | यत्र तत्र समये यथा तथा० | १८७, | ८५ | |
| मोली मुनिय म गव्यु करि० | ४०, | २४ | यदनलमिते सूर्ये० | ४८, | २६ | |
| मोष एव गलि कण्ठलउ० | ११०, | ४५ | यदपसरति मेषः कारण० | २५, | १६ | |
| प्रातः! संवृणु पाणिनियलपितं० | १३९, | ६१ | यदायं दुर्वीरः किरति० | [१७८] | ११५ | |
| म | | | | | | |
| मग्नं चिप अलहन्तो० | ११, | ११ | यदि नाम कुम्हदचन्द्रं० | १६२, | ६९ | |
| | | | यदेवचन्द्रान्तर्जलद० | ५१, | २६ | |
| | | | यद्यूर्धं यथ यन्नादं० | [१५०] | ९९ | |

प्रबन्धचिन्तामणेः

| | | | | | |
|----------------------------|-------|-----|-----------------------------|-------|-----|
| यशः पुज्जो मुज्जो गजपति० | ४२, | २५ | लच्छिवाणि मुहकाणि सा० | २०२, | ९२ |
| यशोवीरं पशोमुक्ता० | २२०, | १०२ | लब्धलक्षा विषपेषु० | [९८] | ६३ |
| यशोवीर ! लिखत्याख्यां० | २२२, | १०२ | लाटेश्वरस्य सैनान्यं० | [१६] | १६ |
| यस्य पौपधशालासु० | [१६१] | १०० | लिङ्गं जिणपन्तं एव० | २१९, | १८१ |
| यस्यान्तगिरिशागार० | १४३, | ६३ | लिङ्गोपजीविनां लोके० | २१७, | १८१ |
| यः पञ्चाग्रामसद्ग्राम० | २३१, | १०४ | लोकः पृच्छति मे वार्ता० | ११३, | ४६ |
| यान् लिङ्गिनोऽसुयन्दन्ते० | २१५ | १०१ | लोकत्रयोङ्गसत्कीर्तिः० | [२१] | २० |
| यासौ दक्षिणदक्षिणार्णवधू० | [३] | ९ | व | | |
| यूकालथशतावली वलयल० | २००, | ९२ | वक्त्राम्भोजे सरखत्यधिवसति० | ५४, | २७ |
| यूपं कृत्वा पश्यत् हत्वा० | ९३, | ३८ | वक्षो विक्षिष्ठं वैष्णं० | [१७१] | १०२ |
| यैन पौपधशालासाः० | [१६०] | १०० | वचनं धनपालस्य० | [७४] | ४२ |
| यैन विश्वेकीरण० | [११८] | ७६ | वधो घमों बलं तीर्थं० | [६०] | ३८ |
| यैपां वल्लभया सह धृणमिव० | ७७, | ३२ | वन्यो हस्ती स्फटिकघटिते० | ३, | ३ |
| यौमाकाधिपतन्त्रिविग्रहपदे० | ७१, | ३१ | वरं भद्रैर्भीर्यं वरमपि० | २१०, | ९७ |
| र | | | वर्षाणु यत्तिष्ठति० | २६८, | १२२ |
| रजकव्यधूवचनमिदं० | [४] | ९ | वल्लीच्छद्वामुम इव० | १६७, | ७० |
| रजोभिः समरोद्भूतै० | [१२१] | ७६ | वस्तुपाल-यशोवीरौ० | [१६७] | १०२ |
| रक्षाकर इव क्षार० | २१४, | १०१ | वस्त्रप्रतिष्ठाचार्याय० | १६१, | ६९ |
| रम्भासम्मानितर्यस्य० | [१५२] | ९९ | वादविद्यावतोऽद्यापि० | १६४, | ६९ |
| रसातलं यातु यद्व्र पौरुषं० | ९० | ३७ | वाही तउ वद्याणां० | १५३, | ६५ |
| रागाद् भूपालवल्लाल० | [१३५] | ९५ | वासो जडाण मञ्ज्ञे० | २४२, | ११२ |
| राजन् मुद्दुकुलप्रदीप० | ६१, | २८ | विद्वा विद्वा शिलेयं० | १२१, | ४९ |
| राजप्रतिग्रहदग्धानां० | १८५, | ८२ | विना कर्मन तेन द्वी० | [८६] | ५५ |
| राज्यं यातु श्रियो यान्तु० | १६९, | ७४ | विनाशोत्पाङ्गं वृथा० | [६१] | ३८ |
| राज्यं यातु श्रियो यान्तु० | [२] | ५ | विप्रे प्राहरिके नृपो० | ५, | ६ |
| राणा सद्वा वाणिया० | १४९, | ६५ | विरलविरलीभूतासाराः० | [७१] | ४३ |
| रात्रौ जानुर्दिवा भातुः० | ६५, | २९ | विरोधिगतिविचित्रः० | [११] | १९ |
| रुलीयउ रायह रातु० | [३१] | २२ | विवाहपित्या यः कन्या० | २६०, | ११८ |
| रे रे यवक मा रोदी० | [४१] | २४ | विश्वामित्रपरायनग्रन्थयो० | १८२, | ८२ |
| ल | | | विहाय शरीर्धि वेगात्० | [१७०] | १०२ |
| लक्षं लक्षं पुनर्लक्षं० | ५०, | २६ | विहारं कृचर्वा वैरि० | [१३७] | ९५ |
| लक्ष्मीर्यत्र न वाक् तत्र० | [१६६] | १०२ | वीतरागरतेर्यस्य० | [१३०] | ९५ |
| लक्ष्मीर्यासति गोविन्दे० | ४१, | २५ | वीराणां पाणिपादान्यैः० | [१७३] | १०२ |
| लक्ष्मीश्वला शिवा चण्डी० | २३०, | १०४ | वेलामहलक्षोल० | ११७ | ४७ |
| लक्ष्मा शङ्कावती चम्पा० | [८] | १३ | वेत्सा छंडी वडायती० | [३९] | २४ |

| | | | | | |
|----------------------------|-------|-----|-------------------------------|-------|-----|
| वैरिणापि हि मुच्यन्ते० | ९१, | ३७ | सद्वत्थ अतिथ धर्मो० | ८९, | ३७ |
| व्यापिदा नयने मुखं च रुदी० | १९६, | ८९ | संगृहीतानि हारीत० | [१५३] | ९९ |
| ब्रजत् ब्रजत् प्राणाः० | ८४, | ३५ | संसारार्णवेतत्वः० | १९३, | ८८ |
| शा | | | सामिय अतिर्हि अजाणु० | [२९] | २२ |
| शान्तोऽपि स्फुटितावधस्य० | ६४, | २९ | सामी मुहतउ वीनवद्द० | [३२] | २२ |
| पिशुनापि शुनासीर्वीर० | [१०६] | ७६ | सायरु खाइ लंक गदु० | [३४] | २३ |
| शीत्वा न पटी न चापि० | [४९] | २९ | सांयानिकजनो येन० | [१४८] | ९९ |
| शूराणां सम्मुखान्वेष० | [१३२] | ९५ | सिद्धिस्तनशैलतटी० | १३५, | ५९ |
| शैत्यं नाम गुणस्तवैव तदनु० | २४३ | ११२ | सिहो चली द्विरश्चकरमांस० | १८३, | ८२ |
| शुर्वेन्यथयति स वानर० | [७०] | ४२ | सुकृतं न कृतं किञ्चित्० | २३४, | १०५ |
| शौंघं शशुक्लश्चयाधि० | १०६, | ४३ | सुधेवं वृभुधा लब्ध्यु० | [११६] | ७६ |
| श्वशाने यातुशानेन्द्रं० | [१२०] | ७६ | सुरताय नमस्तस्य० | १०८, | ४३ |
| श्रीमद्वैष्णवारिदेवमृपते० | १७५, | ७५ | सुहृद्वेन्द्रस्य क्रतुपुरु० | [४३] | २४ |
| श्रोतृव्यः सौमतो धर्मः० | १०४, | ४२ | सो जयत् कृदवरडो० | १७१, | ७५ |
| शःकार्यमय कुर्वीत० | ११४, | ४६ | सोहिंगित् सहिक्षुयुठ० | १९८, | ८९ |
| प | | | स्नाता प्रायृषि वारिवाहसल्लै० | ३२ | १९ |
| परिस्तध्युता कोटी० | १९१, | ८७ | स्पर्शोऽमेघध्युभाँ गचामधहरो० | [५९] | ३८ |
| स | | | सूदास्पृष्टनिषेधाय० | [१४९] | ९९ |
| सरु नहीं स राण० | १४८, | ६५ | स्फुर्टं वैष्टयता शुच्रैः० | [१५५] | ९९ |
| सउ चिचह सदी मणह० | ३७, | २३ | स्मै एत्व वनं जगाद० | [१२] | १६ |
| स पप् स्वनश्यप्रथित० | ९६, | ४० | ख्यव्रापानले येन० | २९, | १९ |
| सत्यं यूपं तपो शापि० | ९४, | ३९ | सत्ति शत्रियदेवाय० | [१७५] | ११५ |
| सत्यं वप्रय शीतं शयिकर० | ६५, | ३९ | ह | | |
| सत्यागारमयेन्प्रकलभृतां० | १६६, | ६९ | हत्या नृपं पतिमवेक्ष्य० | १२०, | ४९ |
| सत्यासा इप सालसा इप लसद्० | [१७९] | ११६ | हरिरिय वलिपन्धकर० | १३८, | ६१ |
| सद्गुमद्वार्द्धमनर्पमूल्य० | २४७, | ११३ | हंसैर्लन्धप्रशस्तरलित० | २२३, | १०२ |
| सप्ताश्चाहृष्टपृष्ठाणां० | [१५] | १६ | हंहो चेतपादः किमेय विकटा० | १५४, | ६७ |
| सपास्तपुः सद् भूस्तिर्धुः० | १७६ | ७६ | हा कस्स पुरोहं पुक्करेमि० | [१०३] | ६६ |
| सपर्वयोऽपि सततं गग्ने चर० | [१२३] | ८६ | हारो वेणीदण्डो० | १०, | ११ |
| सम्भाग्नि नियमः शुक्तो० | १३३, | ५८ | हा हा सछद्व द्विय० | [२७] | २२ |
| सप्तक्षवनाग्नन्द्यरो० | १८, | ११ | हृदि प्रविष्टप्रदाण० | [१३३] | ९५ |
| मर्पानुपनोऽप्य० | [२५] | २० | हैम तुहाला कर मरउ० | २०३, | ९२ |
| | | | हैलानिदिलियगदन्द० | ६२, | ८१ |

टिप्पण्यन्तर्गतपद्यानामनुक्रमणिका ।

| पद्याङ्क | पृष्ठाङ्क | पद्याङ्क | पृष्ठाङ्क |
|-----------------------------|-----------|----------|-----------|
| अनूदा वरं कन्या० | ३, | १२७ | (५) |
| अपूर्वे॑ धनुर्विद्या० | (१३) | ७ | ६ |
| अम्बा तुष्यति न मया० | | २८ | ६३ |
| अद्वे दानवैरिणा० | | ५२ | ३० |
| अहो कोऽपि दरिद्राणां० | (२०) | १० | ७ |
| आपद्ये धनं स्थेद० | | २५ | ३१ |
| आसे दर्शनमागते दशशती० | (८) | ७ | ४५ |
| आहते तव निःस्वाने० | (१४) | ८ | ४७ |
| उरुयन्तरवाहली० | (१६) | ८ | ६३ |
| कटुं काउं मुकं च साहसं० | (१७) | ९ | १६ |
| कन्ये काजसि न वेत्सि० | | ५२ | २ |
| का त्वं सुन्दरि ! मारिरसि | ९, | १२८ | ६ |
| किं करणं तु कविराज मुगा० | | ३७ | ८ |
| किं जीविष्टस चिह्नं० | (४) | ६ | ६० |
| कुर्खे कोटर एव कैटिभरिषु० | | ५२ | १० |
| कुतप्रयत्नानपि नैव कांथन० | | ५६ | ५७ |
| दत्ता कोटी सुवर्णस० | | ५२ | २४ |
| दातुर्नार्थिसमो वन्युः० | (९) | ५७ | ४५ |
| दिद्धुभिक्षुरायात० | | ७ | ३ |
| दीपन्ता॑ दश लक्षणिं० | (१०) | ७ | ३१ |
| देव ! त्वत्कर्नीरदे दशदिशि० | | ५२ | ३१ |
| देव ! त्वामसमानदानविहित० | | ५२ | ७ |
| नक्ते दिवा न शयनं० | (२२) | १२ | ७ |
| नवजलभरिया मगडा० | (३०) | ३२ | ५७ |
| नवि मारीयइ नवि चोरीयए० | (६) | ७ | ९ |

परिशिष्टान्तर्गतपद्यानामनुक्रमणिका ।

| | | | |
|------------------------------------|-----|--------------------------|----|
| चन्यां सतीमुत्तमवंश (टिप्पण्यामपि) | १२८ | मत्सोदरं सदाचारं० | ७, |
| नाभूत भविता श्रीमद्भैरो | १, | श्रियाऽम्भोर्थि विधिं० | २, |
| निष्कञ्चनेन दयितेन० | ४, | सत्यवाक् परलक्ष्मीषुक्ष० | ५, |
| | | [सु]दूरं दुर्गतेवन्धूतं० | ६, |

१२७
१२६
१२७
१२७